DGA-04

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

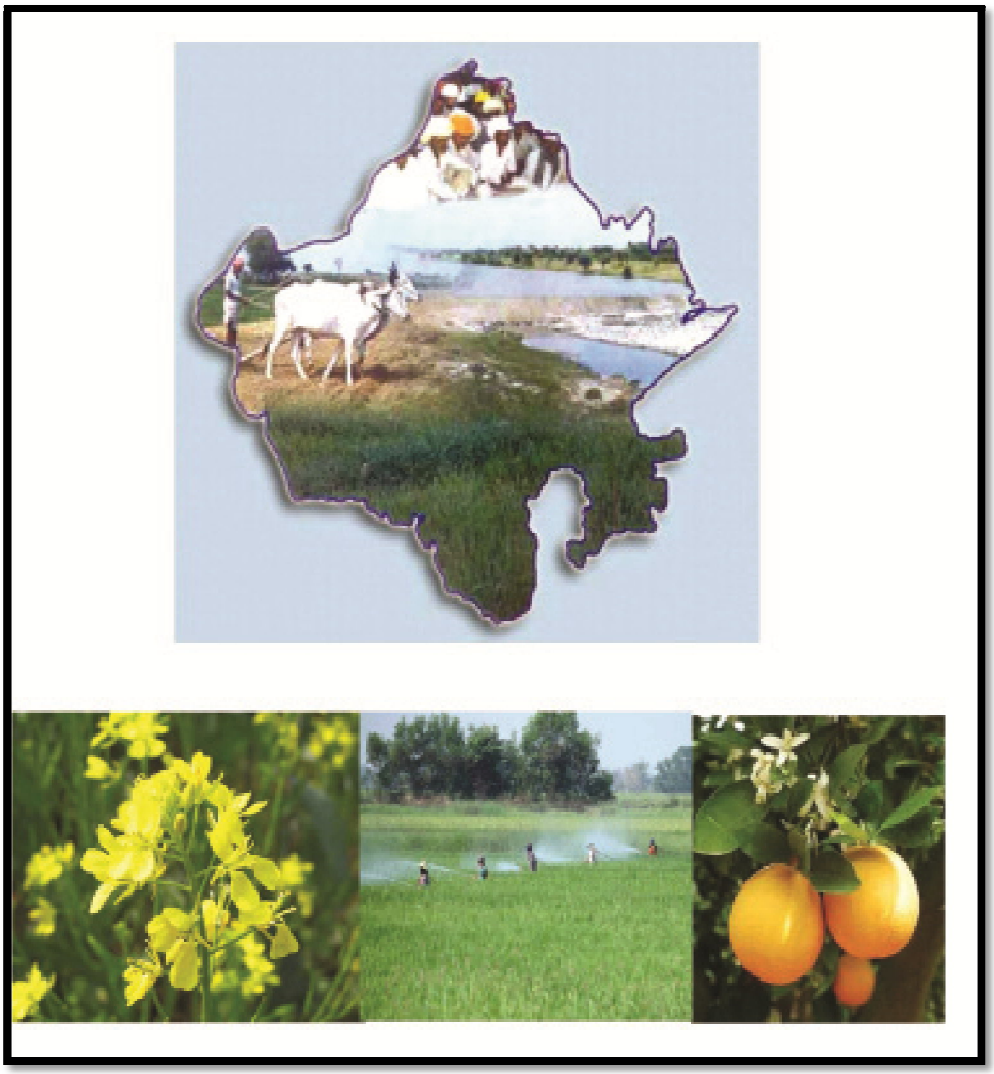

मिट्टी में उर्वरता और उर्वरक प्रयोग

(Soil Fertility & Fertlillizer Use)

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) एल. आर. गुर्जर

निदेशक, संकाय विभाग

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

समन्वयक / सदस्य

समन्वयक

प्रो. (डॉ.) बी. अरुण कुमार

आचार्य राजनीति विज्ञान

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

1. **डॉ. पुरुषोत्तम सिंह सिनसिनवार**
   सेवानिवृत्त आचार्य (मृदा विज्ञान) एवं क्षेत्रीय निदेशक,
   कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा
2. **प्रो. (डॉ.) ए.पी. सिंह**
   आचार्य (सस्य विज्ञान) इन्दिरा गांधी
   कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर(छ.ग.)
3. **डॉ. एस.एस. तोमर**
   आचार्य (सस्य विज्ञान) एवं क्षेत्रीय निदेशक,
   कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा
4. **श्रीमती श्वेता गुप्ता**
   गेस्ट फेकल्टी, कृषि विज्ञान
   वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
5. **डॉ. एन.एन. त्रिपाठी**
   सह आचार्य (कीट विज्ञान) कृषि विज्ञान केन्द्र कोटा
6. **श्रीमती रश्मि मोदी**
   सहायक संचालक,कृषि किसान कल्याण तथा कृषि विकास
   भोपाल (म.प्र.)

सम्पादक एवं पाठ लेखक

सम्पादक

श्रीमती श्वेता गुप्ता

गेस्ट फेकल्टी, कृषि विज्ञान

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

इकाई लेखक	इकाई संख्या
डॉ. पुरुषोत्तम सिंह सिनसिनवार सेवानिवृत्त आचार्य (मृदा विज्ञान) एवं क्षेत्रीय निदेशक कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा	17
डॉ. एस.एस. तोमर आचार्य (सस्य विज्ञान) एवं क्षेत्रीय निदेशक,कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा	3
डॉ. धर्मेन्द्र सिंह आचार्य (मृदा विज्ञान), महाराणा प्रताप कृषि एवं तकनीकी विश्वविद्यालय, उदयपुर	4
डॉ. अस.अल. सुवालका आचार्य (मृदा विज्ञान),कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा	10
डॉ. डी.एस. मीणा सहायक आचार्य(सस्य विज्ञान), कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा	12
डॉ. बलदेव राम सहायक आचार्य(सस्य विज्ञान), कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा	16

डॉ. आर.के. शिवरन **2**
सहायक आचार्य(सस्य विज्ञान),कृषि अनुसंधान केन्द्र,कोटा

डॉ. जे.पी. तेतरवाल 5
सहायक आचार्य (सस्य विज्ञान), कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा

श्रीमती श्वेता गुप्ता 7,8,9,13
गेस्ट फेकल्टी, कृषि विज्ञान
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सुक्षी रेणु हाडा 18
गेस्ट फेकल्टी, रसायन विज्ञान
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

डॉ. आर. के. बागरी 15
सहायक आचार्य(सस्य विज्ञान), कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा

डॉ. प्रताप सिंह 14
आचार्य(सस्य विज्ञान),
कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा

डॉ. बनानी सिंह 11
सेवानिवृत्त आचार्य (मृदा विज्ञान)

डॉ. अस.अल. श्रीगौड 6
सेवानिवृत्त उपनिदेशक कृषि (आई.पी.एम.)

डॉ. आर.अस. नारोलिया 1
सहायक आचार्य(सस्य विज्ञान), कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. (डॉ.) विनय कुमार पाठक
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्रो. (डॉ.) एल.आर. गुर्जर
निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्रो. (डॉ.) करण सिंह
निदेशक,
पाठ्यसामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

डॉ. अनिल कुमार जैन
अतिरिक्त निदेशक,
पाठ्यसामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन: **ISBN No.:**

इस सामग्री के किसी भी अंश भी अंश को व.वि.खु.म., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

व.वि.खु.म., कोटा के लिए कुलसचिव को व.वि.खु.म., कोटा द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित (.राज)

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

मिट्टी में उर्वरता और उर्वरक प्रयोग

अनुक्रमणिका

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृष्ठ स.
इकाई -1	मृदा, चट्टानें तथा खनिज	1
इकाई -2	मृदा निर्माण एंव भारतीय मृदायें	16
इकाई -3	मृदा के गुण	42
इकाई -4	मृदा अभिक्रिया एवं उभय प्रतिरोधन	59
इकाई -5	अम्लीय; लवणीय तथा क्षारीय मृदाएँ	71
इकाई -6	मृदा जीवाणु तथा नाइट्रोजन का खानिजन	85
इकाई -7	मृदा का कार्बनिक पदार्थ	97
इकाई -8	मृदा जल, मृदा वायु तथा मृदा ताप	113
इकाई -9	मृदा अपरदन तथा इसका नियंत्रण	133
इकाई -10	मृदा वर्गीकरण एवं मृदा सर्वेक्षण	153
इकाई -11	मृदा उर्वरता तथा उसका मूल्यांकन	175
इकाई -12	खाद एवं उर्वरकों का वर्गीकरण तथा उनका उपयोग	186
इकाई -13	नाइट्रोजन उर्वरक	202
इकाई -14	फास्फेटिक एवं पोटेशियम उर्वरक	211
इकाई -15	गौण, सूक्ष्म पोषक एवं जटिल उर्वरक	227
इकाई -16	कार्बनिक खाद एवं जैविक खेती	248
इकाई -17	मृदा परिक्षण	264
इकाई -18	कृषि रसायन	275

इकाई -1

मृदा, चट्टानें तथा खनिज

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 मृदा

- 1.2.1 विस्तार
- 1.2.2 परिभाषा
- 1.2.3 मृदा पादप एक माध्यम
- 1.2.4 मृदा अध्ययन के रूप
- 1.2.5 मृदा के अवयव
- 1.2.6 मृदा के अवयवों का पादप वृद्धि में महत्व
- 1.2.7 मृदा उच्छेद परिच्छेद या प्रोफाइल

1.3 चट्टानें तथा खनिज

- 1.3.1 विस्तार
- 1.3.2 परिभाषा चट्टान
- 1.3.3 परिभाषा खनिज
- 1.3.4 चट्टानों के प्रकार
- 1.3.5 खनिज
- 1.3.6 मृदा उत्पादक खनिज पदार्थों का वर्णन

1.4 सारांश

1.5 अभ्यास प्रश्न

1.6 सारांश

1.0 उद्देश्य

मृदा, चट्टानें तथा खनिज किसे कहते है। मृदा के अध्यन रूप क्या है। मृदा के अवयवों का पादप वृद्धि में क्या महत्व होता है। मृदा उच्छेद, परिच्छेद या प्रोफाइल क्या है। चट्टानों के प्रकार व विशेषता। मृदा खनिज क्या है। क्ले खनिजों काबनना तथा इनके गुण।

1.1 प्रस्तावना

मृदा एक प्राकृतिक पिण्ड है। जो प्राकृतिक पदार्थों पर प्राकृतिक बलों के प्रभाव के फलस्वरूप विकसित हुई। मृदाका जन्म चट्टानों अर्थात पैतिक पदार्थों से होता है। पौधों की वृद्धि का नियंत्रण करने वाले कारकों को जलवायु सम्बन्धी,जीविय तथा मृदीय नामक तीन वर्गों को विभक्त कर सकतेहै। चट्टानें मुख्य रूप से तीन प्रकार की होती है। आग्नेय सबसे प्राचीन चट्टानें है। अत: इन्हें प्राथमिक चट्टान भी कहते है। आग्नेय चट्टज्ञन का कुछ भाग वायु एवं जल के प्रभाव से अन्यत्र जाकर दब जाता है। इसके फलरस्वरूप जलदटी चट्टानों का निर्माण होता है। कायान्तरित या रूपान्तरित चट्टानों में अनेक समांगी तथा ठोस अकार्बनिक पदार्थ विद्यमान होते है। जिन्हें खनिज कहते है। इनका आकार तथा रासायनिक संगठन निश्चित होता है। इनमें परिवर्तनों के फलस्वरूप मृदा की उत्पत्ति होती है। खनिज एक प्राकृतिक पदार्थ होता है। जो प्राय: अकार्बनिक होता है। इनका रासायनिक संगठन स्थिर होता है।

1.2 मृदा

1.2.1 विस्तार

मृदा पौधों की जलदाता होती है। यह हमारे खाद्य पदार्थों का एक मात्र स्रोत है। पोधों की जन्मदात्री तथा हमारे भोजन का एक मात्र साधन होने कारण हम मृदा को धरती माता के नाम से भी पुकार कर संबोधितकरते है, मृदा का जन्म चट्टानों अर्थात पदार्थों से होता है। मृदा को हम हाथ से हाथों से छु सकते है। आंखों से देख सकते है। नाक से सुंध सकतेहै। खनिज पदार्थोंका एक प्राकृतिक पिंड है।

1.2.2 मुदा की परिभाषा –

मृदा खनिज तथा कार्बनिक पदार्थ का एक प्राकृतिक पिंड है जो प्राकृति पदार्थों पर प्राकृतिक बलों द्वारा विकसित है। यह प्राय: विभिन्न गहराई के संस्तरों में विभक्त होती है। ये संस्तर अपने से नीचे वाले मूल पदार्थों से आकृतिक, भौतिक संरचना, रासायनिक गुण एवं संगठन और जैविक लक्षणों में भिन्न होते है।

1.2.3 मृदा पादप वृद्धि का एक माध्यम

पौधों की वृद्धि को नियंत्रित करने वाले कारकों को जलवायु संबंधीजीवीय तथा मृदीय नामक तीन वर्गों में विभक्त कर सकते है। मृदीय कारकों के अन्तर्गत मृदा के सभी भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुण और मृदा में होने वाले सभी प्रक्रम आते हैं, जो मृदा की पौधों को पोषक तत्व एवं जल प्रदान करने की क्षमता को प्रभावित करते हैं। मृदा पौधों की वृद्धि के लिये एक माध्यम के रूप में कार्य करती है क्योंकि यह पौधों की उनकी वृद्धि के लिये निम्न उपयुक्त एवं आवश्यक दशायें प्रदान करती है

1 पोषक तत्व

2 जल के लिये भण्डार -घर

3 जडों के श्वसन के लिए ऑक्सीजन

4 यांत्रिक आधार।

1 पोषक तत्व - पौधों को अपनी वृद्धि के लिये कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम, मैगनीशियम, गंधक तथा आयरन आदि तत्वों की आवश्यकता होती है।

2 जल के लिए भण्डार घर - मृदा जल के लिये भण्डार घर का कार्य करती है। जल मृदा का एक प्रमुख अंग है जो पौधों तथा फसलों की वृद्धि के लिये अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण पदार्थ है। जल स्वयं एक पोषक नहीं अपितु यह अन्य पोषक तत्वों को घोलकर पौधों में पहुंचाने के लिए एक उपयुक्त माध्यम है। यह पौधों में प्रकाश संश्लेषण के लिए आवश्यक होता है। मृदा जल ताप एवं मृदा वायु को भी नियंत्रित रखता है।

3 जडों के श्वसन के लिए ऑक्सीजन - सभी जीवधारी श्वसन में ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं। पौधों की जडों को श्वसन के लिये आवश्यक ऑक्सीजन मृदा वायु से प्राप्त होती है। मृदा वायु के साधारणतया ऑक्सीजन 20.3 प्रतिशत तथा नाइट्रोजन 79 प्रतिशत होती है। जल मग्न तथा भारी मृदाओं की अपेक्षा बलुई मृदा में नाइट्रोजन अधिक होती है। मृदा में 10 प्रतिशत से कम ऑक्सीजन होने पर जड की वृद्धि रूक जाती है।

4 यांत्रिक आधार - प्राय: मृदायें पौधों को ऐसी दशायें प्रदान करती है जिसमें मृदा में पौधों की जडे फैल सकती हैं और सफलतापूर्वक गहराई तक जा सकती है। ये मृदायें पौधों के लिये सबसे उपयुक्त होती है क्योंकि इनमें वृद्धि करने वाले पौधे मृदा के एक बडे आयतन से पोषक तत्वों को शोषित कर सकते है और तेज वायु के तथा जल के अभाव को सहन कर सकते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि मृदा पादप वृद्धि के लिये एक आवश्यक माध्यम के रूप में कार्य करती है।

1.4 मृदा अध्ययन के रूप

मृदा विज्ञान आधुनिक अध्ययन निम्न दो रूपों में किया जाता है -

1 इन्डेफोलाजी - यह मृदा विज्ञान की वह शाखा जिसके अन्तर्गत मृदा का अध्ययन उच्च पौधों को दृष्टि में रखकर किया जाता है। इस विज्ञान के अन्तर्गत अच्छी फसल उत्पादन के लिये मृदाओं के गुणों, इसके समुचित उपयोग तथा इसकी आर्थिक व्यवस्था का अध्ययन किया जाता है।

2 पेडॉलोजी - यह मृदा विज्ञान की वह शाखा है जिसके अन्तर्गत मृदा को शुद्ध रूप से एक प्राकृतिक पिंड माना जाता है और मृदा की व्यावहारिक उपयोगिताओं का कोई विशेष ध्यान नहीं रखा जाता है। इस शाखा में मृदा के संगठन, जीवन तथा गतिषीलता के अध्ययन द्वारा मृदा के जन्म, जीवन तथा वितरण का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। मृदा विज्ञान की इस शाखा के साहयता से मृदाओं के गुणों, वर्गीकरण, व्यवहार, शरीर विज्ञान और शरीर रचना विज्ञान का अध्ययन किया किया जाता है। वास्तव में पेडॉलोजी मृदा उम्पाकता के रहस्यों की कुंजी है और यह अध्ययन मृदा विज्ञान का एकमात्र लक्ष्य है।

1.5 मृदा के अवयव

विभिन्न मृदाओं की रचना एवं संगठन सदैव भिन्न होते है। सामान्यतया खनिज मृदाओं में मृदाओं का आयतन की दृष्टि से लगभग संगठन निम्न प्रकार है -

खनिज पदार्थ = 45%

कार्बनिक पदार्थ = 5%

मृदा पदार्थ = 25%

मृदा पदार्थ = 25%

वायु शुष्क मृदा में आयतन की दृष्टि से प्राय: खनिज पदार्थ = 45-50%कार्बनिक पदार्थ = 5% जल = 5-10% होता है।

खनिज मृदा का भारात्मक संगठन - एक घन फुट मृदा खनिज पदार्थ 77 पौंड, कार्बनिक पदार्थ 3 पौंड, जल 16 पौंड तथा वायु 4 पौंड पायी जाती है।

1.2.4 मृदा के अवयवों का पादप वृद्धि में महत्व -

मृदा के चारों अवयव मिश्रित दशाओं में होते है। इसके परिणामस्वरूप साधारण एवं जटिल दोनों प्रकार की अभिक्रियायें होती रहती हैं और पौधों की वृद्धि के लिये आदर्श वातावरण बन जाता है। विभिन्न मृदा अवयवों तथा उनके पादप वृद्धि में महत्व का वर्णन निम्न प्रकार किया जा सकता है -

1 **खनिज पदार्थ** - मृदा के खनिज पदार्थ को कणों के आकार के आधार पर निम्न चार भागों में बांटा जाता हैं -

प्रभाग का आकार	सामान्य नाम
1 बहुत छोटा	पत्थर, कंकड
2 मोटा	रेत
3 महीन	सिल्ट
4 बहुत महीन	चिकनी मिट्टी

खनिज पदार्थ में सलिका, ऐलुमिना, तथा फैरिक ऑक्साइड लगभग 90 प्रतिशत और अन्य तत्व लगभग 10 प्रतिशत तक होते है। खनिज पदार्थ का रासायनिक संगठन निम्न प्रकार होता हैं -

Sio2 = 76%

Al2O3 = 12%

Fe2O3 = 3%

K2O = 2%

CaO = 1%

Mgo = 1%

N, P, Cu, B, Zn व Mn आदि = 5%

खनिज पदार्थ के चिकनी मिटटी प्रभाग में पौधों के पोशण के लिये आवश्यक पदार्थ अकार्बनिक रूप में उपलब्ध होते हैं। चिकनी मिट्टी में उपस्थित तत्व को पौधे अपने भोजन के रूप में ग्रहण कर लेते हैं।

1. **कार्बनिक पदार्थ** - अधिकांष मृदाओं की उपरी परत में कार्बनिक पदार्थ भार की दृष्टि से 1 से 6 प्रतिशत तक पाया जाता है। प्राय: कार्बनिक पदार्थ की औसत मात्रा 3 प्रतिशत होती है। मृदा के कार्बनिक पदार्थ में विशेष रूप से अविच्छेदित अथवा आंषिक अपघटित पौधों के अवशेष पौधों के अवशेष पदार्थ अधिक मात्रा में होते हैं। इसके अतिरिक्त इसमें जीवित तथा मृतक जन्तु एक सूक्ष्म जीवाणु और कल्प मात्रा में उनका मल भी होता है। कार्बनिक पदार्थ के अपघटन से बने पदार्थ हयूमस कहते हैं। हमूयस काले या भूरे रंग का बरेवेदार कोलॉइडी पदार्थ होता है। हयूमस की जल शोषण क्षमता और पोषक आयन्स को ग्रहण करने की क्षमता अत्यधिक होती है। हयूमस मत्रदा की जल शोषण क्षमता और पोषक आयन्स को ग्रहण करने की क्षमता अत्यधिक होती है। हयूमस मृदा में पादप वृद्धि के लिये एक उपयुक्त माध्यम उत्पन्न करता है। सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा कार्बनिक पदार्थ के अपघटन से पौधों को पोषक तत्व उपलब्ध होते हैं। अत: स्पष्ट है कि मृदा का कार्बनिक पदार्थ पादप वृद्धि में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है।
2. **मृदा जल** - मृदा जल में रन्ध्रों और मृदा घोल के रूप में विद्यमान रहकर पादप वृद्धि के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मृदा के गलने सडते हुए खनिज और कार्बनिक पदार्थ के जल में घुलने से बने घोल को मृदा घोल कहते है। यह घोल बहुत हल्का होता है। मृदा घोल में पादप पोषक सूक्ष्म मात्रा में विद्यमान होते है। पौधे मृदा घोल से पोषक तत्व ग्रहण करते हैं जिसमें खनिज एवं कार्बनिक पदार्थों से पोषक का प्रतिस्थापन होता रहता है। पौधे C, H तथा O जल या वायु से प्राप्त करते है। शेष प्रमुख तत्व N, P, K. Ca, Mg, S और लघु तत्व पौधों को मृदा घोल में उपलब्ध होते हैं। कार्बन डॉई ऑक्साइड के जल में घुलने से बना निर्बल कार्बनिक अम्ल (H_2CO_3) पौधों को मृदा घोल के लिये पोशकों की उपलब्धि की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। ट्राईकैल्शियम फॉस्फेट और कैल्शियम कार्बोनेट, जो शुद्ध जल में लगभग अघुलशील होते है, निर्बल अम्लों में घुलकर पौधों के लिये पोशकों की प्राप्यता में वृद्धि करते हैं।
3. **मृदा वायु** - मृदा वायु रन्ध्राकाशों में विद्यमान होती है। अत: मृदा में इसका वितरण समान नहीं होता। वायुमण्डल की अपेक्षा मृदा वायु में ऑक्सीजन एवं नाइट्रोजन की मात्रायें कम परन्तु कार्बन डॉइ ऑक्साइड की मात्रा वायु में ऑक्सीजन एवं नाइट्रोजन की मात्रायें कम परन्तु कार्बनडाई ऑक्साइड की मात्रा अधिक होती है। मृदा वायु जल वाश्प से संतप्त रहती है। साधारण मृदा में गहराई के साथ साथ ऑक्सीजन की मात्रा कम होती है और CO_2 की मात्रा में वृद्धि होती जाती है।

पौधों का C,H और O मृदा एवं जल से प्राप्त होते हैं। पेड पौधे और सूक्ष्म जीवाणु श्वसन में स्वतंत्र ऑक्सीजन लेकर कार्बन डाइ ऑक्साइड छोडते हैं। CO_2 मृदा जल में घुलकर कार्बोनिक अम्ल नामक निर्बल अम्ल बनाती है। इस अम्ल की उपस्थिति में सिलिकेट खनिजों पर जल की जल अपघटनीय

क्रिया बढ़कर मृदा के निर्माण में सहायता करती है। मृदा वायु की नाइट्रोजन बन्धक बैक्टीरियों की उपस्थिति में जटिल कार्बनिक यौगिकों में परिवर्तित हो जाती है। स्वस्थ मृदाओं में पादप बैक्टीरियाओं की उपस्थिति में जटिल कार्बनिक यौगिकों में परिवर्तित हो जाती है। स्वस्थ मृदाओं में पादप जीवाणु पाये जाते हैं जो पौधों के लिये आवश्यक होते है।

1.2.5 मृदा उच्छेद, परिच्छेद या प्रोफाइल

मृदा पर प्राकृतिक क्रियाओं उदाहरणार्थ - जल, वायु और सूर्य किरणों के प्रभाव से कुछ वर्शों में मृदा के रूप, रंग और गुणों में विशेष परिवर्तन हो जाता है। इसके फलस्वरूप मृदा के नीचे भिन्न रूप, रंग तथा गुण वाली मिट्टी के बहुत से संस्तर हो जाते हैं। यदि मृदा की उपरी सतह से नीचे की और 10 या 12 फुट गड्डा खोदकर मिट्टी के पार्श्व की अवलोकन करें तो विभिनन रूप, रंग तथा रचना की मिट्टी एक स्तर से दूसरे तक मिलती जायेगी। ये स्तर (परतें) मिलक मृदा प्रोफाइल की एक इकाई बनते है। मृदा को ऊध्र्वाधर रूप में काटने पर जनिक रूप से संबंधितविभिन्न संस्तर दिखाई पडते हैं जिनकी इकाई को मृदा प्रोफाइन कहते हैं। मृदा प्रोफाइल मृदा के उस रूप में प्रकट करता है जो उसकी भूत एवं वर्तमान की दषाओं को प्रदर्शित करता है।

मृदा प्रोफाइल की विभिनन परत जो स्पष्ट दिखाई देती हैं या उन्हें विश्लेषण द्वारा पहचाना जा सकता है, संस्तर कहलाती हैं। मृदा में विभिन्न संस्तर जल के निक्षालन द्वारा बनते हैं। जल मृदा के ऊपरी संस्तर पर से होता हुआ और अनेक रासायनिक पदार्थों को लेता हुआ नीचे के संस्तर में जाता है। वहां मिट्टी के साथ मिलकर बहुत सी रासायनिक क्रियाओं के द्वारा यह मृदा के रंग रूप को परिवर्तित कर देता है। इस प्रकार पदार्थ ऊपर के संस्तर से आकर नीचे के संस्तर में एकत्रित हो जाते हैं।

अध्ययन की सुविधा के लिये मृदा प्रोफाइल को अ, ब तथा स तीन प्रधान संस्तरों में बांटते हैं -

अ - संस्तर - यह मृदा का ऊपरी संस्तर है। जिससे अनेकों पदार्थ जल में घुलकर या लींचिग क्रिया द्वारा नीचे की ओर चले जाते हैं। इसे एल्युविलय संस्तर भी कहते हैं। इस संस्तर को पुन: अ00, अ0, अ1, अ2 तथा अ3 अवसंस्तरों में विभाजित किया जाता है।

अ00, - इस उपसंस्तर में अविच्छेदित कार्बनिक पदार्थ विछावन के रूप में होता है। यह भाग प्राय: उश्ण प्रदेषों व जंगलों की मृदाओं में पाया जाता है।

अ0 - यह उपंसस्तर अ00 के नीचे की परत हैं। यह बादामी या काले रंग का होता है। यह अम्लीय संस्तर है। कुछ दषाओं में दसकी पी.एच. 4 से भी कम हो जाती है। इसमें आंषिक रूप से अपघटित कार्बनिक पदार्थ होता है। यह चटाईदार, रेषेदार या दानेदार हो सकता है।

अ1 - इस संस्तर में खनिज पदार्थों की प्रधानता होती है। कार्बनिक पदार्थ की उपस्थिति के कारण इसका रंग काला होता है। यह संस्तर काली मिट्टी में अधिक विकसित अर्थात् मोटा और पॉडसॉल मृदा में बहुत बारीक या अनुपस्थित रहता है।

अ2 - यह हल्के रंग का खनिज संस्तर होता है। इसके कुछ मूल अवयव लींचिग तथा विरंजन की क्रियाओं द्वारा आंषिक रूप से निकलकर नष्ट हो जाते हैं। यह उपसंस्तर पर्याप्त विकसित होता है।

अ3 - यह अ 2 के समान अ तथा ब संस्तरों के मध्य एक संक्रमण पर है जो प्राय: अनुपस्थित रहती है।

ब - संस्तर - यह संचयन संस्तर होता है, क्योंकि लीचिंग आदि द्वारा अ- संस्तर से आकर इसमे जमा हो जाते है। इसमें हयूमस, फैरिक ऑक्साइड, तथा ऐलुमिनियम के ऑक्साइड आदि पाये जाते हैं। इस संस्तर को इल्लुवियल संस्तर भी कहते हैं। इसे अवमृदा के नाम से भी पुकारते हैं। इसे ब1, ब2 तथा ब3 उपसंस्तरों में विभाजित किया जाता है।

ब1 - संस्तर - यह संक्रमण उपसंस्तरों ब2 के समान होता है। यह अधिकांष मृदाओं में अनुपस्थित रहता है, परन्तु पॉडसॉल में पाया जाता है।

ब2 - संस्तर - यह संचयन उपसंस्तर है तिसमें मुख्यतया आयरन व ऐजुमिनियम के यौगिक होते हैं। पॉडसॉल मृदा में इसका रंग लाल बादामी होता है। नम प्रदेषों की मृदाओं में सिलिकेट क्ले इस संस्तर में एकत्रित हो जाती है।

ब2 - संस्तर - यह भी एक संक्रमण संस्तर है जो अनुपस्थित या उपस्थित हो सकता है।

स - संस्तर - यह भी एक संक्रमण संस्तर है । इस पैतृक संस्तर भी कहते हैं क्योंकि इससे ऊपर वाली मिट्टी की उत्पत्ति हुई है। इस संस्तर से चट्टान और उसमें बने बडे बडे कण पाये जाते हैं। इसका रंग भूरा या बादामी होता है। इस संस्तर में आयरन व ऐलुमिनियम के ऑक्साइड एकत्रित हो जाने के फलस्वरूप अत्यन्त कठोर परत बन जाती है और इसमें जल का लीचिंग नहीं हो पाता।

1.3 चट्टानें तथा खनिज

1.3.1 विस्तार -

1.3.2 चट्टाने - चट्टान एक या अधिक खनिज पदार्थों से भी ठोस पिण्ड होती है। चट्टाने - चट्टान एक या अधिक खनिज पदार्थों से भी उसमे पाये जाने वाले खनिजों के गुणों पर निर्भर होता है।

1.3.3 खनिज - ये प्रकृति में पाये जाने वाले सयोग अकार्बनिक पदार्थ की जिनका रासायनिक संगठन निष्चित होता है। खनिज पदार्थ एक या एक से अधिक तत्वों के रासायनिक योग से बनते है।

चट्टानों के प्रकार

चट्टानों के परिवर्तन से मृदा की उत्पति होती है। मुख्य रूप से चट्टाने तीन प्रकार की होती है।

विभिनन चट्टानों में विभिन्न प्रकार के खनिज पाये जाते है। इनकी रासायनिक रचनायें भिन्न भिन्न प्रकार की होती है। इनका बडा रूप अति कठोर, अति ढीला तथा शीघ्र टुटने वाला हो सकता है। चट्टानों में विद्यमान खनिज पदार्थ समांगी अकार्बनिक पदार्थ होते है। इनकी रासायनिक स्क्ना निश्चित होती है। इनमें एक या एक से अधिक मूल तत्व निश्चित रासायनिक अनुपात में होते है। इनका आकार भी निश्चित होता है।

1.3.4 चट्टानों के प्रकार

चट्टानें मुख्य रूप से निम्न तीन प्रकार की होती है -

1. आग्नेय चट्टानें (Igneous Rocks),
2. पात्तालिक या तलछटी चट्टानें (Sedimentary Rocks),
3. कायान्तरित या परिवर्तित चट्टानें (Metamorphic Rocks)।

चट्टानें के विस्तृत वर्गीकरण को निम्न प्रकार प्रदर्शित कर सकते हैं -

चट्टानें की विशेषतायें (Characteristics) एवं उदाहरण

1. आग्नेय (Igneous) चट्टानें

आग्नेय सबसे प्राचीन चट्टानें हैं। अत: इन्हें प्राथमिक (Primary) चट्टान भी कहते हैं। ये चट्टान पृथ्वी के दहकते हुए गर्म गोले के धीरे-धीरे ठण्डा होने से बनी हैं। ये भूमि के सबसे निचले भाग में पायी जाती हैं। अन्य चट्टानें अति कठोर एवं सुसंगठित होती है। ये चट्टानें परतदार (Stratified) नहीं होती।

सिलिका की मात्रा के अनुसार आग्नेय चट्टानां को निम्न भागों में विभक्त किया गया है -

(i) अम्लीय (Acidic) आग्नेय चट्टानें - इन चट्टानां में सिलिका 65% से 85% तक होती है। ग्रेनाइट (Granite) व रहयोलाइट (Rhoylite) इसी प्रकार की चट्टानां के उदाहरण हैं।

इन चट्टानां का निर्माण क्वार्ट्ज (Quartz), ऑर्थोक्लेज (Orthoclase) तथा अभ्रक (Mica) आदि खनिज पदार्थों द्वारा होता है। इन चट्टानां में चूने की मात्रा कम होती है परन्तु पोटेशियम प्रचर मात्रा में उपलब्ध होता है। इनका रूपान्तर होने पर प्राप्त मृदा बहुत बारीक होती है। क्वार्टज के कण मिले होने के कारण इनसे प्राप्त मृदा बहुत अधिक बलुई होती है।

(ii) मध्यम (Intermediate) आग्नेय चट्टानें - इनमें सिलिका 55% से 65% तक होती है। इनके उदाहरण सियेनाइट (syenite) तथा डायोराइट (Diorite) आदि होते हैं।

(iii) भास्मिक (Basic) आग्नेय चट्टानें - भास्मिक चट्टानां में सिलिका 45% से 55% तक होती है। उदाहरण - बेसाल्ट (Basalt) तथा ग्रैब्रो (Grabbro)। इनसे बनी मृदायें उपजाऊ होती हैं क्योंकि इनमें चूना, पोटेशियम और मैगनीशियम पर्याप्त मात्रा में होते हैं। बेसाल्ट चट्टान से काफी मिट्टी बनती है।

2. पात्तालिक या तलछटी (Sedimetary) चट्टानें

आग्नेय चट्टान का कुछ भाग वायु एवं जल से प्रभाव से अन्यत्र जाकर दब जाता है। इसके फलस्वरूप तलछटी चट्टानां का निर्माण होता है। ध्यान से देखने पर इन चट्टानां के भीतर अनेक तहें दृष्टिगोचर होती है। ये तहें रासायनिक पदार्थो द्वारा परस्पर चिपकी रहती है। ये चट्टानें नदियों के मुहाने पर बनती हैं। बालू और चिकनी मिट्टी के पत्थर इन चट्टानां के उदाहरण है। ये चट्टानें बहुत ही परतदार होती हैं। प्राकृति दबाव के कारण ये कुछ कड़ी होती हैं।

तलछटी चट्टानां की बनावट की मुख्यतया यान्त्रिक तथा रासायनिक दो क्रियायें होती हैं। उत्पत्ति के आधार पर इन्हें निम्न तीन वर्गों में बाँटा गया है -

(i) भौतिक या यान्त्रिक (Mechanical) विधियों द्वारा निर्मित चट्टानें - इसके अन्तर्गत वे चट्टानें आती हैं जो नदियों से रेत की परत के जमने और उन पर दबाव पड़ने के फलस्वरूप बनती हैं। इन पर प्रतिवर्ष परत जमती रहती है और ये ठोस पत्थर का रूप धारण कर लेती हैं। उदाहरण - बालू पत्थर (Sand Stone), क्ले पत्थर तथा स्लेटी पत्थर (Slate) आदि।

(ii) रासायनिक (Chemical) विधियों द्वारा निर्मित चट्टानें - इसके अन्तर्गत वे चट्टानें आती हैं जो जल में रासायनिक पदार्थो के घुलने से बनती हैं। इनमें बहुत से खनिज घुलकर वाष्पीकरण द्वारा

जम जाते हैं और धीरे-धीरे चट्टान का रूप धारण कर लेते हैं। उदाहरणार्थ - चूने का पत्थर (Dolomite), जिप्सम तथा सेन्ध नमक आदि।

(iii) जीवांश (Organic) पदार्थ युक्त चट्टानें - इनके अन्तर्गत वे चट्टाने आती हैं जो जीव-जन्तुओं की हड्डियों और पेड़-पौधों के सड़े-गले अवशेष से तलछट के रूप में जमा होने से बनती है। जैसे - चाक तथा चूना पत्थर (Lime stone)।

3. कायान्तरित या रूपान्तरित (Metamorphic) चट्टानें

ये चट्टानें आग्नेय तथा तलचटी चट्टानां में परिवर्तन के परिणामस्वरूप बनती हैं। इन चट्टानां का रूप-रंग मूल चट्टानां से भिन्न होता है। अधिक ताप एवं दबाव के कारण ये अतयन्त कठोर हो जाती हैं।

कुछ मूल चट्टानां से निर्मित कायान्तरित चट्टानां के उदाहरण निम्नलिखित है -

मूल चट्टान	कायान्तरित चट्टान
बालू पत्थर (Sand stone)	क्वाटर्जाइट (Quartzite)
चूना पत्थर (Lime Stone)	संगमरमर (Marble)
स्लेटी पत्थर (Shale)	स्लेट (Slate)
अभ्रक (Mica)	शिष्ट (Schist)
ग्रेनाइट (Granite)	नीस (Gneiss)

चट्टानां तथा खनिजों में भिन्नता - चट्टानां के परिवर्तन से मृदा की उत्पत्ति होती है। विभिन्न चट्टानां में विभिन्न प्रकार के खनिज पदार्थ खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। इनकी रासायनिक रचनायें भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं। इनका बाह्य रूप अति कठोर, अति ढीला और शीघ्र टूटने वाला हो सकता है।

चट्टानां में विद्यमान खनिज पदार्थ समांगी (Homogeneous) अकार्बनिक पदार्थ होते हैं। इनकी रासायनिक अनुपात में होते हैं। इनमें एक या एक से अधिक मूल तत्व निश्चित रासायनिक अनुपात में होते है। इसका आकार भी निश्चित होता है।

1.3.5 मृदा खनिज

चट्टानां में अनेक समांगी तथा ठोस पदार्थ विद्यमान होते हैं जिन्हें खनिज कहते है। इनका आकार तथा रासायनिक संगठन निश्चित होता है। इनमें परिवर्तनों के फलस्वरूप मृदा की उत्पत्ति होती है। मृदा में उपस्थित खनिजों को प्राथमिक तथा द्वितीयक खनिजों में वर्गीकृत किया जाता है। मृदा निर्माण में योग देने वाले इन खनिजों के नाम एवं सूत्र अग्र प्रकार हैं -

मृदा खनिज नाम	सूत्र
प्राथमिक खनिज (Primary Minerals) -	
1. क्वार्ट्ज	SiO_2
2. ऑर्थोक्लेज	$KAlSi_3O_8$
3. प्लेजियोक्लेज	$CaNaAlSi_3O_8$

4. मस्कोवाइट $KAl_3Si_3O_{10}(OH)_2$

5. बायोटाइट $KAl(Mg.Fe)_3Si_3O_{10}(OH)_2$

6. हार्न ब्लेण्डी $Ca_2AlMg_2Fe_3Si_6O_{22}(OH)_2$

7. औगाइट $Ca_2(Al.Fe)_4(Mg.Fe)Si_6O_{24}$

द्वितीयक खनिज (Secondary Minerals) -

1. कैल्साइट $CaCO_3$

2. डोलोमाइट $CaCO_3.MgCO_3$

3. जिप्सम $CaSO_4.2H_2O$

4. हीमेटाइट Fe_2O_3

5. लिमोनाइट $Fe_2O_3.3H_2O$

6. गिब्बासाइट $Al_2O_3.3H_2O$

7. क्ले खनिज (केआलिनाइट) $Al_2O_3.2SiO_2.H_2O$

8. ऐपेटाइट $[Ca_3(PO_4)_2]_3.Ca(Cl/F)_2$

क्ले या मृतिका खनिज **(Clay Minerals)**

क्ले खनिज सबसे मुख्य अकार्बनिक मृदा कोलॉइड होते हैं। खनिज एक प्राकृतिक पदार्थ होता है जो प्राय: अकार्बनिक होता है। इसका रासायनिक संगठन स्थिर होता है और साधारणतया इसकी निश्चित अणुक रचना (Arrangement) होती है जो प्राय: भारात्मक (Gravimetric) रूप में प्रदर्शित की जाती है। बहुत से प्राथमिक सिलिकेट खनिज विघटित होकर क्ले और क्ले से सम्बन्धित पदार्थ बनाते हैं जिन्हें द्वितीयक सिलिकेट खनिज कहते हैं। ये खनिज जलीय ऐलुमिनियम सिलिकेट होते हैं। इन्हें क्ले खनिज कहते हैं। क्ले खनिज क्लेयुक्त पदार्थों में पाये जाते हैं जिनके कणों का आकार लगभग 5 मिलिमाइक्रॉन (0.0005 मि.मी.) से कम होता हैं। सिलिकेट खनिजों के रासायनिक ऋतुक्षरण के मृदा कोलॉइड बनते हैं जो सबसे अधिक सक्रिय कोलॉइड होते हैं। क्ले खनिज रवेदार होते हैं।

विभिन्न मृदाओं में पाये जाने वाले खनिज को तीन मुख्य समूहों में विभक्त कर सकते हैं। अत: सिलिकेट क्ले के निम्न तीन मुख्य प्रकार होते हैं -

1. केओलिन (Montmorillonite),
2. मॉन्टमोरिलोनाइट (Montmorillonite),
3. इलाइट या जलीय अभ्रक (Ilite or Hydrous Micas)।

क्ले खनिजों का बनना और इनके गुण

इसका विवरण निम्न प्रकार दिया जा सकता है -

1. केओलिन - इस समूह का सबसे मुख्य सदस्य केओलिनाइट (Kaolinite) है। यह रवेदार है और इसका संगठन $Al_2O_3.2SiO_2.2H_2O$ है। इसमें Al_2O_3 = 39.5%, SiO_2 = 46.5% और जल = 14% होता है। शुद्ध अवस्था में इसका रंग सफेद होता है परन्तु यह प्राय: स्लेटी, सफेद, नीला, भूरा और लाल सा पाया जाता है। क्ले खनिज के केओलिन समूह का दूसरा सदस्य हेलोइसाइट (Halloysite) है जिसमें केओलिनाइट की अपेक्षा केवल जल की मात्रा अधिक होती है। इसका रासायनिक संगठन $Al_2O_3.2SiO_2.4H_2O$ है। इसमें Al_2O_3 = 36.9%, SiO_2 = 43.5% और जल = 19.6% होता है। डिक्काइट (Dickite) और नैकराइट (Nacrite) केओलिन समूह के ही अन्य दो खनिज हैं जिनका संगठन केओलिनाट के समान है। एलोफेन (Allophane) भी क्ले जैसा खनिज है। यह तर ताप जलवायु (Humind Temperate Climate) वाली मृदाओं में पाया जाता है। इसका रासायनिक संगठन $Al_2O_3.3SiO_2.5H_2O$ बताया गया है।

   केओलिन समूह के कण ऐलुमिना और सिलिका की क्रमश: एक के ऊपर दूसरी अनेक पतली परतों द्वारा बनते हैं। इस प्रकार का खनिज 1 : 1 अवर्धनीय जाली (Non-expanding Lattice) के आकार का कहलाता है। इसके क्रिस्टल (रवों) का व्यास 1 से 5 माइक्रॉन तक होता है। प्रत्येक रवों इकाई की दोनों परतें परस्पर ऑक्सीजल परमाणु द्वारा बँधी रहती हैं। ये विभिन्न इकाइयाँ परस्पर ऑक्सीजन तथा हाइड्रोक्सिल (–O–OH–) कड़ियों द्वारा दृढ़ता से बँधी रहती है।

   केओलिनाइट खनिज अधिक ऋतुक्षरण (Highly Weathered) तथा अत्यधिक अन्तर्गलित (Strongly Leached) अम्लीय मृदाओं में विशेषकर पाये जाते हैं। उष्ण (Warm Temperate) प्रदेशों की मृदाओं के क्ले अंश में केओलिनाइट की अधिक प्रतिशत मात्रा होती है। ऋतुक्षरण के प्रति प्रतिरोध रखने के कारण पुरानी मृदाओं में केओलिनाइट अधिक मिलता है।

   वे मृदायें, जिनमें केओलिनाइटयुक्त क्ले अधिक होती है, सूखने पर कम सिकुड़ती हैं और गीली होने पर कम फूलती हैं। यही कारण है कि ऐसी मृदाओं की सतह यदि दानेदार होती है तो उनकी जल अन्दर लेने की गति अधिक होती है। केओलिनाइट की धनायन विनिमय क्षमता कम होती है।

2. मॉण्टमोरिलोनाइट - यह रवेदार क्ले खनिज होता है। यह मृदा का बहुत महत्वपूर्ण खनिज है। इसका सही संगठन अभी तक ज्ञान नहीं हो पाया है। इसे $Al_2O_3.5SiO_2.5–7H_2O$ द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है। साधारणतया इसमें मैग्नीशियम और चूना होने के कारण इसका संगठन (Mg, Ca), $Al_2O_3.5SiO_2$ n.H_2O भी लिखते हैं। इसमें सिलिका और ऐलुमिना का अनुपात 5 : 1 व इससे भी अधिक और 2 : 1 के समान व इससे कम भी हो सकता है। यह अनुपात प्राय: 4 : 1 होता है। इसके रवों की रचना में दो सिलिका की पतों के बीच एक

ऐलुमिना की परत होती है। अत: मॉन्टमोरिलोनाइट 2 : 1 के प्रकार का वर्धनीय रवा प्रजाल (Expanding Crystal Lattice) रखता है। इसके कणों का व्यास 0.01 से 2 माइक्रोन तक होता है। इसमें रवा इकाइयाँ परस्पर ऑक्सीजन (–O–O–) कड़ियों द्वारा ढ़ली रूप में बँधी होती हैं।

यदि मॉन्टमोरिलोनाइट के ऐलुमिनियम का प्रतिस्थापन पूर्णतया मैगनिशियम द्वारा हो जाये तो खनिज को सेपोनाइट (Saponite) कहते हैं। यदि Al का प्रतिस्थापन आयरन द्वारा हो तो खनिज को नॉन्ट्रोनाइट (Nontronite) कहते हैं। बीडैलाइट (Beidellite) एक मॉन्टमोरिलोनाइट से सम्बन्धित खनिज है जिसमें सिलिका व ऐलुमिना का अनुपात 3 : 1 होता है।

मॉन्टमोरिलोनाइट गीला होने पर अत्यधिक फैलता है और सूखने पर बहुत सिकुड़ता है। जब फूली हुई या मृदा सूखती है तो बड़ी-बड़ी दरारें पड़ जाती हैं जिनके बीच में 6 इन्च तक की दूरी हो जाती है। मॉन्टमोरिलोनाइट खनिज वाली मृदायें ठण्डी जलवायु वाली क्ले में अत्यधिक पायी जाती हैं। यह कम या साधारण ऋतुक्षरित मृदाओं का, जिनका पी-एच मान अपेक्षाकृत अधिक होता है और जिनमें कार्बनिक पदार्थ अधिक होता है, महत्वपूर्ण अवयव है। वनों और घास के मैदानों वाली मृदाओं के मध्य के क्षेत्रों में मॉन्टमोरिलोनाइट अधिक मात्रा में होता है।

3. इलाइट या जलीय अभ्रक - ये खनिज साधारण अभ्रक से सम्बन्धित हैं। इस समूह का प्रमुख खनिज इलाइट है। इसका रासायनिक संगठन $K_2O.2Al_2O_3.8SiO_2.2H_2O$ होता है। संरचना की दृष्टि से यह मॉन्टमोरिलोनाइट की भाँति ही होता है। इसके रवे का बनना सिलिका की दो तहों के बीच जलीय ऐलुमिनियम आक्साइड की तह होने से मान सकते हैं। पोटेशियम आयन दो समीपस्थ सिलिका परतों में रहते हैं और इनका रासायनिक बन्ध सिलिका की दोनों सहहों को एक साथ बाँध कर रखता है। इस प्रकार इलाइट में 2 : 1 के प्रकार का अवर्धनीय रवा प्रजाल होता है। इनके कणों का आकार पहले दोनों समूहों के कणो के बीच होता है। इलाइट क्ले भीगने पर कुछ फूल जाती है और सूखने पर थोडी-सी सिकुड़ जाती है। मृदा का पोटेशियम इस खनिज की देन है। इस कोलॉइड की मृदा कृषि की दृष्टि से मॉन्टमोरिलोनाइट की अपेक्षा कम उपयोगी होती है। पोटेशियम के कारण इसकी उर्वरता अधिक हो सकती है।

1.3.6 मृदा उत्पादक खनिज पदार्थों का वर्णन -

मिट्टी में पाये जाने वाले या मिट्टी के निर्माण में योग देने वाले प्रमुख निम्न है '

अ प्राथमिक खजिन

1 क्वार्टज – यह रासायनिक सिलिका का शुद्ध रूप है। जो क्रिस्टलीय तथा अक्रिस्टलीय रूप में होता है। यह अनेक आम्लिक आग्नेय तथा कुछ जातालिक चट्टानों का अंश होता है। यह अत्यधिक कठोर होता है और इसका विच्छेद कठिनाई से होता है। चूर्ण कभी कभी सफेद रंग और कही गुलाबी रंग के होते है। यह अल्प पारदर्शी होते है। चूर्ण करने पर सफेद रंग आता है।

यह पानी में अविलय होता है। किन्तु अम्लीय जल में विलेय होता है। यह समस्त मृदाओं में 85 से 99 प्रतिशत तक पाया जाता है। इसके कारण मृदा में स्थानीपन आता है।

2 फेल्स पार – ये खनिज अधिक महत्वपूर्ण है। अक्रिस्टलीय चट्टानों में मिलते है और भार में हल्के होते है। इनको दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम आर्थोक्लेज फेल्सपार व दूसरा प्लोजियोक्लेज फेल्सपार।

3 माइका – इनकी रचना अति सकीर्ण होती है। ये पोटेशियम, हाइड्रोजन, आयरन, मैगनिशियम, सोडियम तथा लिथियम आदि के हाइड्रेटिक एलुमिननियम आर्थोसिलिकेट होते है। ये दो प्रकार की होती है।

1 मस्कोवाइट (वाइट माइका) – यह पोटेशियम ऐल्युमिलियम के सिलिकेट होते है। यह सफेद या हल्के रंग का खनिज है। इसमें आयरन तथा मैगनिशियम कम मात्रा में पाया जाते है। यह प्राय: ग्रेनाइट तथा बहुत सी पातालिक व रूपान्तरित चट्टानों में मिलता है।

यह सबसे कम परिवतर्तित खनिज है।

1 बायोटाइप (काली माइका) – यह पोटेशियम, ऐलुमिनियम, मैगनिशियम आयरन के सिलिकेट है। इस माइका में पोटाश को आंशिक रूप से मैग्निशियम द्वारा विस्थापित किया जाता है।

4 हार्न ब्लैडे – इस खनिज के प्रधान अवयव निम्नलिखित है -

1 एल्युमिनियम सिलिकेट
2 चूना का सिलिकेट
3 मैग्नीशियम का सिलिकेट
4 आयरन का सिलिकेट तथा

उपरोक्त के अतिरिक्त मैग्नीज तथा क्षारीय धातु भी प्राय: पायी जाती है। इसका रंग प्राय: काला होता है। कभी कभी हरा भी मिलता है। यह आसानी से विच्छेदित हो जाता है।

5 आलीवाइन – यह मैग्नीशियम तथा आयरन सिलिकेट के योग से बना खनिज होता है। इसमें कांच जैसी चमक होती है। यह आग्नेय भास्मिक चट्टानों में मिलता है। इसका रंग पीलेपन के साथ हरा होता है।

6 कैल्शियम कार्बोनेट – येअसिलिकेट खनिज पदार्थ है। जो कई क्रिस्टलीय चट्टानों में पाये जाते है। इसके मुख्य रूप कैल्साइट, डोलोमाइट, मैग्नेसाइट आदि है।

7 ऐथटाइट – यह क्रिस्टलीय कैल्शियम फास्फेट है। जिसमें चुने का फलोराइड एवं क्लोराइड होता है। यह गहरे बादामी रंग का खनिज होता है। तथा आग्नेय चट्टानों में अल्प मात्रा में पाया जाता है। यह मृदा में फास्फोरस का मुख्य स्रोत है।

ब द्वितीयक खनिज

1 आयरन आक्साइड – यह लाल रंग का होता है। यह अपारदश्क, भारी तथा कठोर होता है। यह आग्नेय, पातालिक तथा रूपान्तरित चट्टानों में अधिक मात्रा में पाया जाता है।

2 लाइमोनाइट – यह पीले रंग का होता है। यह कोमल कोलायडी खनिज है। जो भारी एवं अपारदर्शी होता है।

3 मैग्नेटाइट – यह गहरे बादामी रंग का चुम्बकीय ठोस पदार्थ है। यह भारी तथा कठोर होता है। यह आग्नेय चट्टानों में अल्पमात्रा में परन्तु रूपान्तरित चट्टानों में अधिक मिलता है।

2 जियोलाइट – यह खनिज, एल्मुमिनियम, पोटाश तथा लाइम के सिलिकेट से बना है। ये प्राय: केल्सपार में परिवर्तन होने पर बनते है। इसमें जल की मात्रा पर्याप्त होती है। इस खनिज से मृदा खनिज खादे प्राप्त होती है।

3 आयरन पाइराइटस – यह आयरन का डाई सफलाइड खनिज है। ये सुनहरे पीले रंग के खनिज होते है।

4 क्ले खनिज – क्ले खनिज सबसे मुख्य कार्बनिक मृदा कोलाइडी होते है। इसका रासायनिक संगठन स्थिर होता है।

5 द्वितीय जिप्सम – यह एक सफदे ठोस पदार्थ है तथा यह सरलता से चूर्ण में बदल जाता है। लवण प्रभावित मृदाओं को सुधारने में इसका बडा महत्व है।

1.4 सारांश

मृदा खनिज तथा कार्बनिक पदार्थ का एक प्राकृतिक पिंड है जो प्राकृति पदार्थों पर प्राकृतिक बलों द्वारा विकसित है। खनिज प्रकृति में पाये जाने वाले सयोग अकार्बनिक पदार्थ की जिनका रासायनिक संगठन निष्चित होता है। खनिज पदार्थ एक या एक से अधिक तत्वों के रासायनिक योग से बनते है। चट्टानों के परिवर्तन से मृदा की उत्पति होती है। मुख्य रूप से चट्टाने तीन प्रकार की होती है।

विभिनन चट्टानों में विभिन्न प्रकार के खनिज पाये जाते है। इनकी रासायनिक रचनायें भिन्न भिन्न प्रकार की होती है। इनका बडा रूप अति कठोर, अति ढीला तथा शीघ्र टुटने वाला हो सकता है। चट्टानों में विद्यमान खनिज पदार्थ समांगी अकार्बनिक पदार्थ होते है। इनकी रासायनिक स्क्ना निश्चित होती है। इनमें एक या एक से अधिक मूल तत्व निश्चित रासायनिक अनुपात में होते है। इनका आकार भी निश्चित होता है।

1.5 अभ्यास प्रश्न

1. मृदा के उर्ध्वारक रूप में काटने पर खनिज रूप में संबंधित विभिन्न संस्तर दिखाई पड़ते है को कहते है -

   (अ) मृदा प्रोफाइल (ब) चट्टानें

   (स) संस्तर (द) इनमें से कोई नहीं

2 प्राथमि चट्टान का उदाहरण है

   (अ) कैल्साइट (ब) जिप्सम

   (स) हिमेटाइट (द) क्वार्टज

3 वे चट्टानें जो पृथ्वी के दहकते हुए गर्म गोले के धीरे धीरे ठंडा होने से बनी है। ये भूमि के सबसे निचले भाग में पायी जाती है कहलाती है -

(अ) आग्नेय चट्टानें (ब) तलहटी चट्टानें

(स) कायान्तिरत चट्टानें (द) उपरोक्त सभी

4 मृदा विज्ञान की वह शाखाजिसके अन्तर्गत को शुद्ध रूप से एक प्राकृतिक पिंड पाया जाता है वह कहलाता है -

(अ) इंडेफोलोजी (ब) माइकोलोजी

(स) पेडोलोजी (द) माइक्रोबायोलोजी

5 मृदा प्रोफाइल की विभन्न परत जो स्पष्ट दिखाई देती है या उन्हें विश्लेषण द्वारा पहचाना जाता है कहलाती है -

(अ) कार्बनिक पदार्थ (ब) खनिज पदार्थ

(स) पोषक तत्व (द) संस्तर

1.6 संदर्भ ग्रन्थ

- यादव, एस.पी.एस. 2007. ऊसर भूमियों को उपजाऊ बनाएं. विश्व कृषि संचार, जून-2007.
- शर्मा, ओ.पी., इन्टोदिया, एस.के., शर्मा, एस.एल. एवं नकेला, एन.एस. 2009. शस्य विज्ञान (कृषि वर्ग), माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर.
- चौधरी, जे. पी., 2000. मृदा विझान : खाद एवं उर्वरक. भारती पब्लिकेशन, बडोत (बागपत).
- जाट, बी.एल. 2012. क्षारीय व लवणीय भूमि सुधार. विश्व कृषि संचार, मई- 2012.
- विनय सिंहबडोत मेरठ , प्रकाशन .के.वी ,मृदा विज्ञान ,1987 ,

इकाई - 2

मृदा निर्माण एंव भारतीय मृदायें

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 मृदा एक प्राकृतिक पिण्ड

2.3 अवमृदा बनाम पृष्ठ मृदा

2.4 मृदा, पादप वृद्धि का एक माध्यम

2.5 मृदा अवयव

2.6 मृदा का तात्विक संगठन

2.7 मृदा निर्माण

2.8 मृदा निर्माण के कारक

2.9 भारत की मृदायें

2.10 सारांश

2.11 अभ्यास प्रश्न

2.12 संदर्भग्रंथ

2.0 उद्देश्य

मृदा एक प्राकृतिक पिण्ड है तथा इसका अपना एक स्वतन्त्र अस्तित्व है। इसके गुण विशेष तथा विभिन्न है। मृदा एक प्रकार से जीवित पिण्ड है, क्योकि जीवित पदार्थो के समान मृदा का धीरे-धीरे विकास होता है। इनका जन्म पैतृक पदार्थो अथवा चटटानों से होता है, और यह परिपक्व अवस्था को पहुंचकर पूर्ण प्रोफाइल के रूप में विकसित हो जाती है। मृदा में पौधे तथा जन्तु निरन्तर सक्रिय रहते है जिससे मृदा में लगातार परिवर्तन होते रहते है, इसलिये मृदा को एक गतिशील (dynamic) प्राकृतिक पिण्ड कहते है। ये जीव एंव सूक्ष्म जीव मृदा के विशेष कार्यो को भी प्रभावित करते है।

इस प्रकार मृदा एक प्राकृतिक पदार्थ की सभी विशेषताओं जैसे विनाश (destruction) संश्लेषण (construction) तथा परिवर्तन (variation) की पूर्ति करती है। इस प्रकार हम देखते है कि मृदा कार्बनिक एंव खनिज पदार्थो का एक प्राकृतिक पिण्ड है। कृषि योग्य मृदाओं में कृषिय क्रियाओं जैसे जुताई, गुडाई आदि मृदा की ऊपरी सतह की कुद इंचो मे परिवर्तन लाती है। इन क्रियाओं के फलस्वरूप मृदा में दो स्पष्ट परतें बनती है मृदा की ऊपरी परत जिसमें कृषि कार्य करते समय औजार तथा मशीनरी आदि चलाते है, पृष्ठ मृदा कहलाती है। ऊपरी सतह से नीचे की परत जो पैतृक पदार्थ तक गहरी होती है अवमृदा कहलाती है। पृष्ठ मृदा लगभग 9 इंच गहरी सतह से नीचे की परत अवमृदा की अपेक्षा अधिक

ढीली तथा रंग में गहरी होती है। इसी परत में पौधों की जड़ो की संख्या अधिकतम होती है। इसमें कार्बनिक पदार्थ एंव अन्य पादप पोषकों की मात्रा भी अवमृदा से अधिक होती है। सूक्ष्म जीवों की संख्या भी इसमें अधिक होती है इस प्रकार पृष्ठ मृदा में अवमृदा की अपेक्षा रासायनिक एंव जैविक क्रियायें अधिक होती है। अवमृदा की गहरार्ह कुछ इंच से लेकर सैकड़ो फीट तक होती है। यह पृष्ठ मृदा की अपेक्षा रंग में हल्की तथा सघन होती है। इनमें महीन कणों एंव लवणो की मात्रा भी अधिक होती है। शुष्क क्षेत्रो की मृदा में दोनो-पृष्ठ एंव अवमृदा कणों में समान होती है। अवमृदा पृष्ठ मृदा की अपेक्षा कम उपजाऊ होती है।

कृषि क्रियाओं में पृष्ठ मृदा की भांति अवमृदा भी महत्वपूर्ण होती है। यह मृदा में जल एंव वायु की मात्रा को प्रभावित करके फसल उत्पादन को प्रभावित करती है। एक सघन अवमृदा में जल निकास उचित न होने के कारण जलक्रांति हो जाती है जिसके कारण मृदा में हवा की कमी होने से पादप वृद्धि बुरी तरह प्रभावित होती है। अवमृदा की प्रवेष्यता मृदा अपरदन को भी प्रभावित करती है। पृष्ठ मृदा अधिक गतिशील होती है। जबकि अवमृदा प्राय: कम गतिशील तथा कभी-कभी स्थाई होती है।

2.01 प्रस्तावना

मृदा की परिभाषा

मृदा शब्द की उत्पत्ति लेटिन भाषा के शब्द 'सोलम' (Solum) से हुई है जिसका शब्दार्थ 'Floor' अर्थात् फर्श है। इस प्रकार मृदा भूमि की ऊपरी परत मानी जाती है। मृदा एक प्राकृतिक पिंड है, जिसका स्वरुप त्रिविमीय होता है। मृदा के प्रत्येक पिण्ड में आयतन होता है और प्रत्येक पिण्ड स्थान घेरता है। यह पिण्ड तीन विमाओं, उदाहरणार्थ, लम्बाई, चौड़ाई और गहराई वाली एक सत्ता के रुप में होता है। प्रत्येक मृदा पिण्ड की एक स्पष्टपृथक् ऊपरी सीमा होती है, जहाँ से पिण्ड वायुमण्डल से मिलता है और प्रत्येक पिण्ड की अपेक्षाकृत कम स्पष्ट या भिन्न परिधि होती है जहाँ से सम्बन्धित पिण्ड अन्य मृदाओं से मिलता है। इसी प्रकार प्रत्येक पिण्ड की एक अनिश्चित निचली सीमा होती है जहाँ से वह अपक्षीण चट्टानों के रुप में श्रेणीकृत होता है। यद्यपि मृदाओं में स्थानीय तथा क्षेत्रीय भौगोलिक भिन्नतायें पायी जाती है फिर भी सभी मृदायें किसी न किसी रुप में समान होती है। सभी मृदओं में तीन प्रावस्थायें ठोस, द्रव और गैस होती हैं। सभी मृदाओं में समान प्रमुख घटक खनिज पदार्थ, कार्बनिक पदार्थ, वायु एवं जल होते हैं तथा किसी न किसी प्रकार की प्रोफाइल होती है। सभी मृदायें खुला तन्त्र होती हैं जिनमें पदार्थ मिलाये जा सकते हैं या निकाले जा सकते हैं।

''मृदा एक प्राकृतिक पिण्ड है जो प्राकृति पदार्थो पदार्थों पर प्राकृतिक बलों के प्रभाव से विकसित हुई है। प्राय: भिन्न गहराईयों के खनिज एवं कार्बनिक अवयवों के संस्तरों के अनुसार इसके भेद किये जाते हैं। ये संस्तर अपने से नीचे वाले मूल पदार्थों से आकृति, भौतिक गुणों और बनावट, रासायनिक गुणों और संगठन तथा जैविक लक्षणों में विभिन्नता रखते हैं।'' (जोफे एवं मारवट बैज्ञानिकों के अनुसार)

मृदा की मृदाशास्त्रीय (Edaphological) परिभाषा इस प्रकार है। मृदा वह प्राकृतिक पिण्ड है, जो विच्छेदित एंव अपक्षयित खनिज पदर्थो तथा कार्बनिक पदार्थो के सड़ने से बने विभिन्न पदार्थो के परिवर्तनशील मिश्रण से प्रोफाइल के रूप में संश्लेषित होती है। यह पृथ्वी को एक पतले आवरण के रूप

में ढकती है तथा जल एंव वायु की उपयुक्त मात्रा के मिलाने पर पौधों को यांत्रिक आधार तथा आंषिक जीविका प्रदान करती है।''(बकमेन और ब्रैडी वैज्ञानिकों के अनुसार)

''मृदा पृथ्वी के सतह की एक प्राकृतिक पिण्ड है जिसमें जलवायु तथा जीवांष पदार्थ के समाकलित प्रभाव,जो मूल द्रव्य पर एक अवधि तक पड़ता है, के गुण निहित होते है।''

उपरोक्त सभी परिभाषाओं के सारांश के आधार पर मृदा की परिभाषा निम्न है-

''मृदा एक त्रिविमीय प्राकृतिक पिण्ड है जो भूमि की ऊपरी सतह पर होती है। इसकी सभी विशेषतायें इसके पैतिक पदार्थ. जलवायु एंव जीवों की दीर्घकालीन क्रियाओं के परिणाम होती है। यह पादप वृद्धि का एक माध्यम है जिससे पौधों की वृद्धि के लिये आवश्यक पोषक तत्त्व और सहारा मिलता है।''यू.एस.डी.ए. ईयर बुक (1957) मृदा विज्ञान का अध्ययन दो रूपों में किया जाता है

(अ) मृदाशास्त्र (Edaphology)- यह दो शब्दों से मिलकर बना है, Edaphos और Logos, जिनका शब्दार्थ है-Edaphos = Soil or ground as foot hold to plants, तथा Logos =Knowledge. यह मृदा विज्ञान की वह शाखा है, जिसमें मृदा का अध्ययन उच्च पादप समुदाय के दृष्टिकोण से किया जाता है। इस विज्ञान में फसलों के उत्पादन में मृदा का समुचित उपयोग तथा इसकी आर्थिक व्यवस्था का अध्ययन किया जाता है।

(ब) पैडोलोजी (Pedology)-यह मृदा विज्ञान की वह शाखा है जिसके अन्तर्गत मृदा को शुद्ध रूप से एक प्राकृतिक पिण्ड माना जाता है तथा मृदा की प्रायोगिक उपयोगिताओं का कोई ध्यान नही रखा जाता। यह विज्ञान मृदा के जन्म, निर्माण तथा वितरण से सम्बन्धित है, जो कि मृदा के संगठन, जीवन तथा उसकी गतिशीलता के अध्ययन से जाना जाता है। यह विज्ञान मृदा के गुण, वर्गीकरण, व्यवहार, शरीर-विज्ञान (Physiology) तथा शरीर रचना विज्ञान (Anatomy) का अध्ययन कराती है तथा इसके अन्तर्गत मृदा निर्माण के उत्तरदायी प्राकृतिक शक्तियों के उत्तरों (responses) का भी वर्णन आता है। सजीव (animate) तथा निर्जीव (inanimate) विज्ञानों के बीच में इसकी माध्यमिक स्थिति होती है। पैडोलोजी मृदा वर्गीकरण में भी सहायक होती है। अब यह आवश्यक है कि मृदा के विभिन्न संस्तरों के भौतिक एंव रासायनिक गुणों तथा उनके परस्पर सम्बन्धों को ज्ञात कर लेना चाहिये। जिससे फसलों की पैदावार में वृद्धि के लिये कृषकों को सलाह दी जा सके। इसलिये पैडोलोजी मृदा उत्पादकता के रहस्यों की एक कुंजी है और यह अध्ययन मृदा विज्ञान का एकमात्र लक्ष्य है।

2. 2 मृदा एक प्राकृतिक पिण्ड

उपरोक्त परिभाशाओं से सिद्ध होता है कि मृदा एक प्राकृतिक पिण्ड है तथा इसका अपना एक स्वतन्त्र अस्तित्व है। इसके गुण विशेष विभिन्न है। मृदा एक प्रकार से जीवित पिण्ड है, क्योकि जीवित पदार्थो के समान मृदा का धीरे-धीरे विकास होता है। इनका जन्म पैतृक पदार्थो अथवा चटटानों से होता है, और यह परिपक्व अवस्था को पहुंचकर पूर्ण प्रोफाइल के रूप में विकसित हो जाती है। मृदा में पौधे तथा जन्तु निरन्तर सक्रिय रहते है जिससे मृदा में लगातार परिवर्तन होते रहते है, इसलिये मृदा को एक

गतिशील (dynamic) प्राकृतिक पिण्ड कहते है। ये जीव एंव सूक्ष्म जीव मृदा के विशेष कार्यो को भी प्रभावित करते है।

2.3 अवमृदा बनाम पृष्ठ मृदा

मृदाओं की गहराई कुछ इंचो से लेकर सैकड़ों कभी-कभी हजारों फीट तक होती है। कृषि योग्य मृदाओं में कृषीय क्रियाओं जैसे जुताई, गुडाई आदि मृदा की ऊपरी सतह की कुछ इंचो मे परिवर्तन लाती है। इन क्रियाओं के फलस्वरूप मृदा में दो स्पष्ट परतें बनती है मृदा की ऊपरी परत जिसमें कृषि कार्य करते समय औजार तथा मशीनरी आदि चलाते है, पृष्ठ मृदा कहलाती है। ऊपरी सतह से नीचे की परत जो पैतृक पदार्थ तक गहरी होती है अवमृदा कहलाती है। पृष्ठ मृदा लगभग 9 इंच गहरी सतह से नीचे की परत अवमृदा की अपेक्षा अधिक ढीली तथा रंग में गहरी होती है। इसी परत में पौधों की जड़ो की संख्या अधिकतम होती है।इसमें कार्बनिक पर्दाथ एंव अन्य पादप पोशको की मात्रा भी अवमृदा से अधिक होती है। सूक्ष्म जीवों की संख्या भी इसमें अधिक होती है इस प्रकार पृष्ठ मृदा में अवमृदा की अपेक्षा रासयनिक एंव जैविक क्रियायें अधिक होती है। अवमृदा की गहरार्ह कुछ इंच से लेकर सैकड़ो फीट तक होती है। यह पृष्ठ मृदा की अपेक्षा रंग में हल्की तथा सघन होती है। इनमें महीन कणों एंव लवणो की मात्रा भी अधिक होती है। शुश्क क्षेत्रो की मृदा में दोनो-पृष्ठ एंव अवमृदा, कणों में समान होती है। अवमृदा पृष्ठ मृदा की अपेक्षा कम उपजाऊ होती है।

कृषि क्रियाओं में पृष्ठ मृदा की भांति अवमृदा भी महत्वपूर्ण होती है। यह मृदा में जल एंव वायु की मात्रा को प्रभावित करके फसल उत्पादन को प्रभावित करती है। एक सघन अवमृदा में जल निकास उचित न होने के कारण जलक्रांति हो जाती है जिसके कारण मृदा में हवा की कमी होने से पादप वृद्धि बुरी तरह प्रभावित होती है। अवमृदा की प्रवेष्यता मृदा अपरदन को भी प्रभावित करती है। पृष्ठ मृदा अधिक गतिशील होती है। जबकि अवमृदा प्राय: कम गतिशील तथा कभी-कभी स्थाई होती है।

पृष्ठ मृदा एंव प्रवमृदा में अन्तर

पृष्ठ मृदा	प्रवमृदा
1- यह पूर्ण रूप से अपक्षयित होती है।	1. यह आंशिक रूप से अपक्षयित होती है।
2- महीन कणों जैसे सिलिकेट क्लेज की इनमें प्रधानता होती है।	2. इनमें क्वार्टज कणों एंव खनिजो के बडे भाग(coarse fragments) की प्रधानता होती है।
3- पृष्ठ मृदा सरन्ध्र (porous)एंव भुरभुरी (friable) होती है।	3. यह मृदा अधिक ठोस (massive) एंव सघन (compact) होती है।
4- सूक्ष्मजीवों की संख्या एंव सक्रियता काफी अधिक होती है।	4. सूक्ष्मजीवी संख्या एंव सक्रियता काफी निम्न होती है।
5- पृष्ठ मृदा में वायु संचार अच्छा होता है।	5. वायु संचार की स्थिति बहुत खराब होती है।
6- इनमें कार्बनिक पदार्थ की मात्रा अधिक होती है।	6. पदाप एंव जन्तु अवशेष की कमी होने पर

7- पृष्ठ मृदा में कोई कठोर परत (hard pan) नही होती है। 8- इनकी धनायन विनिमय क्षमता अधिक होती है। 9- इनमें कार्बनिक पदार्थ की अधिक मात्रा होने से रंग गहरा एंव उर्वरता अधिक होती है।	कार्बनिक पदार्थ की मात्रा कम होती है। 7. इनमें कभी-कभी कठोर परत पायी जाती है। 8. इनकी धनायन विनिमय क्षमता कम होती है। 9. इनका रंग हल्का एंव उर्वरता भी कम होती है।

2.4 मृदा पादप वृद्धि का एक माध्यम

पौधों की वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारकों को तीन वर्गो मे विभाजित किया जा सकता है :(i) जलवायु सम्बन्धी (Climatic) कारक (ii) जीवीय (Biotic) कारक तथा (iii) मृदीय (Edaphic) कारक। मृदीय वर्ग में मृदा के सभी भौतिक, रासायनिक और जैविक गुण तथा मृदा में होने वाली सभी प्रक्रम, जो मृदा की पौधों को खनिज तत्व एंव जल प्रदान करने की क्षमता को प्रभावित करती है, सम्मिलित है।

मृदा पौधों की वृद्धि के लिये निम्न आवश्यक दशाऐं प्रदान करती है।

(i) **आवश्यक खाद्य तत्व-**सभी पौधों को अपने पोषण के लिये कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, आयरन, सल्फर तथा अन्य न्यून तत्वों की आवश्यकता होती है। मृदा से पौधों को फास्फोरस, पोटेशियम, गन्धक, कैल्शियम, आयरन, बोरोन, मैगनीज, कापर, जस्ता, मोलिब्डेनम और क्लोरीन प्राप्त होती है। नाइट्रोजन मृदा तथा हवा दोनों से मिलती है। वायु एंव जल से पौधों को कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन मिलती है।

(ii) **जल-** यह मृदा का एक प्रमुख अंग है। मृदा से जितने खाद्य-पदार्थ पौधे लेते है, उनमें पानी का भाग सर्वाधिक होता है। पौधों के लिये पानी की मात्रा कम होने पर कोशिकाओं का विस्तार एंव विभाजन कम हो जाता है। पौधों में प्रकाश संश्लेषण के लिये पानी आवश्यक है तथा इसकी कमी में यह आवश्यक क्रिया धीमी पड़ जाती है। यह एक अच्छा विलायक है और पोषक तत्वों को घोल लेता है तथा स्वंय भी पौधों के लिये एक पोषक का कार्य करता है। मृदा ताप एंव मृदा वायु भी जल के द्वारा नियन्त्रित रहते है। खनिज तथा कार्बनिक पदार्थो के चारों ओर जल भ्रमण करता है तथा इनसें अनेकों पदार्थो को विलेय करके मृदा विलयन बनाता है।

(iii) **जड़ों के श्वसन के लिये ऑक्सीजन** - सभी जीवित पदार्थो (मनुष्य श्वसन, जन्तु एंव पौधे) के लिये श्वसन अनिवार्य होता है और श्वसन के लिये ऑक्सीजन नितान्त आवश्यक है। पौधों की जड़ों के श्वसन के लिये ऑक्सीजन मृदा वायु से ही प्राप्त होती है। साधारणत: मृदा वायु में 20.3% ऑक्सीजन 79.01% नाइट्रोजन तथा 0.15-0.65% co_2 मिलती है। मृदा वायु से

उचित मात्रा में ऑक्सीजन न मिलने पर पौधों की जड़ों की वृद्धि नही हो पाती, फलत: पौधो की वृद्धि भी रूक जाती है। भारी अथवा जल मग्न मृदा की तुलना में बलुई मृदा में ऑक्सीजन अधिक मिलती है।

(vi) **यांत्रिक आधार (**Support)-कुछ मृदाओं की भौतिक एंव रासायनिक दशायें ऐसी होती है जिनमें पौधों की जड़े आसानी से गहराई तक जा सकती है तथा फैल भी सकती है। ये मृदायें आदर्श होती है । क्योंकि इनमें वृद्धि करने वाले पौधे पवन दृढ़ (Wind firm), जलाभाव सहनशील (drought resistant) होते हैं तथा ये मृदा के एक आयतन के पोषकों को शोषित कर सकते है। पौधे की जड़े प्राकृतिक या कृत्रिम कड़ी परतों, उर्वरा संस्तरों, नमी की अत्यधिक या न्यूनतम मात्रा तथा विषैले विलेय लवणों की उपस्थित में उचित प्रकार से या बिल्कुल भी वृद्धि नही करती है। पौधों की वृद्धि के लिये उपरोक्त आवश्यक दशाओं के अतिरिक्त अनुकूल मृदा ताप का होना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि यह पौधों द्वारा मिट्टी से खाद्य पदार्थ प्राप्त करने, जल शोषण तथा जड़ो की वृद्धि को प्रभावित करता है। उपरोक्त सभी दशाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पौधो की वृद्धि के लिये मृदा एक आवश्यक माध्यम है।

पादप वृद्धि (Plant Growth)

जीवों के उत्तरोत्तर विकास को सामान्यत: वृद्धि कहा जाता है। पौधों के संदर्भ में वृद्धि उनके शुष्क भार, लम्बाई, ऊचाई और व्यास बढ़ने से जानी जाती है। यह वृद्धि एक निश्चित समय लेती है, सामान्यत: प्रारम्भ में वृद्धि दर तीव्र होती है, तथा कम समय में पौधों का आकार काफी बढ़ जाता है जबकि बाद में, जब वृद्धि दर मन्द पड़ जाती है, तो आकार की यह वृद्धि भी अत्यन्त मन्द पड़ जाती है और अन्त में एक ऐसी स्थिति आती है जब आकार में वृद्धि नही होती है।

पादप वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक-पादप वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारकों को तीन वर्गो : (i) मृदीय, (ii) जीवीय तथा (iii) जलवायु सम्बन्धी कारकों में विभाजित किया जाता है।

जीवीय (Biotic) कारक - विभिन्न कीट और अनेकों प्रकार के जीवाणु रोगों को फैलाकर फसल को अत्यधिक क्षति पहुँचाते है। कभी - कभी फसल को अधिक मात्रा में उर्वरक देने से कुछ जीवों के लिये अनुकूल दशायें उत्पन्न हो जाती है जो हानिकारक हो सकती है। खरपतवारों से होने वाली हानि भी इसी कारक में सम्मिलित की जा सकती है जिनके लिये फसल की आवश्यकतानुसार निराई - गुड़ाई चाहिये।

जलवायु सम्बन्धी कारक :

(i) **ताप -** अधिकांश कृषि फसलों के लिये उपयुक्त ताप 15^0c से 40^0c तक होता है। इससे कम या अधिक ताप पर फसलों की वृद्धि घटने लगती है। पौधे के अंकुरण से लेकर उनके पकने तक की क्रियाओं पर ताप का प्रभाव पड़ता है। ताप का प्रभाव प्रकाश संश्लेषण, श्वसन, कोशाभित्ति की पारगम्यता, जलोत्सर्जन, पानी तथा पोषक तत्वों के शोषण, एन्जाइम की सक्रियता, प्रोटीन के स्कन्दन आदि पर होता है, जिनका सीधा प्रभाव पादप वृद्धि पर पड़ता है।

(ii) **वर्षा** - वर्षा के समय मृदा ताप का भी महत्व होता है, जब मृदा अत्यधिक ठण्डी होती है तो ऐसे समय वर्षा लाभ की अपेक्षा हानिकारक हो सकती है।

(iii) मृदा आर्दता - मृदा में नमी की मात्रा पादप वृद्धि के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है क्योंकि पौधों को कार्बोहाइड्रेट संश्लेषण प्रोटोप्लाज्म के जलयोजन को बनाये रखने तथा खाद्य-तत्वों के संचालन हेतु जल की आवश्यकता होती है।

(iv) वायु- वायु पौधों की वृद्धि के लिये ऑक्सीजन, कार्बन-डाइआक्साइड तथा नाइट्रोजन आदि की पूर्ति करती है। हवा में कभी-कभी SO_2, क्लोरीन आदि का सान्द्रण अधिक हो जाता है। जो फसलों को हानि पहुँचाता है। शुश्क एंव गर्म वायु मृदा से वाष्पन तथा पौधों के जलोत्सर्जन द्वारा जल की हानि को बढ़ाती है जिसके परिणामस्वरूप पादप वृद्धि कम हो जाती है। वायु द्वारा रोग भी फैलते है। वायु द्वारा अत्यधिक उच्च ताप का प्रभाव भी बढ़ जाता है।

(v) प्रकाश -पादप वृद्धि तथा विकास में प्रकाश एक बहुत ही महत्वपूर्ण कारक है। सूर्य प्रकाश की अवधि, उसकी तीव्रता और गुणता का फसल पर प्रभाव पड़ता है। पादप वृद्धि के लिये पूरी अवधि भर खुले आसमान से प्राप्त सूर्य प्रकाश का सबसे अधिक अनुकूल प्रभाव पडता है। प्रकाश की किस्म, उसकी तीव्रता तथा अवधि का हरे पौधो की वृद्धि, प्रोटोप्लाज्म संश्लेषण और उसकी पारगम्यता, जल शोशण, जलोत्सर्जन, एन्जाइमी क्रिया, श्वसन, प्रकाश संश्लेषण, फलों के पक्वन, आदि पर प्रश्वसन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ता है।

2. 5 मृदा अवयव

मृदा सिस्टम (Soil system) में तीन प्रावस्थायें (Phases) : ठोस, द्रव गैस होती है। पौधों को खाद्य तत्व प्रदान करने की दृष्टि से केवल ठोस एंव द्रव प्रावस्थायें ही महत्वपूर्ण है। मृदा के ठोस अवयव महीन अवस्था में होते है तथा मृदा के अन्य अवयवों से भली-भांति मिश्रित होते है। मृदा आयतन का लगभग 50% भाग ठोस पदार्थो से घिरा होता है, शेष आयतन को रन्ध्राकोष कहते है, जिसमें जल एंव वायु उपस्थित होते है। इस प्रकार मृदा के मुख्य अवयव (i) खनिज पदार्थ (ii) कार्बनिक पदार्थ, (iii) जल एंव (iv) वायु होते है। मृदा के अवयवों को निम्न प्रकार से प्रदर्शित कर सकते है।

खनिज मृदा का आयतन संगठन - वायु शुष्क मृदा में आयतन के अनुसार 45-50% खनिज पदार्थ, लगभग 40% वायु 5-10% जल और 4% कार्बनिक पदार्थ होते है।

खनिज पदार्थ (Mineral matter) – ये चट्टानों के अपक्षय से प्राप्त होते है। मृदा की ठोस प्रावस्था में खनिज पदार्थ की मात्रा 90% से अधिक होती है। ये खनिज विभिन्न आकार के कणों के रूप मे पाये जाते है। कुछ कण बडे आकार के कुछ छोटे और कुछ सूक्ष्म आकार के होते है। मृदा में पत्थर,कंकड,मोटी बालू, महीन बालू, सिल्ट तथा क्ले अंश रहता है।

तलिका 1 : अकार्बनिक कणों के चार मुख्य साइज, वर्ग तथा सामान्य गुण

सइज प्रभाज (Size fraction)	सामान्य नाम	दृष्य (Visible using)	प्रभावी संगठन (Dominant compostition)
बहुत मोटा मोटा (Coarse)	पत्थर, कंकड़ बालू	आँख आँख	च चट्टान प्रभाज प्राथमिक खनिजं

महीन (Fine) बहुत महीन (very fine)	सिल्ट क्ले	माक्रोस्कोप इलेक्ट्रान माइक्रोस्कोप	प्राथमिक एंव द्वितीयक खनिज अधिकाँष द्वितीयक खनिज

मृदा में बालू तथा सिल्ट अंश कें अधिक मात्रा में पाये जाने वाले खनिज - क्वार्टज और फेल्सपार है। मृदा के महीन अंश में द्वितीयक खनिजों की प्रधानता होती है। मृदा के खनिज पदार्थो में लगभग 90% मात्रा सिलिका, एलूमिनियम, आयरन व ऑक्सीजन की होती है। शेष 10% भाग Ca, Mg, k, Na तथा टाइटेनियम, अधिक मात्रा में किन्तु नाइट्रोजन, सल्फर, फॉस्फोरस, बोरोन, मैगनीज, जिंक, कॉपर कुछ कम मात्रा में तथा अनेक दूसरे तत्व अल्प मात्रा में तथा अनेक दूसरे तत्व मात्रा में मिलते है। खनिज पदार्थो में तत्वों की प्रतिशत मात्रायें इस प्रकार है: Sio_2, 76%, Al_2O_3, 12%, Fe_2O_3 5% CaO, 1%, MgO 1%, K_2O 2% अन्य 3 प्रतिशत।

मृदा कार्बनिक पदार्थ - अधिकांश मृदाओं की ऊपरी सतहों में भार की दृष्टि से कार्बनिक पदार्थ की मात्रा 1-6 प्रतिशत होती है। यह मृदा में पौधों एंव पशुओं के अवशेषों से आता है। मृदा कार्बनिक पदार्थ में दो सामान्य समूह होते है। (i) मूल ऊतक तथा उनके आंशिक विच्छेदित भाग, तथा (ii) ह्यूमस। मूल ऊतकों में अधिक या कम विच्छेदित पदार्थ सम्मिलित होते है, जो स्थिर रूप से मृदा में मिलते रहते है जैसे पौधो के सिर एंव जड़े। इन पदार्थो का विच्छेदन मृदा जीवों द्वारा होता है जो कि उन्हें ऊर्जा के स्त्रोत एंव अपने ऊतको का निमार्ण पदार्थ के रूप में प्रयोग करते है। इस विच्छेदन के अधिक प्रतिरोधी एंव जिलेटिनी (gelatinous) उत्पाद, जो कि (i) सूक्ष्म जीवों द्वारा संश्लेषित होते है, तथा (ii) मूल ऊतको के रूपान्तरित होने से बनते है, को ह्यूमस का रंग प्राय: काला या बादामी होता है तथा स्वभाव में कोलॉइडी है इसमें जल एंव पोषक तत्वों को धारण करने की क्षमता क्ले से अधिक होती है।

मृदा जल - मृदा जल के महत्व को समझने के लिये दो मुख्य धारणायें आवश्यक है : (i) जल मृदा रन्ध्राकशों में परिवर्तनीय बल की मात्रा से धारित होता है, तथा (ii) जल मृदा में उपस्थित अनेकों लवणों को विलेय करके मृदा विलयन बनाता है, जो पौधों की वृद्धि के लिये पोषकों को प्रदान करने का महत्वपूर्ण माध्यम है। मृदा में जल का संचार और इनका पौधों द्वारा प्रयोग उस बल के ऊपर निर्भर होता है। जिससे जल मृदा ठोसों द्वारा धारित होता है। मृदा विलयन स्वभाव, संचार तथा सान्द्रण तीनों में ही असमांगी होता है। इसका सान्द्रण वर्षा, वाष्पीकरण तथा पौधों की क्रियाओं से अधिक या कम होता रहता है। जैसे - जैसे पौधे मृदा विलयन से पोशक तत्वो को ग्रहण करते है, वैसे ही जीवांश तथा खनिज पदार्थो से पोषकों का विनिमय मृदा विलयन में होता रहता हैं

मृदा वायु- मृदा वायु तथा वायुमण्डल में अन्तर इस प्रकार है : (i) मृदा वायु में CO_2 की मात्रा अधिक होती है, (ii) यह जल वाष्प से संतृप्त रहती है। तथा (iii) इसमें ऑक्सीजन की मात्रा वायुमण्डल की अपेक्षा कम होती है। जल और मृदा वायु की मात्रा एक दूसरे से सम्बन्धित होती है। वायु केवल उन्ही रन्ध्राकाशों में पायी जाती है जिनमें जल नही होता है। मृदा वायु में co_2 की मात्रा कार्बनिक पदार्थ की मात्रा, उसके विच्छेदन की गति, ताप तथा जल की मात्रा पर निर्भर होती है। साधारणत: मृदा में co_2 की मात्रा गहराई के साथ - साथ बढ़ती है और ऑक्सीजन की मात्रा घटती है।

2.6 मृदा का तात्विक संगठन

भू-पपड़ी की भाँति, मृदा के अकार्बनिक पदार्थो का अधिकांश भाग चार तत्वों : आक्सीजन, सिलिकॉन, एलुमीनियम और आयरन का बना होता है। अधिकांश मृदाओं के खनिज पदार्थ का लगभग 90 प्रतिशत सिलिकॉन, एल्युमीनियम और आयरन के संयुक्त ऑक्साइड्स होते हैं। सामान्य रूप से कैल्शियम, मैग्निशियम, सोडियम और पौटेशियम के ऑक्साइड्स मृदा का लगभग 1 से 2 प्रतिशत भाग बनाते है। हालांकि, शुष्क एवं उप नम (sub-humid) जलवायु की मृदाओं में इन ऑक्साइड्स की मात्रा अधिक होते है। मैगनीज, फॉस्फोरस एवं सल्फर के ऑक्साइड्स सामान्यत: खनिज मृदा के एक प्रतिशत का केवल कुछ अंश ही बनाते हैं।

तालिका 2. भू-पपड़ी की औसत रासायनिक संगठन

तत्व	प्रतिशत	ऑक्साइड	प्रतिशत
O	46.5	SiO_2	59.07
Si	27.6	Al_2O_3	15.22
Al	8.1	Fe_2O_3	3.10
Fe	5.1	FeO	3.71
Ca	3.6	CaO	5.10
Mg	2.1	MgO	3.45
Na	2.8	Na_2O	3.71
K	2.6	K_2O	3.11
Ti	0.6	TiO_2	1.03
P	0.12	P_2O_5	0.30
S	0.06	MnO	0.11
Cl	0.05	H_2O	1.30
C	0.04		

सिलिकॉन- खनिज मृदाओं, यदि वे उच्च अपक्ष्यित नहीं (weathered) है का, अधिकांश भाग सिलिका (SiO_2 के रूप में) से बना होता है। नम जलवायु में सिलिका का ह्रास होता है इसलिए लैटेराइट्स में SiO_2 की मात्रा अपेक्षाकृत कम होती हैं

एलुमीनियम- ऑक्सीजन एवं सिलिकॉन के बाद, एलुमीनियम की मात्रा की भू-पपड़ी तथा अधिकतर चट्टानों एवं मृदाओं में प्रचुरता होती है। यह तत्व Al_2O के रूप में 20-60 प्रतिशत तक उच्च अपक्षयित मृदाओं तथा लैटराइट में होता हैं परन्तु सामान्यत: इसकी मात्रा 2-12 प्रतिशत ही होती है।

आयरन- सामान्य रूप से मृदा में आयरन, Fe_2O_3 के रूप में, की मात्रा 3-15 प्रतिशत होती है। हालांकि, इसकी मात्रा लैटराइट्स में 50 प्रतिशत से अधिक होती है। भू-पपड़ी की अपेक्षा मृदा में आयरन की मात्रा विकास प्रक्रमों के कारण होती है। मृदा समुच्चायों (aggregates) की अधिक स्थिरता एवं अधिक संरन्ध्रता (porosity) प्राय आयरन ऑक्साइड्स की अधिक मात्रा के कारण होती है।

टाइटेनियम (Titanium) - शुश्क एवं नम जलवायु की मृदाओं में टाइटेनियम (TiO_2 के रूप में) की मात्रा 2 प्रतिशत से अधिक नहीं होती है। मृदा में यह स्वतन्त्र TiO_2 [एनाटेज (anatase) और रुटाइल (rutile)] तथा $FeTiO_2$ (इलमेनाइट ilmenite) के रूप में पाया जाता है।

कैल्शियम- कैल्शियम, CaO के रूप में, की मृदा में मात्रा प्राय: 1 प्रतिशत से कम होती है। मृदा में कैल्शियम की मात्रा आग्नेय एवं अवसाद चटटानों में कैल्शियम की मात्रा से कम होती है। चूना पत्थर (lime stone) में औसत 43 प्रतिशत CaO होता है। कई मृदाओं की निचले संस्तरों में कैल्शियम कार्बोनेट पाया जाता है। अर्द्ध शुष्क मृदाओं में क्रिस्टलीय जिप्सम ($CaSO_4 . 2H_2O$) पाया जाता है।

मैग्नीषियम- भली-भाँति निक्षालित (leached) मृदाओं में मैग्निश्यम मुख्य रूप से बायोटाइट औगाइट (augite), हॉर्नब्लेन्डे तथा मॉन्टमोरिल्लोनाइट खनिजों के रूप में पाया जाता है। मैग्नीषियम, MgO के रूप में, की मृदाओं में मात्रा 1 प्रतिशत से कम होती है। अर्द्ध शुष्क भागों की काली मिटिटयों में MgO की मात्रा 2 प्रतिशत से अधिक होती है।

पोटेशियम- एल्यूवियल एवं फैरूजीनस (ferruginous) मृदाओं में K (K_2O के रूप में) की मात्रा 3 प्रतिशत से अधिक होती है जबकि काली मिटिटयों में इसकी बहुत कम मात्रा होती है। मास्कोवाइट, बायोटाइट ऑर्थोक्लेज तथा माइक्रोक्लाइन उच्च पोटैशियम युक्त प्राथमिक सिलिकेट खनिज हैं।

सोडियम- अधिकांश मृदाओं में सोडियम (Na_2O के रूप में) की मात्रा 1 प्रतिशत से अधिक नहीं होती है। मृदा में यह भू-पपड़ी (3-7%) की अपेक्षा बहुत कम होता है। शेल्स (shales) में Na_2O की मात्रा 1-3%, बालूपत्थर में 0.4% तथा चूना पत्थर में 0.05 प्रतिशत होती है। लवणीय एवं क्षारीय मृदाओं में यह NaCl, Na_2SO_4 तथा Na_2CO_3 के रूप में पाया जाता है।

फॉस्फोरस- अधिकांष खनिज मृदाओं में P की मात्रा 0.02 और 0.5 प्रतिशत के मध्य होती है। मृदा P का लगभग आधा भाग पृष्ठ मृदाओं के कार्बनिक पदार्थ में पाया जाता है तथा शेष भाग खनिज या अकार्बनिक रूप में पाया जाता है। अकार्बनिक फॉस्फोरस मुख्य रूप से क्षारीय चूनादार मृदाओं में कैल्शियम फास्फेट के रूप में पाया जाता है। अम्लीय मृदाओं में ऐल्युमीनियम एवं आयरन फास्फेट के रूप में पाया जाता है।

मोलिब्डेनम- मृदाओं में इसकी मात्रा प्राय: 1.00 से 10.0 मि. ग्राम/कि. ग्राम होती है लेकिन कुछ मृदाओं में इसकी मात्रा 30.0 मि. ग्राम/या अधिक होती है। यह मृदा में M_0O_4 आयन्स के रूप में पाया जाता है तथा इसका स्थिरीकरण क्षारीय आयरन एवं एलुमीनियम मोलिब्डेट्स के रूप में हो जाता है। चूना मिलाने से पी-एच में वृद्धि होने पर मृदा मोलिब्डेनम की प्राप्यता बढ़ जाती है।

नाइट्रोजन- पृष्ठ मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा 0.02 से 0.25 प्रतिशत तक होती है। खनिज मृदाओं में नाइट्रेरट्स, नाइट्राइट्स और विनिमेय अमोनियम की मात्रा कुल नाइट्रोजन की मात्रा का एक प्रतिशत से कम होता है। नाइट्रोजन की मात्रा मृदा कार्बनिक पदार्थ की मात्रा से सीधे सम्बन्धित होती है तथा कार्बनिक पदार्थ का लगभग 5 प्रतिशत भाग N होती है।

सल्फर- मृदा में गंधक कार्बनिक एवं अकार्बनिक रूपों में पाया जाता है। नम-शुष्क (humid temperate) क्षेत्रों की मृदाओं में 50 से 500 पीपीएम जल विलेय सल्फेट तथा 100 से 1500 पीपीएम कुल सल्फेट होता है। स्वतन्त्र आयरन ऑक्साइड युक्त मृदाओं में सल्फेट आयन्स हाईड्राक्सिल आयन को विस्थापित करके क्षारीय सल्फेट जटिल बनाते हैं।

सेलीनियम (Selenium) - यह अधिकांश मृदाओं एवं चट्टानों में अल्प मात्रा में पाया जाता है। सेलीनियम की 2 से 10 पीपीएम मात्रा मृदाओं में अत्यधिक मानी जाती है। अधिक सेलीनियम की मात्रा से पशुओं के लिये उत्पन्न चारा वैशिक होता है। अपक्षय के दौरान यह तत्व सेलेनेट (selenate) में आक्सीकृत हो जाता है। जो निक्षालित होकर Fe_2O_3 से संयोग करके क्षारीय (basic) सेलेनेट्स बनाता है।

बोरोन- सामान्य रूप से मृदा में कुल बोरोन की मात्रा 4-98 पीपीएम, आग्नेय चटटानों में 10 पीपीएम तथा समुद्र के जल में 4.5 पीपीएम होती है। गर्म जल में विलेय बोरोन की मृदा में मात्रा 0.2 से 1.5 पीपीएम होती है। अर्द्धशुष्क जलवायु की मृदाओं (10-40 पीपीएम) में नम जलवायु (humid climate) की मृदाओं की अपेक्षा बोरोन की मात्रा अधिक होती है। क्षारीय मृदाओं में बोरोन की अधिक मात्रा पायी जाती है।

जिंक एवं कॉपर- मृदाओं में कुल जिंक एवं कॉपर की मात्रा क्रमष: 40-60 मि. ग्रा./किग्रा एवं 20 मि. ग्रा./कि. ग्राम होती है। ये धनायन्स मृदा में कार्बनिक या अकार्बनिक प़ष्ठों पर मजबूती से धारित रहते हैं।

2.7 मृदा निर्माण

''मृदा उत्पत्ति मृदा पिण्ड का उद्भव (evolution) है जो भू-पपड़ी के अपक्षय कटिबन्ध (belt) में होने वाले अनेक भू-रासायनिक (geo-chemical) चक्रीय प्रक्रमों द्वारा सम्पन्न होता हैं।'' चट्टानों का भौतिक, रासायनिक तथा जैविक शक्तियों द्वारा मृदा रूप में बदलना ही मृदा उत्पत्ति (soil genesis) कहलाता है। चट्टानें, जिनसे भू-पपड़ी बनी होती है, वायुमण्डल की क्रिया द्वारा टूटने लगती है, इनके टूटने से असंगठित पैतृक पदार्थ बनते हैं इन मूल पदार्थो को रिगोलिथ (regolith) कहते हैं। रिगोलिथ के नीचे ठोस चट्टानें रहती हैं। परिवहन शक्तियों की अनुपस्थिति में रिगोलिथ की मोटाई बढ़ती जाती परिवहन शक्तियाँ जैसे गुरुत्व बल, बहता पानी, बहती बर्फ, वायु आदि चट्टानों के टूटने से प्राप्त हुये पदार्थो को भूमि सतह पर लगाकर वितरित करती रहती है। इस प्रकार परिवहन शक्ति के द्वारा धीरे-धीरे मृदा निर्माण की क्रिया चलती रहती है। मृदा उत्पत्ति प्राय: दो प्रकार के प्रक्रमों द्वारा होती है :

(i) अपक्षय (weathering) तथा (ii) प्रोफाइल का विकास (profile development) । इस प्रकार मृदा निर्माण में दो प्रावस्थायें होती हैं :

1. मूल चट्टानों से कच्चे पदार्थ (raw material) का निर्माण,
2. इस कच्चे पदार्थ का मृदा पिण्ड में रूपान्तरण।

पहली प्रावस्था विखण्डन तथा विच्छेदन की विनाशकारी प्रावस्था है, जबकि बाद की प्रावस्था संश्लेषण एवं उद्भव (evolution) की निर्माणकारी प्रावस्था है। मृदा निर्माण की दोनों प्रावस्थायें भौतिक, रासायनिक तथा जैविक कारकों द्वारा सम्पन्न होती हैं। इन अपक्षय प्रक्रमों के फलस्वरूप मृदा की भौतिक संरचना परिवर्तित हो जाती है और मृदा संहित में समतल परतों (horizontal layers) का विकास होता है इसे मृदा प्रोफाइल कहते हैं। इसलिये मृदा प्रोफाइल का विकास ही मृदा उत्पत्ति है।

मृदा निर्माणकारी प्रक्रियायें (Soil forming processes) - मृदा निर्माणकारी प्रक्रियाओं को दो समूहों में विभाजित किया जा सकता है : (A) प्राथमिक प्रक्रियायें तथा (B) विशिष्ट या गौण प्रक्रियायें। मृदा निर्माण की प्राथमिक प्रक्रियाओं से मृदा में विशेष प्रकार के संस्तर बनते हैं जबकि गौण प्रक्रियाओं से विशेष प्रकार की मृदा प्रोफाइल का विकास होता है।

A. प्राथमिक प्रक्रियायें- इन मृदा निर्माणकारी प्रक्रियाओं में निम्न उल्लेखनीय है :

(1) ह्यूमिफिकेशन (Humification) - मृदा कार्बनिक पदार्थो का स्त्रोत इसकी ऊपरी सतह पर एकत्रित पत्तियाँ तथा पौधें के अन्य भाग एवं मृतक जन्तु है। इन कार्बनिक पदार्थों के विच्छेदन तथा नवीन कार्बनिक पदार्थों के संश्लेषण के संयुक्त प्रक्रम को ह्यामिफिकेशन कहते हैं। यह क्रिया मृदा की सतह पर ह्यामस परत, जिसे 'ओ' संस्तर कहते हैं, बनाने में सहायक होती है। इस संस्तर की विशेषतायें वनस्पति पदार्थो के अवशेष की प्रकृति, इनके विच्छेदन और नये कार्बनिक यौगिकों के संश्लेषण पर निर्भर होती है। इस संस्तर में कार्बनिक पदार्थों के संचयन की गति तथा इनमें होने वाली विभिन्न प्रतिक्रियायें जलवायु पर निर्भर करती है। नम उश्ण प्रदेश में सूक्ष्म जीवों की अत्यधिक सक्रियता के कारण कार्बनिक पदार्थो का विच्छेदन शीघ्र होता है और ह्यामस एकत्रित नहीं होता है। जब पानी इस संस्तर से होकर गुजरता है तो उसमें उपस्थित कुछ कार्बनिक अम्लों को विलेय कर नीचे की सतहों में ले जाता है और 'अ' तथा 'ब' संस्तर के विकास को प्रभावित करता है। शुश्क घास के मैदानों में वर्षा की कमी के कारण 'ओ' संस्तर के खनिजों का विस्थापन नहीं हो पाता है।

(2) निक्षालन और निक्षेपण (Eluviation or Illuviation) - प्रोफाइल संस्तरों का विकास मुख्यत: मृदा में जल के संचालन की मात्रा तथा प्रकृति पर निर्भर होता है। Eluviation (meaning "wash out") ऊपरी सतहों के अवयवों का अन्त: स्त्राव (percolation) द्वारा निचली सतहों में आने की क्रिया को कहते है। इसलिये ऊपरी सतहों को निक्षाली संस्तर (eluvial horizon) भी कहते हैं। 'अ' संस्तर से बहकर नीचे आने वाले पदार्थ 'ब' संस्तर में एकत्रित हो जाते हैं। चूँकि इस संस्तर ('ब' संस्तर) में अवयव एकत्रित होते हैं, इसलिये इसे

निक्षेपण संस्तर (illuvial horizon) भी कहते हैं तथा इस प्रकम को निक्षेपण (meaning "wash in") कहते हैं। निक्षालन दो प्रकार का होता है :

(i) यान्त्रिक निक्षालन (Mechanical Eluviation) - इसमें मृदा के महीन पदार्थ मुख्य रुप से क्ले नीचे चली जाती है। जब यह बहुत अधिक होती है तो प्रोफाइल के 'अ' संस्तर में बालू और 'ब' संस्तर में महीन पदार्थ जमा हो जाने से एक सघन पर बन जाती है।

(ii) रासायनिक निक्षालन (Chemical eluviations) - इसमें मृदा के कोलॉइडी जटिलों का आंशिक रूप से विच्देदन होता है। इस प्रकार विच्छेदित पदार्थों का कुछ भाग नीचे की सतहों में चला जाता है तथा शेष भाग 'अ' संस्तर में रह जाता है। इस प्रकार पॉडजोल प्रोफाइल बनती है।

(3) संचयन (Accumulation) - मृदा निर्माण के दौरान मृदा की पृष्ठ सतह पर खनिज या जैव पदार्थ का संचयन का संचयन होता है। संचयन की प्रक्रिया बिना निक्षालन एवं निक्षेपण के भी हो सकती है। वायु भी संचयन की क्रिया में योगदान करती है। मृदा की सतह में मूल द्रव्य का निक्षेपण संचयन के फलस्वरूप हो सकता है। इस प्रकार के निक्षेपण से 'सी' संस्तर का निर्माण होता है। मृदा प्रोफाइल में O_i, O_e तथा O_a आदि संस्तरों का विकास मात्र जैव पदार्थों के ऊपरी पृष्ठ पर संचयन के फलस्वरूप होता है।

(4) पेडोटर्बेषन (Pedoturbation) - उपरोक्त क्रियाओं के फलस्वरूप मृदा पिण्ड में संस्तरीय विभिन्नतायें उत्पन्न होती हैं, वहीं कुछ क्रियायें इनके विपरीत मिश्रण का कार्य करती हैं। मिश्रण एक सीमा तक सभी मृदाओं में होता है। मिश्रण की क्रिया के अभिकर्ताओं के आधार पर **पेडोटर्बे**शन को विभाजित किया गया है।

(i) जन्तु-जात पेडोटर्बेशन (Faunal pedoturbation) - जन्तुओं जैसे चींटी, केंचुये, दीमक आदि मृदा का मिश्रण करते हैं।

(ii) पादप-जात पेडोटर्बेशन (Floral pedoturbation) - वनस्पति द्वारा मृदा का मिश्रण।

(iii) मृतिकीय (Argillic) **पेडोटर्बेशन**- क्ले के संकुचन (shrinkage) तथा फूलने (swelling) के कारण मिश्रण।

(B) विशिष्ट या गौण प्रक्रियायें- मृदा का निर्माण प्राथमिक एवं गौण प्रक्रियाओं द्वारा होता है। इन **वि**शिष्ट प्रक्रियाओं में निम्न उल्लेखनीय हैं :

(1) पोडजालीकरण (Podzolisation) - यह निक्षालन प्रक्रम की एक प्रकार है जिसमें ह्यूमस तथा सेस्क्वी-आक्साइड ऊपरी संस्तरों से बहकर नीचे के संस्तरों में आकर जमा हो जाते है। यह प्रक्रम ठण्डे तथा नम प्रदेशों में होती है। इसके लिये कार्बनिक अवशेषों का आधिक्य तथा पैतृक पदार्थों में क्षारों की कमी होनी चाहिये। 'अ' संस्तर में सिलिका सेस्क्वी-आक्साइड अनुपात अधिक होता है जबकि 'ब' संस्तर में क्ले, Fe और Al संचित हो जाते है।

(2) लेटेराइटीकरण (Laterisation) - इस प्रक्रम में सिलिका नीचे के संस्तरों में चली जाती है तथा आयरन और एल्यूमीनियम ऊपरी संस्तरों में ही रहते हैं। इस प्रक्रम में उत्पन्न होने वाली

मृदायें अम्लीय होती हैं तथा उनका सिलिका-सेस्क्वी-ऑक्साइड अनुपात 2 से कम होता है। यह प्रक्रम गर्म तथा नम जलवायु में होती है।

(3) कैल्सीकरण (Calcification) - यह कम वर्शा तथा मृदा के पैतृक पदार्थों में क्षारों की अधिक मात्रा होने के कारण होती है। इस प्रक्रम में मृदा प्रोफाइल में प्राय: कैल्शियम कार्बोनेट का संचयन होता है। कैल्शियम कार्बोनेट के संचयन के फलस्वरूप कैल्सिक (calcic) संस्तर का विकास होता है।

(4) सोलनीकरण या क्षारीयकरण (Solonization) - प्रोफाइल में क्षारीय लवणों के एकत्रित होने से पैदा होती हैं यह लवण जलस्तर के ऊंचे होने से, जल निकास उचित न होने पर या सिंचाई के जल में लवणों की मात्रा अधिक होने से एकत्रित होते हैं। मुख्य लवण NaCl, Na_2SO_4, $NaHCO_3$ और Na_2CO_3 हैं तथा $NaNo_3$, KNO_3 और $MgSO_4$ कभी-कभी पाये जाते हैं। इन मृदाओं की संरचना खराब हो जाती है और ये कृषि योग्य नहीं रहती।

(5) ग्लाइकरण (Gleization) - यह प्रक्रिया खराब जल निकास वाली मृदाओं में होती है। इससे अवायुजीवी दशा विकसित होती है तथा रासायनिक अपचयन की प्रक्रिया होती है। मृदा प्रोफाइल में कहीं भी भूरा संस्तर (grayish horizon) विकसित हो जाता है जिसे प्राय: ग्लाइ परत (glei layer) कहते है।

2.8 मृदा निर्माण के कारक

भूमि की सतह पर किसी प्रमुख स्थान पर ये पांच कारक एक साथ अपना प्रभाव डालकर मृदा उत्पत्ति करते हैं : (i) जलवायु, (ii) पैतृक पदार्थ, (iii) भूतल रूप या धरातल, (iv) जीव मण्डल तथा (v) समय या भूमि की आयु। इन सभी कारकों का मृदा निर्माण में समान महत्व नहीं होता। यद्यपि कुछ कारक दूसरों की अपेक्षा प्रमुख परिस्थितियों के अन्तर्गत मृदा निर्माण करने में अधिक प्रभावषाली हो सकते हैं, परन्तु सभी का परस्पर सम्बन्ध रहता है और एक दूसरे के पूरक होते हैं। वैज्ञानिक जेनी ने गणित रूप में मृदा के साथ इन कारकों के सम्बन्ध को निम्न समीकरण द्वारा व्यक्त किया है :

$$S = f, (Cl, b, r, p, t \text{ ----------})$$

जहाँ S = कोई मृदा गुण, जैसे क्ले अंश, f = का कार्य या पर निर्भर, Cl = जयवायु, b = जीव मण्डल, r = उभार (स्थलाकृति) p = पैतृक पदार्थ या जनक द्रव्य, t = समय या भूमि की आयु।

इस प्रकार किसी मृदा उत्पादन के गृण सभी मृदा कारकों के संयुक्त प्रभाव पर निर्भर होते हैं। वैज्ञानिक जोफे ने मृदा निर्माण में भाग लेने वाले कारकों को दो वर्गों में विभाजित किया है :

1. निष्क्रिय कारक (Passive factors) - ये उन अवयवी पदार्थों (soil forming mass) को व्यक्त करते हैं, जो मृदा निर्माण करने वाले खनिजों का स्त्रोत होते हैं व इसके साथ में कुछ दशायें उत्पन्न कर देते हैं जो मृदा निर्माण में सहायक होती है। इस वर्ग में पैतृक पदार्थ, भू-तल रूप तथा भूमि की आयु आते हैं।

(i) पैतृक पदार्थ (Parent material) - पैतृक चट्टानों की प्रकृति मृदा निर्माण को कई प्रकार से

प्रभावित करती है :

(अ) कणाकार (Texture) – चट्टानें जिनमें क्वार्टज की मात्रा अधिक होती है, जैसे ग्रेनाइट्स और बालू पत्थर बलुई पदार्थ पैदा करते हैं, जबकि चूना पत्थर और बेसाल्ट क्ले पदार्थ पैदा करते हैं। चट्टानों में क्ले उत्पादक खनिजों जैसे फेल्सपार, हार्नब्लैंडें की मात्रा मृदा की क्ले मात्रा को निश्चित करती है।

(ब) सरन्ध्रता (Porosity) - बालू या क्ले की मात्रा मृदा निर्माण में महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि मृदा की प्रवेश्यता उनके ऊपर निर्भर होती है। मृदा के ऊपरी सिरे पर कार्बनिक पदार्थ, क्ले और बालू के फिल्टर रचना (filter frame) की प्रवेश्यता द्वारा ही विलेय यौगिकों के ह्रास की दर परिचालित होती हैं

(स) क्ले की प्रकृति (Nature of clay) - प्रवेष्यता अधिक होने पर क्षारीय आयन्स Ca और Mg नष्ट हो जाते हैं। इसके फलस्वरूप उत्पन्न अम्लता केओलिनाइट क्ले खनिज के निर्माण में सहायक होती है। प्रवेष्यता न होने से क्षार नष्ट नहीं होते हैं, ऐसी दशा में इलाइट तथा मॉन्टमोरिल्लोनाइट प्रकार की क्ले खनिजें बनती हैं।

(द) पोषक (Nutrients) - पैतृक पदार्थ पादप पोषकों के मुख्य स्त्रोत होते हैं। बेसाल्ट से बनने वाली मृदायें ग्रेनाइट से उत्पन्न मृदाओं की अपेक्ष अधिक उपजाऊ होती है।

(इ) रंग -मृदाओं के रंग, विशेषतया से लाल एवं बादामी मृदायें, पैतृक चट्टानों से सम्बन्धित होते हैं। विभिन्न पैतृक पदार्थों से मृदा निर्माण की समान दषाओं में एक ही प्रकार की मृदा का निर्माण होता है, जबकि मृदा निर्माण की असमान अवस्थाओं के अन्तर्गत उन्हीं पदार्थों से पूर्णतया विभिन्न प्रकार की मृदायें बनती हैं और इस मृदा में पैतृक पदार्थ के निष्क्रिय गुण मिलते हैं। दक्षिण भारत की काली मिट्टियां मुख्यत: ग्रेनाइट से, जबकि मध्य भारत में ये मृदायें ट्रैप चट्टानों से बनती हैं। इस प्रकार लैटरिटिक मृदायें ट्रैप तथा ग्रेनाइट से बनती हैं।

(ii) **भूतल रूप** (Topography or relief) - यह भूमि के तल की अवस्था को बताता है। मृदा अपरदन इसी के ऊपर निर्भर होता है, इसलिये यह मृदा निर्माण को प्रभावित करता है। अपरदन अधिक होने पर गहरी मृदायें नहीं बनती और न वे कभी परिपक्व ही हो पाती हैं। यदि अत्यधिक अपरदन से 'स' संस्तर (पैतृक पदार्थ) नीचे से निकल आता है तो ऐसी दषा में मृदा निर्माण पुन: प्रारम्भ होता हैं समतल क्षेत्र में जल का बहाव अधिक नहीं हो पाता है तथा अधिक वर्षोंसे और जल निकास उचित न होने पर वहाँ पूरी साल पानी भरा रहता है। इन दशाओं में पौडजोल का विकास हो सकता है। जहाँ मृदा में जल का उचित निकास तथा चूना की मात्रा अधिक होती है, वहाँ पर मॉन्टमोरिल्लोनाइट क्ले खनिजों का संश्लेषण अधिक होता है।

भूतल-रुप का मृदा निर्माण पर सबसे अधिक प्रभाव पर्वतीय प्रदेशों में देखा गया है। यहाँ पर प्राकृतिक अपरदन द्वारा मृदा प्रोफाइल के ढाल का ऊपरी प्रदेश उथला रहता है इसका प्रभाव ताप पर भी देखा गया है। ताप भूमि तल की ऊंचाई पर निर्भर करता है। प्रत्येक 300 फीट की ऊंचाई पर जाकर ताप में 10^0F की कमी आ जाती है। निम्न ताप पर वाष्पीकरण के कम होने से

लीचिंग अधिक होती है, इसलिये उच्च स्थलीय प्रदेशों की जलवायु ठण्डी तथा नम होती है तथा निम्न स्थलीय प्रदेशों की जलवायु शुष्क और गर्म होती है।

(iii) **भूमि की आयु** (Age of the land) - भूमि की आयु को उस समय से नापा जाता है। जिसमें पैतृक पदार्थ से उत्पन्न होकर मृदा की स्थिति प्राप्त की है। भूमि की आयु वर्शो की अपेक्षा परिपक्वता की स्थिति में आंकी जाती है। मृदा में संस्तरों की संख्या जितनी अधिक पाई जाती है उतनी ही अधिक परिपक्व मृदा होती है। परिपक्व मृदा में सभी संस्तर पूर्णरूप से विकसित हो जाते है और यह वातावरण के संतुलन में रहती है। परिपक्व मृदाओं पर मृदा निर्माण के कारकों की क्रिया अधिक समय तक होती है। मृदा के गुण पी-एच, जीवांष पदार्थ, क्ले का संग्रह, ऊपरी सतहों से क्षारों का लीचिंग होकर निम्न सतहों में संचित होना आदि मृदा आयु से प्रभावित होते हैं। ताप तथा आद्रता के अतिरिक्त ऐसे कई कारक हैं जो कि मृदा की परिपक्वता में देर करते हैं जैसे पदार्थ में कैल्शियम कार्बोनेट की अधिक मात्रा, क्ले की प्रतिशतता, कम वर्षा, कम आपेषिक आर्दता, मृदा पदार्थ का जल तथा वायु से अधिक अपरदन, खोदने वाले पशुओं की अधिक संख्या, जल स्तर, उच्च होना तथा बालू की अधिकता, आदि।

2. **सक्रिय कारक** (Active factors) - ये ऊर्जा प्रदायक है जो मृदा पदार्थों पर क्रिया करके मृदा निर्माण प्रक्रम के लिये प्रतिकारक पैदा करते हैं। इस वर्ग में जलवायु तथा जीव मण्डल आते हैं।

(iv) **जलवायु** (Climate) - जलवायु अपने अवयवी कारकों (वर्शा, ताप, वाष्पीकरण और वायु) द्वारा मृदा निर्माण के निष्क्रिय कारकों को उत्तेजित करके मृदा पिण्ड के निर्माण में सहायता करती है।

(अ) वर्षा- नमी, जयवायु के प्राथमिक तत्वों में से प्रधान है जो मृदा निर्माण में भाग लेती है। वर्षा जल की कुल मात्रा के अतिरिक्त वर्शा का वितरण तथा प्रचण्डता भी महत्वपूर्ण है। जल परोक्ष एवं अपरोक्ष दोनों प्रकार से मृदा निर्माण में भाग लेता है। अपक्षय प्रक्रम के समान नमी विलयन, जलयोजन तथा जल विश्लेषण आदि क्रियाओं के द्वारा खनिज पदार्थो तथा जीवमण्डल से प्राप्त कार्बनिक प्रकृति के पदार्थो से प्रतिक्रिया करती है। जल की मात्रा अपरदन तथा अन्त: स्त्रवण दोनों को प्रभावित करती है। अन्त: स्त्रवण के द्वारा मृदा में निक्षालन तथा निक्षेपण प्रक्रमें होती हैं जो संस्तरों के विकास को प्रभावित करती हैं रेगिस्तान में वर्शा की कमी के कारण संस्तरों में भेद नहीं होता है। समान्य रूप से वर्शा के बढ़ने के साथ-साथ मिटटी में नाइट्रोजन और कार्बन की मात्रा बढ़ती है। उसमें क्ले की मात्रा में वद्धि हो जाती है। मृदा की संतृप्ति क्षमता में वृद्धि हो जाती है और मृदा में विनिमेय हाइड्रोजन की मात्रा में भी वृद्धि होती है। दूसरी ओर विनिमेय क्षार कम होने लगते है और मृदा का पी-एच मान कम होने लगता है। वर्षा में वृद्धि होने से $Sio_2 : Al_2O_3$ अनुपात कम हो जाता है।

(ब) ताप- ताप में प्रत्येक 10^0C की वृद्धि होने से रासायनिक क्रियाओं की गति लगभग दुगुनी हो जाती है। सामान्य रूप से अधिक ताप पर अपक्षय क्रिया तेजी से होती है और क्ले की जमाव

भी अधिक मात्रा में होता है। यद्यपि अधिक ताप पर कार्बनिक पदार्थों के विच्छेदन की दर भी बढ़ जाती है तथा ताप में प्रत्येक 10^0C की कमी होने से मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा लगभग दुगुनी हो जाती है। ताप मृदा के रंग को भी प्रभावित करता है। साधारणत: लाल मृदायें उष्ण (tropics) में और भूरी मृदायें समशीतोष्ण (Temperate) क्षेत्रों में होती है। समशीतोष्ण क्षेत्र की मृदाओं का $SiO_2 : Al_2O_3$ अनुपात 3 और 4 तथा गर्म क्षेत्रों में यह अनुपात लगभग 2 होता है। पैतृक चट्टान तथा वर्षा में समानता होने पर भी ताप के अन्तर से दो क्षेत्रों में अलग-अलग प्रकार की प्रोफाइलों का विकास होता है।

(स) वाष्पीकरण (Evaporation) - मृदा सतह से नमी का वाश्पीकरण विभिन्न गतियों से होता है, क्योंकि यह वायुमण्डल की आर्द्रता एवं ताप पर निर्भर होता है। नमी के अधिक होने पर वाश्पीकरण कम तथा ताप अधिक होने पर वाश्पीकरण अधिक होता हैं वाश्पीकरण की मात्रा एवं गति को मृदा की रचना, संगठन, कणाकार, नमी की मात्रा तथा रंग आदि कारक भी प्रभावित करते हैं।

(द) वायु- यह अपरोक्ष रूप से वाष्पीकरण की गति को प्रभावित करती है या परोक्ष रूप से मृदा में प्राप्त महीन कणों का स्थानान्तरण करती है, जिससे कुछ स्थानों पर तो कुछ तत्वों का आधिक्य हो जाता है तथा कुछ स्थानों पर इनका अभाव हो जाता है। रेगिस्तान में रेत के वायु के साथ बहने से संस्तरों का निर्माण नहीं होता है।

(v) **जीव मण्डल** (Biosphere) - सक्रिय कारक के रूप में इसे दो भागों (i) वनस्पति मण्डल तथा (ii) जन्तु मण्डल में विभाजित किया जा सकता है।

(अ) वनस्पति मण्डल (Vagetation or phytosphere) - पौधों की जडें चट्टानों तथा खनिजों पर यांत्रिक रूप से क्रिया करती हैं। ये अनेकों प्रकार से अम्लीय पदार्थ तथा CO_2 उत्पन्न करती है जो अपक्षय की क्रिया में सहायक होते हैं। मृतक वनस्पतिक पदार्थों के ह्यूमिफिकेशन तथा खनिजन से कार्बनिक तथा अकार्बनिक अम्ल पैदा होते हैं, ये अम्ल आयरन और एल्यूमिनियम को विलेय कर लेते है तथा यह दोनों लीचिंग द्वारा 'ब' संस्तर में जमा हो जाते है। ह्यामस पौधों के पोशकों का भण्डार गृह है, ये पोषक पौधों की जड़ों द्वारा नीचे से लाकर मृा की सतह पर एकत्रित कर दिये जाते हैं। वनस्पति जलवायु को भी प्रभावित करती है, वनों के प्रभाव से ताप कम तथा नमी अधिक हो जाने से जलवायु मृदु हो जाती है। वन मृदा अपरदन को भी रोकते हैं।

(ब) सूक्ष्म जन्तु (Micro-organisms) - सूक्ष्म जीवों की सक्रियता खनिज एवं कार्बनिक पदार्थों के विच्छेदन को प्रभावित करती है तथा प्रोफाइल निर्माण के लिये कच्चा पदार्थ प्रदान करती है। वायुमण्डल से स्थिर की गई नाइट्रोजन मृदा में नाइट्रीकृत (denitrified) होती है। सल्फर का ऑक्सीकरण और फॉस्फेट एपेटाइट चट्टानों का विच्छेदन भी सूक्ष्म जीवों द्वारा होता है।

(स) जन्तु मण्डल (Zoosphere) - मृदा निर्माण में जन्तुओं का योग यांत्रिक रूप में होता है, ये मृदा में कार्बनिक पदार्थ भी मिलाते हैं। वनस्पतियों के विपरीत जन्तु मृदा प्रोफाइल के संस्तरों को एक दूसरे से अलग करने में सहायक नहीं होते हैं। मृदा को खोदने वाले अनेक जन्तु जैसे केंचुआ, रोडेन्ट्स, दीमक तथा चीटियाँ आदि मृदा को खोदकर, महीन बनाकर भली-भाँति मिलाकर प्रोफाइल को खराब कर देते हैं।

(द) मनुष्य- मृदा निर्माण में मनुष्य भी एक मुख्य कारक है वह मृदा में खाद मिलाकर, जल निकास को सुधारकर, चूना मिलाकर तथा अन्य क्रियाओं से कृषि योग्य कर लेता हैं अत्यधिक खेती करने से मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा कम हो जाती हैं सिंचाई के जल से प्राप्त खनिज पदार्थों से मृदा उर्वरता प्रभावित होती हैं

2.9 भारत की मृदायें

जलवायु, मिट्टी और उसकी उर्वरता पर किसी भी देश की सुख-समृद्धि निर्भर होती है। भारत 8^0 से 37^0 उत्तरी आक्षांष और 67^0 से 97^0 पूर्वी देशान्तर रेखाओं के मध्य आवृत है। इसका भोगौलिक क्षेत्रफल 3287.3 लाख हैक्टयर है। यहाँ की वनस्पति, जलवायु, चटटानें और स्थलाकृति में काफी विभिन्नता पायी जाती है। इन्हीं विशेषताओं ने समय-समय पर अनेक प्रकार की मिट्टीयों को जन्म दिया है।

तालिका 3: भारत की मुख्य मृदायें और उनका यू0 एस0 सॉयल टैक्सोनामी (US Soil Taxonomy) तथा FAO Legend में तुल्यांक (equivalents)

	भारत की मुख्य मृदाये	US Soil Taxonomy	FAO Legend
1.	जलोढ़ मृदायें	इनसेप्टीसॉल्स, एण्टीसॉल्स, एल्फीसॉल्स, एरिडीसॉल्स	कैम्बीसॉल्स, फ्लवीसॉल्स, लूवीसॉल्स, ग्लेसॉल्स, सोलोनचाक्स, सोलोनेट्ज
2.	काली मृदायें	वर्टीसाल्स, इनसेप्टीसॉल्स, एण्टीसॉल्स	वर्टीसॉल्स, कैम्बीसॉल्स, लैप्टोसॉल्स, रेगोसॉल्स
3.	लाल मृदायें	एल्फीसॉल्स, इनसेप्टीसॉल्स, एण्टीसॉल्स	लूवीसॉल्स,कैम्बीसॉल्स, लैप्टोसॉल्स, लिक्सीसॉल्स, नीटीसॉल्स
4.	लेटराइट और	ऑक्सीसॉल्स,	कैम्बीसॉल्स,

	लेटराइटिक मृदायें	अल्टीसॉल्स, इनसेप्टीसॉल्स	एलीसॉल्स,लैप्टोसॉल्स,प्लिन्थोसॉल्स
5.	लवणीय एंव क्षारीय मृदायें	एरिडीसॉल्स, इनसेप्टीसॉल्स, एल्फीसॉल्स, एण्टीसॉल्स, वर्टीसॉल्स	सोलोनचाक्स, सोलोनेट्ज, कैम्बीसॉल्स, लूवीसॉल्स, एरेनोसॉल्स, वर्टीसॉल्स
6.	रेगिस्तानी मृदायें	एरिडीसॉल्स, एण्टीसॉल्स	कैम्बीसॉल्स, लूवीसॉल्स, कैल्सीसॉल्स,एरोनोसॉल्स, फ्लूवीसॉल्स
7.	वनों एंव पर्वतीय क्षेत्रों की मृदायें	इनसेप्टीसॉल्स, एल्फीसॉल्स, मौलीसॉल्स, अल्टीसॉल्स, एण्टीसॉल्स	कैम्बीसॉल्स, लूवीसॉल्स, लैप्टोसॉल्स, फीओजेम्स
8.	पीटी और दलदली मृदायें	हिस्टोसॉल्स, इनसेप्टीसॉल्स, एण्टीसॉल्स	ग्लेसॉल्स कैम्बीसॉल्स, फ्लूवीसॉल्स

तलिका 5: भारत की मृदाओं का वितरण

गण	**क्षेत्रफल (Mha)**	**प्रतिशत**
एल्फीसॉल्स	79.5	24.25
एण्टीसॉल्स	80.1	24.37
इनसेप्टीसॉल्स	95.8	29.13
वर्टीसॉल्स	26.3	8.02
एरिडीसॉल्स	14.6	4.47
मौलीसॉल्स	8.0	2.43
अल्टीसॉल्स	0.8	0.26
ऑक्सीसॉल्स	0.0	0.03
हिस्टोसॉल्स	-	-
अवर्गीकृत (आकृषीय भूमि)	23.1	7.04

कुल	328.8	100

भू - वैज्ञानिकों ने इनमें से कुछ मृदाओं का विस्तारपूर्वक अध्ययन किया है जो निम्न हैं-

1- सिन्धु गंगा के मैदानों की जलोढ़ मृदाये।
2- कपास की काली मिट्टी तथा रेगुर मिट्टी।
3- लाल मृदायें जिनमें लाल लोम एंव पीली मृदा आदि सम्मिलित है।
4- लेटराइट एंव लेटराइटिक मृदायें।
5- वनों एंव पर्वतीय क्षेत्रों की मृदाये।
6- शुश्क एंव रेगिस्तानी मृदायें।
7- लवणीय एंव क्षारीय मृदायें।
8- पीट एंव अन्य कार्बनिक मृदाये।

1. सिन्धु गंगा की जलोढ़ मृदायें (Indo Gangetic alluvial soils) **-** ये भारत की सबसे महत्वपूर्ण और उर्वरा मृदायें हैं। भारत में इन मृदाओं का क्षेत्रफल लगभग 5,70,000 वर्ग किलोमीटर है। भारत के दक्षिणी उत्तरी पश्चिमी एंव उत्तरी पूर्वी भागों - पंजाब, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बह्मपुत्र, कृष्णा, गोदावरी, कावेरी, तथा सुरमा (दक्षिणी असम की सुरमा घाटी) नदियों की सम्पूर्ण घाटियों में भी पाई जाती है। मध्य प्रदेश की नर्मदा, राप्ती नदियों की घाटियों में मिलती है। इन मृदाओं की गहराई अत्यधिक होती है।

भू-वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इस मृदा को दो बड़े भागों में बाँटा गया है- पुरानी एंव नई जलोढ़ मृदायें (Old and new alluvium)। पुरानी जलोढ़ को स्थानीय भाषा में बाँगर (Bangar) कहते है। इसका रंग हल्का तथा संगठन कम कंकरीला तथा बलुई होती है। नई जलोढ़ को खादर (khadar) कहते है, इनमें क्ले की प्रधानता पायी जाती है।

कछार मृदाओं में नाइट्रोजन, ह्यूमस और कभी - कभी फॉस्फोरस का अभाव पाया जाता है, किन्तु अन्य मृदाओं की अपेक्षा इसमें फास्फोरस की मात्रा पर्याप्त होती है। पोटाश की मात्रा काफी होती है, जिसकी मात्रा 0.1 से 0.35% होती है। इन मृदाओं का कणाकार तथा भौतिक बनावट भिन्न - भिन्न स्थानों पर अलग-अलग होती है। इनका रंग काले से लेकर भूरे रंग का होता हैं तथा इनका कणाकार रेत से लेकर मटियार तक होता है, किन्तु अधिकांषत दोमट होता है। इन मृदाओं में कभी-कभी कंकड कुछ फीट की गहराई पर मिलते है। अवमृदा कभी-कभी चूनेदार होती है। यह भुरभुरी मिट्टी होती है तथा इसमें संयोजी कोलाइड (cementing colloids) कम पाये जाते है। ये मृदायें गेहूं कपास, मक्का, चना, ज्वार, बाजरा, तेलीय बीजों, गन्ना, सब्जियाँ तथा विभिन्न प्रकार के फलों की खेती के लिये उपयुक्त होती है। बिहार और उत्तर प्रदेश की अधिकांष मृदायें इसी प्रकार की है।

2. **कपास की काली मृदायें** (Black Cotton soil)- भारतीय मृदाओं का यह दूसरा प्रमुख समूह है तथा इनका क्षेत्रफल लगभग 2,00,000 वर्ग मील है। ये दक्षिण भारत में दक्षिणी आधे भाग दक्कन के पठार, महाराष्ट के एक बड़े भाग मध्य प्रदेश और आन्ध्र प्रदेश के पश्चिमी भाग तथा रामनन्द और तिन्नेवेली जिलों सहित तमिलनाडु के कुछ भागों मे फैली हुई है। इन मृदाओं को तीन समूहों में विभाजित किया जा सकता है- (i) गहरी और भारी काली मृदायें (ii) मध्य और हल्की काली मृदायें और (iii) रेगुर क्षेत्र में होकर बहने वाली नदियों की घाटियों की काली मृदायें।

इन मिट्टीयों की विशेषतायें इस प्रकार हैं- (i) इनकी गहराई एक से दो या कई फीट तक होती है, (ii) कणाकार में ये दुमट से लेकर क्ले तक होती है, (iii) ये अत्यधिक सघन, दृढ़ (tenacious) तथा कुछ-कुछ कंकरीली होती है, (iv) गीली मिट्टी चिपचिपी (adhesive) होती है, गर्मियों में जल के अधिक मात्रा में वाष्पीकरण होने से इनमें सिकुडन होने लगती है, जिससे बडी-बडी तथा गहरी दरारें पड़ जाती है, (v) इन मृदाओं में लोहा C_aCO_3 और Mg CO_3 की अत्यधिक मात्रा होती है, (vi) इन मृदाओं में मॉन्टमोरिल्लोनाइट तथा वीडेलाइट समूह के खनिज की मात्रा अधिक होती है तथा कपास की खेती के लिये उपयुक्त होती है, (vii) इनमें नाइट्रोजन, कार्बनिक पदार्थ तथा P_2O_5 की मात्रायें कम तथा K_2O और चूना की मात्रा अधिक होती है, (viii) इनकी जल-धारण क्षमता अधिक होती है।

इसका रंग काला होता है, जो टिटैनीफैरस मैग्नेटाइट (Titaniferrous magnetite) खनिज की उपस्थिति के कारण होता है। इन मृदाओं में कैल्शियम, एल्युमिनियम तथा मैग्नीशियम के स्वतन्त्र कार्बोनेट अधिक मात्रा में मिलते हैं। ये भारी मृदायें हैं तथा 65-80% महीन भाग होता है। चूना इन मृदाओं में प्रचुर मात्रा (5-7%) में होता है। इनकी प्रवेष्यता कम होती है तथा भस्म विनियम क्षमता 50-60 मि.ई/100 ग्राम होती है।

तमिलनाडु की काली मिट्टी कहीं पर गहरी तथा कहीं उथली होती है और जिप्सम की उपस्थिति तथा अनुपस्थिति के आधार पर इन मृदाओं में चार प्रकार के प्रोफाइल पाये जाते हैं - (i) जिप्सम युक्त कम गहरी या उथली मृदा, (ii) जिप्सम रहित कम गहरी या उथली मृदा, (iii) जिप्सम युक्त गहरी या उथली मृदा तथा (iv) जिप्सम रहित गहरी मृदा। इन मृदाओं में K_2O और P_2O_5 की मात्रा काफी होती है। इनका पी-एच 8.5 से 9.5 तथा चूना 5-7% तक होता है। इन मृदाओं में आर्द्ता गुणांक तथा रन्ध्राकाश भी अधिक होते है।

उत्तर प्रदेश में काली मिट्टी गंगा नदी के निचले क्षेत्रों में पायी जाती है, जहाँ इन्हें करेल (Karail) कहते हैं। इनमें लवणों की मात्रा अधिक होती हैं तथा इनमें चूना और मैग्निश्यिम की मात्रा भी अधिक पायी जाती है। मध्य प्रदेश में गहरी काली मिट्टी नर्मदा घाटी तथा उथली मिट्टी सागर और जबलपुर में मिलती है। इसका रंग हल्का होता हैं तथा कार्बनिक पदार्थ कम, क्ले की मात्रा 35-50% तक होती है। सिलिका, सैस्क्वी ऑक्साइड अनुपात 3-3.5 होती है। मैसूर की काली मिट्टी काफी भारी होती हैं तथा लवणों की सांद्रता भी अधिक होती है। इनमें चूना और मैग्निशिया की मात्रा भी काफी होती है। क्ले भाग की सिलिका : सैस्क्वी ऑक्साइड अनुपात 3.6 होता है।

इन मृदाओं में अधिकतर कपास होती है। इसके अलावा ज्वार, बाजरा, गेहूँ, धनिया, प्याज, तम्बाकू, सब्जियाँ तथा नींबू जाति के फल भी उगाये जाते है।

3. **लाल मृदायें** (Red Soil) - भारत की लाल मृदायें, लाल दुमट तथा पीली मृदाओं का क्षेत्रफल लगभग 200000 वर्गमील है। यह मृदायें अधिकतर सम्पूर्ण तमिलनाडु, मैसूर, उड़ीसा, बम्बई प्रांत के दक्षिण-पूर्वी भाग में तथा मध्य प्रदेश के पूर्वी भाग तथा छोटा नागपुर में पायी जाती है। उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर, झाँसी, बांदा, हमीरपुर जिले में, बंगाल के बीरभूम तथा बांकुरा जिले, राजस्थान में अरावली की पहाड़ियों में पायी जाती है। इनकी उत्पत्ति ग्रेनाइट, नीस (gneiss) तथा सिस्ट (schists) आदि खनिजों से हुई है। रचनात्मक आधार पर इन मृदाओं को दो भागों में विभाजित किया है-

(i) लाल दुमट (Red loams) - इन मृदाओं की संरचना ढेलेमय (cloddy) होती हैं। इनमें कुछ संघित पदार्थ (concretionary material) भी पाये जाते है।

(ii) लाल मृदा -इनकी संरचना चूणीय तथा ढीली होती हैं। इन मृदाओं में लोहा तथा एल्युमीनियम ऑक्साइड के अधिक मात्रा में संचय होने से संचित पदार्थ (concrections) अधिक होते है।

विशिष्ट लाल मृदा के क्ले अंश का सिलिका-एल्युमिना अनुपात 2.0 से अधिक होता है तथा इनमें आयरन ऑक्साइड खनिज की मात्रा काफी होती है, इनमें विच्छेदन योग्य हार्नब्लेंडे की मात्रा कम होती है। लाल दुमट में विच्छेदन योग्य हार्नब्लेंडे की प्रतिशत मात्रा अधिक होती है तथा क्ले भाग का सिलिका एल्युमिना अनुपात 2.46 से 2.6 के बीच होता है तथा भस्म विनियम क्षमता 20 मि.ई. प्रति 100 ग्राम से कम होती है। इससे स्पष्ट है कि इनके क्ले भाग में केओलिनाइट की मात्रा अधिक होती है।

लाल मृदाओं की विशेषताये इस प्रकार हैं -(i) कणाकार हल्का, सरन्ध्र, एंव भुरभरी संरचना, (ii) चूना, कंकड तथा स्वतन्त्र कार्बोनेट की अनुपस्थिति, (iii) विलेय लवणों की अल्प लवणों की अल्प मात्रा में उपस्थित जिनकी मात्रा 0.05% से अधिक नही होती है, (iv) मृदा अभिक्रिया उदासीन से अम्लीय, (v) नाइट्रोजन, ह्यूमस, फॉस्फोरस एंव चूने की कमी।

इन मिट्टियों की उर्वरता तथा गुण भिन्न होते है। इनका रंग विशेषत: लाल होता है। इनमें सिंचाई के उचित प्रबन्ध होने पर कपास, गेहूँ, बाजरा तथा दलहन आदि की खेती की जा सकती है।

तमिलनाडु मे लगभग दो तिहाई कृषि क्षेत्र में लाल मृदायें पायी जाती है। वे उथली और पीली होती है, पी-एच-मान 6.0 से 8.0 तक होता है, विनियम क्षमता कम होती है तथा कार्बनिक पर्दाथ और पोषक तत्वो की मात्रा कम होती है और क्ले अंश में सिलिका और एल्युमिना का अनुपात 2.5-3.0 तक होता है।

उत्तर प्रदेश की झांसी जिले का एक भाग लाल मृदा का है। यह लाल मृदा दो किस्म की होती है- परवा (Parwa), भूरे धूसरे (brownish grey) रंग की मृदा जो बढ़िया दुमट, बलुई या क्ले लोम आदि प्रकार की होती है, और राकर (Rakar) वास्तविक लाल मृदा जो प्राय: कृषि के लिये अच्छी नहीं समझी जाती।

4. **लेटराइट और लेटराइटिक मृदायें** (Laterite and lateritic soils)- इन मृदाओं का भारत में कुछ क्षेत्रफल लगभग 49000 वर्ग मील है। लेटराइट विशेषकर दक्षिण की पहाड़ियों की चोटी पर मध्य भारत और मध्य प्रदेश में , राजस्थान की पहाडियों और पूर्वी घाटों पर, उड़ीसा के कुछ मैदानों में महाराष्ट, मलबार और आसाम मे अच्छी विकसित हुई है। यह काफी वर्शा तथा नमी और सूखा की एकान्तर स्थितियों में पैदा होती है। इन मृदाओं की विशेषता यह है कि इनकी निचली परत एल्युमीनियम और आयरन के जलयोजित ऑक्साइडो के मिश्रण से बने कंकडों की होती है। इन मृदाओं में पोटाश, फॉस्फोरस एंव चूने की कमी होती है। ऊँचे क्षेत्रों में मृदायें बहुत पतली एंव बजरीली होती हैं परन्तु निचले स्थान और घाटियों में ये भारी दोमट से क्ले तक होती हैं और इनमें विशेषकर धान की फसल अच्छी प्रकार उगायी जा सकती है।

तमिलनाडु मे ऊँचे और निचले दोनो प्रकार के क्षेत्रो मे लेटराइट मृदायें पायी जाती है। नीचे क्षेत्रों की लेटराइट मृदाओं में धान की खेती होती है, परन्तु ऊँचे स्थानों की लेटराइट मृदाओं में चाय, सिनकोना, रबड और कॉफी के बगीचे लगाये जाते है। इन मृदाओं में पादप पोषकों की मात्रा प्रचुर होती है तथा 10-20% कार्बनिक पदार्थ होता है। इन मृदाओं का, विशेषकर ऊँचे स्थानों की चाय के बगीचों की मृदाओं का पी-एच मान प्राय: 3.5-4.0 होता है। महाराश्ट्र में ये मृदाये केवल रत्नागिरि और कनारा जिलों में पायी जाती है। कनारा जिले की लेटराइट मृदायें मोटी तथा उसमें चूने एंव फॉस्फोरस की कमी होती है। रत्नागिरि की मृदायें भी मोटी और उनमें चूने के अतिरिक्त सभी पादप पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में होते है।

बिहार मे लेटराइट मुख्यत: ऊँचे पठारों की चोटियो पर मिलती हैं लेकिन कुछ घाटियों में भी इसकी काफी मोटी परतें पायी जाती है। उड़ीसा में खुदरा का काफी बडा क्षेत्र लेटराइट का है। बालाशोर में ये बजरीली रूप मे मिलती है और मलवे से बनी मालूम होती है। उड़ीसा में दो प्रकार की मृदायें (i) लेटराइट मुर्रम (murrum) तथा (ii) लेटराइट चटटानें, होती है। ये दोनों कहीं-कहीं एक साथ भी मिलती है। पश्चिमी बंगाल में बाँकुरा जिल लेटराइट मृदाओं के क्षेत्र में स्थित है। इन मृदाओं के क्ले अंश में सिलिका और एल्युमिना का अनुपात काफी अधिक होता है। इनमें पोटाश, फास्फोरस एंव नाइट्रोजन की प्रतिशत मात्रा लीचिंग के कारण कम होती है।

5. **वनों एंव पर्वतीय क्षेत्रों की मृदायें** (Forest and hill soils)- भारत के कुल क्षेत्र का लगभग 14% भाग वनों से घिरा हुआ है। वनों की मृदाओं का निर्माण वृक्षों एंव वनस्पतियों से प्राप्त कार्बनिक पदार्थ के संचय से होता है। विशेष रूप से इन मृदाओं में दो प्रकार की मृदा निर्माण की प्रक्रमें होती हैं- (i) निम्न भस्म स्तर (low base status) और अम्लीय ह्यूमस की उपस्थिति में अम्लीय दशाओं में निर्मित मृदायें। यह दशायें पॉडजोल निर्माण में सहायक हैं। (ii) उच्च भस्म स्तर और कम अम्लीय या उदासीन दशाओं में निर्मित मृदायें जो भूरी (brown) मृदा निर्माण के लिये उपयुक्त समझी जाती है।

उत्तर प्रदेश में हिमालय के निकटवर्ती भाग में तीन विशेष क्षेत्र हैं। (i) भाबर (Bhabar) क्षेत्र जो हिमालय से लगा हुआ हैं, (ii) तराई और (iii) मैदानी हिमालय क्षेत्र में इन मृदाओं के चार समूह

देखने को मिलते हैं- (i) लाल दुमट, (ii) वनों की भूरी मृदायें, (iii) पॉडजोल एंव परिवर्तनीय पायी जाती है। तराई क्षेत्र में अत्यधिक नमी और वनस्पतियाँ पायी जाती हैं। इस क्षेत्र की मृदा क्ले लोम, लोम और बलुई लोम है। लोम में चूने की मात्रा कम या अधिक या अनुपस्थित हो सकती है। असम के पर्वतीय जिलों की मृदायें महीन कण वाली है तथा इनमें कार्बनिक पदार्थ तथा नाइट्रोजन की मात्रा शायद नई होने के कारण अधिक होती है। इनमें याँत्रिक रासायनिक संगठन में बडी भिन्नता पाई जाती है।

6. **शुष्क एंव रेगिस्तानी मृदायें** (Arid and desert Soil) - ये मृदायें शुष्क तथा अर्द्ध शुष्क प्रदेशों में पायी जाती है। इस प्रकार की मृदायें राजस्थान, काठियावाड़ा दक्षिण पंजाब तथा उत्तर प्रदेश के पश्चिम जिलों जैसे आगरा, मथुरा के कुछ भागों मे पायी जाती है। राजस्थान के मरूस्थल (क्षेत्रफल लगभग 40,000 वर्ग मील) यद्यपि दक्षिण- पश्चिम मानसून हवाओं के क्षेत्रों में है। वर्षों के अभाव के कारण इन प्रदेशोंकी जलवायु शुष्क रहती है। इन क्षेत्रों मे लिचिंग की अपेक्षा वाश्पीकरण अत्यधिक होता है जिससे विलेय लवण ऊपर आ जाते हैं तथा मृदाओं का पी-एच अधिक हो जाता है। मुख्य रूप से ये मृदायें बलुई होती हैं। इनमें जल तथा जीवांश पदार्थ अल्प मात्रा में पाया जाता है और यह बहुत कम उपजाऊ होती है। इनमें कैल्शियम कार्बोनेट की विभिन्न मात्रायें पायी जाती हैं। इन मृदाओं मे बाजरा ज्वार, आदि होते है।
7. **लवणीय एंव क्षारीय मृदायें** (Saline and alkali soils)- यह विशेष रूप से पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान मे पायी जाती है। इन्हें अलग-अलग नामों-रेह, कल्लर और ऊसर से पुकारते हैं। इन मृदाओं की ऊपरी सतह पर भूरा सफेद रवेदार जमाव (fluffy deposits) दिखाई देते है। ये प्रस्फुटनशीलन जमाव (efflorescent deposits) मुख्य रूप से सोडियम, कैल्शियम तथा मैग्निश्यिम के लवणों के कारण होते हैं। गर्मियों में विलेय लवण निचली सतहो से केषिका के द्वारा ऊपरी सतह पर आकर इकट्ठे होने लगते है। रेह में Ca और Mg लवणों के अतिरिक्त सोडियम के कार्बोनेट, सल्फेट तथा क्लोराइड्स होते है। अवमृदा में कंकड की एक कठोर परत मिलती है। क्षारीय मृदाओं में कैल्शियम तथा नाइट्रोजन का अभाव रहता है और ये अधिक प्रवेष्य होती है। लखनऊ तथा कानपुर जिलों की इन मृदाओं में सोडियम के कार्बोनेट एंव क्लोराइड की प्रचुरता होती है। यहाँ मृदाओं में $CaSO_4$ नहीं होता। ये मृदायें समषीतोश्ण जलवायु वाले अधिक सूखे क्षेत्रो की मृदाओं के विपरीत लवणीय क्षार की कार्बोनेट क्लोराइड प्रकार की मालूम होती है। क्षारीय मृदायें गुजरात और महाराश्ट्र राज्यों में लगभग सभी जगह पायी जाती है, पर क्षार से बुरी तरह प्रभावित मृदायें गुजरात, कर्नाटक और दक्कन में पायी जाती है। दिल्ली राज्य की मृदायें निम्न पैडोजेनिक समूहों में से किसी एक समूहों की है। (i) लवणीय (अधिकांशत: खादर क्षेत्र में), (ii) लवणीय क्षारीय कंकड़युक्त अधिकांश डाबर (dabar) और बाँगर (bangar) क्षेत्र में और खादर क्षेत्रों के खारों में।
8. **पीटी और दलदली मृदायें** (Peaty and marshy soils)- ये मृदायें ट्रावनकोर, कोचीन,कोचीन, केरल, उड़ीसा के समुद्री किनारों पर, सुन्दर वन डेल्टा तथा बंगाल के अन्य स्थानों पर बिहार के मध्य भाग में तराई में उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा जिले में, मद्रास के दक्षिण-पूर्व किनारों पर पायी जाती है। ये

मृदायें नम जलवायु में बनती है। इन प्रदेशों में अधिक कार्बनिक पदार्थो के इकट्ठा होने से इन मृदाओं का निमार्ण होता है। कभी-कभी इसमें विलेय लवणों की पर्याप्त मात्रा भी मिलती है नदियों और झीलों के निचले क्षेत्रों में जलाक्रँति तथा अवायु दषाओं में मृदाओं का निर्माण होता है। इसमें फैरस आयरन होने से प्राय: इनका रंग नीला होता है। ये काली, भारी तथा अम्लीय मृदायें होती है। इनका पी-एच लगभग 4 तथा कार्बनिक पर्दाथ 10-40% तक होती है इनमें नाइट्रीकरण नहीं होता। मानसून के बाद धान उगाया जाता है।

2.10 सारांश

जलवायु, मिट्टी और उसकी उर्वरता पर किसी भी देश की सुख-समृद्धि निर्भर होती देश की वनस्पति, जलवायु, चटटानें और स्थलाकृति में काफी विभिन्नता पायी जाती है। इन्हीं विशेषताओं ने समय-समय पर अनेक प्रकार की मिटिटयों को जन्म दिया है।

2.11 बहुचयनात्मक प्रश्न

1- मृदा विज्ञान की वह शाखा जिसमें मृदा का अध्ययन पादप वृद्धि के दृष्टिकोण से किया जाता है। उसे कहते है :

(a) परिस्थितिकी (b) भूगर्भ (c) पेडालोंजी (d) इडैफॉलाजी **(d)**

2- मृदा विज्ञान की वह शाखा जिसमें मृदा के गुण की उत्पत्ति, मृदा के गुण, वर्गीकरण आदि का अध्ययन किया जाता है। उसे कहते है।

(a) पेडालोंजी (b) इडैफॉलाजी (c) परिस्थितिकी (d) भूगर्भ **(a)**

3- मृदा पादप वृद्धि का एक माध्यम है क्योंकि :

(a) यह पौधों को उनके आवश्यक खाद्य तत्व प्रदान करती है

(b) पौधों को जल तथा जड़ो के श्वसन के लिये ऑक्सीजन प्रदान करती है।

(c) पौधों को यांत्रिक आधार प्रदान करती है

(d) उपरोक्त तीनों। **(d)**

4- मृदा को उदग्र रूप से काटने पर जो जननिक रूप से सम्बन्धित अनेकों परतें दिखायी पड़ती है इन परतों की इकाई को कहते है:

(a) मृदा संस्तर (b) मृदा प्रतिदर्श

(c) मृदा प्रोफाइल (d) सोलम **(c)**

5. वायुमण्डल में (भारात्मक) में सबसे अधिक प्रतिशतता होती है :

(a) नाइट्रोजन (b) कार्बन डाई-आक्साइड (c) जल वाष्प (d) ऑक्सीजन **(a)**

6. कैल्साइट खनिज से निर्मित चटटान है :

(a) डायोराइट (b) लाइम स्टोन (c) बेसाल्ट (d) ग्रेनाइट **(b)**

2.12 संदर्भ ग्रंथ

- यादव, एस.पी.एस. 2007. ऊसर भूमियों को उपजाऊ बनाएं. विश्व कृषि संचार, जून-2007.
- शर्मा, ओ.पी., इन्टोदिया, एस.के., शर्मा, एस.एल. एवं नकेला, एन.एस. 2009. शस्य विज्ञान (कृषि वर्ग), माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर.
- चौधरी, जे. पी., 2000. मृदा विज्ञान : खाद एवं उर्वरक. भारती पब्लिकेशन, बडोत (बागपत).
- जाट, बी.एल. 2012. क्षारीय व लवणीय भूमि सुधार. विश्व कृषि संचार, मई- 2012.
- विनय सिंह, 1987, मृदा विज्ञान, वी.के. प्रकाशन , बडोत मेरठ

इकाई - 3

मृदा के गुण

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 मृदा के भौतिक गुण

3.3 मृदा के रासायनिक गुण

3.4 सारांश

3.5 बहुचयनात्मक प्रश्न

3.6 बहुचयनात्मक प्रश्नों के उत्तर

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

मृदा स्वास्थ्य क्या है। मृदा गुण के प्रकार एवं उनकी विशेषताएं मृदा के भौतिक गुण- गठन, संरचना, तापमान, वायु एवं जल इत्यादि की जानकारी। मृदा रासायनिक गुण- पौधों की बढवार के लिये आवश्यक पोषक तत्व एवं उनके कार्य की जानकारी। मृदा कोलाइड्स्, मृदा अभिक्रिया एवं मृदा जीवांश पदार्थ की जानकारी करना।

3.1 प्रस्तावना

'मृदा विज्ञान' विज्ञान की वह शाखा है जिसके अन्तर्गत मृदा के भौतिक गुणों, रासायनिक गुणों, कोलाइड्स्, मृदा अभिक्रिया एवं मृदा जीवांश पदार्थ इत्यादि का क्रमबद्ध एवं सुव्यवस्थित अध्ययन किया जाता है। मृदा में पौधों के सभी आवश्यक तत्व पाये जाते हैं। सामान्य दशाओं के अन्तर्गत दो विभिन्न मृदायें कदापि एक समान गुण वाली नहीं होती है। उनके संगठन और कणाकार सदैव परिवर्तनशील होते हैं। मृदा छोटे-छोटे कणों के पारस्परिक संयोग से निर्मित हुई है। भौतिक गुणों में केवल मृदा गठन एवं संरचना से ही नहीं है, अपितु मृदा जल, वायु, वर्ण, तापमान, सुघट्यता आदि से भी है तथा इन गुणों का मृदा के अन्दर जल धारण एवं संचलन, पारगम्यता, धनायन विनिमय क्षमता आदि पर क्या प्रभाव पड़ता है। यदि मृदा में रंध्रावकाश, प्रतिशत एवं परिमाण अनुकूल है तो उस मृदा में जलधारण एवं वायु संचरण क्षमता अधिक होगी, फसल: पौधों की जड़ों को समुचित जल एवं वायु प्रदान करेगी। मृदा अपरदन भी प्राय: मृदा के भौतिक गुणों पर ही अधिक निर्भर होता है।

भौतिक दृष्टि से जल, वायु, अकार्बनिक ठोस कणों एवं जैव पदार्थ व जीवाणुओं का मिश्रण ही खनिज मृदाओं को संगठित करता है। मृदा में खनिजों का बहुत बड़ा अंश प्राय: उसमें उपस्थित मृदा या कोलाइडी पदार्थो से आवर्तित व दबा होता है। जिन मृदाओं में खनिजीय कोलाइड्स अधिक प्रभावी होते

है तो ये बलुई या बजरीदार होती है। प्राकृतिक रुप से बालू तथा मृतिका के मध्य कई कोटिक्रम पाये जाते हैं। चूँकि मृदा के भौतिक गुणों को आधारभूत गुणों की संज्ञा दी गई हैं तथा इन पर मृदा की अन्य विशिष्टताएं भी निर्भर करती है, अत: मृदा के गठन, संरचना, समुच्चय, मृदा जल, वायु, तापमान एवं वर्ण आदि का अध्ययन मृदा विज्ञान के इस खण्ड के अन्तर्गत करना आवश्यक है।

3.3 मृदा के भौतिक गुण

3.2.1 मृदा गठन (Soil texture)

सामान्य दशाओं के अन्तर्गत दो विभिन्न मृदायें कदापि एक समान गुण वाली नहीं होती है। उनके संगठन और कणाकार सदैव परिवर्तनशील होते हैं। जिस प्रकार द्रव्य की तीन अवस्थायें होती है, ठीक उसी प्रकार 'मृदा' में भी ठोस, द्रव्य और गैस तीन अवस्थायें विद्यमान हैं। पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने की दृष्टि से केवल ठोस एवं द्रव प्रावस्थायें ही महत्वपूर्ण हैं। ''मृदा गठन किसी प्रदत्त मृदा में खनिज कणों के आकार या आकारों के विभिन्न समूहों के अनुपात को प्रकट करता है।'' खनिज मृदाओं से साधारणत: 45 प्रतिशत खनिज, 25 प्रतिशत जल, 25 प्रतिशत वायु तथा 5 प्रतिशत के लगभग जैव पदार्थ होता है। उनकी मात्रा कम या अधिक भी हो सकती है। जैसे पीट मृदा में 5 प्रतिशत से कम तथा बलुई मृदा में 95 से 99 प्रतिशत खनिज होता है, इसी प्रकार जल में भी भिन्नता हो सकती है। खनिजीय कण शैलों के अपक्षय से प्राप्त होते है। जैविक कण पादप एवं जन्तु अवशेषों के अपघटन से प्राप्त होते है। इन कणों का आकार भिन्न भिन्न होता है जिनमें मोटे आकार वाले कण आँखों से देखे जा सकते है, जबकि अतिसूक्ष्म इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी से ही देखे जा सकते है।

मृदा गठन मृदा की महत्त्वपूर्ण विशिष्टता है, क्योकि यह मृदा की जलग्रहण एवं अधिशोषण क्षमता, जुताई एवं वातन आदि के साथ साथ मृदा की उर्वरकता को भी प्रभावित करता है। जैसे-स्थूल बलुई मृदा की जुताई सरलता से की जा सकती है जिससे उत्तम वातन तथा अधिक जड़ वृद्धि हाती है। यह शीघ्र गीली होती है एवं सूख जाती है। ऐसी मृदाओं में पोषक तत्वों की मात्रा न्यूनतम होती है, क्योंकि ये मृदा परिच्छेदिका में अन्त: स्त्रावण के कारण नीचे की परतों में चले जाते है। इसके अलावा मृतिका मृदाओं से सूक्ष्म कण होते है जो आपस में दृढ़ता से फँसे होते है। जिसमें रन्ध्रावकाश कम होता है जिससे ये मृदाएँ बड़ी कठिनता से गीली व सूखी होती है। इनका निकास व जुताई बड़ी कठिनाई से होता है। मृदा गठन में परिवर्तन नही होता। बलुई मृदा हमेशा बलुई तथा मृतिकायी मृदा सदैव मृतिकायी ही रहेगी, क्योकि कणों का आकार सरलता से परिवर्तित नही हो सकता।

मृदा के कणों का आकार

मृदा गठनात्मक इकाइयाँ में कणों के माप के अनुसार बालू, सिल्ट तथा मृतिका मृदा के तीन पृथक् कण वर्ग है, यही है। इनके समुच्चयन से समुच्चय जो मृदा संरचना की इकाई बनती है, जिसे द्वितीयक कण कहते है। पृथक् कण वर्ग सीमाएँ परीक्षण सामग्री का अमेरिकी मानक, संयुक्त राज्य अमेरिका का कृषि विभाग तथा अन्तराष्ट्रीय मृदा विज्ञान समिति आदि अभिकरणों ने निर्धारित की है। मृदा पृथक् वर्ग कण शब्दावली अन्तराष्ट्रीय प्रणाली के अनुसार 2.0 से 10.0 मि.मी के मध्य के आकार के कणों को बजरी, 2.0 से 0.2 मि.मी तक के आकार के कणों को मोटी बालू, 0.2 से 0.02 मि.मी तक

के कणों के आकार वाले को बारीक बालू, 0.02 से 0.002 मि.मी के मध्य आकार वाले कणों को सिल्ट तथा 0.002 मि. मी से कम आकार वाले कणों को मृतिकों के रुप में वर्गीकृत किया गया है।

मृदा पृथक् वर्ग कण की विशिष्टताएँ

बालू- इसका आकार स्थूल तथा स्पष्ट में दरदरी होती है। इसमें मुख्य खनिज सिलिका होता है। जलधारण क्षमता, ससंजन तथा सुघट्यता बहुत न्यून होती है। मोटे कण व दीर्घ रन्ध्रावकाश होने से जल का अन्त: स्त्रवण तीव्र गति से होता है। मोटे कणों का अनुपात अधिक होने से मृदाएँ हल्की गठन वाली कहलाती है जो पोषक तत्वों में न्यून होती है।

सिल्ट- यह सिलिक खनिजों से संगठित होती है, परन्तु इसके कणों को सूक्ष्मदर्शी से देखा जा सकता है। सिल्ट कण बालू व मृतिका के बीच के गुणों वाले होते है जो स्पष्ट में आटे या टेल्कम पाउडर जैसे होते है। इसके कणों में कणिकायन कम या नही पाया जाता है तथा ये सरलता से चूर्णित किये जा सकते है। इन कणों में जलधारण क्षमता, ससंजन, सुघट्यता, अधिशोषण आदि गुण बालू की अपेक्षा अधिक होते है तथा मृतिका कणों से कम। इनसे बनी अधिकतर मृदाओं की भौतिक अवस्था बहुत संतोषजनक नही होती तथा इनमें जीवांश परिमाण भी कम होता है।

मृतिका- इसके कण बहुत सुक्ष्म एवं कोलाइडी होते है और मृतिका खनिजों से विकसित होते है। इनकों अतिसूक्ष्मदर्शी से देखा जा सकता है। इनमें कोलाइड्स जैसे गुण होते है, अत: ये पर्याप्त जलधारण क्षमता, ससंजन, सुघट्यता, उत्फूलन, संकुचन, पृष्ठ क्षेत्रफल, अधिशोषण आदि गुणों से युक्त होते हैं। मृतिका खनिजों के गुणों का विस्तृत विवरण आगे के अध्ययन में दिया गया है।

मृदा गठन वर्ग

गठनात्मक नामकरण हरेक तीनों मृदा पृथक् कण वर्ग के बालू, सिल्ट एवं मृतिका के आपेक्षिक अनुपात के आधार पर किया जाता है। मृदाएँ जिनमें मृतिका प्रचुर मात्रा में होती है उनका गठनात्मक वर्ग मृतिका होता है। उच्च सिल्ट प्रतिशत वाली मृदा का गठनात्मक वर्ग सिल्ट तथा उच्च बालू प्रतिशत वाली मृदा का गठनात्मक वर्ग बालू होगा, परन्तु जब मृदा में इन तीनों में से किसी एक के भी प्रभावी भौतिक गुण न हो तो गठनात्मक वर्गो का निर्धारण पृथक् कण वर्ग के विभिन्न अनुपातिक सम्मिश्रणों के फलस्वरुप मृदा में होने वाली विभिन्न विशेषताओं की भिन्नताओं के आधार पर किया जाता है। साधारणतया सूक्ष्म एवं स्थूल कणों के आधार पर मृदा को हल्की, भारी एवं मध्यम गठन वाली कहा जाता है, जो क्रमश: दरदरी बालू, टेल्कम पाउडर जैसे सिल्ट तथा साबुन जैसे चिपचिपे मृतिका स्पष्ट से ज्ञात किया जाता है। सही बालू, सिल्ट एवं मृतिका की प्रतिशत मृदा का प्रयोगशाला में यांत्रिक वि"लेशण कर ज्ञात किया जा सकता है तथा इनके अनुसार त्रिभुज जो (USDA) मापनी पर आधारित है : की सहायता से गठनात्मक वर्ग निर्धारित किया जा सकता है।

सारणी: **1.** मृदा पृथिक् कण वर्ग के प्रतिशत के अनुसार गठनात्मक वर्ग एवं उनकी विशिष्टताएँ

गठनात्मक वर्ग	मृदा पृथक कण वर्ग (प्रतिशत)			विशिष्टताऐं
	बालू	सिल्ट	मृतिका	
बलुई	85 - 100	0 - 15	0 - 10	बहुत हल्की, बहुत शुष्क, बहुत दुर्बल, जलधारण क्षमता, पोषक तत्वों में अत्याधिक न्यून
दोमट बलुई	70 - 90	0 - 3	0.15	बहुत हल्की, बहुत शुष्क, बहुत दुर्बल, जलधारण क्षमता, पोषक तत्वों में अत्याधिक न्यून
बलुई दोमट	40 - 80	0 - 50	0 - 20	हल्की, शुष्क, दुर्बल, जलधारण क्षमता, पोषक तत्वों की आवश्यकता
दोमट	23 - 52	28 - 50	7 - 27	मध्यम, साधारण जलधारण क्षमता, उर्वर एवं उत्पादक, उत्तम जल निकास, सिंचाई के लिए उपयुक्त
सिल्टी दोमट	0 - 15	50 - 88	0 - 27	मध्यम भारी, साधारण क्षमता, उर्वर एवं उत्पादक, उत्तम जल निकास सिंचाई के लिए उपयुक्त
सिल्टी	0 - 20	80 - 100	0 - 12	मध्यम भारी, साधारण क्षमता, उर्वर एवं उत्पादक, उत्तम जल निकास सिंचाई के लिए उपयुक्त
बलुई मृतिका दोमट	45 - 80	0 - 28	20 - 28	हल्की मध्यम, उर्वर एवं उत्पादक, कम जलधारण क्षमता, सिंचाई की आवश्यकता
मृतिका दोमट	20 - 45	15 - 35	27 - 40	मध्यम भारी, साधारण क्षमता, उर्वर एवं उत्पादक, उत्तम जल निकास सिंचाई के लिए उपयुक्त
सिल्टी मृतिका दोमट	0 - 20	40 - 73	27 - 40	भारी जलधारण में सक्षम, उत्तम जल निकास, उर्वर
बलुई मृतिका	45 - 65	0 - 20	35 - 45	हल्की मध्यम, उर्वर एवं उत्पादक, कम जलधारण क्षमता, अच्छी सिंचाई की आवश्यकता

सिल्टी मृतिका	0 - 20	40 - 60	40 - 60	अत्यन्त भारी, जुताई कार्य थोड़ी कठिनाई से, उर्वर, जल निकास मध्यम, सिचांई के लिए अनुपयुक्त पर शुष्क खेती के लिए उपयुक्त
मृतिका	0 - 45	0 - 40	40 - 100	अत्यन्त भारी, जुताई कार्य करना कठिन, दोश पूर्ण जल निकास, उर्वर पर सिंचाई के लिए अनुपयुक्त, शुष्क खेती के लिए उपयुक्त

3.2.2 मृदा संरचना (Soil Structure)

संरचना का मूल अभिप्राय मृदा कणों के विन्यास केवल पृथक् कण वर्ग जैसे- बालू, सिल्ट व मृतिका से ही नही है, अपितु समुच्चयों से भी है जो पृथक् कण वर्ग के समूहन से विकसित होते है। पृथक् कण वर्ग को प्राथमिक कण तथा समुच्चय को द्वितीयक कण से भी सम्बोधित किया जाता है। प्रकृति में मृदा कण समूह में ही पाये जाते है जिन्हें हम मृदा समुच्चय या पेड्स कहते है तथा इनके समूहित होने की प्रक्रिया को समुच्चय कहते है। मृदा परिच्छेदिका के विभिन्न संस्तरो में एक या एक से अधिक प्रकार की संरचना पाई जाती है। मृदा पृथक् कण वर्ग अथवा समुच्चय के आपस में मिलने के कारण विभिन्न आकृति व अमाप वाली संरचना बनाती है। इसमें एक प्रकार का प्रतिरुप समान होता है, परन्तु वह अन्य से पृथक् होता है। मृदा कण विन्यास को उनकी विशेषताओं के अनुसार निम्नलिखित शीर्षकों में विभाजित किया गया है:

1- मृदा संरचना के प्रकार :- यह समुच्चयों के विन्यास एवं आकृति के अध्ययन पर आधारित है।
2- मृदा संरचना वर्ग :- इसके अन्तर्गत समुच्चयों की अमाप सीमाओं को निर्धारित किया जाता है।
3- मृदा संरचना की श्रेणी :- श्रेणी समुच्चयों के स्थायित्व एवं विभेदता को निर्धारित करती है।

मृदा संरचना के प्रकार

मृदा परिच्छेदिका में समुच्चयो व पेड्स को उनकी आकृति एवं प्रतिरुप के आधार पर मृदा संरचना के निम्नलिखित चार प्रकार है :

गोलाभ- इस समूह में गोल समुच्चय एवं पेड्स को रखा गया है। ये समुच्चय शिथिल पड़े रहते है तथा इनको सरलता से पृथक् किया जा सकता है। सापेक्षत: कम सरंध्र समुच्चय दाने कहलाते हैं तथा इस प्रतिरुप को दानेदार कहते है। जब दानेदार समुच्चय विशेषतया सरंध्र होते हैं तो ये मृदुकणीय के नाम से जाने जाते है। दानेदार तथा मृदुकणीय संरचना उच्च जैव पदार्थ वाली मृदाओं में पाई जाती है।

पट्टिकावृत- इस तरह संरचना में समुच्चय सापेक्षत: पतली खड़ी प्लेट जैसी पट्टिकावृत तथा पत्तीनुमा विन्यासित होती है। पट्टिकावृत समुच्चय का क्षैतिज अक्ष उदग्र अक्ष से अधिक विकसित होने के कारण पेड़ संपीड़ित होते है या ताल की भांति विकसित होते है। यद्यपि अधिकतर संरचनाओं के लक्षण मृदा

निर्माणी बल के परिणामस्वरुप होते है पर पट्टिकावृत संरचना बहुधा मूलद्रव्य जो विशेष तौर से पानी तथा बर्फ द्वारा बिछाये जाने से वंशानुगत होते है।

प्रिज्मीय- प्रिज्मीय समुच्चय पार्श्व-चपटाभ तथा उदग्र अक्ष अपेक्षाकृत अधिक विकसित होने के कारण ये स्तंभ की भांति विन्यासित होते है। यदि इनके विन्यास में शीर्ष चपटाभ स्पष्ट कटा दिखाई दे तथा गोल नही हो तो संरचना प्रिज्मीय होती है और यदि शीर्ष गोल टोपीयुक्त हो तो उस संरचना को स्तम्भी कहते है। उप प्रकार खड़े समुच्चयों या स्तम्भों से लक्षित होते है, जिनकी ऊँचाई विभिन्न मृदाओं में भिन्न भिन्न होती है तथा इनका व्यास 15 से.मी. या इससे अधिक तक पहुँच जाता है। प्रिज्मीय संरचना प्राय: अवपृष्ठ संस्तरों विशेषतया नेट्रिक संस्तरों में शुष्क तथा अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में पाई जाती है। ऐसी संरचना दुर्बल जल निकास वाली आर्दश क्षेत्रों वाली मृदाओं में भी पाई जाती है।

खण्डीय- इस संरचना वाले पेठों में क्षैतिज एवं उदग्र अक्ष समान विकसित होते है। चपटे शीर्ष वाले पार्श्व होने से अधिकांश तीक्ष्ण कोणीय होते है, अत: इन्हे कोणीय खण्डीय संरचना के नाम से जाना जाता है। इसके अलावा जिन पेड्स में मिश्रित गोल तथा चपटे शीर्ष वाले पार्श्व तथा अनेक गोल शीर्ष हो तो उसे उपकोणीय संरचना कहा जाता है जो तीन विभाओं वाला होता है। इस संरचना में टुकडो की मोटाई 1 से 10 से.मी. होती है। साधारणत: इसकी बनावट वैयक्तिक होने के कारण इसकी पहचान सरलता से हो सकती है।

3.2.3 मृदा वर्ण (Soil Colour)

मृदा वर्ण मृदा की प्रमुख विशिष्टता है, क्योंकि इसका उपयोग हर व्यक्ति करता है। मृदा वर्ण से यह आभास होता है कि मृदा कौनसी जलवायु में तथा कौनसे मूलद्रव्य से विकसित हुई है। मृदा की उत्पादकता को भी इससे जाना जा सकता है। मृदा में प्राय: सफेद, भूरा, धूसर, पीला तथा काला वर्ण पाया जाता है। कभी - कभी नीली तथा हरी झाँइयाँ भी होती है, परन्तु परिशुद्ध हरा एवं नीला वर्ण नही पाया जाता। अधिकतर मृदा वर्ण परिशुद्ध नही होकर मिश्रित वर्णों के होते है।

3.2.4 मृदा जल (Soil water)

जल मृदा का एक महत्वपूर्ण घटक है तथा इसके रन्ध्रावकाशों में उपस्थित रहकर उगने वाली वनस्पति तथा सूक्ष्म जीवों के अस्तित्व के लिए अति आवश्यक है। जल पादप वृद्धि हेतु मृदा के अन्य महत्वपूर्ण कारकों को भी नियंत्रित करता है, अत: जल के भौतिक गुणों का ज्ञान, पादप मृदा तंत्र संदर्भ से इसकी अवस्थाओं, आचरण एवं कार्य व शक्ति को समझना आवश्यक प्रतीत होता है। इसका मृदा अपरदन, वायु, तापमान तथा संरचना पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

जल संरचना (Structure of water)

जल हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन के परमाणुओं से बना एक साधारण यौगिक है जिसमें H-O-H का रेखीय न्यास न होकर $104.5^{\text{Œ}}$ कोण पर हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन का वी के आकार का न्यास होता है जिसके फलस्वरुप हाइड्रोजन की अपेक्षा ऑक्सीजन के निकटवर्ती इलेक्ट्रॉनों का सहभजन कर यह एक असम्मति अणु बन जाता है। इसके साथ साथ अणु पार्श्व जिस पर हाइड्रोजन स्थित होते है, धन विद्युती होने लगते है तथा विपरीत दिशा में ऋण विद्युती। जिन अणुओं का धन एवं ऋण आवेश केन्द्र

संपात नही होते है, उन्हें ध्रुवीय अणु कहते है। जल जैसा H_2O द्वारा बताया गया है कि यह न तो अकेला अणु के रुप में होता है और न ही स्वतंत्र रुप से प्रतिक्रिया करता है। H_2O में उपस्थित हाइड्रोजन के एक अणु का धन छोर दूसरे यानी ऑक्सीजन के ऋण छोर को आकर्शित करने के फलस्वरुप एक श्रंखला के समान बहुघटकी में समूहित होते है, अत: H_2O का कोई पृथक् अस्तित्व नही होता। जल का यह ध्रुवीय गुण अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ऑक्सीजन के ऋण छोर द्वारा H^+, K^+, Ca^{++} तथा Mg^{++} जैसे धनायन आकर्शित होते है। इसी प्रकार ऋण आवेशित मृदा जल को हाइड्रोजन के धन आवेश के कारण आकर्शित करती है। जब जल अणुओं का बंध हाइड्रोजन के परमाणु से होता है तो इस परिबंध को हाइड्रोजन बंधन कहते है। यह सापेक्षत: निम्न ऊर्जा युग्मन है, जिससे हाइड्रोजन का परमाणु ऑक्सीजन के दो ऋण विद्युती परमाणुओं द्वारा सहभाजित होता है। यह बंधन पानी के बहुघटन को अंकित करता है। हाइड्रोजन बंधन के कारण आपेक्षिक ऊष्मा, ‘यानता, क्वथनांक तथा गलनांक आदि अन्य हाइड्रोजन युक्त यौगिकों से अधिक होते है।

3.2.5 मृदा वायु (Soil air)

मृदा वायु भी जल की तरह उत्पादकता के लिए आवश्यक है। मृदा प्राणिजात, सुक्ष्मजीवों तथा जड़ों की श्वसन क्रिया हेतु ऑक्सीजन की पूर्ति वायु द्वारा होती है। कार्बन डाई ऑक्साइड का प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया के लिए उपभोग होने से उपयोगी है। वायु हरे पौधों की सम्पूर्ण शरीर क्रियात्मक प्रक्रियाओं को नियंत्रित करती है। अधिकतर फसलों के पौधों हेतु मृदा में न्यूनतम 10 प्रतिशत से अधिक ऑक्सीजन का होना आवश्यक है अन्यथा इनकी वृद्धि संभव नही होती। ऑक्सीजन जैव पदार्थ के अपघटन के लिए भी अति आवश्यक है। मृदा वातन् में परिवर्तन से पोषक तत्वों का अपग्रहण भी कम व अधिक होता है।

मृदा एवं वायुमण्डल के मध्य परस्पर CO_2 एवं O_2 के आदान प्रदान की क्रिया को मृदावातन कहते है। वायु में उपस्थित जलवाष्प जड़ों तथा सूक्ष्म जीवों के शुष्कन को रोकती है तथा मृदा के अन्दर जलांश की वृद्धि करती है। मृदा वायु का संघटन- नाइट्रोजन, ऑरगन, ऑक्सीजन तथा कार्बन-डाई-ऑक्साइड मृदा वायु की गैसीय अवस्था के प्रमुख धटक है जिसका वितरण इस प्रकार है

सारणी: 2. मृदा एवं वायुमण्डलीय वायु का संघटन

गैसें	मृदा वायु (प्रतिशत)	वायुमण्डलीय वायु (प्रतिशत)
नाइट्रोजन	79.2	79.0
ऑक्सीजन	20.6	20.97
कार्बन-डाई-ऑक्साइड	0.25	0.03
अन्य गैसें	सूक्ष्म मात्रा	

इस आधार पर मृदा में CO_2 वायुमण्डल से लगभग 8-10 गुना अधिक होती है। मृदा वायु संघटन इसके गठन व संरचना, जैविक परिमाप, आर्दशता, मौसम तथा गहराई पर निर्भर करता है।

3.2.6 मृदा ताप (Soil temperature)

मृदा में भौतिक, रासायनिक एवं जैविक क्रिया दर पर मृदा ताप का प्रभावकारी असर होता है। पादप जाति के पृथ्वी पर वितरण को प्रभावित करने वाले मृदीय कारकों में मृदा तापमान एक है। बीज, जड़ों एवं सूक्ष्म जीवों की वृद्धि मृदा ताप पर निर्भर है। बीजों के अंकुरण के लिए उपयुक्त तापमान परिसर होता है। वाटहाफ ने पाया कि प्रत्येक 10° से. तापमान वृद्धि पर रासायनिक क्रिया दोगुनी हो जाती है और जैविक क्रिया चार गुनी हो जाती है।

3.3 मृदा के रासायनिक गुण

पौधे जल व वायु से कार्बन, हाइड्रोजन व ऑक्सीजन प्राप्त करते है। अत: इन तत्वों को देने की आवश्यकता नहीं होती है परंतु पौधों की आवश्यकतानुसार उर्वरकों द्वारा दिये जाने वाले तत्वों को (अ) जिनकी अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है - प्राथमिक/मुख्य पोषक तत्व (नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश (ब) जिनकी पर्याप्त आवश्यकता होती है - द्वितीय/गौण पोषक तत्व व (स) सूक्ष्म मात्रा में आवश्यकता वालों को सूक्ष्म पोषक तत्व कहते है (लोहा, तांबा, जस्ता, मैग्नीज, बोरोन, मोलिब्डेनम, कोबाल्ट, क्लोराइड) कहते हैं। पौधों की अच्छी पैदावार के लिए आवश्यक है कि मृदा में पोषक तत्व (अ) घुलनशील व उपलब्ध अवस्था में हो, (ब) मृदा में तत्वों की सांद्रता उचित हो तथा (स) विभिन्न तत्वों का मृदा घोल में संतुलन पौधों की बढ़वार के अनुरूप हो।

पौधों द्वारा शोषित पोषक तत्वों के रूप

(अ) असंयुक्त रूप से शोषित		(ब) संयुक्त रूप से आवेशित	
पोटेशियम	K^{+}	नत्रजन	NH_4^{+}, No_3^{-}
कैल्शियम	Ca^{+}	फास्फोरस	PO_4^{---}, HPO_4^{--}, $H_3PO_4^{-}$
मैगनेशियम	Mg^{++}	गन्धक	So_3^{-}, So_4^{--}
लोहा	Fe^{++} Fe^{+++}	बोरोन	Bo_2^{---}, $HB_4O_7^{-}$
तांबा	Cu^{+} Cu^{++}	मोलिब्डेनम	$HMoO_4$-
मैंगनीज	Mn^{++} Mn^{+++}	कार्बन	Co_3^{--}, HCO_3-
जस्ता	Zn^{++}	हाइड्रोजन व ऑक्सीजन	H^{+}, OH^{-}
क्लोरीन	Cl^{-}		

3.3.1 प्राथमिक/मुख्य पोषक तत्व :

1. नत्रजन - मृदा वायु में नत्रजन 7.92 प्रतिशत के लगभग होती है। कार्बनिक पदार्थो के रूप में 0.05-0.3 प्रतिशत तक संयुक्त रूप में नत्रजन की मात्रा पाई जाती है। मृदा में कार्बनिक पदार्थ होने पर मृदा जीवाणुओं की क्रियाशीलता बढ़ती है।

पौधों की वृद्धि पर प्रभाव-

1- वानस्पतिक वृद्धि तेजी से होती है।
2- पत्ती में हरे रंग (परिण हरिम) व प्रोटीन की रचना में नत्रजन का मुख्य स्थान है। पौधें में नत्रजन से अमीनो अम्ल, प्रोटीन एलक्लाइडस व प्रोटोप्लाजम का निर्माण होता है।
3- नत्रजन से, फास्फोरस व पोटेशियम का पौधें द्वारा उपयोग संतुलित रूप में होता है।
4- पत्ती वाली सब्जियों के गुणों में वृद्धि करती है, पत्तियों में सरसता रहती है।
5- नत्रजन की कुछ मात्रा सेल्यूलोज इत्यादि के रूप में कोशा भिति पदार्थ बनाने के काम भी आती है। नत्रजन से कोशा का आकार बढ़ता है व दीवारें पतली हो जाती है।
6- दाने व चारे की फसलों में प्रोटीन की मात्रा बढ़ती है।
7- दाने सुड़ोल व गुदेदार बनते है।

2. **फास्फोरस** :-

पौधों की वृद्धि पर प्रभाव :

1. पौधों की जड़ों का विकास तेज व सुदृढ़ (जो अन्य पोषक तत्वों को चूसने में सहायक)
2. पौधों की रोगरोधक क्षमता का विकास
3. परागसेचन अच्छा होता है
4. फसल खड़ी रहने की क्षमता का विकास
5. अन्य तत्वों का परिपाचन बढ़ाता है।
6. कीट के आक्रमण के प्रतिरोधकता बढ़ती है।
7. दाने का भूसे की अपेक्षा अधिक होना
8. फलीदार पौधों में ग्रंथियों का विकास अच्छा
9. फसल की शीघ्र परिपकवता
10. अधिक नत्रजन के प्रभाव को दूर करता है।

3. **पोटेशियम**

पौधों की वृद्धि पर प्रभाव

1- पौधों में एन्जाइमों को क्रियाशील करना पोटेशियम का सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। लगभग 80 से अधिक एन्जाइमों को क्रियाशील होने के लिए पोटेशियम की जरूरत पडती है और इस प्रकार यह तत्व प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से पौधों की बढ़वार की मुख्य क्रियाओं में शामिल रहता है।

2- रंध्रों के खुलने व बन्द होने की प्रक्रिया पोटेशियम से नियंत्रित होती है।

3- यह पौधों की जड़ों की पोषक तत्वों एवं जल ग्रहण की क्षमता को बढ़ाता है।

4- पोटेशियम प्रकाश संश्लेषण को बढ़ाता है तथा नये कार्बनिक पदार्थो के निर्माण तथा पौधे के भण्ड़ारण हिस्से (बीज) में उनके संवहन में सहायता करता है।

5- यह नत्रजन उर्वरकों की क्षमता में सुधार करता है तथा प्रोटीन उत्पादन को बढ़ाता है।

6- पोटेशियम पौधों में सूखा एवं पाला सहने की क्षमता को बढ़ाता है।

7- यह तने की मजबूती को बढ़ा कर पौधों को गिरने के प्रति, प्रतिरोधी बनाता है।

8- पोटेशियम कीटों व बीमारियों के विरूद्ध प्रतिरोधी क्षमता को बढ़ाता है।

9- पोटेशियम का प्रभाव फसल की गुणवत्ता पर भी पडता है। यह फलों एवं सब्जियों के रंग में चमक लाता है तथा रंगों को गहरा करता है। आलू में स्टार्च, प्रोटीन एवं शर्करा को बढ़ाने तथा बीजों एवं कंदों के आकार वृद्धि में इसकी अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पोटेशियम तिलहनों व अन्य बीजों व गिरियों में तेल की मात्रा को भी बढ़ाता है।

3.3.2 द्वितीय/गौण पोषक तत्व :

1. गंधक (सल्फर)

पौधों के तंतुओं में गंधक की मात्रा 0.05 -1.5 प्रतिशत तक होती है। यह फास्फोरस के समान दूसरे तत्वों की तरह ही उच्च उपज, अधिक लाभ और लागत पर अधिक आमदनी के लिए आवश्यक है अत: गंधक की कमी को दूर करना चाहिए। प्रयोगों से सिद्ध हुआ है कि जितना सल्फर (12 किग्रा) भूमि में पहुंचता है उससे अधिक फसलों द्वारा शोषित (25 किग्रा/है.) हो जात है। भा.कृ.अनु. परिशद, दिल्ली द्वारा किये सर्वेक्षण के अनुसार राजस्थान में 33 प्रतिशत सल्फर की कमी तथा कोटा संभाग में भी 20-40 प्रतिशत नमूनों में गंधक की कमी पाई गई है व अधिकांश परिणाम भारी मिट्टी में सल्फर उपयोग में आये व 30 से 100 प्रतिशत तक उपज वृद्धि (21 प्रतिशत से अधिक अनाज, 20 प्रतिशत से अधिक दालों व 25 प्रतिशत से अधिक तिलहन में) देखी गई।

पौधों की वृद्धि पर प्रभाव

1. मीथियोनिन व सिस्टिन जैसे गंधक युक्त एमिनो अम्ल का निर्माण।
2. बीजों में तेल की मात्रा में वृद्धि (9.2 से 9.6 प्रतिशत सरसों में)
3. प्रोटीन संश्लेषण में सहायक व पर्णहरित का निर्माण।
4. हरा चारा की गुणवत्ता में सुधार, कंद में स्टार्च बढ़ाने, प्याज, लहसुन व शलगम में कार्बनिक रूप में होना।

2. **कैल्शियम**

पौधों की वृद्धि पर प्रभाव

1- कैल्शियम फसलों में आनुवंशिक गुण के लिए उत्तरदायी तथा क्रोमोसोम का संरचनात्मक घटक है।

2- कैल्शियम प्रोटोप्लाज्म के जलीयन को कम करता है तथा प्रोटोप्लाज्म की पारगम्यता को नियंत्रित करता है।

3- कैल्शियम लाइपेस एन्जाइम को सक्रियता प्रदान करता है।

4- कैल्शियम पौधों को उनके अवशोषण में अधिक वरणात्मक बनाने की ओर प्रवृत्त करता है। कैल्शियम कोशिका भित्ति का एक घटक है अत: भूसे के कड़ेपन में वृद्वि करता है।

5- कैल्शियम बीज निर्माण को उत्साहित करता है।

6- कैल्शियम तेजी से बढ रहे जड़ों में सिरों में विशेषतया अधिक होता है। अत: कैल्शियम की भारी मात्रा कोशिका विभाजन के लिए आवश्यक है।

7- कैल्शियम कार्बनिक अम्लों के उदासीनीकरण के लिए क्षारीय द्रव्य उपलबध कराता है।

8- यह पत्तियों के बीच पटालिका का निर्माण करता है।

3. **मैग्नीशियम**

पौधों की वृद्धि पर प्रभाव

1- पर्णहरित के प्रत्येक अणु में मैग्नीशियम का एक परमाणु होता है, अत: पौधों के हरे रंग का प्रादुर्भाव इसी के द्वारा होता है।

2- मैग्नीशियम पौधों में फॉस्फोरस के स्थानान्तरण को प्रभावित करता है और पायरोफॉस्फेट जैसे एन्जाइमों को सक्रियता प्रदान करता है।

3- मैग्नीशियम गुणसूत्र का अवयव है जो कि आनुवांशिक गुण धारण करते है।

4- पा्रटीन के संश्लेषण में अन्तर्हित पॉलीराइबोसोमस् का आवश्यक अवयव है।

5- ऐसे अनेक एन्जाइमों का सक्रियण करता है जो प्रोटीन, वसा एवं कार्बोहाइड्रेट के उपापचय से सम्बन्धित है।

3.3.3 सूक्ष्म पोषक तत्व : शस्य सघनता, अधिक उपज देने वाली प्रजातियों के प्रचलन, लम्बी अवधि के फल वृक्षों के उगाने, उच्च वि"लेशण उर्वरकों के प्रयोग के परिणामस्वरूप सूक्ष्म पोषक तत्वों की मृदा में कमी हो गई है। भारत की मृदाओं में जिंक की बहुत कमी है। यहां की मृदाओं में संपूर्ण जिंक की मात्रा 10-30 पी.पी.एम. पाई गई है जो पौधों की संतुलित वृद्धि के लिए काफी कम है।

1- **जिंक (जस्ता)** :

पौधें में कार्य **:-** जस्ता पादप हार्मोन के जैव संश्लेषण में सहायक होता है। पौधे की आवश्यक प्रतिक्रियाओं में उत्प्रेरक का कार्य करता है। पौधों में प्रकाश संश्लेषण और नत्रजन के उपापचय में सहायक होता है यह प्रोटीन संश्लेषण एवं फॉस्फोरस के उपापचय में भी सहायक होता है।

2- **लोहा (आइरन)** :

पौधें में कार्य **:-** पौधे को इसकी कम मात्रा की आवश्यकता होती है। क्लोराफिल निर्माण में सहायक होता है। यद्यपि यह जैव रसायनिक अभिक्रियाओं के लिए आवश्यक शर्करा, प्रोटीन एवं श्वसन क्रिया में ऑक्सीजन वाहक के कार्य में सहायक होता है।

3- **मैंग्नीज** :

पौधें में कार्य :- यह तत्व एन्जाइम्स का मुख्य अंग होता है इन एन्जाइम्स का क्लोरोफिल संश्लेषण से सम्बन्ध होता है। यह कार्बोहाइड्रेट एवं प्रोटीन उपापचय में आवश्यक होता है।

4- **तांबा (कॉपर)** :

पौधें में कार्य :- तांबा पौधों द्वारा Cu^{++} के रूप में अवशोषित होता है। यह प्रकाश संश्लेषण, ''वसन क्रिया में भाग लेता है। यह ऑक्सीकरण अवकरण क्रिया में महत्वपूर्ण कार्य करता है। तांगा पौधों में रोग प्रतिरोधकता की क्षमता भी प्रदान करता है।

5- **बोरोन** :

पौधें में कार्य :- बोरोन दलहनी फसलों (दाल वाली फसलें) में नत्रजन स्थिरीकरण में सहायक होता है। यह पौधों की कोशिका में जल नियंत्रण में सहायता करता है। यह पौधे में नवीन अंगो के निर्माण में सहायक है।

6- **मोलिब्डेनम** :

पौधें में कार्य :- दलहनी फसलों की जड़ ग्रन्थियों (गांठो) में पाये जाने वाले जीवाणु राइजोबियम के लिए वायुमण्डलीय नत्रजन को स्थिर करने में मोलिब्डेनम सहायता करता है। यह फॉस्फोरस एवं नत्रजन के उपापचय में सहायता करता है।

7- **क्लोरीन** :

पौधें में कार्य :- पौधों में क्लोरीन के बारे में बहुत कम जानकारी है फिर भी यह माना जाता है कि यह पौधों की प्रकाश अपघटन क्रिया में भाग लेती है तथा कोशिका के रसाककर्षण दाब में वृद्धि करती है।

सारणी 3 : **मुख्य एवं गोण पोषक तत्वों वाले रासायनिक उर्वरक**

उर्वरक	मुख्य तत्व (प्रतिशत में)	अन्य तत्व (प्रतिशत में)
नत्रजनयुक्त रासायनिक उर्वरक		
सोडियम नाइट्रेट	16	-
अमोनियम सल्फेट	21	सल्फर (24)
कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट (केन)	25	कैल्शियम (8.1)
अमोनियम सल्फेट नाइट्रेट	26	सल्फर (26)
यूरिया	46	-
अमोनियम नाइट्रेट	33	-
अमोनियम क्लोराइड	26	क्लोरीन (66)
फॉस्फोरसयुक्त रासायनिक उर्वरक		

सिंगल सुपर फास्फेट	16	सल्फर (12), कैल्शियम (20)
डाई अमोनियम फास्फेट	46	नाइट्रोजन (18)
रॉक फास्फेट	20-40	-
डाई कैल्शियम फास्फेट	34	कैल्शियम
पोटेशियमयुक्त रासायनिक उर्वरक		
पोटेशियम क्लोराइड	60	-
पोटेशियम सल्फेट	50	सल्फर (18)
अमोनियम फास्फेट सल्फेट	15	नाइट्रोजन (16-20), फास्फोरस (20)
सल्फरयुक्त रासायनिक उर्वरक		
जिप्सम	13-16	कैल्शियम (16-19)
फास्फोजिप्सम	16	कैल्शियम (21)
मैग्नेशियम सल्फेट	22	पोटा”ा (22)

3- **मृदा कोलाइड** (Soil Colloids)

कोलॉइड्स :- थॉमस ग्राह्य (1871) ने जल में घुलनशील पदाथो को वानस्पतिक या जन्तु झिल्ली में से विसरित होने की क्षमता के आधार पर दो भागों में विभाजित किया था। इनका नाम क्रिस्टलाभ (Crystalloid) तथा कोलॉइड (Colloid) रखा गया। जो पदार्थ इन झिल्लीयों में से आसानी से विसरित हो जाते है, उन्हे क्रिस्टलाभ कहते है, जैसे- शकरा, नमक, यूरिया आदि और जो पदार्थ अधिकतर ठोस अवस्था में अक्रिस्टलीय होते हैं और जो विलयन झिल्ली मे से होकर मन्दगति से विसरित होते है अथवा पूर्णरुप से विसरित नही होते, उन्हे कोलाइड्स कहते है, जैसे - स्टार्च, जिलेटिन, आगर-आगर गोंद आदि।

कोलॉइड्स ग्रीक भाशा का शब्द है जिसका शब्दार्थ (Kolla = गोंद, Eidos = सामान) गोंद के समान है। कोलॉइड्स के कणों का व्यास 5 से 100 ml (Millimicron) होता है। मृदा कोलॉइड्स **:-** मृदा में दो प्रकार के कोलॉइड्स होते है जैसे-अकार्बनिक या खनिज कोलॉइड्स, तथा कार्बनिक या ह्यूमस कोलॉइड्स। दोनों ही प्रकार के कोलॉइड्स मृदा में क्ले-ह्यूमस सम्मिश्र के रुप में उपस्थित रहते है तथा इन दोनो को अलग करना कठिन है। मृदा का कोलॉइडी अंश क्रियाशील एवं महत्वपूर्ण है। अकार्बनिक कोलॉइड अनेक प्रकार की क्ले के रुप में मृदा में विद्यमान है, जबकि कार्बनिक कोलॉइड ह्यूमस में होते है।

मृदा कोलाइड्स के गुण :-

1- विजातीयता- कोलॉइडी घोल में छोटे छोटे कण किसी माध्यम में विसरित होते है। इसमें दो प्रावस्थाएँ होती है, अत: कोलॉइड़ विजातीयता प्रदर्शित करते है।

2- फिल्टरन की क्षमता- साधारण छन्ना कागज में से कोलॉइडी कण छन जाते है, क्योकि साधारण छन्ना कागज के छिद्र इतने बड़े होते है कि वे कोलॉइडी कणों को रोक नही पाते।

3- कोकोलाइडी कण- ये अर्द्ध पारगम्य झिल्ली से होकर विसरित नही होते।

4- फैराडे-टिन्डल परिघटना- एक अंधेरे कमरे में यदि प्रकाश की किरणे कही से प्रवेश करती है तो हवा में धूल के कण प्रत्यक्ष दिखाई पड़ते है। इसी प्रकार जब कोई तीव्र किरण कोलॉइड घोल पर डाली जाती है तो किरण का मार्ग बगल से देखने पर नीले रंग का दिखाई देता है। इस परिघटना को फैराडै-टिन्डल परिघटना कहते है। कोलॉइडी कण प्रकाश को चारों ओर फैलाते है। प्रकाश का फैलना परावर्तन के कारण नही होता, क्योकि कणों का आकार दृ'य प्रकाश के तरंगदैध्य से छोटा होता है, अत: प्रकाश की तरंग को परावर्त नही कर सकता। इसलिए कोलॉइड कण सूक्ष्मदर्शी से दिखाई नही देते। प्रकाश को फैलाने में कण स्वयं प्रकाशमान हो जाते है। सर्वप्रथम से कण प्रकाश ऊर्जा का अवशोषण करते है तथा फिर उसे कम लम्बाई वाली तरंग के रुप में फैलाते है।

5- ब्राउनियम गति- अति सूक्ष्मदर्शी में कोलॉइडी घोल का परीक्षण करने से यह ज्ञात होता है कि निलम्बित कणों की गति निरंतर टेढ़ी - मेढ़ी रहती है, इसे ब्राउनियन गति कहते है। सर रॉबर्ट ब्राउन (1827) ने गति का पता लगाया था। कोलॉइड कण परिक्षेपण माध्यम के बहुत से छोटे अणुओं से घिरे रहते है। यह परिक्षेपण माध्यम निरंतर अक्रमित गति से चलते रहते है। कोलॉइडी कण परिक्षेपण माध्यम के अणु के असमान बमबारी से अस्फोटित होते है।

6- अधिशोषण- कोलॉइडी कण किसी द्रव या ठोस की सतह पर एक तनाव की स्थिति में रहते है तथा अपनी सतह पर दूसरे कणों को आकर्शित करते है। ऐसा करने से अवशेष संयोजकता शान्त हो जाती है। इसके परिणामस्वरूप दो प्रावस्थाओं को अलग करने वाली सतह पर पदार्थ एकत्रित हो जाते है। इस क्रिया को अधिशोषण कहते है। कोलाइडी कणों का तलीय क्षेत्र अधिक होने के कारण इसकी अधिशोषण क्षमता अधिक होती है।

7- विद्युत आवेश- कोलॉइडी कण विद्युत आवेशित होते है। जल में निलम्बित करने पर मृदा कोलॉइड्स पर ऋण आवेश रहता है। यह निर्भर करता है कि कण या तो निलम्बन में रहते है या कई कण आपस में मिलकर बड़ा कण बनाकर नीचे बैठ जाते है। आवेश के परिणाम जिसे जीटा पोटेन्शिल भी कहते है जब आवेश अधिक होता है तो कण एक दूसरे को ढँकेल कर निलम्बन में बने रहते है। जब आवेश कम हो जाता है या शून्य पर लाया जाता है तो कण आपस में एक दूसरे को आकर्शित करके बड़ा कण बनाकर अवसाद के रुप में नीचे बैठ जाते है।

8- ऊणीपिंडन तथा प्रकीर्णन- जब तक कोलॉइडी कणों पर आवेश रहता है, वे निलम्बन में रहते है तथा आवेश कम या समाप्त होने पर कण आपस में मिलकर ढीला समुच्चय बनाते है जिसे ऊणीपिंडन कहते है। इसके विपरीत प्रक्रम जिसमें समुच्चय फिर कणों से टूट जाते है, उसे विऊणीपिंडन या विक्षेपण कहते है।

9- विद्युत परासरण- कोलॉइडी कण पर आवेश होता है, परन्तु विद्युत क्षेत्र के अन्तर्गत यदि कणों के संचालन को रंध्रयुक्त डॉसाफ्राम द्वारा रोका जाये तो परिक्षेपण माध्यम स्वंय विद्युत क्षेत्र के प्रभाव से गतिमान हो जाता है। परिक्षेपण माध्यम के इस प्रकार के विद्युत क्षेत्र के प्रभाव में संचलन को विद्युत परासरण कहते हैं।

10- रक्षण- विद्युत अपघटन करने वाले पदार्थ को डालने से हुई कोलॉइडी कणों के अवक्षेप करने की क्रिया को द्रवस्नेही कोलॉइड (जिलेटिन या एल्युमिन) को पहले से डालने से पूर्णरुप से रोका या कुछ कम किया जा सकता है। द्रवस्नेही कोलॉइड कणों के अवक्षेपित होने से बचाने की क्रिया को रक्षण कहते है जिसे कोलॉइड़ द्वारा रक्षण किया जाता है, उसे रक्षी कोलॉइड कहते है।

11- केटाफोरेसिस- प्रत्येक कोलॉइडी कण पर विद्युत आवेश होता है, इसलिए जब कोलॉइडी घोल को विद्युत क्षेत्र में रखते है तो वे विपरीत पोल की ओर चले जाते है। कोलॉइडी कणों के इस प्रकार से विद्युत क्षेत्र में संचलन को केटाफोरेसिस कहते है। कोलॉइड्स के इस गुण के माध्यम से उनके कणों पर आवेश का पता लगाया जाता है।

12- फूलना एवं सुंकुचन- कोलॉइडी पदार्थ जल के सम्पर्क में आने पर जल सोखकर फूलता है तथा फूलने से उसके आयतन में वृद्धि होती है। कोलॉइड द्वारा शोषित जल की मात्रा तथा आयतन कोलॉइड्स की प्रकार एवं अधिशोषित आयनों की प्रकृति पर निर्भर करता है।

13- सुघट्यता- सुघट्यता वह गुण है जिसमें क्ले पर जब बल लगाया जाता है तो बिना टूटे अपना रुप बदल लेती है। सुघट्यता क्ले की विशेषता है जिसमें क्ले जल लेकर ऐसी संहति बनाले जो एक इच्छित रुप में बदली जा सके और बल हटाने पर उसी रुप में बनी रहे। जल के अलग होने पर या क्ले सूख जाने पर भी उसके रुप में कोई परिवर्तन नही आता। बड़े कण सुघट्यता नही द'राते। प्लेट के आकार के कण सबसे ज्यादा सुघट्य होते है। छोटे छोटे कणों के होने से भी सुघट्यता अधिक होती है। कार्बनिक पदार्थ भी मृदा में सुघट्यता लाते है। कोलॉइडी पदार्थो की मात्रा तथा प्रकृति सुघट्यता को बहुत अधिक प्रभावित करते है।

14- ससंजन और आसंजन- द्रव प्रावस्था को ठोस प्रावस्था की सतह पर आकर्शण को आसंजन कहते है। समान प्रकार के गुणों वाले पदार्थो, जैसे जल के अणुओं के बीच आकर्शण बल ससंजन कहलाता है। आसंजन और ससंजन कोलॉइडी कणों की तलीय सक्रियता के गुण है।

15- क्लेदन ऊष्मा- मृदा कोलॉइडी पदार्थ जल सोखने पर ऊष्मा की एक निश्चित मात्रा बाहर निकालता है जिसे क्लेदन ऊष्मा कहते है। निकली हुई ऊष्मा की मात्रा कोलॉइडी पदार्थो की मात्रा एवं प्रकृति तथा अधिशोषित धनायनों के प्रकार के साथ परिवर्तनीय होती है।

मृदा जीवांश पदार्थ (Soil organic matter):-

मृदा निर्माण के प्रक्रम में अपक्षय के फलस्वरूप जो पदार्थ बना, उसने पौधों की वृद्धि के लिये उपयुक्त माध्यम प्रदान किया। इस पर पौधों के जीवन का श्रीगणेश हुआ। वनस्पति जो उत्पन्न हुई, उसने मृदा अपक्षय में पर्याप्त योगदान दिया। पौधों एवं जन्तुओं ने इस पदार्थ पर अपनी वृद्धि की विभिन्न प्रावस्थायें पूर्ण की और जीवन-चक्र पूर्ण करने के पश्चात् मृदा खनिज में अनेक छोटे और बड़े पौधों एवं

जीव-जन्तुओं के मृत शरीर मिल गये तथा अपक्षय के फलस्वरूप मृदा में परिणित हो गये। अत: पादप, जीवन-जन्तुओं के अवशि"ट पदार्थों से मृदा को जीवांश की प्राप्ति होती है। मृदा जीवांश पदार्थ में पौधों एवं जन्तुओं के अवशि"ट, अंशत: अपघटित तथा अंशत: विघटित अवस्था में विद्यमान होते है। यह पदार्थ मृदा सूक्ष्म जीवों की प्रक्रिया के फलस्वरूप छोटे-छोटे अंशों में अपघटित होते रहते हैं। भारात्मक दृष्टि से ऊपरी मृदा परत में जीवांश पदार्थ की मात्रा 3 से 5 प्रतिशत तक होती है। जिन मृदाओं में 20 प्रतिशत से अधिक जीवांश पदार्थ होता है, वे कार्बनिक मृदायें तथा जिनमें 20 प्रतिशत से कम जीवांश पदार्थ होता है, वे खनिज मृदायें कहलाती है। जीवांश पदार्थ मृदा के गुणों और अनन्त: पौधों की वृद्धि को प्रभावित करता है। यह नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश का प्रमुख स्त्रोत है तथा मृदा की जल धारण क्षमता में वृद्धि करता है। मृदा जीवांश पदार्थ सामान्यत: दो समूहों (1) मूल ऊत्तक और (2) ह्यूमस का होता है।

3.4 सारांश

मृदा में पौधों के सभी आवश्यक तत्व पाये जाते हैं। सामान्य दशाओं के अन्तर्गत दो विभिन्न मृदायें कदापि एक समान गुण वाली नहीं होती है अत: उनके संगठन और कणाकार सदैव परिवर्तनशील होते हैं। मृदा छोटे-छोटे कणों के पारस्परिक संयोग से निर्मित हुई है इसलिए मृदा के भौतिक गुणों, रासायनिक गुणों, मृदा कोलाइड्स् एवं मृदा जीवांश इत्यादि कारक केवल मृदा गठन एवं संरचना को ही प्रभावित नहीं करते, अपितु मृदा जल, वायु, वर्ण, तापमान, सुघट्यता आदि का भी मृदा के अन्दर जल धारण एवं संचलन, पारगम्यता, धनायन विनिमय क्षमता आदि पर प्रभाव पड़ता है। यदि मृदा में रंध्रावकाश, प्रतिशत एवं परिमाण अनुकूल है तो उस मृदा में जलधारण एवं वायु संचरण क्षमता अधिक होगी, फसल: पौधों की जड़ों को समुचित जल एवं वायु प्रदान करेगी।

3.5 बहुचयनात्मक प्रश्न

1- मृदा वायु में ऑक्सीजन कितने प्रतिशत पायी जाती है।
(अ) 20.6 (ब) 18.2 (स) 20.0 (द) 20.8

2- पौधों की वृद्वि के लिये कितने पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है।
(अ) 12 (ब) 16 (स) 20 (द) 10

3- मृदा में औसतन कितने प्रतिशत जीवांश पदार्थ पाया जाता है।
(अ) 45 (ब) 5 (स) 25 (द) 25

4- अन्तर्रा"ट्रीय पद्धति वर्गीकरण के आधार पर सिल्ट कण का व्यास होता है।
(अ) 2.0-0.20 (ब) 0.20-0.02 (स) 0.02-0.002 (द) 0.002 -से कम

5- किस प्रकार की मृदा गठनात्मक वर्ग में जुताई करना सबसे कठिन होता है।
(अ) बलुई (ब) दोमट (स) सिल्ट (द) मृतिका

3.6 बहुचयनात्मक प्रश्नों के उत्तर

1- (अ) 2. (ब) 3. (ब) 4. (स) 5. (द)

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. के. के. व्यास, एस. सी. भण्ड़ारी एवं एस. ड़ी. सिंह. 1996. मृदा विज्ञान। राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर। पेज संख्या 51-110.
2. Reddy, T.Y. and Reddi, G.H.S. 2000. Principles of Agronomy. Kalyani publishers, New Delhi. P. 110-154.
3. शर्मा, ओ.पी., इन्टोदिया, एस.के., शर्मा, एस.एल. एवं नेकेला, एन.एस. 2009. शस्य-विज्ञान (कृषि वर्ग), कक्षा XII. माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर। : पेज 1-21.
4. सिंह, आर.एल. एवं मेहरोत्रा, जे.एन. 2004. शस्य-विज्ञान, कक्षा XI. माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर। : पेज 82-135.
5. विनय सिंह. 1991-92. मृदा विज्ञान के मूल तत्व। वी. के. प्रकाशन, बड़ौत। पेज संख्या 38-162.

इकाई - 4

मृदा अभिक्रिया एवं उभय प्रतिरोधन

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 मृदा अभिक्रिया - अर्थ, व्याख्या एवं अवधारणा

4.3 पी.एच. पैमाना

4.4 हाइड्रोजन आयन्स का स्रोत

4.5 मृदा अभिक्रिया को नियंत्रित करने वाले कारक

4.6 मृदा पी.एच. का योजक तत्वों की प्राप्यता पर प्रभाव

4.7 मृदा पी.एच. का पादप वृद्धि पर प्रभाव

4.8 उभय प्रतिरोधन क्षमता

4.9 मृदा उभय प्रतिरोधन का कृमि में महत्व

4.10 सारांश

4.11 बोध प्रश्न

4.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.13 संदर्भग्रंथ

4.0 उद्देश्य

मृदा अभिक्रिया अवधारण का स्पष्टीकरण, अर्थ, परिभाषा को समझना तथा नियंत्रण के कारकों को जानना। मृदा पी.एच.में परिवर्तन एवं उसका निर्धारण, प्रभाव तथा पादप वृद्धि से संबंध की जानकारी लेना। मृदा में उभयप्रतिरोध तथा कृषि में इसके महत्व को जानना।

4.1 प्रस्तावना

मृदा अभिक्रिया मृदा का एक ऐसा अभिलक्षण है। जिसके ऊपर मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं सूक्ष्मजैविक (Physical, Chemical एवं Microbiological) गुणों के अलावा मृदा की उत्पत्ति भी निर्भर करती हैं। मृदा विलयन की अम्लता (Acidity), क्षारता (Alkalinity) तथा उदासीनता (Neutrality) ही मृदा अभिक्रिया का अभिप्राय है। मृदा विलयन मे अनेकों तत्व आयन्स के रूप में होते हैं अम्लीय आयन जैसे (H^+,Ca^{++}, Mg^{++}, Na^+,K^+ आदि मृदा के विलयन में ही रहते हैं। मृदा में मृदा कोलॉइड पर H^+ आयन्स का सान्द्रण अधिक होता है तो मृदा अम्लीय और अगर OH^- आयन्स समान

मात्रा में होते हैं तो मृदा अभिक्रिया उदासीन होती है। इसलिये ''मृदा pH मान के रूप में वर्णित इस अम्लीयता या क्षारीयता मृदा अभिक्रिया कहलाती है।''

4.2 मृदा अभिक्रिया - अर्थ, व्याख्या एवं अवधारणा

डेनिस के सॉरेन्सन नामक वैज्ञानिकों ने इसकी खोज की थी इनके द्वारा किसी पदार्थ की अम्लता या क्षारता को एक सरल संख्या में व्यक्त किया जा सकता है। इसकी परिभाषायें निम्न प्रकार दे सकते हैं।

Definitions : By Sorensen

1. "pH is the logarithm to the base ten of the reciprocal hydrogen ion concentration."

अन्य परिभाषायें -

2. पी.एच. हाइड्रोजन आयन सान्द्रण का ऋणात्मक लघुगुणक होता है।''

"pH may be defined as the negative log of hydrogen ion activity.

2 किसी विलयन का पी.एच. उसके एक लीटर में उपस्थित ग्राम हाइड्रोजन आयन सान्द्रण के व्युत्क्रम (Reciprocal) का लघुगुणक (Logarithm) होता है।''

शुद्ध आसुत जल विद्युत का बहुत दुर्बल चालक होने से इसमें बहुत कम आयन होते ही साधारण ताप पर इसका विघटन अल्प मात्रा में होता है जैसे

$H_2O \rightarrow H^+ + OH^-$

द्रव्य अनुपाती क्रिया के नियमानुसार -

H आयन का सान्द्रण X OH आयन का सान्द्रण = स्थिरांक (K)

अविघटित H_2O का सान्द्रण

$[H^+]\ [OH^-]$

[HOH]

$[H^+]$ X [OH] = K X [HOH] = Kw (Kw जल नियोजन स्थिरांक)

उक्त कोष्ठक में लिखी चीजें उनकी सान्द्रता को बताती हैं एक निश्चित तापक्रम पर जल में उपस्थित H^+ एवं OH^- आयन्स की सान्द्रता का गुणनफल सदैव स्थिर होता है इसका मान 1 X 10 होता है।

$K\ [H_2O] = [H^+]$ X $[OH^-]$

Kw $[H^+]\ [OH^-]$

Kw का मान 22 डिग्री से. 1 X 10^{-14} ग्राम आयन्स प्रति लीटर होता है शुद्ध जल में H^+ आयन्स तथा OH^- आयन की संख्या बराबर होती है। इसलिये दोनों की सान्द्रता 1 X 10^{-7} अथवा 0.000 0001 ग्राम आयन्स प्रति लीटर होती है। अगर H^+ आयन्स की सान्द्रता 10^{-7} ग्राम प्रति लीटर से अधिक है तो विलयन अम्लीय तथा कम हैं तो क्षारीय होता है।

$[H^+]\ [OH^-] = 10^{-7} X 10^{-7}$

$=10^{-14}$ अथवा 22 डिग्री से. पर विलयन के 0.00000000000001 ग्राम आयन्स प्रति लीटर।

डेनिस के वैज्ञानिक एस.पी.एल. सारेन्सन ने 1909 में विलयन के H^+ आयन्स सान्द्रण की ग्राम आयन्स प्रति लीटर में व्यक्त करके H^+ आयन्स घातांक के रूप में व्यक्त किया इसमें 10 की ऋण घात को धन मान देकर प्राप्त किया जैसे 10^{-n} यह H ions exponent symbol pH से प्रदर्शित करते हैं।

$$pH = \log \frac{1}{[H^+]}$$

पी.एच. तथा पी.ओ.एच. का योग सदैव 14 होता है। पी.एच. अधिक होने पर पी.ओ.एच. उसी क्रम में कम हो जाता है शुद्ध जल में pH = pOH = 14 तथा pH = pOH = 7 होने से जल उदासीन होता है। पी.एच.ओ. व पी.ओ.एच. का संबंधसारणी में स्पष्टहैं।

अम्लीय तथा क्षारीय विलयनों की नॉरमेलिटी का पी.एच. एवं पी.ओ.एच. संबंध।

pH	Acidity (normality of H^+)	Alkalinity (normality of OH^-)	pOH
0	1	0.00000000000001	14
1	0.1	0.0000000000001	13
2	0.01	0.000000000001	12
3	0.001	0.00000000001	11
4	0.0001	0.0000000001	10
5	0.00001	0.000000001	9
6	0.000001	0.00000001	8
7	0.0000001	0.0000001	7
8	0.00000001	0.000001	6
9	0.000000001	0.00001	5
10	0.0000000001	0.0001	4
11	0.00000000001	0.001	3
12	0.000000000001	0.01	2
13	0.0000000000001	0.01	1
14	0.00000000000001	1.0	0

4.3 पी.एच. पैमाना

''जब मृदा अभिक्रिया को एक पैमाने द्वारा दर्षाया जाता है तो उसे पी.एच. पैमाना कहते हैं! पी.एच. पैमाना की श्रृंखला है जिसमें अम्लीयता तथा क्षारीयता मापी जाती है इसमें 0 से 14 तक संख्यायें होती हैं। लेकिन मृदाओं का pH 4 से 10 तक होता है। शुद्ध आसुत जल 25 डिग्री से. पर पूर्णत: उदासीन होता है जिसका pH 7 होता है। अगर pH 7 से 0 की ओर घटता है तो घोल की अम्लीयता बढती है और अगर pH 7 से 14 को और बढ़ता है तो घोल क्षारीय होने लगता है। मृदा घोल की अम्लीयता (H^-) आयन और क्षारीयता (OH^-)आयन के कारण होती हैं। मृदा घोल में अनेक तत्व आयन के रूप् में विद्यमान होते हैं, जिसमें OH^-की सक्रियता व्यक्त करने के लिए pOH मान भी प्रयोग कर सकते हैं। मृदा कोलॉइड में OH^-आयन की अपेक्षा H^+आयन की अधिक मात्रा में अधिशोषण मृदा की अम्लीय बनाता है इनका व्युत्क्रम आरोपता को प्रोत्साहित करता है।

$$pOH = \log 10 \quad \frac{1}{[OH^-]}$$

$$pOH = -\log 10 \quad [OH^-]$$

Neultrality

⟸ Acidity ⟹ ⇓ ⟸ Alkalinity ⟹

Ph	5.5	6.0	6.5	7.0	7.5	8.0	8.5	pH
Srong	Medium Srong	Slight	Very Slight	Very Slight	Slight	Medium		
Acid	acid	acid	alkaline	alkaline	alkaline			

alkaline

4.4 हाइड्रोजन आयन्स का स्रोत

मृदा अम्लीयता के लिये मुख्य रूप से H^+एवं Al^3 + आयन ही उत्तरदायी हैं। इन दोनों आयनों की अम्लता को प्रभावित करने की क्रियाविधि अलग अलग होती है। ये आवेश, जिसके प्रति ये दोनों आकर्शित होते हैं, यह अन्तर स्रोत एवं प्रकृति से संबंधितहोता है।

मृदा कोलॉइड पर स्थायी तथा पी.एच. आश्रित दो प्रकार के ऋणायन पहचाने गये हैं स्थायी आवेश सिलिकेट क्लेज के संगुणित से उत्पन्न स्थिर विद्युत बल के कारण होता है। स्थाई आवेश स्थितियों पर धनायन सभी pH मानों पर विनिमेय होते हैं। स्थाई आवेश 2:1 प्रकार के क्ले जहां आयनिक प्रतिस्थापन सबसे अधिक होता है, पर ही अधिक होता है।

पी.एच. आश्रित स्थाई नहीं होता है यह मृदा pH द्वारा प्रभावित होता है। यह आवेश अधिक अम्लीय मृदाओं में कम तथा pH वृद्धि होने पर ज्यादा पड़ता है। यह सिलिकेट क्लेज में टूटे किनारों पर ALOH

तथा ब्राहय सतहों पर SiOH समूह तथा हमूस पर भी फिनाल (फिनॉइल - OH कार्बोक्सिल COOH समूह तथा हमस पर भी फिनोल हाइड्रोजन होती है। जो कि कम pH पर विनियोजित नहीं होती व ज्यादा pH पड़ने पर H वियोजित होकर कोलॉइड का ऋण आवेश छोड़ता है। हाइड्रोजन का विस्थापन धात्विक धनायनों से होता है।

अम्लीय मृदाओं की 2:1 प्रकार की मृतिकाओं मुख्य रूप से वर्मीक्यूलाइट के क्रिस्टल इकाइयों के बीच Al तथा Fe के हाइड्राक्सी तीव्रता से अधिशोषित होते हैं। मृतिका की ऋण आवेषित स्थितियों को बन्द कर देते हैं तो इनकी धनायन विनिमय क्षमता कम हो जाती है pH बढ़ने से Fe तथा Al के आयन विलेय $Fe(OH)_3$ और $Al(OH)_3$ बनाकर अवक्षेपित हो जाते हैं इससे विनिमय स्थितियां मुक्त होकर pH आश्रित आवेश में वृद्धि होती है।

4.5 मृदा अभिक्रिया को नियंत्रित करने वाले कारक

निम्नलिखित कारक मृदा अभिक्रिया को नियंत्रित करते हैं -

1 हाइड्रोजन आयन्स का स्रोत - मृदा के कोलॉइडल संकीर्ण को अविलेय अम्लों तथा उनके लक्षणों का मिश्रण माना जाता है। कोलॉइडल जटिल पर अधिशोषित H^+ तथा अन्य धात्विक धनायनों एवं मृदा विलयन में उपस्थिति धनायनों के बीच एक गतिमय संतुलन या साम्यावस्था होती है। अत: मृदा विलयन का पीएच इन अधिशोषित धनायनों के वियोजन पर निर्भर करता है। मृदा विलयन के लिए H^+ के दो प्रमुख स्रोत हैं :

(ब) अधिशोषित Al^{3+} आयन्स तथा (ब) अधिशोषित H^{3+} आयन्स अत्यधिक अम्लीय परिस्थिति में Al अधिक विलेय हो जाता है Al^+ आयन्स कोलाइडल संकीर्ण पर अधिशोषित होते हैं। अधिशोषित Al आयन तथा मृदा विलयन में Al आयन्स के मध्य साम्यावस्था होती है। मृइर विलयन में उपस्थिति Al के जल अपघटन से H आयन्स बनते हैं। $Al(OH)_3$ का आयनीकरण नहीं होता है। इस प्रकार बने H^+ से मृदा पीएच मान कम हो जाता है।

मिसिल Al $\Longrightarrow$ मृदा विलयन $Al^{3+}3\ H^+$

$Al^{3+} + 3H_2O \Longrightarrow Al(OH)_3+$

अधिशोषित H^+ आयन्स, मृदा विलयन में H^+ के मध्य संतुलन होता हैं अत: ये H^+ के प्रमुख दूसरे स्रोत हैं। इस प्रकार मृदा कोलॉइडल संकीर्ण पर अधिक H^+ होंगे मृदा विलयन में भी H^+ की सान्द्रता अधिक होगी। अत: पीएच मान कम होगा।

2 हाइड्रोक्सिल आयन्स का स्रोत - यदि अम्लीय मृदा में कोलॉइडल संकीर्ण पर अधिशोषित H^+ तथा Al^{3+} का $Ca^{2+} + Mg_2$, K^+ तथा Na^+ द्वारा प्रतिस्थापन कर दिया जाता है तो मृदा विलयन में H^+ की मात्रा कम हो जाती है और OH^- की मात्रा में वृद्धि हो जाती है।

मिसिल $Ca + 2H_2O \Longleftrightarrow$ मिसिल $+ \quad Ca + 2HO$

मिसिल $Na + H_2O \Longleftrightarrow$ मिसिल $H + Na^+ + 2H^-$

$Na_2CO^3+2HOH \Longrightarrow 2Na^+OH+H_2CO_3$

$\Downarrow$

$2Na^{+}OH$

3 प्रतिशत भस्म संतृप्ति - अधिशोषित हाइड्रोजन आयन्स तथा अन्य विनिमेय भास्मिक धनायनों के आपेक्षित अनुपात को प्रतिशत भस्म संतृप्ति कहते हैं। यदि प्रतिशत भस्म संतृप्ति कम होती है तो मृदा अम्लीय होती है अर्थात पीएच कम होता है। लेकिन जब प्रतिशत भस्म संतृप्ति अधिक अर्थात 100 के लगभग होती है तो मृदा क्षारीय या उदासीन होती है। यदि प्रतिशत भस्म 80 है तो विनिमेय क्षमता का 80/100 भाग क्षार है तथा 90/100 भाग हाइड्रोजन आयन्स है। अत: मृदा अम्लीय होती है। इस प्रकार प्रतिशत क्षारर संतृप्ति से मृदा पीएच प्रभावित होता है।

4 मिसिल की प्रकृति : विभिन्न प्रकार के कोलॉइडल संकीर्ण की वियोजन क्षमता अलग अलग होती है। उदाहरणार्थ कार्बनिक जटिल से अधिशोषित H^{+}का वियोजन बहुत सरलता से होता है। इसलिये कार्बनिक मृदा का पीएच खनिज मृदा की अपेक्षा (समान प्रतिशत संतृप्ति पर) कम होता है।

उसके विपरीत आयरन तथा एलुमिनियम हाइड्रस ऑक्साइड मृतिकाओं से अधिशोषित H^{+}का वियोजन अपेक्षाकृत कम होता है। परिणामस्वरूप जिन मृदा में ये मृतिकायें अधिक होती हैं। प्रतिशत क्षार संतृप्ति समान होते हुए भी उनका पीएच अधिक होता है। सिलिकेट मृतिकाओं की H^{+}वियोजन क्षमता ह्यूमस तथा हाइड्रस ऑक्साइड मृतिकाओं के मध्य होती है। अत: 50 प्रतिशत क्षार संतृप्ति पर कार्बनिक कोलॉइड का पीएच 4.50-5.0, सिलिकेट मृतिकाओं का पी.एच. 5.2 से 5.8 तथा हाइड्रस ऑक्साइड का पीएच 6-7 होता है।

5 अधिशोषित भस्मों की प्रकार : मृदा कोलॉइडल संकीर्ण पर अघोशित विशेष भस्मीय धनायनों की मात्राओं से भी पीएच प्रभावित होता है। सोडियम संतृप्त मृदाओं का पीएच कैल्शियम तथा मैग्रीषियम संतृप्त मृदाओं की अपेक्षा अधिक होता है।

6 अम्ला उत्पादक कारक - जीवांष पदार्थ के विच्छेदन से कार्बनिक व अकार्बनिक अम्ल निर्मित होते हैं। विच्छेन से CO_2बनती है जो पानी से क्रिया करके H_2CO_3 बनाती है इसक ◌ आयनीकरण से H^{+} बनते है जिससे मृदा का पीएच कम हो जाता है। H_2CO_3 के क्रिया से अविलेय क्षार विलेय होकर निक्षालय द्वारा नष्ट हो जाती हैं।

$CaCO_3 + H_2CO_3 \longrightarrow Ca(HCO_3)_2 \Downarrow$

अ◌ वेलेय विलेय निक्षालन

मृदा में क्षारों की कमी से मृदा का पीएच कम हो जाता है और मृदा अम्लीय हो जाती है। गंधक द्वारा अमोनियम उर्वरकों के विच्छेन से सल्फुरिक तथा नाइट्रिक अम्ल बनते हैं जिसके कारण सान्द्रण बढ जाती है पी एच का मान कम हो जाता है।

7 भस्म उत्पादन कारक - यदि किसी भी क्रिया द्वारा मृदा में विनिमेय भस्मों जैसे Ca^{2+} + Mg_2, K^{+}तथा Na^{+} की मात्राओं में वृद्धि होती है, तो उसके द्वारा अम्लीयता में कमी तथा क्षारीयता में वृद्धि होती है। खनिजों व चट्टानों के अपक्षय से विनिमेय धनायन बनते हैं तथा

कोलॉइडल संकीर्ण पर अधिशोषित हो जाते हैं। मृदा में चूना मिलाने से भी धात्विक धनायनों की मात्रा में वृद्धि हो जाती है। भस्मीय धनायनों की वृद्धि से मृदा पी एच अधिक हो जाता है।

4.6 मृदा पी.एच. का योजक तत्वों की प्राप्यता पर प्रभाव

मृदा पीएच द्वारा विभिन्न पोषक तत्वों की प्राप्यता प्रभावित हाती है

1 कैल्शियम एवं मैंग्नीशियम : कैल्शियम, मैंग्नीशियम की प्राप्यता मृदा पी एच अत्यधिक प्रभावित होती है। पी एच 6.5 से 8.5 तक कैल्शियम, मैग्नीषियम की प्राप्यता अत्यधिक होती है। इससे कम पीएच पर अर्थात अम्लीय मृदाओं में हाइड्रोजन आयन्स, कोलाइडल संकीर्ण पर अधिशोषित कैल्शियम तथा मैंग्नीशियम आयन्स को प्रतिस्थपति कर देते हैं तथा अविलेय, कार्बोनेट्स में परिवर्तन होकर निक्षालन द्वारा नष्ट हो जाते हैं। अत: कैल्शियम व मैग्नीषियम पौधों को प्राप्त नहीं होते हैं।

मिसिल H_2CO_3 ⟹ मिसिल + Ca CO_3

Ca CO_3 + $_2CO_2$ ⟹ Ca$(HCO_2)_2$ ⇓

निक्षालन द्वारा हानि

पीएच मान 8.5 से अधिक होने पर अर्थात क्षारीय मृदाओं में कोलाइडल संकीर्ण पर अधिशोषित कैल्शियम तथा मैंग्नीशियम आयन्स को सोडियम आयन्स द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया जाता है और कैल्शियम तथा मैग्नीषियम अपने कार्बोनोट्स के रूप् में अवक्षेपित हो जाते है। अत: कैल्शियम तथा मैग्नीषियम की प्राप्यता कम हो जाती है।

Ca मिसिल + Na_2CO_3 ⟹ मिसिल + Ca CO_3

2 लौहा, एल्यूमिनियम तथा मैग्नीज - अम्लीय मृदा में अर्थात कम पी एच पर इनकी विलेयता तथा प्राप्यता अधिक होती है। उदासीन से कम पी एच होने पर इनकी उपलब्धता में वृद्धि होती है। इन तत्वों की विलेयता अम्लीय मृदा में इतनी अधिक हो जाती है कि इनका पौधों पर विषैला प्रभाव होता है। मृदा पी एच अधिक होने पर आयरन तथा एल्यूमिनियम के अविलेय हाइड्रॉक्साइड बन जाते हैं। अत: ये तत्व पौधों को प्राप्त नहीं होते हैं। इनकी अधिक उपलब्धता के लिये पी एच 6-7 सर्वोत्तम होता हैं। उदासीनता से अधिक पी एच होने पर पौधों की मैंग्नीज की प्राप्यता भी कम हो जाती है।

3 तांबा, जिंक तथा बोरॉन - उदासीनता से कम पी एच पर इनकी विलेयता व प्राप्यता में वृद्धि हो जाती है। पी एच 5 से 7 तक ये तत्व पौधों को अधिक प्राप्य होते हैं। अत: अम्लीय मृदा में ये अधिक उपलब्ध होते हैं। परन्तु क्षारीय मृदाओं में अर्थात पी. एच. 7 से अधिक होने पर इनकी प्राप्यता कम हो जाती है। अम्लीय मृदाओं से अत्यधिक चूना मिलाने से भी तांबा, जिंक तथा बोरॉन की पौधों को प्राप्यता कम हो जाती है। कैल्शियम की अधिकता बोरॉन के शोषण मे विघ्न पैदा करती है। पी एच 8.5 पर बोरॉन की विलेयता भी कम होती है।

4 फास्फोरस - मृदा में फास्फोरस तीन प्रकार के आयन्स के रूप में पाया जाता है। ये रूप मृदा विलयन की पी एच के अनुसार बदलते हैं। अत्यधिक अम्लीय मृदा में $H_2PO_4^-$ पाये जाते हैं पी एच में वृद्धि होने पर अर्थात मध्यम अम्लीयता (pH 6-7) में $H_2PO_4^-$ तथा HPO_4^{--} दोनों प्रकार के आयन्स उपस्थित होते हैं लेकिन अत्यधिक क्षारीय मृदा PO_4^{---} अधिकता में पाये जाते हैं।

$+OH_4^- \Longrightarrow OH_4^-$

$H_2PO_4 \Longrightarrow H_2 + HPO_4^{--} \Longrightarrow H_20 + PO_4^{---}$

अत्यधिक $\Longrightarrow$ अत्यधिक क्षारीय विलयन

$Ca_2(HPO_4)_2 + CaCo_3 \Longrightarrow Ca_3(PO_4)_2 + H_2O + CO_2$

डाई कैल्शियम

फॉस्फेट (अविलेय)

पौधे फॉस्फोरस को $H_2PO_4^-$ तथा HPO_4^{--} के रूप् में ग्रहण करते हैं पी एच 6.0 पर ये दोनों आयन्स मृदा घोल में उपस्थित होते हैं अर्थात् फॉस्फोरस अधिकतम प्राप्यता पी एच 6-7 पर होती है।

पी एच 6 से कम होने पर अर्थात अम्लीय मृदाओं में फॉस्फोरस की प्राप्यता कम होती है। इन मृदाओं में एलुमिनियम तथा आयरन की विलेयता अधिक हो जाती है। ये तत्व विलेय H

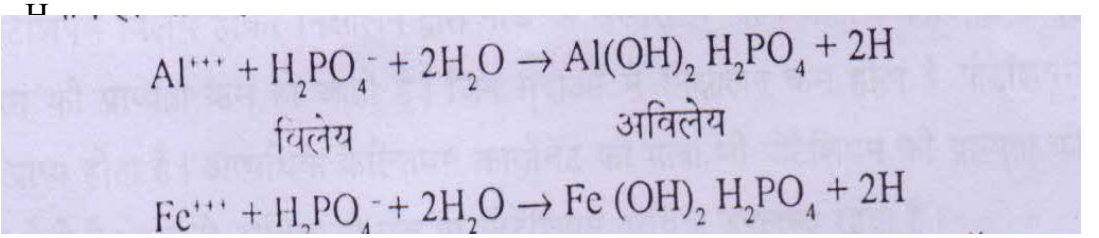

$^{--}$ के साथ क्रिया करके अविलेय लवण बना देते हैं और फास्फोरस की पौधों की प्राप्यता कम हो जाती है।

पी एच अधिक होने पर एलुमिनियम तथा आयरन के जलयुक्त ऑक्साइडस द्वारा विलेय $H_2PO_4^+$ का रासायनिक अवक्षेपण हो जाता है तथा अविलेय हाइड्रोक्सिल फास्फेट बन जाते हैं। अत: फास्फोरस की प्राप्यता कम हो जाती है।

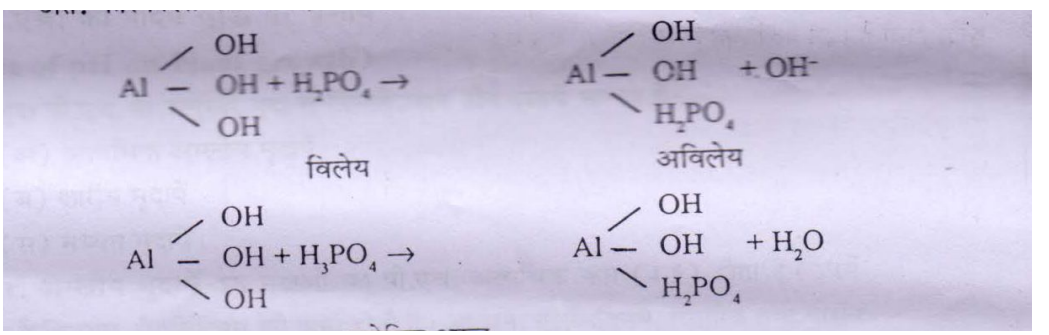

क्षारीय मृदाओं में कैल्शियम के कारण विलेय फास्फेट्स अविलेय लवण बनाते है जिससे फॉस्फोरस की प्राप्यता कम हो जाती है

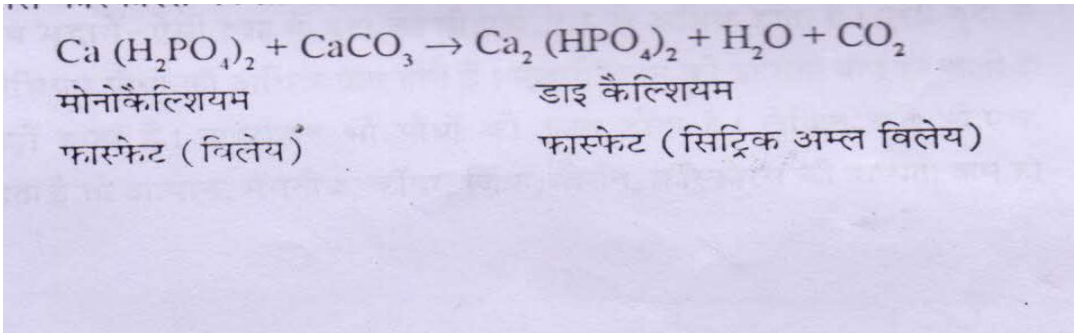

5 नाइट्रोजन - केवल कुछ फसलों के पौधे नाइट्रोजन को NH_4^+ के रूप में ग्रहण करते हैं। अधिकांश फसलों के पौधे नाइट्रोजन को NO_3^- के रूप में लेते हैं। मृदा में 7 से अधिक पीएच पर NO_4^- तथा कम पीएच पर NO_3^- की अधिकता होती है। ये दोनों क्रियायें मृदा सूक्ष्म जीवाणुओं की क्रियाषीलता पर निर्भर करते हैं। इनकी अधिकतम क्रियाषीलता पीएच 6.5 - 7.5 तक होती है, तथा पीएच 4 पर ये निष्क्रिय हो जाते हैं। अत: नाइट्रोजन की अधिकतम प्राप्यता पीएच 6.5 - 7.5 पर होती है। अत: अम्रिक अम्लीय व क्षारीय मृदाओं में नाइट्रोजन पौधों को प्राप्य नहीं होता है।

6 पोटेशियम - अम्लीय मृदाओं अर्थात कम पी एच वाली मृदाओं में कोलॉइडल संकीर्ण अधिशोषित पोटेशियम आयन्स का प्रतिस्थापन हाइड्रोजन आयन्स द्वारा हो जाता है। अत: पोटेशियम विलेय होकर निक्षालय द्वारा नीचे के संस्तरों में चला जाता है और पौधों को पोटेशियम की प्राप्यता कम हो जाती है। जिन मृदाओं में निक्षालन कम होता है पोटेशियम अधिक प्राप्य होता है। अत्यधिक कैल्शियम कार्बोनेट की मात्रा भी पोटेशियम की प्राप्यता को कम कर देती है। 8.5 से अधिक पीएच से पर पोटेशियम अधिक उपलब्ध रहता है।

7 मोलिब्डेनम - अम्लीय मृदाओं अर्थात कम पी.एच. पर यह Al तथा Fe द्वारा अवक्षेपित हो जाता है, तथा इसकी प्राप्यता कम हो जाती है।

4.7 मृदा पी.एच. का पादप वृद्धि पर प्रभाव

मृदा पी.एच. के अनुसार मृदा में निम्नलिखित तीन दशायें संभव हैं -

अ अत्यधिक अम्लीय मृदायें

ब क्षारीय मृदायें

स मध्यम मृदायें

1 अम्लीय मृदायें - इन मृदाओं का पी.एच. अत्यधिक कम 4.5 होता है। इनमें विनिमेय कैल्सियम, मैग्नीशियम की कमी होती है। आयरन, एलुमिनियम, मैंगनीज, तथा बोरॉन आदि पोषक तथ्वों

की विलेयता बढ़ जाती है। जिसका पौधों पर विषैला प्रभाव हो सकता है। पौधों को मोलिब्डेनम, नाइट्रोजन व फॉस्फोरस की प्राप्यता कम हो जाती है।

2 क्षारीय मृदायें - ऐसी दशा में मृदा का पी.एच. 7.5 से अधिक होता है। ऐसी मृदा में कैल्सियम, मैंग्नीशियम पौधों की अधिक प्राप्त होते है। एलुमिनियम की प्राप्यता कम हो जाती है। अत: विषैला नहीं होता है। नाइट्रोजन भी पौधों को प्राप्य होता है। लेकिन यदि पी.एच. अत्यधिक हो जाता है तो आयरन, मैंगनीज, कॉपर, जिंक, बोरॉन, फॉस्फोरस की प्राप्यता कम हो तथा OH^- आयनों की मात्राओं के अनुसार जितना अम्ल या क्षार मिलाना चाहिये उससे बहुत अधिक मात्रा में मिलाना पड़ता है। यह उभय प्रतिरोध क्रिया मृझा में उपस्थित निर्बल अम्लों व उनके लवणों जैसे कैल्शियम, मैग्नीषियम, पोटेशियम तथा सोडियम के कार्बोनेट्स, बाइकार्बोनेट्स, फॉस्फेट तथा सिलिकेट्स के कारण होती है। मृदा में जीवांष पदार्थ के विच्छेदन के फलस्वरूप भी कार्बनिक अम्ल बनते रहते हैं। जो निर्बल अम्ल हैं व प्रतिरोधी कारक है। इसके अतिरिक्त कोलाइडल संकीर्ण भी उभय प्रतिरोधन के कारक हैं । मृदा में अकार्बनिक कोलाइडस जिन पर धनायन अधिशोषित रहते हैं, निर्बल अम्लों तथा उनके लक्षणों की भांति कार्य करते हैं। मृदा में अधिकतर उभय प्रतिरोधन मृतिका तथा हमस की उपस्थिति के कारण ही होता है। नम तथा अर्द्ध नम क्षेत्रीय मृदाओं में कोलाइडल संकीर्ण की वियोजन निम्न प्रकार प्रदर्शित किया जाता है।

H- acidoid $\Leftrightarrow$ [Acidoid] + H^+

Ca- acidoid $\Leftrightarrow$ [Acidoid] + Ca^{++}

कोलॉइडल संकीर्ण मंद गति से विघटित होकर मृदा में H^+ देते हैं जब कोई क्षारीय पदार्थ मृदा की अम्लीयता कम करने के लिये मिलाया जाता हैं तो मृदा विलयन के H^+ (सक्रिय अम्लीयता) को जैसे ही उदासीन किया जाता है तो कोलाइडल संकीर्ण अधिक वियोजित होकर और अधिक H^+ प्रदान कर देता है अत: पीएच में बहुत कम परिवर्तन होता है। पीएच में निश्चित परिवर्तन हेतु क्षारीय पदार्थ की अत्यधिक मात्रा मिलाई जाती है।

मृदा में यदि कोई अम्लीय पदार्थ मिलाया जाता है तो अम्ल के विघटन से प्राप्त H^+ कोलाइडल संकीर्ण पर अधिशोषित हो जाते हैं तथा Ca^{++} प्रतिस्थापित कर दिये जाते हैं औग मृदा विलयन में H^+ की सान्द्रता में जितनी वृद्धि होनी चाहिये थी उतनी नहीं होती है अर्थात पीएच में परिवर्तन नहीं होता हैं या बहुत कम होता है।

अधिशोषित H^+ $\Leftrightarrow$ मृदा विलयन H^+

सुरक्षित अम्लीयता सक्रिय अम्लीयता (पीएच)

4.8 उभय प्रतिरोधन क्षमता

मृदा में अम्ल या क्षार मिलाने से उसके पीएच में कम परिवर्तन होता हैं अर्थात मृदायें अम्ल व क्षार दोनों के लिये प्रदर्शित करती हैं अत: इन्हें उभयधर्मी कहते हैं। मृदा अम्लीय व क्षारीय दोनां गुण प्रदर्शित करती

हैं। मृदा की उभय प्रतिरोधन क्षमता कोलॉइडल पदार्थों की मात्रा पर निर्भर करती है। जिस मृदा में जितनी अधिक मात्रा में मृतिका तथा हमस उपस्थित होते हैं उतनी ही उसकी उभय प्रतिरोधन क्षमता अधिक होती हैं। इसी कारण से अम्लीय मृदाओं के सुधार हेतु बलुई दोमट की अपेक्षा दोमट व क्ले दोमट मृदाओं में अधिक चुने की आवश्यकता होती है। मृदा की धनायन विनिमेय क्षमता द्वारा भी मृदा उभय प्रतिरोधन क्षमता प्रभावित होती है। मृदा की धनायन विनिमेय क्षमता जितनी अधिक होती है, उभय प्रतिरोधन क्षमता भी उतनी ही अधिक होती है।

4.9 मृदा उभय प्रतिरोधन का कृमि में महत्व

1 मृदा पीएच का स्थायीकरण -

मृदा पीएच में अचातक परिवर्तन होने पर मृदा की दशायें अत्यधिक परिवर्तित हो जाती हैं। मृदा अभिक्रिया में जल्दी जल्दी अधिक परिवर्तन होने पर मृदा जीवाणुओं व पौधों को अधिक हानि होती है। मृदा पीएच में परिवर्तन से पादप पोषक तत्वों को प्राप्यता भी प्रभावित होती है। कुछ तत्वों की अधिक प्राप्यता पौधों के लिए विशैली हो सकती है तथा कुछ पोषक तत्वों की प्राप्यता कम हो सकती है। इस प्रकार मृदा में पोषक तत्वों का सन्तुलन बिगड़ जाता है। मृदा में उभय प्रतिरोधी गुण के द्वारा मृदा पीएच में स्थायित्व आता हैं और परिवर्तन मंद गति से होता है।

2 सुधारकों की आवश्यक मात्रा -

अम्लीय मृदाओं के सुधार हेतु आवश्यक चूने की मात्रा या क्षारीय मृदाओं के सुधार हेतु आवश्यक गन्धक या अन्य सुधारकों की मात्रा, मृदा की उभय प्रतिरोधन क्षमता पर निर्भर करती है। मृदा की उभय प्रतिरोधन क्षमता जितनी अधिक होती है , सुधारको ंकी उसी अनुपात में अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है। अत: अम्लीय मृदा के सुधार हेतु चूने की मात्रा निश्चित करते समय मृदा के कणाकार, मृदा प्रकार तथा सुधार हेतु चूने की मात्रा निश्चित करते समय कणाकर, मृदा तथा कार्बनिक पदार्थ की मात्रा का ध्यान रखना आवश्यक होता है।

4.11 बोध प्रश्न

1- पी.एच. से आप क्या समझते है?
2- पी.एच. पैमाना बनाकर दर्शाइये?
3- मृदा अभिक्रिया को नियंत्रित करने वाले कारकों को स्पष्ट रूप से लिखिये?
4- मृदा पी.एच. को पोषक तत्वों पर पड़ने वाले प्रभाव को लिखिए?
5- मृदा पी.एच. का पादप वृद्धि पर क्या प्रभाव पड़ता है?
6- उभय प्रतिरोधन क्षमता किसे कहते है?
7- उभय प्रतिरोधन क्षमता के कृषि में महत्व को समझाइये?

4.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1 इसका उत्तर क्रमांक 1.02 पर देखिये

2 इसका उत्तर क्रमांक 1.03 पर देखिये

3 इसका उत्तर क्रमांक 1.05 पर देखिये

4 इसका उत्तर क्रमांक 1.06 पर देखिये

5 इसका उत्तर क्रमांक 1.07 पर देखिये

6 इसका उत्तर क्रमांक 1.08 पर देखिये

7 इसका उत्तर क्रमांक 1.09 पर देखिये

4.13 संदर्भ ग्रंथ

1 The Nature and propresties of soils – By N.C. B rady and R.R. weil, Pub. Prentice hall of India Pvt. Ltd. M-97, Connaught circle, N. Delhi.

2 Text Book of Soil Science – By T.B. Biswas and S.K. Mukherjee, Pub. Tata McGraw Hill Publishing Co. Ltd. N. Delhi.

3 Fundamental of Soil Science, By- ISSS (Indian Society of Soil Science) Pub. Div. of Soil Science, IARI, New Delhi

4 मृदा विज्ञान - द्वारा डॉ. विनय सिंह, पब्लिकेशन रामा पब्लिकेशन, बडौत, मेरठ

5 मृदा विज्ञान - द्वारा धर्मेन्द्र सिंह, पब्लिकेशन हिमांशु पब्लिकेशन, 464 सेक्टर 11, हिममगरी, उदयपुर

6 मृदा विज्ञान - द्वारा डॉ. टी.वी. सिंह एवं एन. एल. शर्मा, पब्लिकेशन रामा पब्लिकेशन, बडौत, मेरठ

इकाई 5

अम्लीय; लवणीय तथा क्षारीय मृदाएँ

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 अम्लीय मृदाएँ

- 5.2.1 विस्तार
- 5.2.2 परिभाषा
- 5.2.3 मृदा अम्लता के प्रकार
- 5.2.4 अम्लीय मृदा का बनना
- 5.2.5 मृदा अम्लता का पौधों की वृद्धि पर प्रभाव
- 5.2.6 अम्लीय मृदाओं का सुधार

5.3 लवणीय तथा क्षारीय मृदाएँ

- 5.3.1 विस्तार
- 5.3.2 परिभाषा
- 5.3.3 लवणीय तथा क्षारीय मृदाओं का वर्गीकरण
- 5.3.4 लवणीय तथा क्षारीय मृदाओं का बनना
- 5.3.5 लवणीय तथा क्षारीय मृदाओं का पौधों पर प्रभाव
- 5.3.6 लवणीय तथा क्षारीय मृदाओं का सुधार

5.4 सारांश

5.5 बहुचयनात्मक प्रश्न

5.6 सन्दर्भ

5.0 उद्देश्य

अम्लीय; लवणीय तथा क्षारीय मृदाएँ किसे कहते **है**। मृदा अम्लीयता के प्रकार एवं लवणीय तथा क्षारीय मृदाओं का वर्गीकरण। इन मृदाओं के बनने के कारण तथा इनका पौधों की वृद्धि पर प्रभाव की जानकारी। उक्त मृदाओं का सुधार तथा खेती योग्य बनाने के अन्य प्रबन्धन।

5.1 प्रस्तावना

भारत में अम्लीय मृदाओं का क्षेत्रफल क्षारीय मृदाओं की अपेक्षा अधिक है। ये मृदायें अधिकतर नम जलवायु वाले क्षेत्रों में पायी जाती हैं क्योंकि अधिक वर्षा के कारण मृदा संकीर्ण पर अधिशोषित क्षार विलेय होकर अपक्षालित हो जाते हैं और इस प्रकार मृदा अम्लीय बन जाती है।

भारत में वर्तमान में लगभग 67.3 लाख हैक्टर भूमि, ऊसर (लवणीय व क्षारीय) होने के कारण कृषि के अयोग्य हैं। और यह क्षेत्रफल दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। अकेले उत्तर प्रदेश में 12.95 लाख हैक्टर भूमि, ऊसर समस्या से प्रभावित हैं। राजस्थान में लगभग 10.62 लाख हैक्टर भूमि क्षारीयता व लवणीयता से ग्रस्त है तथा आधे से अधिक जिलों में लवणीय व क्षारीय भूमि की समस्या है। राज्य की भौगोलिक स्थिति शुष्क एवं अद्धशुष्क जलवायु एवं भूमिगत जल में लवण व क्षार की उपस्थिति में यह समस्या उत्तरोतर बढती जा रही हैं। इन मृदाओं में घुलनल लवणों जैसे सोडियम, कैल्शियम, मैग्निशियम एवं पोटेशियम के क्लोराइड, सल्फेट, कार्बोनेट, बाईकार्बोनेट आदि की मात्रा में वृद्धि हो जाती है और इससे उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। अत: इन मृदाओं का वैज्ञानिक तरीके से सुधार करना आवश्यक है।

5.1 अम्लीय मृदाएँ

5.1.1 विस्तार : अम्लीय भारत मृदायें अधिकतर नम जलवायु वाले प्रदेशों में, जहाँ वर्षा अधिक होती है, पायी जाती हैं। अम्लीय मृदाओं का क्षेत्रफल क्षारीय मृदाओं की अपेक्षा अधिक है। हमारे देश में सर्वाधिक अम्लीय मृदायें पूर्वोत्तर भागों तथा केरल में पायी जाती हैं। ये मृदायें मुख्य रूप से असम, मणिपुर, त्रिपुरा, पष्चिम बंगाल, बिहार के छोटा नागपुर, उड़ीसा के तटवर्ती क्षेत्र, पंजाब के होशियारपुर व पटियाला महाराष्ट्र के रत्नागिरी व चांदा, मध्य प्रदेश के बस्तर, हिमाचल प्रदेश के कांगडा जिलों तथा जम्मूं-कष्मीर के पहाड़ी क्षेत्रों में पायी जाती हैं।

5.1.2 परिभाषा : वे मृदायें जिनके मृदा संकीर्ण पर हाइड्रोजन आयनों की सान्द्रता हाइड्रोक्सिल आयनों की अपेक्षा अधिक होती है तथा पी. एच. मान सदैव 7.0 से कम (4.0 से 6.5) होता है, अम्लीय मृदायें कहलाती हैं। मृदा का पी. एच. जितनी कम होगी, वह उतनी ही अधिक अम्लीय होती है। अम्लीय मृदा में जीवांश पदार्थ प्राय: आधिक्य में पाया जाता है।

5.1.3 मृदा अम्लीयता के प्रकार :- मृदा अम्लीयता दो प्रकार की होती है।

1- सक्रिय अम्लता

2- सँचित अम्लता

अधिशोषित H^+ आयन्स $\leftrightarrow$ मृदा घोल में H^+ आयन्स

(सक्रिय अम्लता) (सँचित अम्लता)

सक्रिय अम्लता :- मृदा घोल में उपस्थित हाइड्रोजन आयनों से उत्पन्न अम्लीयता को सक्रिय अम्लता कहते हैं। यह भूमि की वह अवस्था है जिसमें हाइड्रोजन आयनों की सान्द्रता हाइड्रोक्सिल आयनों से अधिक होती है।

सँचित अम्लता :- इस प्रकार की अम्लता भूमि कणों पर अवशोषित हाइड्रोजन आयनों के कारण होती है। ये आयन मृदा घोल में उपस्थित आयनों की भांति स्वतन्त्रता पूर्वक भ्रमण नहीं कर सकते हैं। सँचित अम्लता सदैव सक्रिय अम्लता से अधिक होती हैं।

5.2.4 **अम्लीय मृदा का बनना :** अम्लीय मृदायें अधिकतर नम जलवायु वाले क्षेत्रों में पायी जाती हैं क्योंकि अधिक वर्षा के कारण मृदा संकीर्ण पर अधिशोषित क्षार विलेय होकर अपक्षालित हो जाते हैं और इस प्रकार मृदा अम्लीय बन जाती है। मृदा की अम्लता निम्न एक या एक से अधिक कारणों से आ सकती हैं-

अम्लीय मूल की चट्टानों द्वारा मृदा निर्माण:- पैतृक चट्टान का प्रभाव उनसे बनने वाली भूमि पर बहुत अधिक पड़ता हैं अम्लीय चट्टानों से बनने वाली भूमि अम्लीय होगी। ऐसी चट्टानों में रहयोलाइट तथा ग्रेनाइट मुख्य है जिसमें सिलिका तथा क्वार्ट्ज पदार्थो की मात्रा अधिक होती है। ये अम्लीय भूमि बनाने में मुख्य योगदान देते हैं। चट्टानों में उपस्थित सिलिका जल के साथ संयोग करके सिलिसिक अम्ल बनाता है।

अधिक वर्षा के कारण निक्षालन :- अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में भूमि के अम्लीय बनने की सम्भावना अधिक रहती हैं क्योकि चूना तथा अन्य क्षारीय पदार्थ रिसते हुए अतिरिक्त जल के साथ मृदा सतह से नीचे चले जाते हैं। हल्की मृदाओं में भारी मृदाओं की अपेक्षा अधिक मात्रा में क्षार पदार्थो का निक्षालन होता है क्योंकि उनमें जल का रिसाव शीघ्रता एवं अधिक मात्रा में होता है। फसल रहित मृदाओं में भी ऐसे पदार्थों का क्षय अधिक होता है।

अम्ल बनाने वाले उर्वरकों का प्रयोग :- अधिकांश रासायनिक उर्वरक मृदा पर अम्लीय प्रभाव छोड़ते हैं। अत: इनके लगातार उपयोग से मृदा में अम्लीयता बढ़ जाती है। युरिया, अमोनियम सल्फेट, अमोनियम क्लोराइड एवं अमोनियम नाइट्रेट जैसे अम्ल उत्पादक उर्वरकों के लगातार प्रयोग से अधिक अम्लीयता पैदा होती है। अमोनियम आयन मृदा संकीर्ण पर अधिशोषित होकर कैल्शियम आयनों को विस्थापित करते हैं जो जल में विलय होने के कारण लीचिंग द्वारा क्षीण हो जाते हैं। परिणामस्वरूप मृदा संकीर्ण पर कैल्शियम की कमी हो जाती है तथा मृदा में अम्लीयता पैदा हो जाती है।

कार्बनिक पदार्थो की मात्रा :- अम्लीय मृदाओं में जीवांश पदार्थो की मात्रा अधिक होती है अत: इनके विघटन से कार्बन-डाई-ऑक्साइड तथा अनेक कार्बनिक अम्ल बनते हैं। अम्लों के अपघटन से हाइड्रोजन आयन उत्पन्न होते है जो मृदा संकीर्ण पर उपस्थित कैल्शियम, मैग्निशियम व पोटेशियम को विस्थापित करके वहाँ अधिशोषित हो जाते है तथा भस्म (Ca^{+2}, Mg^{-2}, K^{+}) अपक्षालन द्वारा मृदा के निचले स्तर में चले जाते हैं। इस प्रकार मृदा संकीर्ण पर हाइड्रोजन आयन अधिक हो जाने से मृदा अम्लीय हो जाती है।

सूक्ष्म जैविक क्रिया :- मृदा में विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म जीव सक्रिय रहते हैं जो कार्बनिक पदार्थों का विच्छेदन एवं नाइट्रीकरण की क्रिया करते हैं जिनके फलस्वरूप मृदा में कार्बनिक व अकार्बनिक अम्ल पैदा होते हैं और मृदा अम्लीय बन जाती है।

मृदा अम्लता का पौधों की वृद्धि पर प्रभाव : साधारण अम्लीय मृदाओं (pH 6.5 से 7.0) में पौधों पर अधिक हानिकारक प्रभाव नहीं पडता परन्तु अधिक अम्लीयता (pH 6.5 से कम) के निम्नलिखित प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष विपरीत प्रभाव पड़ते हैं-

प्रत्यक्ष प्रभाव :-

- अम्लीय मृदा के हाइड्रोजन आयनों का पादप जड़ों के ऊतकों पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है।
- मृदा अम्लता का पादप "लेश्मा द्धारा धनायनो की पारगम्यता पर कुप्रभाव पड़ता है।
- मृदा अम्लता पौधों के एन्जाइमों की क्रिया पर विपरीत प्रभाव डालती है जिससे पौधे बुरी तरह प्रभावित होते हैं।
- जडों में भास्मिक तथा अम्लीय अवयवों के बीच सन्तुसनता विध्न पड जाता हैं।

अप्रत्यक्ष प्रभाव :-

- लौह, मैंगनीज तथा एल्यूमिनियम के मृदा में अधिक विलेय होने के कारण पौधों पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है क्योंकि ये सूक्ष्म तत्व हैं और पौधों को इनकी बहुत कम आवश्यक ता होती है।
- अधिक अम्लीय दषा में फॉस्फोरस का लौह तथा एल्यूमिनियम के साथ अप्राप्य अवस्था में स्थिरीकरण हो जाता है, जिससे पौधों के लिए फॉस्फोरस की कमी हो जाती है।
- अधिक मृदा अम्लता के कारण मृदा विलयन में कैल्शियम व मैग्निशियम की कमी हो जाती है।
- मृदा अम्लता में सूक्ष्म जीवाणुओं की सक्रियता मन्द पड़ जाती है जिससे नाइट्रीकरण या नाइट्रोजन यौगिकीकरण जैसी लाभप्रद क्रियाओं पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
- मृदा अम्लता सें फसलों में अनेक पादप रोग हो जाते हैं।

अम्लीय मृदाओं का सुधार : निम्नलिखित विधियों द्वारा अम्लीय मृदाओं का प्रबन्ध किया जा सकता है-

चूना वाले पदार्थो को भूमि में मिलाकर :- इस प्रकार के पदार्थो में बिना बुझा चूना, बुझा हुआ चूना, चाक या खडिया, मार्ल, कैल्सिक लाइम स्टोन तथा डोलोमाइटिक लाइम स्टोन मुख्य हैं। चूना मिलाने पर हाइड्रोजन आयन मृदा कणों पर से कैल्शियम आयनों द्वारा विस्थापित कर दिये जाते हैं और इस प्रकार कैल्शियम मृदा कणों पर पुन: अधिशोषित हो जाता है जैसा कि निम्न अभिक्रियाओं द्वारा प्रदर्शित किया गया है :-

$CaO + H_2O = Ca(OH)_2$

$Ca(OH)_2 + CO_2 = CaCO_3 + H_2O$

H+

H+ मृदा कोलाइड + $Ca(OH)_2 = Ca^{+2}$ मृदा कोलाइड + $2H_2O$

H+

H+ मृदा कोलाइड + $CaCO_3 = Ca^{+2}$ मृदा कोलाइड + $H_2O\uparrow + CO_2$

क्षारीय उर्वरकों के प्रयोग द्धारा :- अम्लीय मृदाओं में सदैव क्षारीय उर्वरकों जैसे सोडियम नाइट्रेट, कैल्शियम नाइट्रेट, कैल्शियम साइनेमाइड, रॉक फॉस्फेट एवं भास्मिक धातुमल आदि का प्रयोग करना चाहिए। इन उर्वरकों के क्षारीय अवषेष अम्लीयता को कम करने में सहायक होते हैं। लकड़ी की राख को भी इन मृदाओं में काम में लिया जा सकता है।

उचित जल निकास के प्रबन्ध द्धारा :- अनावष्यक एवं अतिरिक्त जल को खेत से निकालते रहने पर क्षार पदार्थ भूमि के अन्दर अपक्षालित नहीं होते हैं और अम्ल भी जल के साथ बहकर नष्ट हो जाते हैं। साथ ही वायु संचार बढ़ता है जिससे अधिकांश कार्बन-डाई-ऑक्साइड जल के साथ संयोग न करके वायुमण्डल में चली जाती है।

जुताई द्धारा :- मृदा की अच्छी जुताई करने से मृदा में वायु संचार सुचारू रूप से होता है और मृदा की अम्लता सुधर जाती है।

अम्लीयता सहन कर सकने वाली फसलों को उगाना :- विभिन्न फसलों की अम्ल सहनशील शक्ति अलग-अलग होती है जैसा कि सारणी 1 में दर्षाया गया है-

सारणी 1 : विभिन्न अम्लीयता सहने की सामथ्र्य वाली फसलों का वर्गीकरण

क्र.सं	श्रेणी	फसलें
1	श्रेणी: 1- कम अम्लता सहन करने वाली फसलें	गजर, टमाटर, मटर, चुकन्दर, फूलगोभी, रिजका, बरसीम, सोयाबीन, बैंगन आदि।
2	श्रेणी: 2- औसत अम्लता सहन करने वाली फसलें	गेहूँ, जौ, राई, मक्का, जई, ज्वार, आलू, बाजरा आदि।
3	श्रेणी: 3- अधिक अम्लता सहन करने वाली फसलें	आलू, धान, शकरकन्द, घासें आदि।

ऐसी मृदाओं में द्वितीय एवं तृतीय श्रेणी में आने वाली फसलें ही उगानी चाहिए ताकि अच्छी उपज प्राप्त हो सके।

5.2 लवणीय तथा क्षारीय मृदाएँ

5.2.1 विस्तार : भारत में वर्तमान में लगभग 67.3 लाख हैक्टर भूमि, ऊसर (लवणीय व क्षारीय) होने के कारण कृषि के अयोग्य हैं। और यह क्षेत्रफल दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। अकेले उत्तर प्रदेश में 12.95 लाख हैक्टर भूमि, ऊसर समस्या से प्रभावित हैं। इस प्रकार की मृदायें विशेष रूप से उत्तर प्रदेश, गुजरात, पश्चिमी बंगाल, राजस्थान, पंजाब, महाराष्ट्र, हरियाणा, मध्य प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, कर्नाटक आदि प्रदेशों में पायी जाती है। राजस्थान में लगभग 10.62

लाख हैक्टर भूमि क्षारीयता व लवणीयता से ग्रस्त है तथा आधे से अधिक जिलों में लवणीय व क्षारीय भूमि की समस्या है। राज्य की भौगोलिक स्थिति, शुष्क एवं अर्द्ध शुष्क जलवायु एवं भूमिगत जल में लवण व क्षार की उपस्थिति में यह समस्या उत्तरोतर बढती जा रही हैं। अत: इन मृदाओं का सुधार करना आज की आवश्यक है।

5.2.2 परिभाषा :

वे मृदायें जिनमें कैल्शियम, मैग्निशियम, पोटेशियम एवं सोडियम आदि के घुलनशील लवण अत्यधिक मात्रा में होते हैं, लवणीय तथा क्षारीय मृदायें कहलाती है।

5.2.3 लवणीय तथा क्षारीय मृदाओं का वर्गीकरण :

वैज्ञानिकों द्वारा लवण प्रभावित मृदाओं को उनके भौतिक एवं रासायनिक गुणों के आधार पर निम्न तीन भागों में विभक्त किया गया है:-

लवणीय मृदा :-लवणीय मृदा वह मृदा है जिसमें मृदा के संतृप्त निचौड की विद्युत चालकता 4 डेसी साइमेन्स प्रति मीटर से अधिक, विनिमयशील सोडियम 15 प्रतिशत से कम तथा पी.एच. 8.5 से कम होता है। इस प्रकार की मृदाओं में कैल्शियम, मैग्निशियम, सोडियम तथा पोटेशियम के घुलनशील लवण मुख्यत: क्लोराइड तथा सल्फेट पाये जाते है जिससे मिट्टी की सतह पर सफेद या भूरे रंग का बारीक भुरभुरा पाउडर दिखाई देता है। इसलिए इन्हें सफेद ऊसर भी कहते हैं। मिट्टी की ऊपरी सतह सूखने पर खेत में जगह-जगह सफेद चकत्ते उभर आते हैं। साधारण भाषा में इन्हें रेह या रेहिली भूमि भी कहा जाता है।

क्षारीय मृदा :- इन मृदाओं के संतृप्त निचौड़ की विद्युत चालकता 4 डेसी साइमेन्स प्रति मीटर से कम, विनिमयशील सोडियम 15 प्रतिशत से अधिक तथा पी. एच. मान 8.5 से अधिक होता है। इन मृदाओं में सोडियम लवणों की प्रचुर मात्रा होने से विनिमयशील सोडियम की मात्रा भी अधिक होती है। इस कारण ऐसी मृदाओं की भौमिक दषा खराब होती है। जल व वायु का संचार कम होता है, अधोमृदा में कठोर कंकड़ की परत जमा हो जाती है। जिससे पानी नीचे नहीं जा पाता व भूमि चिपचिपी हो जाती है, तथा सूखने पर सीमेन्ट की भांमि कठोर हो जाती है। इन्हें काली ऊसर भी कहते हैं।

लवणीय-क्षारीय मृदायें :- इन मृदाओं के संतृप्त निचौड़ की विद्युत चालकता 4 डेसी साइमेन्स प्रति मीटर से अधिक, विनिमयशील सोडियम 15 प्रतिशत से अधिक तथा पी.एच.मान भी 8.5 से अधिक पाया जाता है। ऐसी मृदाओं में विलेय लवण और विनिमयशील सोडियम दोनों अधिक मात्रा में होते हैं। मिट्टी के नीचे कैल्शियम कोर्बोनेट के कंकरों की अपारगम्य परत होने की वजह से मिट्टी में हवा व पानी का प्रवेश कम हो जाता है। जल निकास कम होने के कारण पानी सतह पर खड़ा रहता है। साधारण भाषा में इन्हें रेहयुक्त ऊसर या रेहीली ऊसर कहते हैं। इस प्रकार की मृदाओं को भूरा ऊसर भी कहते हैं। इन मृदाओं का वर्गीकरण सारणी 2 में दिया गया है:-

सारणी 2 : लवणीय, क्षारीय तथा लवणीय- क्षारीय मृदाओं का वर्गीकरण

क्रम सं.	वर्ग	विद्युत चालकता (25^0 सें. ताप पर dS/m)	विनियमषील सोडियम (%)	पी.एच.मान (pH)
1.	लवणीय मृदा	4 से अधिक	15 से कम	8.5 से कम
2.	क्षारीय मृदा	4 से कम	15 से अधिक	8.5 से अधिक
3.	लवणीय- क्षारीय मृदा	4 से अधिक	15 से अधिक	8-5 से अधिक

5.2.4 लवणीय तथा क्षारीय मृदाओं का बनना :

लवणीय व क्षारीय मृदाओं की उत्पति मृदा की सतह पर विभिन्न लवणों की उपस्थिति के कारण होती है । लवणीय व क्षारीय मृदाओं के बीच कोई पक्का विभाजन नहीं है जिन कारणों से लवणीय मृदाए बनती हैं, वही क्षारीय मृदाओं के लिए उत्तरदायी होते हैं । वास्तव में लवणीय मृदा बनने के पष्चात ही क्षारीय मृदा का निर्माण होता है । निम्नतिखित परिस्थितियों में मृदा पर लवण एकत्रित होकर ये मृदाए बनती हैं -

1. **वर्षा की कमी :-** शुष्क क्षेत्रों में कम वर्षा एवं ज्यादा वाश्पीकरण के कारण भूमि में मौजूद लवण पानी में घुलकर ऊपरी सतह पर आ जाते हैं और पानी के भाप बनकर उड़ जाने पर भूमि की ऊपरी सतह पर एकत्रित हो जाते हैं। इस क्रिया के बार-बार जारी रहने के कारण भूमि की ऊसरता में निरन्तर वृद्धि होती रहती है।
2. **भू-जल स्तर की ऊचाई :-** नहरों व तालाबों से सिंचित क्षेत्रों में भू-जल स्तर जमीन की सतह के नजदीक आने एवं पानी के रिसाव के कारण लवणीय व क्षारीय मृदाओं सें समस्याग्रस्त क्षेत्र बढ़ता जाता है।
3. **जल का अनुचित निकास :-** जल निकास का उचित प्रबन्ध न होने के कारण भी वर्षा का जल निचले भागों में एकत्रित हो जाता है तथा साथ लाये हुए लवणों को वहीं छोड़ देता है। इस प्रकार की भूमि भी लवणीय हो जाती है।
4. **लवणयुक्त पानी से सिंचाई :-** भूमिगत जल में लवण व क्षार होने के कारण कुओं से सिंचित क्षेत्रों में सिंचाई करने से भूमि की सतह पर लवणों की मात्रा बढ़ती जाती है और भूमि लवणीय हो जाती है। राजस्थान में इस प्रकार की समस्या अधिक है।
5. **मिट्टी की निचली सतहों में कठोर परत बनना :-** मिट्टी की निचली सतहों में कड़ी परत होने अथवा एक ही गहराई पर बार-बार जुताई करने से कड़ी परत बनने के कारण नीचे की तहों तक पानी नहीं जा पाता है। इस कारण घुलनशील लवण भूमि की ऊपरी सतहों पर एकत्रित होते रहते हैं।

6. **क्षारीय उर्वरकों का प्रयोग :-** सोडियम नाइट्रेट, कैल्शियम नाइट्रेट, एवं रॉक फॉस्फेट आदि उर्वरकों के निरन्तर प्रयोग से भी मृदा क्षारीय हो जाती है।
7. **ज्वालामुखी पर्वतों का प्रभाव :-** ज्वालामुखी पर्वतों के विस्फोट से निकलने वाला लावा अनेक लवणों का मिश्रण होता है। इसके मृदा सतह पर फैल जाने से भी लवणीय मृदाएं बन जाती है।

5.3.5 लवणीय तथा क्षारीय मृदाओं का पौधों पर प्रभाव :

इन मृदाओं में पौधों पर प्रभाव निम्न कारणों से पडता हैं-

- इन मृदाओं में घुलनशील लवणों जैसे सोडियम, कैल्शियम, मैग्निशियम एवं पोटेशियम के क्लोराइड, सल्फेट, कार्बोनेट, बाईकार्बोनेट आदि की मात्रा में वृद्धि हो जाती है। ये घुलनशील लवण मृदा की ऊपरी सतह में परत के रूप में जमा हो जाते हैं।
- भूमि में लवणों के घुल जाने के कारण भूमि में घोल की सान्द्रता बढ़ जाती है जिससे पौधे पानी को ग्रहण नहीं कर पाते तथा पौधों में पानी की कमी हो जाती है। मृदा विलयन में लवणों की सान्द्रता 0.5 प्रतिशत होने पर पौधों में जल का अवशोषण कम हो जाता है और 30 प्रतिशत लवण सान्द्रता पर जल शोषण पूर्णरूपेण रूक जाता है।
- नमी की कमी के कारण बीजों का अंकुरण कम हो जाता है तथा उपज में कमी आ जाती है।
- क्षारीय मृदाओं में पी.एच. 7.5 से अधिक हो जाने पर Cu, Fe, Zn तथा Mn आदि की विलेयता तथा पौधो को इनकी प्राप्यता कम हो जाती हैं।
- क्षारीय मृदाओं में सोडियम आयन्स के आधिक्य में मृदा की संरचना बिगड जाती हैं। फलत: मृदा में वायु संचार तथा अणुजीवों की सक्रियता कम हो जाती है। अत: ऐसी मृदा फसल उत्पादन के लिए हितकर नहीं रहती।

5.3. लवणीय तथा क्षारीय मृदाओं का सुधार

भूमि की समस्या को भली-भांति जानकर उसके अनुसार ही उसका निदान करना चाहिए क्योंकि लवणीय एवं क्षारीय भूमि सुधार के उपाय एवं उनमें उगाई जाने वाली फसलें तथा क्रियाए भी अलग-अलग है। इसलिए यह आवश्यक है, कि मिट्टी का नमुना प्रयोगशाला में भेजकर उसकी जांच करवाकर ही सुधार कार्य किये जावें। सामान्यत: इन मृदाओं को निम्न विधियों द्वारा सुधार कर खेती योग्य बनाया जा सकता है-

(अ) भौतिक एवं जल तकनीकी सुधार विधि।

(ब) रासायनिक सुधार विधि।

(स) जैविक सुधार विधि।

(द) भूमि प्रबन्ध विधि।

(अ) **भौतिक एवं जल तकनीकी सुधार विधि:-** इनके अन्तर्गत लवणीय मृदाओं का सुधार निम्न प्रकार किया जाता है-

1- लवणों को खुरचकर : मृदा की ऊपरी सतह पर जब लवण सफेद परत के रूप में कहीं-कहीं दिखाई देवें तो इन्हें खुरपी, फावड़ा या ट्रेक्टर में स्क्रेपर लगाकर खुरचकर खेत से बाहर निकाल देना चाहिए। यह विधि महँगी है परन्तु छोटे क्षेत्र के लिए उपयोगी है।

2- निक्षालन (लिचिंग) : इस विधि में लवणों को पानी के साथ जड़ क्षेत्र से नीचे ले जाया जाता है तथा पौधे हानिकारक लवणों के प्रभाव से बच जाते हैं। निक्षालन में इतना पानी देना चाहिए कि फसल की जल मांग को पूरा करने के उपरान्त लवणों को भी जड़ क्षेत्र से नीचे ले जा सके। यह विधि उन क्षेत्रों में उपयोगी है जहाँ जल स्तर नीचा हो, सिंचाई के लिए पर्याप्त पानी उपलब्ध हो तथा मृदा में नीचे कठोर परत नहीं हो। यह एक प्रभावी विधि है परन्तु इसमें लाभदायक पोषक तत्व भी निचले स्तर में चले जाते हैं।

3- निर्धावण (धोवन) क्रिया द्वारा: जब लवण पर्याप्त मात्रा में पपड़ी के रूप में जमा हो जाते हैं तो जल की तेज धार खेत में छोड़ी जाती है जिससे लवणों की परत घुलकर खेत से बाहर निकल जाती है और लवणों की सान्द्रता मृदा में कम हो जाती है। पर्याप्त मात्रा में जल उपलब्ध होने की स्थिति में ही इस विधि का प्रयोग किया जाता है।

4- उचित जल निकास द्वारा: इन मृदाओं का जल निकास अत्यन्त आवश्यक है। फसल की आवश्यकता से अधिक अतिरिक्त जल को खेत से बाहर निकाल देना जल निकास कहलाता हैं जल निकास का उचित प्रबन्ध होने पर लवणों का संचय कम होगा तथा वायु संचार अच्छा होगा। इसके लिए खेत में जगह-जगह गहरी नालियाँ बना दी जाती हैं जिससे अतिरिक्त जल खेत से बाहर निकल जाता है।

(ब) रासायनिक सुधार विधि :- ऐसे रसायन जो विनिमयशील सोडियम को मृदा सतह से हटाने के काम में लिए जाते है मृदा सुधारक कहलाते हैं। क्षारीय मृदाओं के सुधार के लिए विभिन्न प्रकार के रासायनिक सुधारकों का उपयोग किया जाता है। जैसे- जिप्सम, गंधक, गंधक का अम्ल, आयरन पाइराईट्स, एल्यूमिनियम सल्फेट, फैरस सल्फेट आदि प्रमुख हैं। इनमें से बहुत से सुधारक तो महँगे हैं, कुछ आसानी से उपलब्ध नहीं होते तथा कुछ के उपयोग में विशेष सावधानियाँ रखनी पड़ती हैं। जबकि जिप्सम एवं आयरन पाइराईट अपेक्षाकृत सस्ते तथा सुगमता से मिल जाते हैं। अत: मृदा सुधारक के रूप में इनका प्रयोग ही अधिक किया जाता है।

1. जिप्सम: जिप्सम पानी में घुलनशील एक प्राकृतिक खनिज है तथा राजस्थान में बहुतायत में पाया जाता हैं। इसके उपयोग से क्षारीय जमीन में फसलों के लिए आवश्यक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है। जिप्सम की समुचित मात्रा को बारीक पीसकर भूमि की ऊपरी 10-15 से.मी. सतह में अच्छी प्रकार मिला देना चाहिए। जिप्सम में उपस्थित कैल्शियम आयन क्षारीय मृदाओं से विनिमयशील सोडियम आयन को विस्थापित करके सोडियम क्ले को कैल्शियम क्ले में बदल देते हैं। इसकी अभिक्रिया निम्न प्रकार है-

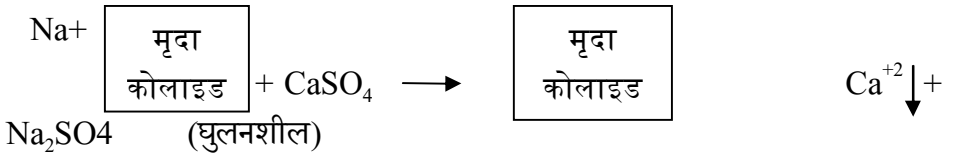

Na+ (जिप्सम) (सोडियम सल्फेट)

सोडियम सल्फेट जल में विलेय है जो मृदा से जल के साथ निक्षालित कर दिया जाता है। इसके उपयोग से तिलहनी फसलों में तेल की मात्रा व दलहनी फसलों में प्रोटीन की मात्रा में वृद्धि होती है। मृदा जाँच के आधार पर ही जिप्सम की मात्रा का निर्धारण करना चाहिए।

2- पाइराइट्स : पाइराइट्स भी एक अच्छा, सस्ता तथा सुलभ रासायनिक सुधारक है जो बिहार प्रान्त के रोहतास जिले में बहुतायत में पाया जाता है। यह आयरन तथा सल्फर युक्त खनिज है जो पानी तथा हवा से क्रिया करके तुरन्त सल्फ्यूरिक अम्ल एवं आयरन सल्फेट का निर्माण करता है जो मदा सोडियम से क्रिया करके उसे कैल्शियम मृदा में बदल देते हैं। इसका प्रयोग करने से पहले खेत को समतल कर लेना चाहिए तथा पाइराइट्स को मिलाकर तुरन्त हल्की सिंचाई करनी चाहिए। पानी सूखने पर पुन: सिंचाई करनी चाहिए। यह क्रिया एक सप्ताह तक करनी चाहिए। चूनेदार ऊसर भूमि में यह अधिक उपयोगी पाया गया है।

3- फैरस सल्फेट तथा एल्यूमिनियम सल्फेट : ये अम्लीय लवण हैं जिनके जल अपघन से सल्फ्युरिक अम्ल बनता हैं । यह कैल्शियम कार्बोनेट के साथ क्रिया कर अल्प घुलनशील कैल्शियम सल्फेट बनता हैं । जो अधिशोषित सोडियम को विस्थापित कर साधारण कैल्शियम मृदा बना देता हैं ।

(स) जैविक सुधार विधि:-

1- हरी खाद एवं फसल का प्रयोग : क्षारीय भूमि सुधारने के लिए ढ़ैंचा की हरी खाद का उपयोग अत्यन्त लाभकारी है। इससे मिट्टी के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में सुधार होता है। ढ़ैंचा एक दलहनी फसल है। इसके पौधे का रस अम्लीय प्रकृति का होता है जो कि सोडियम के हानिकारक प्रभाव को कम करता है। ढ़ैचा की फसल को फूल आने पर भूमि में पलट देना चाहिए, ताकि यह सड़ जाये और मिट्टी में हवा-पानी का संचार अच्छी तरह हो सके। इससे जैविक पदार्थ एवं नाइट्रोजन जमीन में मिलकर पौधों को प्राप्त होंते है, मृदा का पी.एच. मान कम होता है तथा सूक्ष्म तत्वों की उपलब्धता बढ़े जाती हैं। हरी खाद के लिए ढ़ैचा के अलावा सनई, ग्वार, चंवला आदि की भी बुवाई की जा सकती है।

2- प्रेसमड या शीरा : प्रेस-मड गन्ना उधोग का एक उत्पाद हैं । शक्कर मिलों के समीपवर्ती क्षेत्रों में मिलों से प्राप्त शीरा (प्रेस-मड) भी भूमि सुधार हेतु काम में लिया जा सकता है। इसे बुवाई से एक माह पहले खेत में मिलाना चाहिए।

(द) भूमि प्रबन्ध विधि:- लवणीय एवं क्षारीय मृदाओं को सुधारने के साथ-साथ इनका ठीक प्रकार से प्रबन्ध करना भी अत्यन्त आवश्यक है अन्यथा ये पुन: लवणीय एवं क्षारीय मृदाओं में बदल सकती हैं। इसके लिए निम्नलिखित कृषि क्रियाएँ लाभप्रद पायी गयी है-

1- खेत की तैयारी एवं जुताई: क्षारीय भूमि वाले खेत को पहले समतल करना चाहिए। समतल खेत में सिंचाई के पानी का समुचित उपयोग हो जाता है। इन मृदाओं की जुताई उपयुक्त नमी की अवस्था में ही करनी चाहिए क्योंकि इनकी भौतिक दशा खराब होती हैं अधिक नमी की दशा में कीचड़ हो जाता है तथा कम नमी की अवस्था में ढ़ेले बन जाते हैं। परीक्षणों से पता चला है कि क्षारीय भूमि की 15-20 से.मी. गहरी जुताई की जाये तो भूमि के नीचे की कड़ी परत टूट जाती है जिससे जल तथा वायु का संचार अच्छा होता है तथा बीज का अंकुरण अच्छा होता है।

2- कार्बनिक पदार्थो का प्रयोग : कार्बनिक व जीवांश पदार्थ भूमि की भौतिक दशा सुधारने के साथ-साथ विघटन के दौरान कार्बन-डाई-आक्साइड गैस छोड़ते हैं जो जल के साथ कार्बनिक अम्ल बनाते हैं। यह कार्बनिक अम्ल कुछ हद तक क्षारीयता को कम करने में सहायक होता है। इसके अतिरिक्त ये पदार्थ मृदा में लाभदायक जीवाणुओं को भी बढ़ाते हैं। इस हेतु फसल पुआल, हरी खाद, गोबर की खाद तथा कम्पोस्ट आदि का प्रयोग महत्वपूर्ण हैं।

3- बुवाई की विधि : इन मृदाओं में बीज का अंकुरण एक जटिल समस्या है, क्योंकि अंकुरण पर लवणों व क्षारों का कुप्रभाव पड़ता है अत: इन मृदाओं में कूड़ व मेड़ विधि से बीज की बुवाई करनी चाहिए। बीज को मेड़ों के ढ़लान पर बोना चाहिए तथा कूड में सिंचाई करनी चाहिए। इससे लवण कूड की ऊपरी सतह पर आकर जमा होंगे एवं पौधों की बढ़वार होती रहेगी। अधिक लवणीय मृदा में कूडों में बोयी जाने वाली फसलों को एक कूड छोड़कर दूसरे कूड में बोना चाहिए तथा फसल वाली कूडों में ही सिंचाई करनी चाहिए।

4- सिंचाई : पहली सिंचाई में अधिक मात्रा में पानी देना चाहिए ताकि अंकुरण पर लवणों का हानिकारक प्रभाव कम से कम हो। बाद में दो सिंचाई के बीच का अन्तर कम कर जल्दी-जल्दी हल्की सिंचाई करें इससे जड़ क्षेत्र में लवणों का जमाव नहीं होगा। ऐसी भूमि में फव्वारा या ड्रिप सिंचाई पद्दति काम में लेना अधिक प्रभावी पाया गया है।

5- बीज की मात्रा : बीज की मात्रा 15 से 20 प्रतिशत अधिक काम में लेनी चाहिए क्योंकि इस प्रकार की मृदाओं में बीज का अंकुरण कम होता है।

6- उर्वरकों का प्रयोग: साधारण मृदा के मुकाबले समस्याग्रस्त भूमि में 20-25 प्रतिशत अधिक उर्वरकों की मात्रा देनी चाहिए। नाइट्रोजनधारी उर्वरकों को एक साथ न देकर दो-तीन बार में देवें। नाइट्रोजनधारी उर्वरक देने हेतु अमोनियम सल्फेट तथा कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट का प्रयोग करें। नाइट्रोजन की शेषमात्रा देने हेतु खड़ी फसल में यूरिया का घोल बनाकर छिड़कना लाभप्रद पाया गया है। फॉस्फेट को सिंगल सुपर फॉस्फेट के रूप में देवें। क्षारीय भूमि में जस्ता पौधों को कम प्राप्य होता है अत: बुवाई से पूर्व 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करना लाभदायक होता है।

7- उचित फसल चक्र अपनाकर : परीक्षणों के अनुसार लवणीय भूमि के लिए उपयुक्त फसल चक्र इस प्रकार हैं-

- चावल- सरसों (एक वर्ष)
- चावल- जौ- ढ़ैचा (हरी खाद) - सरसों (दो वर्ष)
- ढ़ैचा (हरी खाद) - चुकन्दर - मक्का - जौ (दो वर्ष)

8- सहनषील फसलों एवं किस्मों का प्रयोग : इन मृदाओं में लवण व क्षार सहन करने वाली फसलों एवं किस्मों को ही उगाना चाहिए। विभिन्न फसलों की लवण सहने की सामर्थ्य वाली फसलों एवं किस्मों का वर्गीकरण सारणी 3 एवं 4 में दिया गया हैं-

सारणी 3: विभिन्न फसलों की लवण सहने की सामर्थ्य वाली फसलों का वर्गीकरण

क्र.सं	श्रेणी	फसलें
1	उच्च सहनशील	जौ, चुकन्दर, ढ़ैचा, कपास, पालक, शलजम, शकरकन्द, खजूर आदि।
2	मध्यम सहनशील	गेहूँ, जई, चावल, तारामीरा, सरसों, मेथी, मक्का, बाजरा, सूरजमुखी, अरण्डी, ज्वार, गन्ना, टमाटर, मटर, अनार, रिजका, बरसीम, नेपियर घास आदि।
3	असहनशील	चना, ग्वार, तिल, मूंग, मोठ, सेम, भिन्डी, लौकी, तुरई, सेव, सन्तरा, नींबू, पपीता, आम, अमरूद आदि।

सारणी 4: विभिन्न फसलों की लवण सहनशील किस्मों का विवरण

क्र.सं	फसल	किस्में
1	गेहूँ	राज 3077, डब्लू. एच. 157, राज 2717, के आर. एल. 1-4, के आर. एल. 19, खारचिया- 65 आदि।
2	जौ	आर. डी. 103, आर. डी. 137, आर. डी. 255, बी. एल. 2 आदि।
3	धान	जया, आई. आर. 8, आई. आर. 20, पद्मा, पूसा 2-21 आदि।
4	सरसों	सी. एस. 52, सी. एस. 54 आदि।
5	मक्का	विजया, डेक्कन 103 आदि।
6	अलसी	आर. एल. 102-71, त्रिवेणी आदि।
7	तरबूज	शुगर बेबी, दुर्गापुरा केसर आदि।

समस्याग्रस्त मृदाओं में भूमि सुधार के साथ-साथ उपरोक्त मृदा प्रबन्धन अपना कर अधिक उपज ली जा सकती है जिससे न केवल कृषक की आय में वृद्धि होगी बल्कि उनके जीवन स्तर में भी सुधार होगा।

5.4 सारांश

भारत में बहुत सारी मृदाएं अम्लीयता, लवणीय व क्षारीय होने के कारण कृषि के अयोग्य हैं। और यह क्षेत्रफल दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। अकेले राजस्थान में लगभग 10.62 लाख हैक्टर भूमि क्षारीयता व लवणीयता से ग्रस्त है एवं आधे से अधिक जिलों में लवणीय व क्षारीय भूमि की समस्या है। राजस्थान की भौगोलिक स्थिति, शुष्क एवं अर्द्ध शुष्क जलवायु एवं भूमिगत जल में लवण व क्षार की उपस्थिति होने के कारण यह समस्या उत्तरोतर भयंकर होती जा रही हैं। इन मृदाओं में घुलनशील लवणों की अधिक होने के कारण फसल उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। कृषि वैज्ञानिकों द्वाराविगत वर्शो में इन मृदाओं के सुधार पर अनुसंधान कर, किसानों के लिए उपयोगी उपलब्धियां प्राप्त की हैं- इनको अपनाकर, किसान आसानी से इन मृदाओं को सुधार कर फसलों का उत्पादन ले सकते हैं। अत: इन मृदाओं का वैज्ञानिक तरीके से सुधार करना आज की आवश्यक ता बन गई है।

5.5 बहुचयनात्मक प्रश्न

1- अम्लीय मृदाओं का पी.एच. मान कितना होता है?

(अ) 7.0 से कम (ब) 8.0 (स) 10.0 (द) 14.0

2- अम्लीय मृदाओं का सुधार किया जाता है।

(अ) जिप्सम मिलाकर (ब) चूने वाले पदार्थ मिलाकर

(स) अम्लीय उर्वरकों का प्रयोग करके (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

3- राजस्थान में कितने लाख हैक्टर भूमि लवणीयता व क्षारीयता से ग्रस्त है ?

(अ) 8.6 (ब) 10.6 (स) 15.6 (द) 20.6

4- किस मृदा में ऊपरी सतह सूखने पर खेत में जगह-जगह सफेद चकते उभर आते हैं ?

(अ) लवणीय मृदा (ब) क्षारीय मृदा

(स) अम्लीय मृदा (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

5- मृदा जिसकी विद्युत चालकता 4 डेसी साइमेन्स प्रति मीटर से अधिक, विनिमयशील सोडियम 15 प्रतिशत से कम तथा पी.एच. 8.5 से कम होता है कहलाती हैं ?

(अ) लवणीय मृदा (ब) क्षारीय मृदा

(स) अम्लीय मृदा-क्षारीय मृदाएं (द) उपरोक्त सभी

उत्तर 1. (अ) 2. (ब) 3. (ब) 4. (अ) 5. (अ)

5.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

- यादव, एस.पी.एस. 2007. ऊसर भूमियों को उपजाऊ बनाएं. विश्व कृषि संचार, जून-2007 पेज 63-6.
- शर्मा, ओ.पी., इन्टोदिया, एस.के., शर्मा, एस.एल. एवं नकेला, एन.एस. 2009. शस्य विज्ञान (कृषि वर्ग), माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर पेज 6-14.
- चौधरी, जे. पी., 2000. मृदा विज्ञान : खाद एवं उर्वरक. भारती पब्लिकेशन, बडोत (बागपत) पेज 71-87.
- जाट, बी.एल. 2012. क्षारीय व लवणीय भूमि सुधार. विश्व कृषि संचार, मई- 2012 पेज 53-54.

इकाई - 6

मृदा जीवाणु तथा नाइट्रोजन का खानिजन

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 मृदा के सूक्ष्म जीव

6.3 मृदा में सूक्ष्म जीवों के कार्य

6.4 जीवाणु संवर्ध का उपयोग

6.5 सारांश

6.6 अभ्यास प्रश्न

6.7 संदर्भ ग्रंथ

6.0 उद्देश्य

इस अध्याय से आप निम्न ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे:-

- मृदा के सूक्ष्म जीवों का वर्गीकरण
- मृदा में सूक्ष्म जीवों के कार्य
- नाइट्रोजन का खानिजन
- जीवाणु संवर्ध का उपयोग

6.1 प्रस्तावना

मृदा एक सक्रिय पारिस्थितिक तंत्र है, जिसमें जीवन के अनेक स्तर वातावरण के साथ सक्रिय क्रिया-प्रतिक्रिया करते रहते हैं। इस तंत्र में जैविक कारकों के रूप में कदन्तू एक कोशिकीय जन्तु जगत के वृहत से सूक्ष्म प्राणी तथा वनस्पति के रूप में विभिन्न वृक्षों के भूमिगत भाग, सूक्ष्म जीवी कवक – शैवाल तथा जीवाणु पाए जाते हैं।

इन जीवों में अधिकांश जीव इतने सूक्ष्म होते हैं कि इन्हें सूक्ष्मदर्शी द्वारा ही देखा जा सकता है, इसीलिए इन्हें सूक्ष्म जीव कहा जाता है। ये मृदा मं अत्यधिक संख्या में पाए जाते है। एक ग्राम मृदा में इतनी संख्य अरबों में होती है। मृदा में कार्बनिक पदार्थों के अपघटन संबंधी समस्त क्रियाएं इन्हीं जीवों द्वारा स्ंचालित होती है।

6.2 मृदा के सूक्ष्मजीव

मृदा में पाए जाने वाले सूक्ष्म जीवों को मुख्य तथा दो भागों में बांटा जासकता है -

अ जन्तु सूक्ष्म जीव –

ब वनस्पति सूक्ष्म जीव

अ जन्तु सूक्ष्म जीव – सूक्ष्म जन्तु जीवो मं 1 सूक्ष्म कृमि, 2 रोटीफर्स तथा 3 प्रोटोजोअन्स प्रमुख है।

सूम कृमि – ये सूक्ष्म जन्तु सभी प्रकार की मृदाओं में पाए जाते हैं। इनके शरीर गोल और तुर्क आकार के होते हैं। प्राय: इनका पश्च भाग नुकीला होता है। इनके शरीर की लम्बाई 0.5 से 1.5 मि;मी; होती है जो चौड़ाई से लगभग 40 से 50 गुना होती है। सूम कृमि सड़े हुए कार्बनिक पदार्थों, अणु पादप तथा प्रोटोजोअन्स पर अपना जीवन निर्वाह करते है, अन्य निमेटोडस दूसरे निमेटोउ या केचुओं तथा अन्य सूक्ष्म जीवों का भक्षण करते है।

कुछ निमेटोड पौधों पर परजीवी के रूप में रहते हैं। कृषि की दृष्टि से ये निमेटोड अत्यधिक महत्वपूर्ण है। निमेटोड्स की सक्रियता मृदा में उपयोगी भी होती है। ये कार्बनिक पदार्थों और खनिज पदार्थों के घनिष्ट मिश्रण का विच्छेदन भी करते है। इनकी सक्रियता से मृदा वातन में सुधार होता है। हिंसा जीवी निमेटोड्स परजीवी निमेटोड्स का भक्षण करके उन पर नियंत्रण रखने में सहायक होते है।

प्रोटोजोआ – ये एक कोशिय सूक्ष्म जीव होते हैं तथा जीवाणुओं की अपेक्षा बड़े होते हैं। प्रोटोजोआ जन्तुओं में अमीबा, कशाभिक तथा सीलिऐट्स प्रमुख है। प्रोटाजोआ का मुख्य भोजन बैक्टीरिया होता है। एककोशिय कवक, शैवाल आदि को भी प्रोटोजोआ भोजन में ग्रहण करते है। अधिकांश प्रोटोजोआ धरातलीय स्तरों तक ही सीमित होते है।

रोटोफर्स – अधिक नम तथा दलदली मृदाओं में अधिक संख्या में पाए जाते हैं। ये अपने रोमों द्वारा जन्तुओं से भोजन लेते हैं तथा पूर्णतया परजीवी होते है।

मृदा में इनके महत्व की अधिक जानकारी नहीं है।

ब. वानस्पतिक मृदा जीव -

ये मृदा में कार्बनिक पदार्थों का विच्छेदन तथा ह्यूमस का निर्माण करते हैं। मृदा में पौधों के पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाते हैं। पादप वर्ग के मृदा में पाए जाने वाले प्रमुख जीव है -

1 उच्च पौधों के भूमिगत भाग
2 शैवाल
3 कवक
4 एक्टीनोमाइसिटीज
5 जीवाणु

1. उच्च पौधों के भूमिगत भाग

पौधो के स्रोत के रूप में उच्च पोधों की जडों का एवं भूमिगत भागों का बहुत महत्व है, क्योंकि अन्य सभी जीवों की अपेक्षा में अधिक मात्रा में मृतक मूल जन्तुओं का प्रदान करती है। वास्तव में मृदा जीवन

को दो समूहों में विभाजित किया जा सकता है '

(i) वे जो कार्बनिक अवशेष प्रदान करते है

(ii) वे जो इस कार्बनिक अवशेष के अपघटन मे व्यस्त रहते हैं।

प्रथम समूह में पौधों के मृदा में रहने वाले भाग भूमिगत तने जैसे जड़े आदि दूसरे समूह में कवक, एक्टीनोमाइसिटीज तथा जीवाणु आते है। उच्च पौधों के भूमिगत भाग मृदा जीवों को भोजन प्रदान करते हैं। जड़े भूमि के निचले संस्तरों में प्रवेश कर जाती है और वहां कार्बनिक पदार्थ इकट्ठा कर देती है। इनके विगलन से मृदा में नाफियां बन जाती है, जिससे मदावातन तथा जल निकास अच्छा होता है। जड़ों के मूल रोमों का मृदा कोलाइडी सतह से सीधा सम्पर्क रहता है।

2. मृदा शैवाल -

शैवाल सूक्ष्मदर्शी, एककोशिय, बहुकोशिय, प्रकाश संश्लेषी पादप है। इनको चार प्रमुख श्रेणियों में बांटा जा सकता है -

1 नीली हरी शैवाल

2 हरी शैवाल

3 पीली हरी शैवाल

4 बेसिलेरिओफाइसी (हरि एवं डाइएटस शीतोष्ण तथा नीली हरी शैवाल उष्ण मृदाओं में मिलती है। अम्लीय मृदाओं में हरी तथा उदासीन एवं क्षारीय मृदाओं में नीली हरी शैवाल अधिक पाई जाती है।

शैवाल का मृदा में महत्व

1 ये कार्बनिक पदार्थों से कार्बनिक पदार्थ पैदा करके मृदा में कार्बनिक पदार्थ बढाती है।

2 मृदा सतह पर मृदा कणों को बांधकर मृदाक्षरण को कम करती है।

3 दलदली मृदाओं में वातान बढ़ाती है।

4 नीली हरी शैवाल का कुछ जातिय जैसे नोरूरोक, एनाबीना आदि जत्रजन स्थरीकरण करती है।

3. मृदा कवक -

पर्ण हरिम विहिन, एक कोशिय से वतुकोशी, तन्तुवत, जीव है। मृदा में ये परजीवी तथा मृतोपजीवी के रूप में पाई जाती है। मृतजीवी के रूप में ये कार्बनिक पदार्थों के अपघटन का कार्य करती है। परजीवी के रूप में पौधों तथा जन्तुओं को जीवित कोशिकाओं को हानि पहुंचाती है।

कवक के प्रकार -

कवक को चार प्रमुख विभागों में बांटा गया है -

1 फाइकोमाइसिटीज

2 एस्कोमाइसिटीज

3 बेसिडियोमाइसिटीज

4 ड्येूरोमाइसिटीज

मृदा में कवक के तीन वर्ग मुख्य है -

1 यीस्ट

2 मोल्ड्स

3 छत्रक

1 यीस्ट – अधिकांश मृदाओं में पाया जाता है। यह एक कोशिय कवक है। मोल्ड्स – महीन तन्तुओं से बनती है अधिकांश मृदा के उपरी सतह पर मिलती है।

छत्रक – महीन तन्तुओं के जाल के रूप में मृदा के उपरी सतह में वृद्धि करती है तथा जनन संरचना के रूप में छत्रक बनाती है।

मृदा कवक के कार्य –

1 पौधो और जन्तुओं के अवशेषों पर कवक क्रिया करके ह्यूमस के निर्माण में भाग लेती है।

2 ये मृदा में कार्बनिक तथा प्रोटीन युक्त योगिकों का अपघटन करती है। प्रोटीन का अमीनो अम्ल तथा अमोनिया में बदल देती है।

3 कार्बनिक पदार्थों के अपघटन के दौरान कार्बन डाई ऑक्साइड की अधिक मात्रा पैदा करती है जो मृदा के खनिज विलेयता में वृद्धि करती है।

4 कवक समूह के कुछ सदस्य विशेष रूप से हाइमेनोमाइसिटीज के जाल प्राय पेड़ों की जड़ो में संक्रमण करके माइकोराइजा बनाती है। माइकोराइजा का निर्माण कम नाइट्रोजन और फास्फोरस वाली मृदाओं में होता है, ऐसी स्थिति में इनके तन्तु जल तथा खनिज अवशोषण में विशेष सहायक होते है

5 मृदा में उपस्थित परजीवी कवक विभिन्न पौधों में रोग उत्पन्न करते है।

6 कुछ कवक वसा तथा वसीय अम्लों को आसानी से अपघटित कर देती है। अधिक प्रतिरोधी पदार्थ जैसे लिग्निन, रेजिन्स, रेनिन्स आदि को भी अपघटित कर देती है।

4 एक्टीनो माइसिटीज –

एक्टीनोमाइसीट्स कवक से आकार में छोटे किन्तु जीवाणुओं से बड़े होते हैं। रूप तथा आकार में कवक से मिलते जुलते है। शारीरिक संगठन भी कवक और जीवाणुओं से काफी समानता रखता है। ये एककोशिय शाखीय धागे के रूप में तंतुवत होते है।

एक्टीनोमाइसीट्स मृदा, कम्पोस्ट, तथा झीलों की सतह पर मिलते है। इनकी मृदा में संख्या कार्बनिक पदार्थो की मात्रा पीएच और ताप पर निर्भर करती है। जिन मृदाओं में कार्बनिक पदार्थ प्रचुर मात्रा में होता है, उनमें एक्टीनोमाइसीट्स की संख्या अधिक होती है।

एक्टोनोमाइसीट्स के कार्य -

1 ये मृदा के कार्बनिक पदार्थों के अपघटन का कार्य करते है, जिससे पोषक तत्व मुक्त होते है।

2 ये नाइट्रोजन युक्त पदार्थों को अधिक समय तक सुरक्षित रूप से संचित रखते है, जिससे इन

पदार्थों का मृदा में ह्रास नहीं पाता।

3 उच्च ताप पर एक्टीनोमाइसीट्स हरी खाद, कम्पोस्ट तथा गोबर की खाद का अपघटन करते है।

4 एक्टीनोमाइसीट्स अनेक प्रकार के प्रतिजैविकों पैदा करते है, जैसे स्ट्रोमाइसिन, आक्सीट्रेटा साइक्लीन, नियोमाइसिन आदि, जिनसे मानव एवं पशु उपचारित किए जाते है।

5 स्ट्रेप्टोमाइसीज स्केबीज आक में ब्लेक स्कर्फ रोग पैदा करता है।

5 मृदा जीवाणु

मृदा में सबसे अधिक जीवन जीवाणु के रूप में पाया जाता है। ये एक कोशिय तथा अतिसूक्ष्म जीव है। नम मृदा में जीवाणुओं की अधिक संख्या तथा सक्रियता होती है। उपयुक्त नमी 50-70 प्रतिशत मृदा जल धारण क्षमता होती है। अधिक नम मृदाओं में वायुजीवी जीवाणुओं की संख्या कम हो जाती है।

जीवाणुओं की सक्रियता में तापक्रम का भी विशेष महत्व है। 25-30 डिग्री से. पर सबसे उपयुक्त सक्रियता देखी गई है। खनिज मृदा में जीवाणुओं की संख्या कार्बनिक पदार्थ की मात्रा अधिक होने पर अधिक होती है। अधिक अम्लीय या क्षारीय मृदा में जीवाणुओं की संख्या कम होती है। जीवाणुओं की वृद्धि के लिए सबसे उपयुक्त मृदा उदासीन होती है।

जुताई गुडाई से बैक्टीरिया संख्या में वृद्धि करते है। बंसत या पतझड़ में जीवाणुओं की संख्या मृदा में अत्यधिक होती है।

इसके विपरीत गर्मी तथा शरद ऋतु में कम हो जाती है।

जीवाणुओं के प्रकार -

(अ) आकृति के अनुसार जीवाणु तीन प्रकार के होते हैं -

1 गोल – कोकस (इनका व्यास 0.5 से 2.5 म्यू तक होता है।)

2 छड़ समान – बेसीलस (ये 0.2 – 2.0 म्यू चौडे तथा 1.5 म्यम तक लम्बे होते है।)

3 सर्पिल – स्पाइरल (ये बहुत बड़े होते है कुछ 500 म्यू तक देखे गए है)

(ब) आकारिकी तथा आनुवंशिकी के आधार पर

जीवाणु और संबंधित सूक्ष्म जीव जगत वर्ग शाइजोमाइसिटीज में आते है। इसमें ये स्यूडोमोनेडेल्स, यूबैक्टीरिमेल्स और एक्टीनोमाइसिटेल्स की जातियां ही मृदा में पाई जाती है।

आर्डर – स्यूडोमोनाडेल्स

1 फेमिली - स्यूडोमोनोडेसी - जीनस - स्यूडोमोनास

2 फेमिली - नाइट्रोबेक्टेरिएसी - जीनस - नाइट्रोबेक्टर, नाइट्रोसोमोनास, नाइट्रोसोकाकस

आर्डर - यूबेक्टीरिएल्स

फेमिली - राइजोबिएसी - जीनस राइजोबियम, एग्रोबेक्टेरियम, क्रोमोबेक्टीरियम

फेमिली - एक्रोमोबेक्टेरियसी - जीनस एक्रोमोबेक्टर, फ्लेवेबेक्टेरियम

फेमिली - कोरीनेबेक्टोरिएसी - जीनस कोरीनेबेक्टोरियम, आरथ्रोबेक्टर

फेमिली - बेसिलेसी - बेसीलस तथा क्लोसट्रीडियम

आर्डर - एक्टीनोमाइसिटेल्स

फेमिली - माइकोबेक्ट्रीएसी - जीनस माइकोबेक्टेरियम

(स) कार्यकी के आधार पर जीवाणुओं का वर्गीकरण

(अ) स्वपोषित तथा विकल्पी स्वपोषित – ये अपना भोजन सूर्य के प्रकाश से प्राप्त उर्जा या अकार्बनिक पदार्थों के या कार्बन के सरल यौगिकों के ऑक्सीजन से प्रापत करते हैं। इनके दो प्रवर्ग हैं -

1 प्रकाश स्वपोषी – ये अपनी उर्जा सूर्य के प्रकाश से प्राप्त करते है।

2 रसायन स्वपोषी – ये अपनी वृद्धि तथा जीव संश्लेषण प्रतिक्रियाओं के लिए आवश्यक उर्जा अकार्बनिक पदार्थों के आक्सीकरण से प्राप्त करते है।

जिन तत्वों के ऑक्सीकरण से इन्हें वृद्धि के लिए उर्जा प्राप्त होती है, उनके आधार पर इन्हें निम्नानुसार वर्गीकृत किया जा सकता है –

1 नाइट्रोजन जीवाणु – ये अमोनिया का एन्जाइमिक आक्सीकरण करके उसे नाइट्रेट में परिवर्तित कर देते है

अ अमोनियम को नाइट्रोइट में – नाइट्रोसोमोनास

ब नाइट्राइट को नाइट्रेट में आक्सीकृत करते है – नाइटा्रेबेक्टर

2 सल्फर बैक्टीरिया – अकार्बनिक सल्फर को सल्फेट में बदल देते है। थायोबेसिलस

3 आयरन बैक्टीरिया – फेरस को फेरिक अवस्था में बदल देते है। उदा; फेरोबेसीलस, गलियोनेला

(ब) परपोषित जीवाणु

मृदा के अधिकांश जीवाणु इसी श्रेणी में आते हैं। ये अपनी कार्बन और उर्जा की पूर्ति जटिल कार्बनिक यौगिकों से करते हैं। ये सेलुलोज, हेमीसेलुलोज, स्टार्च, शर्करा, प्रोटीन, वसा तथा मोम आदि जटिल यौगिकों का अपघटन करके उर्जा प्राप्त करते हैं। ये जीवाणु संरचना, कायिकी तथा संख्या में परिवर्तनीय होते हैं।

कुछ स्पोर्स बनाने वाले तो अल्प स्पोर्स नहीं बनाते है

कुछ ग्राम पोजीटिव तथा अन्य ग्राम निगेटिव होते है। कुछ इनमें से वायुमंडलीय नत्रजन को स्थिर करने में समर्थ होते है, तो कुछ कार्बनिक या अकार्बनिक नाइट्रोजन पर निर्भर करते है।

इस वर्ग में निम्नांकित जीवाणु वर्गीकृत किए जाते है –

1 नाइट्रोजन स्थरीकरण जीवाणु –

ये बैक्टीरिया वायुमंडल से नाइट्रोजन प्राप्त कर उसे स्थिरीकृत करते हैं। इन्हें पुन: दो भागों में विभाजित किया जाता है।

1 सहजीवी जीवाणु – ये जीवाणु स्वतंत्र रूप से जीवित नहीं रह सकते। ये केवल अन्य पौधों के सहजीवन में ही वायुमण्डल नाइट्रोजन का उपयोग तथा स्थिरीकरण करते है। राइजोबियम इसी वर्ग का जीवाणु है। यह दलदली पौधों की जड़ ग्रंथियों में नाइट्रोजन स्थिर करते है और इन्हीं पौधों के कोषा रस से उर्जा प्राप्त करते हैं।

2 असहजीवी बैक्टीरिया – ये स्वतंत्र रूप से निर्वाह करके वायुमंडल की नाइट्रोजन का स्थरीकरण करते है। ये भी दो प्रकार के होते है -

अ वायुजीवी – ये आक्सीजन की अनुपस्थिति में जीवित नहीं रह सकते हैं। इस वर्ग में एजोटोबेक्टर बैक्टीरिया आते है।

ब अवायुजीवी जीवाणु – ये आक्सीजन की अनुपस्थिति में जीवित रह सकते है। इस वर्ग का उल्लेखनीय बैक्टीरिडियम है

2 अनाइट्रोजन स्थरीकृत जीवाणु –

1 वायुजीवी – ये अमोनीकरण जीवाणु या अमोनीफायर जीवाणु कहलाते है।

2 अवायुजीवी जीवाणु – ये डीनाइट्रीकारी बैक्टीरिया या डीनाइट्री फापर कहलाते हैं।

6.3 मृदा में सूक्ष्म जीवों के कार्य

मृदा में होने वाली रासायनिक क्रियाएं मृदा में स्थित जीवों की सक्रियता पर निर्भर करती है। सूक्ष्म जीवों के मुख्य कार्यों को निम्न दो भागों में विभाजित किया गया है –

1 लाभदायक कार्य

2 हानिकारक कार्य

1. मृदा में जीवाणुओं के लाभदायक कार्य

अ कार्बनिक पदार्थों का अपघटन

ब अकार्बनिक पदार्थों का रूपान्तरण

स नाइट्रोजन स्थरीकरण

2. मृदा जीवाणुओं के हानिकारक कार्य – पौधों में रोग पैदा करना मृदा में उपस्थित अनेकों सूक्ष्म जीव पौधों में रोग पैदा करते है। पौधों की जड़ विगफल, स्केब, शुष्क सड़न आदि अनेक बीमारियां मृदा में उपस्थित जीवाणुओं और सूक्ष्म जीवों द्वारा पैदा की जाती है।

प्राप्य पोषकों के लिए उच्च पौधो से स्पर्धा करना -

मृदा जीवों को पौधों की भांति अपनी वृद्धि एवं संक्रियता के लिए नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम, केल्सियम तथा अन्य तत्वों की आवश्यकता होती है, मृदा में इनकी संख्या अधिक होने पर मृदा में प्राप्य पोषकों की कमी हो जाती है, जिसके कारण उच्च पौधों के विकास में बाधा उत्पन्न होती है।

विषैले योगिाकों का उत्पादन – पौधों एवं सूक्ष्म जीवों के लिए वायु की अनुपस्थिति में मृदा कार्बनिक पदार्थों के अपूर्ण अपघटन से कुछ विषैले पदार्थ एकत्रित हो जाते है जैसे मीथेन, हाइड्रोजन सल्फाइड, फास्फीन तथा कई कार्बनिक अम्ल।

विनाइट्रीकरण – डीनाइट्रीकारी बैक्टीरिया मृदा में नाइट्रोजन के अनेक योगिक जैसे नाइट्रेट, नाइट्राइट, अमोनिया आयन तथा अमीनों के सरल यौगिक अपचित होकर नाइट्रोजन गैसे में परिवर्तित होकर वायुमंडल में वापस चली जाती है। इस क्रिया को विनाइट्रीकरण् कहते हैं।

जैविक नाइट्रोजन का स्थरीकरण –

प्रस्तावना – प्राचीन ग्रीक एवं रोमन वासियों को दलदली फसलों से मृदा की उर्वरा शक्ति बढने का तथ्य जात था। बैंसिगफोट ने प्रयोगों द्वारा इस बात को सिद्ध किया। बेजेन्क ने (1888) में इस कार्य को करने वाले जीवाणुओं का पता लगाया तथा इसका नाम बेसिलस रैडिसिकोला रखा था। इसके बाद के अनुसंधानों के जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण के कई पहलुओं पर प्रकाश डाला गया। वायुमंडल की नाइट्रोजन के स्थिरीकरण की क्षमता प्रोकरिमोट समुदाय के जीवाणु जैसे राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, एजोस्पाईरीलम, क्लोस्ट्रिडियम, बैजेरिन्कया, क्लेबसिएला आदि तथा नीली हरि शैवाल जैसे एनाबीना, नौस्टोक, टोलीपोथ्रिक्स एवं एक्टीनोमाइसीटस जैसे फ्रन्किया तक ही सीमित है।

स्थिरीकरण की क्रिया कुछ जीवाणुओं में मुक्त रूप से एवं कुछ जीवाणुओं में सहवास से होती है।

स्थरीकरण की क्रिया – सैदान्तिक रूप से नाइट्रोजन स्थरीकरण एक अपचयन क्रिया है, जिसमें नाइट्रोजन का अपचन होकर अमोनयिा बनती है

$$N_2+3H_2 -2NH_3$$

मुक्त जीवी नाइट्रोजन अपचयन में आवश्यकताओं की पूर्ति जीवाणु द्वारा होती है जबकि सहजीवी में जीवाणु तथा पोषक दोनों मिलकर करते है।

नाइट्रोजन स्थरीकरण के लिये निम्नांकित आवश्यकताए हैं -

1 नाइट्रोजन एन्जाइम ‘ यह एन्जाइम दो भागों का बना होता है – मोलिब्डनम लोह तथा लोह। क्रियाशील एन्जाइम के लिए दोनों भागों की आवश्यकता होती है। इसकी आपूर्ति द्वारा की जाती है।

2 इलेक्ट्रान की आपूर्ति पोषक करता है।

3 उर्जा का स्रोत सहजीवी क्रिया में पोषक करते है।

इलेक्ट्रान स्रोत

उर्जा स्रोत .. नाइट्रोनिनेज एन्जाइम - N_2

आक्सीजन संरक्षण - $2NH_3$

सहजीवी नाइट्रोजन स्थरीकरण -

राइजोबियम – दलदली फसलों जिसमें चना, मटर, मूंग, उड़द, सोयाबीन, अरहर, लौबिया, एल्फा एल्फा, क्लोवर आदि शामिल है, की जड़ों की ग्रंथियों में पाए जाने वाले राइजोबियम नाम जीवाणु वायुमंडल को नाइट्रोजन को ग्रहण करके उसे नाइट्रोजन यौगिकों में बदल देते हैं। जिनका उपयोग पोषक पौधे करते हैं। ये जीवाणु मृदा में घड रूप में पाए जाते है तथा दलदली पौधों के मूलरोम में प्रवेश करते हैं। वहां से वे संक्रमण उतक में चले जाते है तथा एकत्र होकर बडे तन्तु बना लेते हैं। इन बड़े तन्तुओं को संक्रमण डोरे कहते हैं। जीवाणु जड के कोरट्रस के अन्दर कोशाओं के चारों और से उतक मे सूजन सी पैदा करके

ग्रंथियां बना लेते है। ग्रथियों में पतली मृदूतक कोशाओं के बीच विशेष जीवाणु जिन्हें जीवाणु सम कहते है, रहते है।

वटनेन 147 के अनुसार योगिकीकरण की क्रिया निम्न प्रकार से होती है -

N_2

COOH NH COOH

COOH

I II I I

Co NH CNOH CHNH$_2$

I I I I

$C_2H_{12}O_6$ - CH_2 - NH_2OH- CH_2 -

CH_2

I I I I

काबोहाइडेट पौधो से COOH हाइड्रोक्सिल अमीन COOH

COOH

आक्जेल एटीरिक एसिड आम्सीमेन सक्सीनिक एसिड एल-एस्पार्टिक एसिड

राइजोबियम के जाति विभेद

राइजोबियम की अनेक जातियां पाई जाती है। जैसे

राइजोबियम जेयोनिकम – सोयाबीन

रा.लेग्यूमिनोसेरम – मटर

रा. मेलिलोटाई – एल्फा एल्फा

रा. ट्राई फोलाई – क्लोवर

रा. फेलिओलाई – बीन

राइजोबियम मृदा में 5.5 – 7.0 पीएच तथा 18-28 डिग्री से. तापमान के बीच अच्छी वृद्धि करते है। मृदा के पूर्ण रूप से सूखने से इनकी संख्या में कमी आ जाती है, परन्तु ये पूर्ण रूप से नष्ट नहीं होने राइजोबियम जीवाणुओं द्वारा योगिकीकृत नाइट्रोजन की मात्रा निम्नलिखित बातों पर निर्भर करती है -

1 राइजोबियम के विभेद

2 पोषक पौधे

3 वातावरण की दशा

4 मृदा की उर्वरता

यदि मृदा में नाइट्रोजन कम है और कैलिसयम, फास्फोरस तथा पोटासियम पर्याप्त मात्रा में है तो

नाइट्रोजन यौगिकीकरण अधिक होता है। यदि मृदा में राइजोबियम के स्ट्रेन विभेद को कृत्रिम रूप से निवेशित कर दिया जाए तो नाइट्रोजन योगिककीकरण की प्राकृतिक क्षमता तीव्र हो जाती है।

ऐसे ही विभेदयुक्त पदार्थ को जीवाण्विक उर्वरक कहते है। ऐसे जीवाण्विक उर्वरक बनाने के लिए प्राकृतिक रूप से खेतों में पाए जाने वाले उत्तम विभेद को चुनकर, कृत्रिम माध्यम से उगाकर, उपयुक्त वाहक में स्थानान्तरित करेक पैकेट में भरकर जावाण्विक उर्वरक के रूप में बेचा जाता है।

गैर फलीदार पौधों द्वारा सहजीवी नाइट्रोजन योगिकीकरण –

कुछ गैर फलीदार पोधे वायुमंडलीय नाइट्रोजन को उसी क्रिया से ग्रहण करते है जैसे फलीदार फसले राइजोबियम द्वारा नाइट्रोजन ग्रहण करती है। निम्नलिखित कुल से कुछ गैर फलीदार पौधे अपनी जड़ों की ग्रंथियों में नाइट्रोजन सहजीवी रूप से ग्रहा करते हैं।

विट्यूलेसी, इलेइएगेसी, मिरीकेसी, कोरिएरियेकेसी, रेमनेसी, केसूरीनेसी।

असहजीवी नाइट्रोजन स्थरीकरण -

सहजीवी नाइट्रोजन स्थरीकरण के अतिरिक्त मृदा में कुछ ऐसे जीवाणु भी होते है जो मुक्त रूप से बिना परपोषी पोंधे की सहायता के) वायुमंडल की नाइट्रोजन को ग्रहण कर लेते हैं। इस समूह में मुख्य रूप से दो प्रकार के जीवाणु होते हैं। एक तो वे जो वायु की उपस्थिति में क्रियाशील रहते है जैसे एजोटोबेक्टर तथा दूसरे जो वायु की अनुपस्थिति में क्रियाशील रहते है – जैसे क्लोस्ट्रीडियम

एजोटोबेक्टर जीवाणु -

एजोटोबेक्टर जीवाणु कृषि के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। इसका पता बेजरइंक ने 1901 में लगाया था। एजोटोबेक्टर की अनेक जातियां पाई जाती है, जिनमें एजोटोबेक्टर क्रोकोकम मुख्य है। अन्य जातियों में ऐजोटोबेक्टर एजिलिस, ऐ; विलैण्डाई, ए; इन्डीकम उल्लेखनीय है।

एजोरोबेक्टर के लिए वायु होना आवश्यक है। इनके वर्धन के लिए वायु के अतिरिक्त, अनुकूल अमूकूल तापमान 25 डिग्री – 30 डिग्री से; उदासीन माध्यम जिसमें केल्सियम, फास्फोरस, कार्बोहाडट, एल्कोहल कार्बनिक अम्ल आदि शामिल है। ये जीवाणु अम्ल की उपस्थिति ये क्रियाशील नहीं रहते है। मृदा में पीएच मान 7-8 उपयुक्त होता है।

ऐजोटोबेक्टर द्वारा नाइट्रोजन ग्रहण एक एन्जाइम प्रणाली के कारण होता है, जिसे एजोटेस कहते हैं। इसका एक भाग नाइट्रोजिनेस होता है, जिसमें वायुमण्डल नाइट्रोजन को ग्रहण करने की क्षमता है। मोलिब्डेनम नाइट्रोजन ग्रहण को बढा देता है।

ऐजोटोबेक्टर संवर्ध जीवाण्विक उर्वरक के रूप में गैर फलीदार फसलों जैसे गेहूं, मक्का, सरसो आदि के लिए उपयोग में लिया जाता है।

क्लोस्ट्रीडियम जीवाणु –

क्लोस्ट्रीडियम पाश्चोरिएनम जीवाणु वायु की अनुपस्थित में नाइट्रोजन ग्रहण करते हैं। इसके लिए आक्सीजन गैस विषैली होती है। परन्तु वायुमण्डलीय नाइट्रोजन ग्रहण करने के लिए वायु की आवश्यकता पड़ती है। अत: यह मृतजीवी जीवाणु के साथ उगता पाया जाता है, जो वायु का प्रयोग कर अवायु वातावरण बना देता है।

यह अम्लीय मृदा में आसानी से बढ़ता है। इस जीवाणु का उर्वरक संवर्ध नहीं बन पाया है।

एजोस्पाइरीकम जीवाणु – यह जीवाणु जड़ों के साथ संलग्न करता है। एजोस्पाइरीकम के संवर्ध का उपयोग मुख्य तथा धान्य वर्ग की फसलों में किया जाता है। 10-15 किलो नत्रजन प्रति हेक्टर जमीन में प्रस्थावित करने में सक्षम है।

6.4 जीवाणु संवर्धका उपयोग

एक पैकेट जिसमें 100-125 ग्राम वाहक जो एक एकड खेत के लिए उपयुक्त होता है, 250 मिली लीटर पानी मे जिसमें संवर्ध् चिपकने हेतु गुड या अन्य पदार्थ मिला हो, घोल लेते है। इस घोल को बीज के बिछाकर उनपर अच्छी तरह छिडकते है। तत्पश्चात बीज को छाया में सुखाकर 24 घंटे के अन्दर बुवाई कर देते है।

संवर्ध का उपयोग करते समय सावधानियां

1 संवर्ध को ठंडे स्थानों पर रखे।
2 अलग अलग जाति की फसल के लिए उपयुक्त संवर्ध ही काम मे लेवे।
3 संवर्ध के पेकेट को उपचारित करते समय ही खोले
4 संवर्ध एवं संवर्ध से उपचारित बीजको तेज धूप से बचाए
5 कीट नाशी, फफूंदनाशी एवं रासायनिक उर्वरकों के साथ संवर्ध का प्रयोग नही करे
6 यदि उपचार आवश्यक हो तो संवर्ध की दुगनी मात्रा का उपयोग करें।

6.5 सारांश

मृदा एक जीवित पारिस्थितिक तंत्र है सिमें विभिन्न प्रकार के जीव उत्पादक एवं उपभोक्ता के रूप में पाये जाते है। मृदा में पाए जाने वाले जीवन में सूक्ष्म जीवों का विशेष महत्व है। ये जीव शैवाल फफूंद, जीवाणु तथा एक्टीनोमाइसीट्स के रूप में विद्यमान होते है तथा मृदा में स्थित कार्बनिक यौगिकों को सरल एवं पौधों द्वारा ग्रहण करने योग्य रूप में बदल देते है। मृदा में पाए जाने वाले जीवाणु स्वतंत्र तथा सहजीवी के रूप में नत्रजन स्थीकरण का कार्य करते हैं। इन जीवाणुओं को कृत्रिम माध्यम में उगाकर उपयुक्त वाहक के साथ मिलाकर जीवाणु संवर्घ तैयार किये जाते है। इनका उपयोग मृदा में नत्रजन की मात्रा बढाने के लिए किया जाता है। संवधों का उपयोग आवश्यक सावधानियों तथा प्रयोग विधि के अनुसार करना चाहिए।

6.6 अभ्यास प्रश्न

1 मृदा में पाए जाने वाले कौन कौन से सूक्ष्म जीव है। उल्लेख कीजिए
2 मृदा में जीवाणुओं के कार्य समझाइए
3 सहजीवी जीवाणु किस प्रकार नाइट्रोजन का स्थरीकरण करते है। बताइए
4 जीवाणु संवर्ध क्या है। इसका उपयोग किस प्रकार किया जाता है।

6.7 संदर्भ ग्रंथ

- सिंह, धमेन्द्र, 2008 मृदा विज्ञान, हिमांशु पब्लिकेशन, नई दिल्ली
- राय, माधुरी मोहन, 1986, प्रकाशन निदेशालय, गोविन्द वल्ल्भ पन्त कृषि एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय , पंत नगर

इकाई - 7

मृदा का कार्बनिक पदार्थ

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 मृदा के कार्बनिक पदार्थ का संगठन

7.3 मृदा में कार्बनिक पदार्थ के कार्य

7.4 अपघटित होते हुए कार्बनिक पदार्थ का मृदा के गुणों पर प्रभाव

7.5 हुमस

7.6 जीवांश पदार्थ के विच्छेदन को प्रभावित करने वाले कारक

7.7 कार्बन/नाइट्रोजन अनुपात

7.8 मृदा में कार्बनिक पदार्थ का अपघटन

7.9 मृदा के कार्बनिक पदार्थ के स्रोत

7.10 सारांश

7.11 अभ्यास प्रश्न

7.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.0 उद्देश्य

इस अध्याय से आप निम्न ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे:-

- मृदा के कार्बनिक पदार्थ का संगठन एवं कार्य
- हुमस की मत्वत्ता
- जीवांश पदार्थ के विच्छेदन को प्रभावित करने वाले कारक
- कार्बन/नाइट्रोजन अनुपात
- मृदा में कार्बनिक पदार्थ का अपघटन तथा स्रोत

7.1 प्रस्तावना

अनेक प्रकार के मृत एवं जीवित पदार्थ जो जन्तु तथा वानस्पतिक पदार्थों के द्वारा किसी न किसी रूप में मृदा में मिलते रहते हैं, मृदा के **कार्बनिक पदार्थ** कहलाते हैं। कार्बनिक पदार्थ के अन्तर्गत पेड़े-पौधों के अवशेष जैसे पत्तस, जड़, टहनियाँ, डंठल, फल तथा फूल आदि आते हैं। इनके अतिरिक्त सूक्ष्म जीवाणु, कीड़े-मकोड़े तथा अन्य जन्तुओं के मृत शरीर भी मृदा में मिलकर मृदा के कार्बनिक पदार्थ के अन्तर्गत

आते हैं। मृदा में कार्बनिक पदार्थ के गलने-सड़ने से हुमस का निर्माण होता है जिससे मृदा का रंग कुछ काला-सा हो जाता है।

7.2 मृदा के कार्बनिक पदार्थ का संगठन

मृदा में मिलाए गए ताजे कार्बनिक पदार्थ का संगठन परिवर्तनशील होता है। हरे पौधों के तन्तुओं में लगभग 75% जल और शेष 25% शुष्क पदार्थ होता है। इस शुष्क पदार्थ में भार की दृष्टि से लगभग 90% कार्बन, हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन होते हैं। शेष 10% अंश में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, गंधक तथा कैलशियम आदि तत्व होते हैं। मृदा का कार्बनिक पदार्थ पौधों एवं जन्तुओं के अवशेषों से बना हुआ एक जटिल पदार्थ है, जिसमें विद्यमान रासायनिक यौगिकों को निम्न तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं –

(1) **नाइट्रोजन रहित कार्बनिक यौगिक** - इसके अन्तर्गत ग्लूकोज, फ्रुक्टोस, सुक्रोस, स्टार्च, सेलुलोस तथा हैमीसेलुलोस आदि कार्बोहाइड्रेट्स, लिगनिन, वसा, तेल, मोम तथा कार्बनिक अम्ल व उनके लवण आते हैं।

(2) **नाइट्रोजन युक्त कार्बनिक यौगिक -** इस वर्ग में मुख्य रूप से प्रोटीन होती है। इन यौगिकों में C, H, O तथा N के अतिरिक्त कभी-कभी गन्धक, फॉस्फोरस, आयरन तथा अन्य खनिज तत्व भी अल्प मात्रा में पाये जाते हैं। नाइट्रेट्स, अमोनियम यौगिक, एमाइड्स तथा ऐमीनो अम्ल आदि यौगिक भी इस वर्ग में आते हैं।

(3) **अकार्बनिक यौगिक** - इस वर्ग के अन्तर्गत फॉस्फोरस, कैलशियम, मैगनीशियम, पोटेशियम, गंधक, आयरन तथा मैगनीज आदि खनिज तत्व आते हैं। पौधे को जलाने पर प्राप्त राख (Ash) का विश्लेष्ज्ञण करने पर ज्ञात होता है कि उसमें 60 से भी अधिक खनिज तत्व पाए जाते हैं।

घास और अनाज वाली फसलों के भूसे में लिगनिन, सेलुलोस तथा हैमीसेलुलोस अधिक मिलता है। दाल वाले पौधों में प्रोटीन अधिक होती है। इस प्रकार प्रत्येक अवयव की मात्रा पौधों के अवशेषों की प्रकृति एवं आयु पर निर्भर करती है।

साधारणतया पके हुए तथा शुष्क पौधे की रचना निम्न प्रकार होती है -

(i)	कार्बोहाइड्रेट्स	शर्करा पदार्थ तथा स्टार्च	1 से 5%
		हैमीसेलुलोस	10 से 28%
		सेलुलोस	20 से 50%
(ii)	वसा, मोम तथा टैनिन पदार्थ आदि		1 से 8%
(iii)	लिगनिन (Lignins)		10 से 30%
(iv)	प्रोटीन्स		1 से 15%

7.3 मृदा में कार्बनिक पदार्थ के कार्य

मृदा के कार्बनिक पदार्थ के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं -

1. **मृदा कटाव (Erosion) कम होना** - मृदा तल पर मोटा कार्बनिक पदार्थ गिरती हुइ वर्षा की बूँदों की मृदा पर चोट कम कर देता है। यह स्वच्छ जल को मृदा में सरलता से प्रवेश होने तथा रिसने देता है। फलत: मृदा की सतह से जल का बहाव कम होकर मृदा कटाव कम हो जाता है। इस प्रकार पादप वृद्धि के लिए आवश्यक जल भी मृदा में अधिक मात्रा में उपलब्ध होता है।
2. **वायु संचार तथा मृदा कणों का बाँधना (Aeration and Binding of Soil Particles)** - सरलतापूर्वक अपघटित होने वाले कार्बनिक अवशेष पदार्थों को मृदा में डालने से चिपकने वाले जटिल कार्बनिक पदार्थ संश्लेषित होते हैं जो मृदा कणों को बाँधकर बड़े कण (Aggregates) बनाते हैं। ये बड़े कण मृदा को पोली (Loose), रन्ध्रमय (Porous) तथा दानेदार (Granular) अवस्था में रखने में सहायता देते हैं। इसके फलस्वरूप मृदा में जल का प्रवेश तथा रिसाव (Percolation) अधिक सुगमतापूर्वक होता है। मृदा की दानेदार अवस्था में वायु संचार (Aeration) तथा छनाव (Permeability) भली-भाँति होता है।
3. **पौधों की जड़ों का विकास** - पौधों की जड़ों के विकास तथा श्वसन (Respiration) के लिए ऑक्सीजन की निरन्तर प्रदाय (Supply) की आवश्यकता होती है। मृदा में कार्बनिक पदार्थ के कारण बड़े रन्ध्रों (Pores) के होने से मृदा वायुमण्डल से ऑक्सीजन सरलतापूर्वक शोषित कर लेती है और कार्बन-डाई-ऑक्साइड सुगमतापूर्वक छोड़ देती है। जीवित जड़ों में गलने-सड़ने से मृदा के नीचे की ओर दरारें (Channels) बन जाती हैं, जिनमें नवीन पादप जड़ों की वृद्धि अत्यधिक होती है। जड़ों की इन्हीं दरारों में जल का नीचे की ओर संचार अधिक होता है और जल का कुछ भाग पौधों द्वारा भविष्य में उपयोग के लिए संग्रह (Store) हो जाता है।
4. **जल धारण शक्ति (Water Holding Capacity) -** कार्बनिक पदार्थ के द्वारा मृदा की जलग्रहण क्षमता में वृद्धि हो जाती है। कार्बनिक पदार्थ से रेतीली तथ दोमट मृदाओं में प्राप्त जल की मात्रा में निश्चित रूप से वृद्धि हो जाती है। कार्बनिक पदार्थ मिलाने से बनी दानेदार मृदा चिपचिपी (Sticky) तथा अप्रवेश्य (Impervious) मृदा की अपेक्षा अधिक जल रखती है।
5. **पादप पोषक (Plants Nutrients) प्रदान करना** - कार्बनिक पदार्थ पादप वृद्धि के लिए आवश्यक रासायनिक तत्वों का संग्रहालय (Store-house) हैं। मृदा की अधिकांश नाइट्रोजन कार्बनिक संयोग में रहती है। इसकी केवल 1 से 3% मात्रा तक अकार्बनिक रूप में मिलती है। फॉस्फोरस तथा गन्धक की अधिकांश मात्राएँ भी कार्बनिक रूप में मिलती हैं। कार्बनिक पदार्थ अपघटित होकर पौधों को आवश्यक पोषक प्रदान करता है। ये पौधों की आवश्यकताओं के अनुसार धीरे-धीरे स्वतन्त्र होते रहते हैं।

   कार्बनिक पदार्थ के अपघटन से CO_2 तथा कार्बनिक अम्लें बनते हैं जो पोटेशियम तथा कैलशियम आदि खनिजों को घोलकर पौधों को इनकी प्राप्ति में सहायक हैं। मृदा के कार्बनिक पदार्थ पर जीवाणुओं की क्रिया से निम्नलिखित साधारण क्रियाफल बन जाते हैं -

   कार्बन - CO_2, CO_3", HCO_3', CH_4, तात्विक कार्बन।

   नाइट्रोजन - NH_4^+, NO_2', NO_3', गैसीय नाइट्रोजन।

फॉस्फोरस - डाइहाइड्रोजन फॉस्फेट आयन, $H2PO_4'$, मोनोहाइड्रोजन फॉस्फेट आयन, HPO_4'' तथा फॉस्फेट आयन, PO_4'''।

गन्धक - S, H_2S, SO_3'', SO_4'', CS_2।

अन्य - H_2, O_2, H_2O, OH^-, K^+, Ca^{++} तथा Mg^{++} आदि।

इस प्रकार मृदा में पोषक तत्व शीघ्र प्राप्त अवस्थ में उपस्थित होते हैं।

6. **मृदा के सूक्ष्म जीवाणुओं तथा केचुओं (Earthworms) आदि की वृद्धि पर प्रभाव** - कार्बनिक पदार्थ मृदा के सूक्ष्म जीवाणुओं की वृद्धि के लिए ऊर्जा का साधन है। नाइट्रोजन बन्ध जीवाणुओं आदि परपोषित (Heterotrophic) जीवाणुओं के लिए शीघ्र अपघटित होने वाला कार्बनिक पदार्थ, कार्बन के स्रोत के रूप में कार्य करता है। एजोटोबैक्टर तथा कलॉस्ट्रीडियम नामक जीवाणु कार्बन की अनुपस्थिति में नाइट्रोजन स्थिरीकरण नहीं करते।

   ताजा कार्बनिक पदार्थ केंचुओं, चींटी, रोडेन्ट्स आदि मृदा जीवों को भोजन प्रदान करता है। केंचुए तो कार्बनिक पदार्थ वाली मृदाओं में ही पनप सकते हैं। ये जीव मृदा में विस्तृत दरारें बनाते हैं। इससे मृदा पोली तथा रन्ध्रमय होने के अतिरिक्त इसका जल निकास तथा वायु संचार भी सुधर जाता है इसके फलस्वरूप पौधों की जड़ें ऑक्सीजन लेती हैं और CO_2 छोड़ देती हैं।
7. **अम्लीय मृदाओं में फॉस्फोरस की उपलब्धि पर प्रभाव** - ताजा कार्बनिक पदार्थ अम्लीय मृदाओं में मृदा फॉस्फोरस अधिक शीघ्रता से उपलब्ध करता है। कार्बनिक पदार्थ के अपघटन से ऑक्जैलेट, सिट्रेट, टारट्रेट तथा लैक्टेट आदि बनते हैं जो आयरन तथा ऐलुमिनियम के साथ फॉस्फोरस की अपेक्षा अधिक शीघ्रता से संयोग करते हैं। फलत: Fe व Al के अघुलनशील फॉस्फेट कम बनते हैं और पादप वृद्धि के लिए फॉस्फोरस की प्राप्यता अधिक हो जाती है।
8. **मृदा में क्षारीयता कम करना** - अपघटित कार्बनिक पदार्थ से कार्बनिक अम्लों के बनने के कारण मृदाओं की क्षारीयता कम हो जाती है।
9. **वायु द्वारा मृदा अपरदन (Wind Erosion) कम होना** - मृदा के धरातल पर छोटा तथा मोटा कार्बनिक पदार्थ वायु के झोंकों द्वारा मृदा कटाव को कम कर देता है।
10. **जल का क्षय (Loss) कम होना** - मृदा में कार्बनिक पल्वारों (Mulches) की उपस्थिति से वाष्पीकरण द्वारा जल का क्षय कम हो जाता है।
11. **मृदा ताप (Soil Temperature) पर प्रभाव** - मृदा में कार्बनिक पदार्थ के उपघटन से हुमस बनता है, जिससे मृदा काली या भूरी हो जाती है। काला रंग ताप शोषण कर लेता है। अत: मृदा में तलीय पल्वारों द्वारा गर्मियों से मृदा ताप कम हो जाता है और सर्दियों में मृदा गर्म रहती है।
12. **मृदाओं के उभय प्रतिरोधन (Buffering) गुण पर प्रभाव** - चूना तथा उर्वरकों को मृदा में मिलाने से तीव्र रासायनिक परिवतन होकर पी.एच. परिवर्तित हो जाती है। कार्बनिक पदार्थ इसके विरूद्ध मृदाओं के उभय पतिरोधन में सहायक होता है।

13. **विनिमय योग्य तथ प्राप्य धनायनों (Exchange able and Available Cations) पर प्रभाव** - कार्बनिक पदार्थ से बना हुमस पोटेशियम, कैलशियम तथा मैगनीशियम आदि विस्थापनशील एवं प्राप्य धनायनों के लिए भण्डार-गृह के रूप में कार्य कर सकता है। हुमस अमोनियम आयनों को विनिमय योग्य एवं प्राप्य रूप में अपनी सतह पर अधिशोषित करता है। अत: यह अमोनियम उर्वरकों को लीचिंग होने से बचाता है।

7.4 अपघटित होते हुए कार्बनिक पदार्थ का मृदा के गुणों पर प्रभाव

अपघटित होता हुआ कार्बनिक पदार्थ मृदा की संरचना सुधारने में महत्वपूर्ण कार्य करता है। यह मृदा संरचना को निम्न प्रकार सुधारता है -

(i) कार्बनिक पदार्थ से मृदा का रंग काला-भूरा होकर मृदा ताप पर अच्छा प्रभाव डालता है। इससे बना हुमस मृदा की उर्वरता को बढ़ाता है।

(ii) यह मृदा कणों को बाँधकर बड़े मृदा कण समूह (Soil Aggrregates) बनाता है। इससे मृदा पोली, रन्ध्रमय तथा दानेदार हो जाती है। मृदा की दानेदार अवस्था में मृदा में वायु संचार सुगमतापूर्वक होता है।

(iii) इससे मृदा में दरारें पड़ जाती हैं, जिससे नए पौधों की जड़ों की वृद्धि अत्यधिक होती है।

(iv) इससे मृदा की जल धारण क्षमता बढ़ जाती है।

(v) इससे मृदा की क्षारीयता कम हो जाती है।

(vi) इससे अम्लीय मृदाओं में फॉस्फोरस सरलता से प्राप्त हो जाता है।

(vii) यह वर्षा द्वारा कटाव को कम कर देता है। इससे मृदा में जल सरलता से प्रवेश करने तथा रिसने लगता है।

(viii) इससे मृदा में वाष्पीकरण द्वारा जल का क्षय नहीं होता।

(ix) इससे मृदा में सूक्ष्म जीवाणुओं आदि में वृद्धि सुचारू रूप से होती है। कार्बनिक पदार्थ पर जीवाणुओं की क्रिया से साधारण क्रियाफल बनकर पोषक तत्व शीघ्र प्राप्य अवस्था में उपस्थित होते हैं।

(x) इससे मृदा में चूना तथा उर्वरकों के विरूद्ध उभय प्रतिरोधन बढ़ जाता है।

7.5 हुमस (Humus)

काले या भूरे रंग के रवेदार तथा कोलॉइडो पदार्थों के एक जटिल व रोधक (Resistant) मिश्रण को जो विभिन्न जीवाणुओं द्वारा मूल कार्बनिक पदार्थ के अपघटन से बने पदार्थों के संश्लेषण से उत्पन्न होता है, **हुमस (धरण)** कहते हैं।

हुमस कोई अकेला पदार्थ नहीं है, किन्तु यह मृदा में कार्बनिक पदार्थ के अपघटन से उत्पन्न लिगनिन के प्रोटीन के साथ संयोग से बना एक अत्यन्त जटिल पदार्थ है। इस जटिल पदार्थ की संश्लेषण

क्रियाओं को समझाना अति कठिन समस्या है। यह पदार्थ संश्लेषित होकर मृदा में बहुत समय तक अपरिवर्तित रहता है और सभी पकार की रासायनिक एवं जीवाणुओं द्वारा प्रेरित क्रियाओं का प्रतिरोध करता है।

मृदा में बहुत से पत्तो तथा मरे हुए जानवर आदि मिलने से या सड़ी हुई खाद देने से उन पर विभिन्न प्रकार के जीवाणुओं तथा फंजाई की क्रिया द्वारा कार्बनिक पदार्थ अपघटित होने लगता है। कार्बनिक पदार्थ के तत्व जीवाणु उपयोग में ले लेते हैं। इसके पश्चात् काले रंग के कुछ कार्बनिक पदार्थ शेष रह जाते हैं, जिन पर जीवाणुओं की क्रिया अत्यन्त कम होने लगती है। इसी को हुमस कहते हैं।

हुमस का संगठन (Composition) - हुमस की कोई विशेष रचना नहीं होती है। इसका रासायनिक संगठन परिवर्तनशील होता है। यह काले रंग का एक विषमांगी (Heterogeneous) कोलॉइडी यौगिक होता है। हुमस में 40 से 50 प्रतिशत लिगनिन, 30 से 35 प्रतिशत प्रोटीन तथा 20 से 30 प्रतिशत भाग वसा, मोम तथा अन्य पदार्थ होते हैं। इनमें C, H, O, N, S, P, Si, Al, तथा Fe आदि तत्व विद्यमान होते हैं। अम्लीय मृदा में Al, Fe तथा H, क्षारीय मृदा में Na और उदासीन मृदा में Ca तथा Mn पर्याप्त मात्रा में होते हैं।

हुमस की उत्पत्ति (Formation or Genesis of Humus) - हुमस का निर्माण मृदा में कार्बनिक पदार्थ के गलने-सड़ने ◌े होता है। इसका निर्माण जैव-रासायनिक क्रियाओं द्वारा होता है। अत: कार्बनिक पदार्थ से धरण का बनना एक प्राकृतिक क्रिया है। पौधों, जन्तुओं तथा जीवाणु (Microbial) अवशेषों के अपघटन से हुमस का निर्माण कई पदों में होता है -

1. **लिगनोप्रोटीनेट (Lignoproteinate) का निर्माण -** कार्बनिक पदार्थ के अपघटन में तेल, वसा, रेजिन तथा लिगनिन्स कम परिवर्तित होते हैं। इसके अतिरिक्त प्रोटीन तथा सम्बन्धित नाइट्रोजन के यौगिक भी एकत्रित हो जाते हैं। इस प्रकार इन पदार्थों के परस्पर संयोग से लिगनोप्रोटीनेट नामक एक जटिल पदार्थ बन जाता है। इसके निर्माण की क्रियाओं के विषय में यह जानकारी नहीं है कि ये रासायनिक हैं या जीवाणुओं द्वारा होती हैं।
2. **पोलीयूरोनाइड्स (Polyuronides) का निर्माण -** कार्बनिक पदार्थ के अपघटन में स्टार्च, शर्करा, सरल प्रोटीन तथा ऐमीनो अम्ल शीघ्र अपघटित हो जाते हैं जिससे जीवाणु पोलीयूरोनाइड्स (ऐमीनो पोलीसैकेराइड्स) यौगिकों का संश्लेषण करते हैं। जीवाणुओं के मरने पर ये पदार्थ मृदा में एकत्रित हो जाते हैं।
3. **प्रोटीन क्ले जटिल का निर्माण -** मटियार (Clay) अम्लीय होती है जअकि प्रोटीन क्षारीय प्रकृति की होती है। अत: मटियार में प्रोटीन का अधिशोषण (Adsorption) होकर क्ले जटिल बन जाता है।

अन्त में उपरोक्त सभी पदार्थों के अन्तर्मिश्रण से हुमस का निर्माण होता है। इस प्रकार विभिन्न मृदाओं में इन पदार्थों के अनुसार विभिन्न प्रकार का हुमस पाया जाता है। हुमस में लिपिड्स, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, लिगनिन और इनसे सम्बन्धित पदार्थ पाए जाते हैं। यह मृदाओं में मुख्य रूप से लिगनोप्रोटीनेट के कारण बनता है।

हुमस के मृदा उवरता में कार्य - हुमस का मृदा उर्वरता तथा पादप वृद्धि पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। हुमस का प्रधान महत्व पादप वृद्धि के लिए माध्यम के रूप में इसका मृदा पर प्रभाव है। हुमस के मृदा की उर्वरता में कार्य का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार किया जा सकता है -

1. हुमस मृदा के भौतिक गुणों पर अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। यह मृदा के कणों की रचना को सुधारता है जिसके कारण मृदा में वायु का संचार उचित रूप से होता है। यह मृदा कणों को बाँधता है। यह मृदा की जल धारण एवं ताप शोषण क्षमता को बढ़ाता है। यह मृदा की उभय प्रतिरोधन (Buffering) तथा धनायन विनिमय क्षमता को बढ़ाता है। यह मृदा में अम्लीयता तथा क्षारीयता की मात्रा को नियमित करता है। यह रेतीली मृदा और मटियार की भौतिक रचना को कृषि के लिए उपयुक्त बना देता है। इस प्रकार हुमस द्वारा मृदा का रंग, रचना तथा कणाकार आदि पौधों के लिए लाभदायक हो जाते हैं।
2. हुमस का मृदा पर रासायनिक प्रभाव भी पड़ता है। यह अपने अम्लीय गुण के प्रभाव से मृदा में उपस्थित पोटेशियम तथा फॉस्फोरस आदि के अघुलनशील खनिजों को घोलकर इन्हें पौधों के लिए प्राप्य रूप में प्रदान करता है। हुमस में क्षार धारण की क्षमता होती है। यह मृदा में उपस्थित पौधों के लिए वैषिक पदार्थों को उदासीन कर देता है। यह मटियार (क्ले) के साथ संयुक्त होकर एक शोषक जटिल (Absorbing Complex) बनाता है। मृदा के अधिकांश गुण इस जटिल पर निर्भर करते हैं।
3. हुमस पादक पोषण तत्वों का भण्डार है। जीवाणुओं द्वारा हुमस के अपघटन से CO_2, अमोनिया और अन्य सरल यौगिक बनते हैं। अमोनिया नाइट्रीकरण तथा मृदा में नाइट्रेट यौगिक बनाती है। इस प्रकार बने पदार्थों को पौधे अपने भोजन तथा वृद्धि के लिए ले लेते हैं।
4. हुमस मृदा की जैविक अवस्था को भी प्रभावित करता है। यह जीवाणुओं की वृद्धि के लिए उपयुक्त दशाएँ उत्पन्न करता है। इससे मृदा में अमोनीकरण, नाइट्रीकरण तथा विनाइट्रीकरण की क्रियाएँ सुचारू रूप से होती हैं। यह जड़ों आदि के उचित विकास में सहायक होता है।
5. ºयूमय मृदा को पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक अनेक हॉर्मोन प्रदान करता है।

अत: स्पष्ट है कि हुमस से मृदा की उर्वरा शक्ति में अत्यधिक महत्वपूर्ण परिवर्तन आ जाता है। इस प्रकार मृदा की उर्वरता बढ़ जाने से पौधों की वृद्धि पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है।

हुमस का भस्म विनिमय (Base Exchance) में कार्य - हुमस भस्म विनिमय द्वारा मृदा में आवश्यक **पोषक तत्वों की प्राप्यता** को बढ़ाता है। हुमस एक कार्बनिक कोलॉइड है जो क्ले की भाँति एक केन्द्रक (Acidoid) या मिसेल का कार्य करता है। इसके मिसेल में C, H, O, N, P तथा S आदि तत्व होते हैं। साधारणतया इसके तल पर ऋण विद्युत आवेश का अधिक सान्द्रण रहता है। H-हुमस H-क्ले की भाँति एक साधारण अम्ल के रूप में कार्य करती हैं। यह मृदा खनिजों से क्रिया करके उनके भस्मों का निष्कर्षण (Extration) कर लेता है। प्रतिस्थापित हो जाने पर भस्म ढीले रूप में अधिशोषित अवस्था में रहते हैं और पौधों को सरलता से प्राप्य हो जाते हैं।

$KAlSi_3O_8$ + H-हुमस $\longrightarrow$ $HAlSi_3O_8$ + K-हुमस

माइक्रोक्लाइन एसिड सिलिकेट (अधिशोषित K)

इसी प्रकार हुमस Ca^{++}, Mg^{++} तथा Na^{+} आदि धनायनों को भस्म विनिमय द्वारा अपने तल पर आकर्षित करता है और इनकी सक्रियता को बढ़ाता है। हुमस की धनायन विनिमय क्षमता क्ले खनिज पर होने वाली समस्त क्रियाओं की अपेक्षा अधिक होती है।

हुमस की प्रकृति (Nature) - हुमस के कण क्ले कणों के समान कोलॉइडी स्वभाव के होते हैं। लिगनोप्रोटीनेट्स, पोलीयूरोनाइड्स तथा क्ले-प्रोटीन जल मिसेल (Micelle) के समान काय करते हैं। मिसेल के अन्दर असंख्य ऋण विद्युत आवेश होते हैं। क्ले क्रिस्टल की रचना Si, O, Al तथा Fe करते हैं जबकि हुमस मिसेल की रचना C, H, O, N, S तथा P आदि करते हैं।

क्ले मिसेल की भाँति हुमस मिसेल भी एक आयनिक दोहरी परत बनाता है। भीतरी परत में असंख्य विद्युत आवेश होते हैं और बाहरी आयनिक परत में विभिन्न विनिमय योग्य धनायन्स (Ca^{++}, Mg^{++}, H^{+}, Na^{+} तथा K^{+} आदि) होते हैं।

हुमस के गुण

(i) हुमस भूरे या काले-भूरे रंग का एक बेरवेदार जटिल पदार्थ है।

(ii) यह अम्लीय तथा कोलॉइडी प्रकृति का होता है। इस पर ऋणात्मक आवेश होता है और यह द्विपरत (Double Layer) घटना प्रदर्शित करता है।

(iii) यह जल में लगभग घुलनशील होता है परन्तु इसका कुछ अंश जल में घुलकर कोलॉइडी घोल देता है। यह हल्के क्षार घोलों में घुल जाता है। यदि इस घोल में अम्ल मिला दें तो हुमस अवक्षिप्त हो जाता है।

(iv) यह एक स्थायी पदार्थ नहीं है और मृदा जीवाणुओं द्वारा अपघटित होता रहता है।

(v) इसमें कार्बन लगभग 58% और नाइट्रोजन 3 से 6% होती है।

(vi) इसमें कार्बन/नाइट्रोजन अनुपात लगभग 10:1 होता है।

(vii) इसमें धनायन विनिमय गुण क्ले से अधिक होता है।

(viii) यह जल का अधिशोषण (Adsorption) कर सकता है। इस कारण इसमें फूलने तथा सिकुड़ने का गुण आ जाता है।

(ix) इसकी धनायन क्षमता 150-300 मिली इक्वीवेलेन्ट (m.e.) प्रति 100 ग्राम हुमस होती है। अधिक धनायन विनिमय क्षमता होने से हुमस में अत्यधिक उभय प्रतिरोधन क्षमता (Buffering Capacity) होती है।

(x) इसमें सुघट्यता (Plasticity), आसंजन (Adhesion) तथा ससंजन (Cohesion) का गुण खनिज कोलॉइड्स की अपेक्षा कम होता है।

7.6 जीवांश पदार्थ के विच्छेदन को प्रभावित करने वाले कारक

कार्बनिक पदार्थ के अपघटन को प्रभावित करने वाले कारकों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार दिया जाता है -

(i) **पादप पदार्थों की प्रकृति** - युवा पौधें में परिपक्व (Mature) पौधों की अपेक्षा सेलुलोस, हेमीसेलुलोस तथा लिगनिन कम मात्रा में होते हैं। अत: युवा तथा सरल ऊतकों (Succulent Tissues) वाले पौधें का अपघटन बड़े (परिपक्व) पौधें की अपेक्षा शीघ्र होता है।

(ii) **ऑक्सीजन प्रदाय (Supply) -** मृदा जीवाणुओं की सक्रियता वायु में विद्यमान ऑक्सीजन की मात्रा पर निर्भर करती है। अत: मृदा में वायु अथवा ऑक्सीजन की मात्रा अधिक होने से प्राय: कार्बनिक पदार्थ का अपघटन शीघ होता है।

(iii) **नमी** - कार्बनिक पदार्थों का अपघटन 60 से 80% जल धारण क्षमता पर सबसे अधिक होता है। जिन मृदाओं में नमी कम होती है, उनमें पानी मिलाने से कार्बनिक पदार्थ के अपघटन की गति में वृद्धि हो जाती है। नमी की अधिकता में ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है जिससे जीवाणुओं की क्रियाशीलता कम होकर अपघटन कम होता है।

(iv) **तापक्रम** - कार्बनिक पदार्थों का अपघटन 5° सै0 पर भी होता है परन्तु ताप में वृद्धि से अपघटन की गति में वृद्धि होती है। अपघटन के लिए सर्वोपयुक्त तापक्रम 30° से 40° सै0 तक होता है। 30 सै0 से अधिक तापक्रम पर अपघटन अधिक ताप सहने वाले (Thermophillic) बैक्टीरिया, फन्जाई एवं एक्टीनोमाइसिटीज द्वारा ही होता है।

(v) **कार्बन नत्रजन अनुपात** - कार्बनिक पदार्थों में नाइट्रोजन की मात्रा अधिक अर्थात् C:N कम होने पर अपघटन अधिक होता है। इसके विपरीत नाइट्रोजन की मात्रा कम अर्थात् C:N अधिक होने पर अपघटन की गति कम हो जाती है।

(vi) **पी.एच.** - अधिकांश जीवाणु 7 पी.एच. पर क्रियाशील रहते हैं। अत: उदासीन मृदाओं पर कार्बनिक पदार्थ का अपघटन अधिक होता है। अम्लीय मृदाओं में चूना मिलाने से अपघटन की गति में वृद्धि हो जाती है।

(vii) **पोषक पदार्थों का प्रदाय** - मृदा में उर्वरक एवं घुलनशील खनिज लवण जैसे मैगनीशियम सल्फेट, कैलशियम कार्बोनेट तथा पोटेशियम सल्फेट आदि मिलाने से मृदा जीवाणुओं की क्रियाशीलता में वृद्धि हो जाती है। फलत: काबनिक पदार्थों का अपघटन अधिक होता है।

7.7 कार्बन/नाइट्रोजन अनुपात

मृदा में कार्बन का प्रमुख कार्य ऊर्जा प्रदान करना है और नाइट्रोजन एक मुख्य पादप पोषक तत्व है। अत: मृदा में प्राय: कार्बनिक कार्बन तथा नाइट्रोजन तत्वों की मात्रा ज्ञात की जाती है। मृदा में प्राप्त कार्बन तथा नाइट्रोजन की मात्राओं के अनुपात को **कार्बन/नाइट्रोजन अनुपात** कहते हैं।

$$\text{C/N अनुपात} = \frac{\text{मृदा में प्राप्त कार्बन की कुल मात्रा}}{\text{मृदा में प्राप्त कुल नाइट्रोजन की मात्रा}}$$

कार्बन/नाइट्रोजन अनुपात परिवर्तनशील होता है। मृदा में यह अनुपात लगभग 10 होता है। पौधों के डन्ठल आदि ताजे अवशेष पदार्थ में नाइट्रोजन की अपेक्षा कार्बन की अधिक मात्रा होने के कारण यह अनुपात 40:1 के लगभग रहता है। फलीदार फसलों तथा गोबर (F.Y.M.) में C/N अनुपात 20:1 से 30:1 तक पाया जाता है। गेहूँ, जौ या जई के भूसे में यह अनुपात 80:1 या इससे अधिक होता है। फलीदार श्रेणी के पौधों में C/N अनुपात कम हाने के कारण यह है कि उनमें नाइट्रोजन की मात्रा अधिक रहती है।

मृदा का C/N अनुपात मृदा के कणाकार, रचना तथा जलवायु आदि पर निर्भर करता है। क्ले में नाइट्रोजन अधिक रहती है। कठिनाई से जल निकास होने वाली मृदा में जल शीघ्र निकल जाने वाली मृदा की अपेक्षा नाइट्रोजन अधिक रहती है। वर्षा की मात्रा समान रहने पर ऊष्ण जलवायु की अपेक्षा शीत जलवायु में यह अनुपात अधिक होता है क्योंकि ऊष्ण जलवायु में अपघटन की क्रिया द्वारा कार्बनिक कार्बन तथा नाइट्रोजन की हानि अधिक होने की सम्भावना होती है।

C/N का महत्व

मृदा में डाले गए ताजे कार्बनिक पदाथ से C/N अनुपात अधिक होता है। मृदा में जीवाणुओं द्वारा काबनिक पदार्थ के अपघटन से कार्बन CO_2 में परिवर्तित होकर वायु में मिल जाती है। उत्पन्न ऊर्जा का उपयोग सूक्ष्म जीवाणु अपने पोषण के लिए कर अपनी संख्या में वृद्धि करते हैं। इस प्रकार C/N अनुपात कम हो जाता है। नाइट्रोजन जीवाणुओं तथा पौधों दोनों का खाद्य पदार्थ है। इस कारण मृदा में पौधों और जीवाणुओं के बीच नाइट्रोजन प्राप्त करने के लिए एक प्रतियोगिता (Competition) चलती रहती है और पौधों को खाद्य की कमी हो जाती है। इसका यह तात्पर्य है कि यदि मृदा में C/N अनुपात अधिक हो तो इसमें नाइट्रोजन की कमी रहेगी और पौधों के बीज पनप नहीं सकेंगे क्योंकि अधिक CO_2 की उपस्थिति में मृदा में अम्लता होकर बीज को हानि पहुँचा सकती है। इससे स्पष्ट है कि C/N अनुपात पौधों के जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

मृदा के कार्बनिक पदार्थ के पूर्ण अपघटन के उपरान्त हुमस का निर्माण होता है जिसमें C/N अनुपात 10 के लगभग रहता है। इस अवस्था में बीज पनप सकते हैं और पौधों की वृद्धि सुगमतापूर्वक हो सकती है। अत: मृदा के लिए यह अवस्था एक आदर्श अवस्था होती है।

यदि मृदा के C/N का अनुपात अधिक हो तो उसमें नाइट्रोजनयुक्त खाद देने की आवश्यकता होती है। C/N का अनुपात जब तक 15 के लगभग न हो जाए तब तक किसी फसल के बीज को बोना निरर्थक होता है। यदि मृदा में यह अनुपात 33 से अधिक होता है तो जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि न होने से वे नाइट्रोजन का अधिक उपयोग करने लगते हैं। ऐसी अवस्था पौधों के लिए अनुकूल नहीं होती। जब यह अनुपात घटकर 17 हो जाता है तब पौधों को नाइट्रोजन मिलने लगती है।

7.8 मृदा में कार्बनिक पदार्थ का अपघटन

पौधों एवं जन्तुओं के अवशेषों के रूप में विद्यमान मृदा के कार्बनिक पदार्थ के विभिन्न जीवों द्वारा सरल अकार्बनिक तत्वों अथवा यौगिकों में परिवर्तन होने की क्रिया को मृदा के कार्बनिक पदार्थ का अपघटन कहते हैं। मृदा में कार्बनिक पदार्थों के अपघटन की क्रिया कए दहन (Combustion) की क्रिया है। प्राय: सभी पदार्थ ऑक्सीकरण द्वारा साधारण पदार्थों में परिवर्तित हो जाते हैं। अन्त में वायुजीवी (Aerobic) जीवाणुओं द्वारा कार्बन के ऑक्सीकरण से कार्बन डाइ-ऑक्साइड और हाइड्रोजन के ऑक्सीकरण से पानी की उत्पत्ति होती है।

(क) कार्बोहाइड्रेट्स का अपघटन

(i) **सरल शर्करा (Simple Sugars) का अपघटन** - फंजाई की क्रिया द्वारा ग्लूकोस अपघटित होकर CO_2, पानी तथा अन्य यौगिक बनाता है।

$$C_6H_{12}O_6 + 1\frac{1}{2}O_2 \longrightarrow C_6H_8O_7 + 2H_2O$$
ग्लूकोस — सिट्रिक अम्ल

$$C_6H_{12}O_6 + 4\frac{1}{2}O_2 \longrightarrow 3(COOH)_2 + 3H_2O$$
द्राक्षशर्करा — ऑक्जैलिक अम्ल

$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \longrightarrow 6H_2O + 6CO_2$$

अवायुजीवी (Anaerobic) बैक्टीरियाओं तथा यीस्ट की क्रिया द्वारा ग्लूकोस के अपघटन में लैक्टिक अम्ल, ब्यूटिरिक अम्ल, CO_2 तथा H_2 आदि यौगिक बनते हैं।

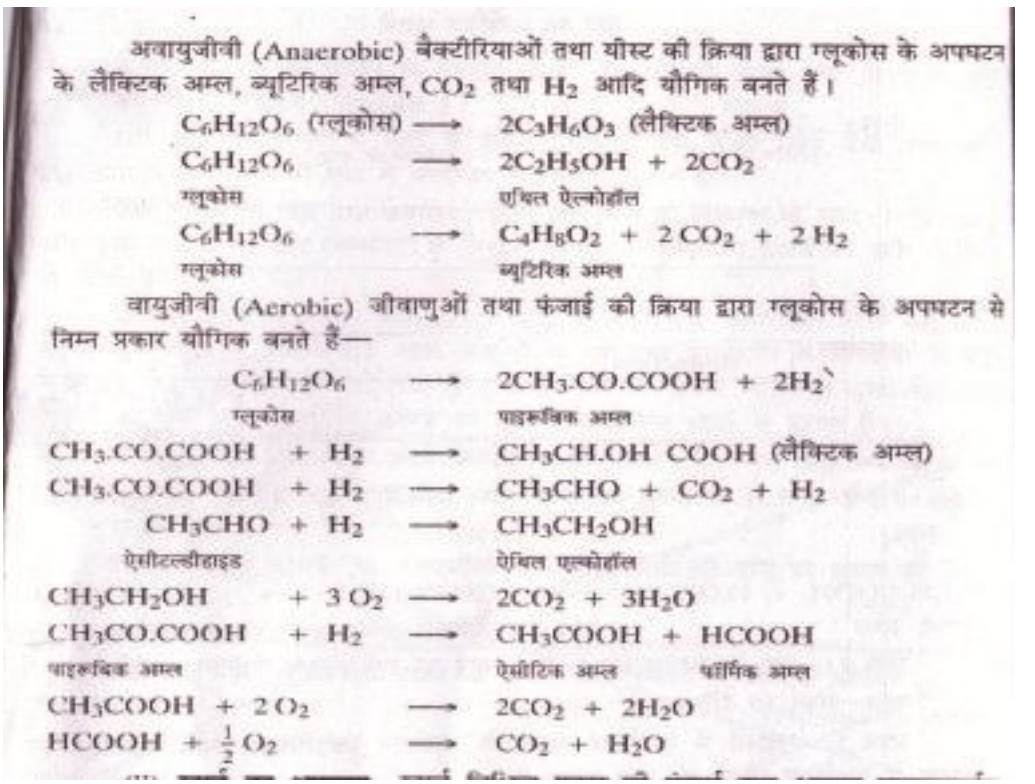

अवायुजीवी (Anaerobic) बैक्टीरियाओं तथा यीस्ट की क्रिया द्वारा ग्लूकोस के अपघटन के लैक्टिक अम्ल, ब्यूटिरिक अम्ल, CO_2 तथा H_2 आदि यौगिक बनते हैं।

$C_6H_{12}O_6$ (ग्लूकोस) $\longrightarrow 2C_3H_6O_3$ (लैक्टिक अम्ल)

$C_6H_{12}O_6 \longrightarrow 2C_2H_5OH + 2CO_2$
ग्लूकोस — एथिल ऐल्कोहॉल

$C_6H_{12}O_6 \longrightarrow C_4H_8O_2 + 2CO_2 + 2H_2$
ग्लूकोस — ब्यूटिरिक अम्ल

वायुजीवी (Aerobic) जीवाणुओं तथा फंजाई की क्रिया द्वारा ग्लूकोस के अपघटन से निम्न प्रकार यौगिक बनते हैं—

$C_6H_{12}O_6 \longrightarrow 2CH_3.CO.COOH + 2H_2$
ग्लूकोस — पाइरुविक अम्ल

$CH_3.CO.COOH + H_2 \longrightarrow CH_3CH.OH\ COOH$ (लैक्टिक अम्ल)

$CH_3.CO.COOH + H_2 \longrightarrow CH_3CHO + CO_2 + H_2$

$CH_3CHO + H_2 \longrightarrow CH_3CH_2OH$
ऐसीटल्डीहाइड — ऐथिल एल्कोहॉल

$CH_3CH_2OH + 3O_2 \longrightarrow 2CO_2 + 3H_2O$

$CH_3CO.COOH + H_2 \longrightarrow CH_3COOH + HCOOH$
पाइरुविक अम्ल — ऐसीटिक अम्ल — फॉर्मिक अम्ल

$CH_3COOH + 2O_2 \longrightarrow 2CO_2 + 2H_2O$

$HCOOH + \frac{1}{2}O_2 \longrightarrow CO_2 + H_2O$

(ii) **स्टार्च का अपघटन** - स्टार्च विभिन्न प्रकार की फंजाई द्वारा अत्यन्त सुगमतापूर्वक अपघटित हो जाता है। स्टार्च पौधों द्वारा मृदा में मिल जाता है जिस पर एपरगिलस (Aspergilus) नामक फंजाई अधिक सक्रिय होती है। अवायुजीवी जीवाणु भी मृदा में स्थित स्टार्च का जल अपघटन शीघ्रतापूर्वक कर देते हैं। डायस्टेज एन्जाइम द्वारा स्टार्च का जल अपघटन (Hydrolysis) होकर माल्टोस बनता है जो माल्टेज एन्जाइम द्वारा ग्लूकोस में जल अपघटित हो जाता है।

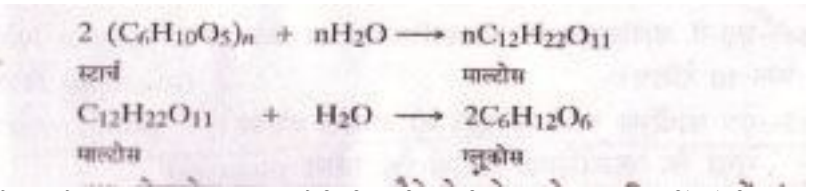

(iii) **सेलुलोस का अपघटन** - पौधे सेलुलोस को अत्यधिक मात्रा में संश्लेषित करते हैं। जब पौधो मृदा में मिल जाता है तो मृदा में सेलुलोस अन्य पदार्थों की अपेक्षा अधिक मात्रा में पाया जाता है। सेलुलोस रासायनिक ऑक्सीकरण क्रिया का प्रतिरोध करता है और अत्यन्त कठिनता से मृदा में अपघटित होता है। इसके अपघटन में वायुजीवी जीवाणु, अवायुजीवी जीवाणु, एक्टीनोमाइसिटेस, फंजाई तथा प्रोटोजोआ आदि अत्यन्त सक्रिय होते हैं। मृदा में स्थित विभिन्न जीव निम्न तापक्रमों पर सेलुलोस का अपघटन अत्यधिक करते हैं -

वायुजीवी (ऑक्सीजन जीवी) जीवाणु	20-28° सै0
अवायुजीवी (ऑक्सीजन इतर जीवी) जीवाणु	37° सै0
उष्णता प्रिय (Thermophyllic) जीवाणु	50-65° सै0

जीवाणुओं द्वारा उत्पादित एक पकार का कार्बनिक प्रोटीन के समान पदार्थ एन्जाइम सेलुलोस को सुगमतापूर्वक अपघटित कर साधारण शर्करा में अपघटित करता है। अवायुजीवी जीवाणु सेलुलोस को मृदा में अपघटित कर कार्बनिक अम्ल तथा ऐल्कोहॉल में परिणत कर देते हैं।

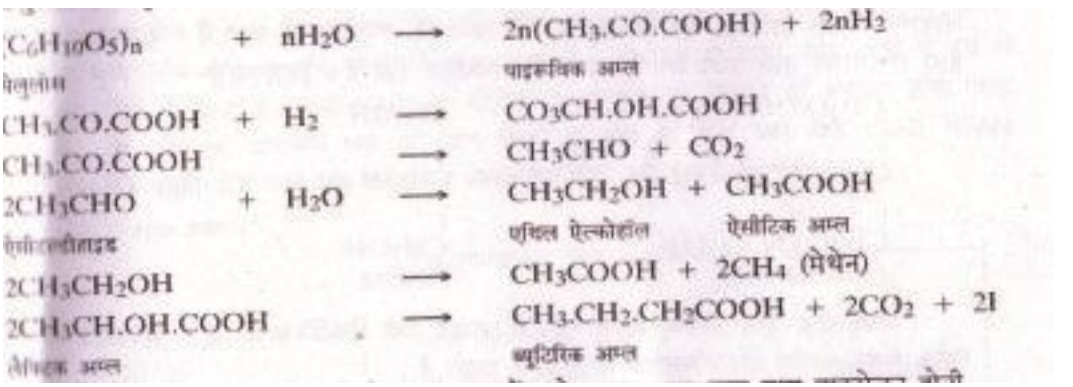

सेलुलोस का अपघटन करने के लिए मृदा में यथेष्ट ताप, जल, वायु तथा नाइट्रोजन होनी चाहिए। प्राय: 6.1 से 9.5 पी.एच. पर जीवाणु जीवित रहते हैं और सेलुलोस को अधिक अपघटित करते हैं।

(iv) **हैमीसेलुलोस का अपघटन** - मृदा में हैमीसेलुलोस भी पौधों से प्राप्त होता है। पौधों के अवशेष मृदा में मिलाने पर इनका हैमीसेलुलोस आरम्भ में शीघता से परन्तु बाद में धीरे-धीरे

अपघटित होता है। हैमीसेलुलोस के जल अपघटन से विभिन्न वर्कशराएँ उत्पन्न होती हैं जो मृदा के जीवाणुओं तथा फंजाई का भोजन होती हैं। जीवाणुओं से प्राप्त हैमीसेलुलोसेस (Hemicellulosase) एन्जाइम, हैमीसेलुलोस को विभिन्न सरल शर्कराओं में जल अपघटित कर देते हैं।

$$(C_5H_8O_4)_n + nH_2O \longrightarrow (C_5H_{10}O_5)_n$$

$$(C_5H_8O_4)_n + nH_2O \longrightarrow nC_6H_{12}O_6$$

इस प्रकार पेन्टोज तथा हैक्सोज सरल शर्कराएँ और पोलीयूरोनाइड्स बनते हैं। पोलीयूरोनाइड् के जल अपघटन से शर्करा अम्ल तथा शर्करा एवं अम्लों का मिश्रण प्राप्त होता है।

(ख) लिगनिन का अपघटन

लिगनिन पौधों के जटिल पदार्थ होते हैं। इनकी रचना में विशेष रूप से बैंजोल चक्र (Ring) होता है जिसके साथ विशेष सह श्रृंखलाएँ (Side Chains) जुड़ी रहती हैं। लिगनिन का अपघटन अत्यन्त कठिनाई एवं देरी से होता है। इसका अपघटन फंजाई तथा बैक्टीरियाओं द्वारा शीघ्र नहीं होता। बेसीडोमाइसिटेस के एक्टीनाइसिटेस आदि समूह इसका अपघटन करते हैं। मृदा के कार्बनिक पदार्थ के अपघटन में लिगनिन पदार्थ एकत्रित हो जाते हैं क्योंकि ये कार्बोहाइड्रेट्स तथा प्रोटीन की अपेक्षा अत्यन्त कम अपघटित होते हैं। इस प्रकार मृदा के हुमस की रचना में लिगनिन प्रमुख रूप से भाग लेते हैं।

(ग) तेल, वसा तथा मोम पदार्थों का अपघटन

तेल तथा वसा उच्च वसीय अम्लों (Higher fatty acids) के ग्लिसरोल के साथ एस्टर्स होते हैं। इनका अपघटन वायुजीवी दशाओं में होता है। तेल व वसा आदि मृदा में जीवाणुओं द्वारा उत्पादित लिपेज एन्जाइम की क्रिया से अपघटित हो जाते हैं। ये जल अपघटन द्वारा ग्लिसरोल तथा उच्च वसीय अम्ल में अपघटित होते हैं। उदाहरणार्थ -

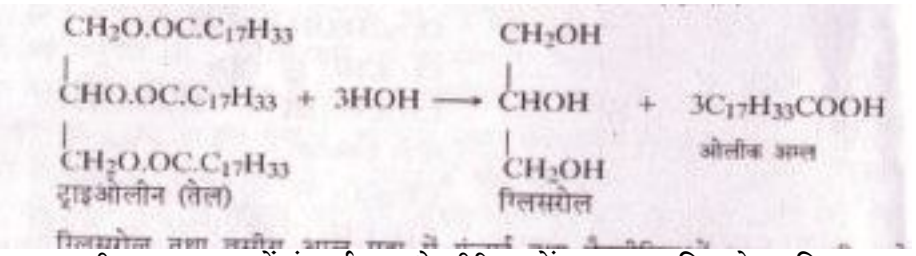

ग्लिसरोल तथा वसीय अम्ल मृदा में फंजाई तथा बैक्टीरियाओं द्वारा अपघटित होकर निम्न अम्ल, कार्बन डाईऑक्साइड तथा पानी बनाते हैं।

(घ) प्रोटीन का अपघटन

पौधों में प्रोटीन 1% से 20% तक होती है। प्रोटीन में C, N, O तथा H आदि तत्व विभिन्न मात्रा में विद्यमान होते हैं। मृदा में प्रोटीन का अपघटन स्ट्रेप्टोमाइसेज जीवाणु तथा फंजाई आदि द्वारा होता है। जीवाणुओं तथा विभिन्न जीवित पदार्थों द्वारा मृदा में प्रोटीन का अपघटन होकर अन्य पदार्थों के साथ अमोनिया भी निकलती है।

(ड़) अप्रोटीन प्रकृति के नाइट्रोजनयुक्त पदार्थों का अपघटन

पौधों एवं जीव-जन्तुओं में पोटीन के अतिरिक्त सायनेमाइड, यूरिया, हिप्यूरिक अम्ल, ऐल्कालॉइड्स तथा प्यूरीन्स आदि नाइट्रोजनीय पदार्थ विद्यमान होते हैं। ये यौगिक भी मृदा में जीवाणुओं द्वारा अपघटित होते हैं। इनका अपघटन जीवाणुओं की प्रकृति तथा अन्य परिस्थितियों पर निर्भर करता है। सायनेमाइड पहले यूरिया में परिवर्तित होकर अमोनिया बनाता है। यूरिया का अपघटन यूरियेज एन्जाइम द्वारा होता है।

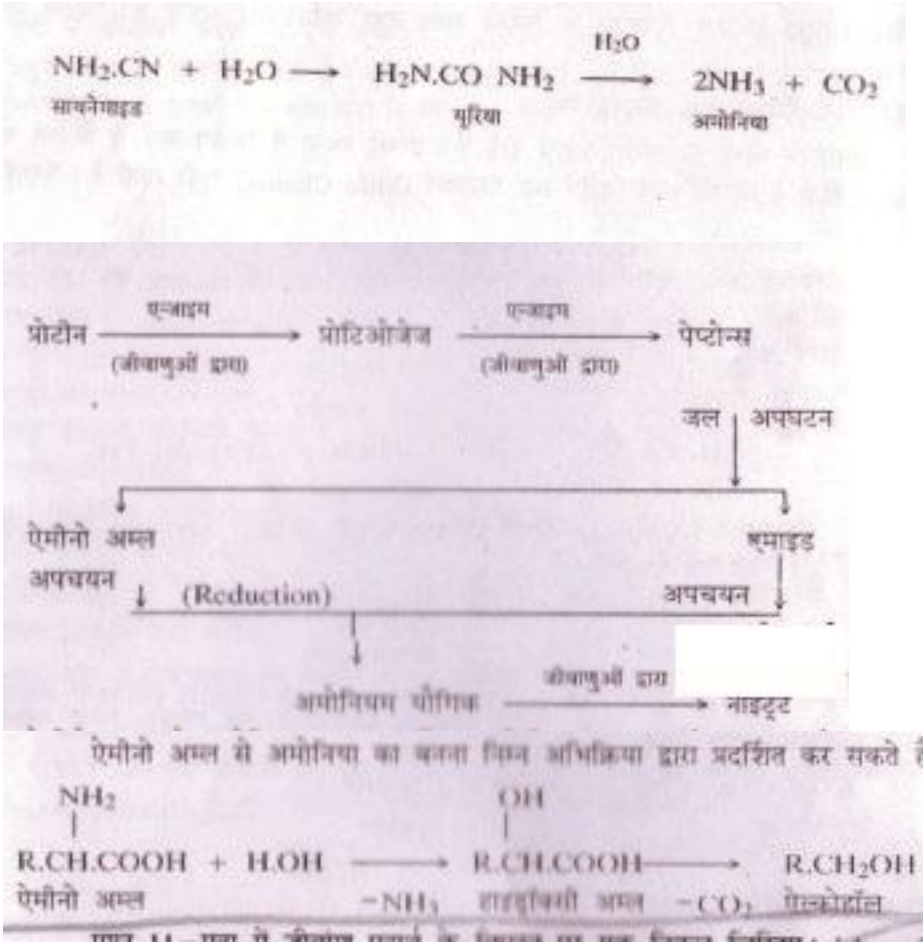

7.9 मृदा के कार्बनिक पदार्थ के स्रोत

मृदा के कार्बनिक पदार्थ के स्रोत पौधे एवं जन्तु दोनों ही हैं। पेड़-पौधे मृदा कार्बनिक पदार्थ के मूल स्रोत होते हैं जबकि जीव-जन्तु द्वितीयक स्रोत होते हैं।

1. **पादप स्रोत (Plant Sources)** - ये निम्नलिखित हैं -

   (i) पेड़-पौधे एवं फसलों के अवशेष - प्राकृतिक दशाओं में पेड़-पौधों, घास, झाड़ियाँ तथा अन्य स्थानीय पौधों से मृदा में कार्बनिक पदार्थ पर्याप्त मात्रा में मिलता रहता है। खेतों में उगाई गयी

फसलों को काटने के पश्चात् उनकी जड़ें, पत्तियों, डंठल तथा थोड़ा सा तना आदि अवशेष भी मृदा में मिल जाते हैं।

(ii) हरी खाद - मृदा में खाद के रूप में मिलायी जाने वाली सनई, ढैंचा तथा अन्य हरी खाद वाली फसलें भी मृदा में कार्बनिक पदार्थ का साधन हैं।

(iii) गोबर की खाद तथा कम्पोस्ट - गोबर तथा फार्म की बिछावन की खाद (F.Y.M.) और कूड़ा-करकट की खाद (कम्पोस्ट) के मिलाने पर मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि हो जाती है।

2. **जन्तु स्रोत (Animal Sources)** - मृदा के बाहर तथा अन्दर रहने वाले पशु, पक्षी, मनुष्य, सूक्ष्म जीवाणु, कीड़े-मकोड़े आदि जन्तुओं के मल तथा मृत शरीर के अवशेषों के मृदा में मिलने पर कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि हो जाती है। इसके अतिरिक्त सूखा खून तथा हड्डियों का चूरा आदि कार्बनिक उर्वरक भी मृदा के कार्बनिक पदार्थ के साधन हैं।

7.10 सारांश

हरे पौधों के तन्तुओं में लगभग 75% जल और शेष 25% शुष्क पदार्थ होता है। इस शुष्क पदार्थ में भार की दृष्टि से लगभग 90% कार्बन, हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन होते हैं। शेष 10% अंश में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, गंधक तथा कैलशियम आदि तत्व होते हैं।मृदा के कार्बनिक पदार्थ के मुख्य कार्य हैं मृदा कटाव कम करना, वायु संचार तथा मृदा कणों का बाँधना,पौधों की जड़ों का विकास करना, जल धारण शक्ति बढाना, पादप पोषक प्रदान करना, मृदा के सूक्ष्म जीवाणुओं तथा केचुओं आदि की वृद्धि, अम्लीय मृदाओं में फॉस्फोरस की उपलब्धि पर प्रभाव, मृदा में क्षारीयता कम करना, वायु द्वारा मृदा अपरदन कम करना, जल का क्षय कम करना, मृदा ताप पर प्रभाव, मृदाओं के उभय प्रतिरोधन गुण पर प्रभाव, आदि

7.11 अभ्यास प्रश्न

1. फलीदार फसलों तथा गोबर (F.Y.M.) में C/N अनुपात कितना पाया जाता है?

(अ) 10:1 से 20:1 (ब) 20:1 से 30:1

(स) 30:1 से 40:1 (द) 40:1 से 50:1 **(ब)**

2. हरे पौधों के तन्तुओं में लगभग कितना प्रतिशत जल होता है?

(अ) 75% (ब) 25%

(स) 50% (द) 100 % **(अ)**

3. अवायुजीवी (Anaerobic) बैक्टीरियाओं तथा यीस्ट की क्रिया द्वारा ग्लूकोस के अपघटन में निम्न में से क्या बनता हैं?

(अ) लैक्टिक अम्ल (ब) ब्यूटिरिक अम्ल

(स) CO_2 (द) उपरोक्त सभी **(द)**

4. मृदा में कार्बनिक पदार्थ के क्या कार्य होते हैं?

5. मृदा में कार्बनिक पदार्थ का अपघटन समझाए?

7.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

- यादव, एस.पी.एस. 2007. ऊसर भूमियों को उपजाऊ बनाएं. विश्व कृषि संचार, जून-2007.
- शर्मा, ओ.पी., इन्टोदिया, एस.के., शर्मा, एस.एल. एवं नकेला, एन.एस. 2009. शस्य विज्ञान (कृषि वर्ग), माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर.
- चौधरी, जे. पी., 2000. मृदा विज्ञान : खाद एवं उर्वरक. भारती पब्लिकेशन, बडोत (बागपत).
- जाट, बी.एल. 2012. क्षारीय व लवणीय भूमि सुधार. विश्व कृषि संचार, मई- 2012.

इकाई - 8

मृदा जल, मृदा वायु तथा मृदा ताप

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 मृदा जल

8.3 मृदा वायु

8.4 मृदा ताप

8.5 सारांश

8.6 अभ्यास प्रश्न

8.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

8.0 उद्देश्य

इस अध्याय से आप निम्न ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे:-

- मृदा जल के रूप
- मृदा आर्द्रता को मापने की विधियाँ
- मृदा में जल का संचालन
- मृदा वायु का संगठन
- मृदा को ताप के साधन
- मृदा के तापीय गुणों को प्रभावित करने वाले कारक

8.1 प्रस्तावना

पौधों तथा फसलों की वृद्धि के लिए जल एक अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण पदार्थ है। जल स्वयं एक पोषक पदार्थ नहीं है अपितु यह अन्य पोषक तत्वों को घोलकर पौधों में पहुँचाने के लिए एक उपयुक्त माध्यम है। यह पौधों में 75% से भी अधिक मात्रा में पाया जाने वाला अंग है। मृदा में वायु का रहना अत्यन्त आवश्यक है। मृदा की वायु में वायुमण्डलीय वायु की भाँति प्रधानत: ऑक्सीजन, नाइट्रोजन तथा कार्बन डाइऑक्साइड गैसें होती हैं। इसमें अमोनिया भी अल्प मात्रा में होती हैं। पौधों का खेत में अंकुरित होना, बढ़ना, पत्तों का बढ़ना, फलना तथा फूल लगना और मृदा में सूक्ष्म जीवों का जीवित रहना तापक्रम पर निर्भर है। ये प्राकृतिक जीवन क्रियाएँ एक निर्धारित तापक्रम पर ही होती हैं। तापक्रम बहुत कम या अधिक होने पर ये क्रियाएँ कम हो जाती हैं।

8.2 मृदा जल (Soil Water)

8.2.1 जल वैज्ञानिक चक्र (The Hydrologic Cycle)

प्रकृति में जल एक क्रमिक चक्र की भाँति चलता रहता है। यह समुद्र से बादल, बादल से भूमि और भूमि से पुन: समुद्र में चला जाता है। यह द्रव से वाष्प और वाष्प से द्रव में परिवर्तित हो जाता है। ऐसा प्रकृति के भौतिक एवं रासायनिक नियमों के अनुसार होता रहता है। जल के इस संचालन चक्र को **जल वैज्ञानिक चक्र** या **मृदा जल चक्र** (Soil Water Cycle) कहते हैं। जल चक्र को निम्न प्रकार प्रदर्शित कर सकते हैं -

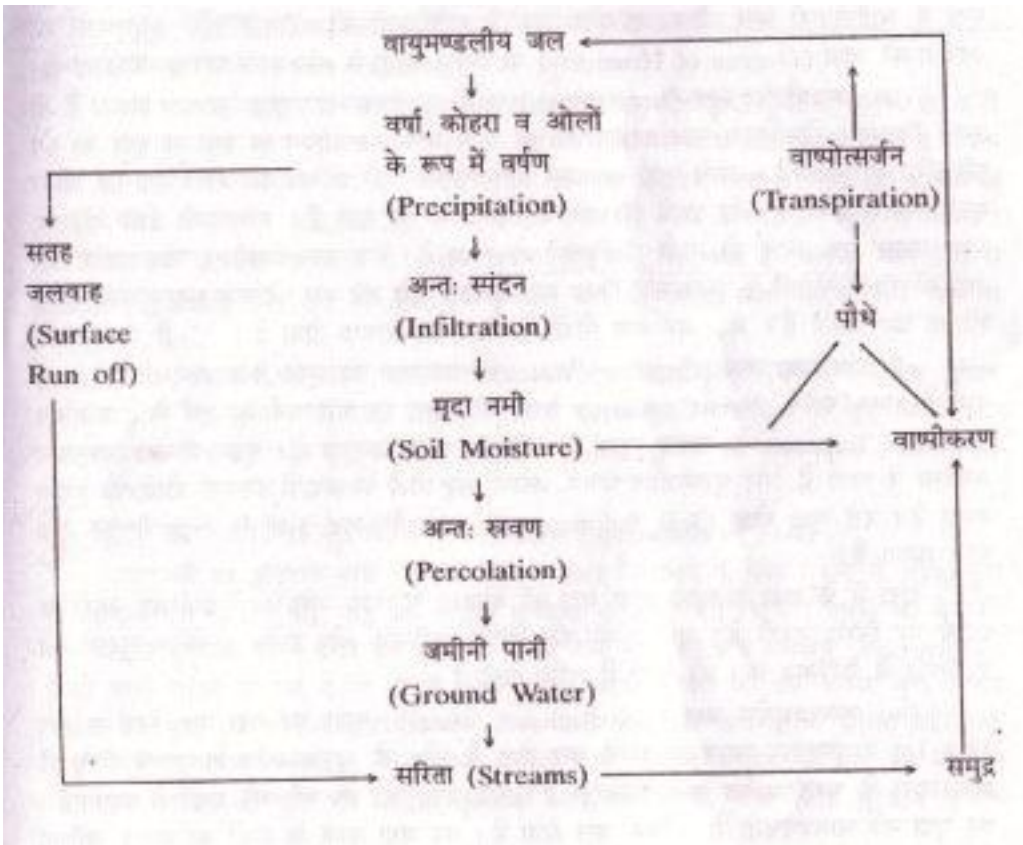

8.2.2 मृदा जल के रूप (Forms of Soil Water)

मृदा में जल विभिन्न रूपों में रहता है। मृदा जल का **भौतिक वर्गीकरण** निम्न प्रकार किया जा सकता है -

(i) आर्द्रताग्राही जल (Hygroscopic Water)

(ii) अन्त:शोषित जल (Imbibitional Water)

(iii) कणान्तरिक या केशिका जल (Capillary Water)

(iv) गुरूत्वाकर्षण जल (Gravitational Water)

(i) **आर्द्रताग्राही जल (Hygroscopic Water)** - शुष्क मृदा वायुमण्डल से नमी शोषित कर जल ग्रहण कर लेती है। इस जल को **आर्द्रताग्राही जल** कहते हैं। यह जल मृदा कणों की रचना का अंग बन जाता है। यह जल द्रव अवस्था में प्राप्त नहीं होता परन्तु नमी के रूप में मृदा कणों के साथ संयुक्त रहता है। यही कारण है कि यह पौधों को प्राप्त नहीं हो पाता। मृदा में आर्द्रताग्राही जल प्रतिशतता मुख्य रूप से मृदा कणों की महीनता और वायुमण्डल की आर्द्रता की मात्रा (Degree of Humidity) पर निर्भर करती है और इसके समानुपाती होती है।

(ii) **अन्त:शोषित जल (Imbibitional Water)** - यह जल शुष्क मृदा पर पड़ता है तो उसमें विद्यमान कोलॉइड्स जल का शोषण कर फूल जाते हैं। शोषण के उपरान्त मृदा का रंग परिवर्तित हो जाता है। उसमें कालापन और चिपकने की शक्ति आ जाती है। इस प्रकार मृदा लसदार होती है और उसमें खिंचाव व तनाव भी आ जाते हैं। यह क्रिया उसी भाँति है जिस प्रकार एक स्पंज को पानी में भिगोने से होता है। यह जल किसी यान्त्रिक शक्ति के द्वारा कोलॉइडी पदार्थों से पृथक नहीं किया जा सकता। पौधे इस जल को जड़ द्वारा सुगमतापूर्वक शोषित कर सकते हैं। अत: यह जल पौधों के लिए लाभदायक होता है।

(iii) **कणान्तरिक या केशिका जल (Capillary Water)** - वह जल जो सूक्ष्म केशिका-रन्ध्रों (Pores) तथा केशिका-विहीन (Non-Capillary) रन्ध्रों की सतह पर जल पर्त के रूप में तल तनाव (Surface Tension) के कारण रहता है, **केशिका जल** कहलाता है। मृदा का यह जल द्रव अवस्था में रहता है और घुलनशील पोषक पदार्थों को घोल के रूप में रखकर पौधों को प्रदान करता है। इसे **मृदा घोल** (Soil Solution) भी कहते हैं। यह 2.7 से 4.5 पी.एफ. तक कार्य करता है।

मृदा में केशिका जल की मात्रा मृदा की बनावट व रचना और इसमें उपस्थित कार्बनिक पदार्थ पर निर्भर करती है। मृदा कणों की अधिक महीनता और इसमें कार्बनिक पदार्थ की उपस्थिति में केशिका जल की मात्रा में वृद्धि होती है।

(iv) **गुरूत्वाकर्षण जल (Gravitational Water)** - मृदा का वह जल, जिसका तल तनाव 1/3 वायुमण्डल दबाव या इससे कम होता है और जो गुरूत्वाकर्षण के कारण नीचे की ओर रहता है, **गुरूत्वाकर्षण जल** कहलाता है। यह जल मृदा के बड़े-बड़े रन्ध्रों में रहता है। यह मृदा की आवश्यकता से अधिक जल होता है। यह मृदा कणों के रन्ध्रों का सबसे अधिक स्थान घेरकर इनकी वायु को बाहर निकाल देता है जिससे ऑक्सीजन की कमी हो जाती है। ऑक्सीजन के अभाव में ऑक्सीजन सम्बन्धी सभी क्रियाएँ रूक जाती हैं। इस पानी की अधिकता में बहुत सी रासायनिक और जैविक क्रियाएँ धीमी पड़ जाती हैं। इन दशाओं में पौधों की वृद्धि रूक जाती है। इस पानी के साथ मृदा में स्थित विभिन्न पोषक पदार्थ अधिक मात्रा में घुलकर बह जाते हैं, जिससे मृदा की उर्वरता कम हो जाती है।

जैविक **(Biological)** वर्गीकरण के आधार पर मृदा जल को निम्न तीन भागों में वर्गीकृत किया जाता है

-

(i) **आवश्यकता से अधिक जल** (Superfluous Water)

(ii) **प्राप्य जल** (Available Water)

(iii) **अप्राप्य जल** (Unavailable Water)

प्राप्य जल - मुरझान गुणांक (Wilting coefficient) तथा क्षेत्र क्षमता (Field capacity) के बीच जल की जो मात्रा होती है उसे **प्राप्य जल** कहते हैं। यह जल पौधों को प्राप्य हो जाता है।

8.2.3 मृदा जल का पौधों की वृद्धि से सम्बन्ध

पौधों तथा फसलों की वृद्धि के लिए जल एक अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण पदार्थ है। जल स्वयं एक पोषक पदार्थ नहीं है अपितु यह अन्य पोषक तत्वों को घोलकर पौधों में पहुँचाने के लिए एक उपयुक्त माध्यम है। यह पौधों में 75% से भी अधिक मात्रा में पाया जाने वाला अंग है। वास्तव में पौधों की रचना कोलॉइडी रूप में होती है जिसमें जल द्रव अवस्था में होता है।

पौधों में जड़ों द्वारा जल का शोषण परासरण (Osmosis) द्वारा होता है। इसके लिए जड़ों को कोशा रस (Cell Sap) की सान्द्रता मृदा घोल की सान्द्रता से अधिक होनी चाहिए अन्यथा जल परासरण क्रिया कोशा रस से मृदा घोल की ओर होने लगेगी। जल वरासरण में पौधों की जड़ों द्वारा मृदा घोल अन्दर नहीं जाता किन्तु शुद्ध जल ही प्रवेश करता है। मृदा घोल में पोषक शोषण के लिए उपयुक्त दशाओं में होने चाहिएँ। पोषक खनिज प्राय: घोल के रूप में ही पौधों की जड़ों की झिल्ली (Membrane) में प्रवेश करते हैं।

आर्द्रताग्राही जल अत्यन्त पतली झिल्ली के रूप में मृदा स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं घूम सकता। भाप बनने या जमने में इसका चलना-फिरना दिखाई देता है। अचल होने के कारण यह मृदा की जैविक अभिक्रियाओं में बहुत कम भाग लेता है। यह द्रव अवस्था में नहीं रहता परन्तु नमी के रूप में मृदा कणों के साथ संयुक्त रहता है। अत: यह पौधों को प्राप्त नहीं होता और कृषि की दृष्टि से इस जल का कोई महत्व नहीं है।

अन्त:शोषित जल मृदा कोलॉइड पर शोषित जल होता है। पौधे इस जल को जड़ द्वारा सुगमतापूर्वक शोषित कर सकते हैं। अत: यह जल पौधों के लिए लाभकारी होता है।

केशिका जल द्रव अवस्था में रहता है और घुलनशील पोषक को घोल के रूप में रखकर पौधों को प्रदान करता है। इसे **मृदा घोल** कहते हैं। केशिका गति (Capillary Movement) से जल पौधों द्वारा शोषित हुए जल के स्थान पर आ जाता है तो पोषक धरातल पर पौधों के समीप आ जाते हैं। ऐसा ग्रीष्म ऋतु में जल के वाष्पीकरण के परिणामस्वरूप भी हो जाता है। इस प्रकार मृदा जल द्वारा पोषक धरातल पर पौधों की जड़ों के समीप आ जाने से फसल की वृद्धि के समय पर्याप्त भोजन प्राप्त हो जाता है। वर्षा में ये एकत्रित पोषक ड्रेनेज द्वारा बह जाने से पोषकों की भारी हानि हो जाती है।

गुरूत्वाकर्षण जल मृदा कणों के रन्ध्रों का सबसे अधिक स्थान घेरता है। इससे वायु निकल जाने पर ऑक्सीजन की कमी हो जाती है और ऑक्सीजन सम्बन्धी सभी अभिक्रियाएँ रूक जाती हैं। इन दशाओं में पौधों की वृद्धि रूक जाती है। इस पानी के साथ मृदा में स्थित विभिन्न पोषक पदार्थ अधिक मात्रा में घुलकर बह जाते हैं। इस प्रकार पोषकों के नष्ट हो जाने से मृदा उर्वरता कम हो जाती है।

पौध द्वारा पोषित जल हरी पत्तियों द्वारा वाष्प में परिवर्तित होकर बाहर निकल जाता है। इस क्रिया को वाष्पोत्सर्जन (Transpiration) कहते हैं। यह क्रिया पौधों को जीवित रखती है। इस क्रिया द्वारा पौधे जल प्राप्त करते हैं और उनके प्रत्येक अंग में जल संचालित होता है। अत: स्पष्ट है कि फसल (पौधों) की वृद्धि के लिए जल एक अत्यन्त उपयोगी पदार्थ है।

पी-एफ (pF) - मृदा कणों और जल अणुओं के बीच आकर्षण रहता है। मृदा कणों के चारों ओर उपस्थित जल को इनसे पृथक करने के लिए उतने ही बल से कुछ अधिक बल लगाना पड़ता है जितनी की आकर्षण शक्ति से वे परस्पर संयुक्त होते हैं। जल को इस प्रकार पृथक करने से जल परत (Film) जितनी पतली हो जाती है उतना ही अधिक बल मृदा कणों में लगे जल को पृथक करने के लिए आवश्यक होता है। मृदा से जल को हटाने वाले आवश्यक बल को सेन्टीमीटर में मापे गए इकाई जल का स्तम्भ (Water Coumn) के भार के तुल्य प्रदर्शित करते हैं। इस जल स्तम्भ की ऊँचाई को ग्राफ द्वारा प्रदर्शित करना अत्यन्त कठिन होता है। अत: इसे लघुगणक (Logarithm) द्वारा प्रदर्शित करते हैं। जल स्तम्भ की ऊँचाई के लघुगुणक को ही **पी एफ** कहते हैं। अत: पी एफ की परिभाषा निम्न प्रकार की जा सकती है -

''पी एफ उस संख्या को कहते हैं जो इकाई जल स्तम्भ की ऊँचाई को सेन्टीमीटर में प्रकट करता है और जिसके भार का दबाव उस चूषण बल (Suction Force) के तुल्य होता है जिससे जल मृदा के साथ संयुक्त होता है।'

यदि मृदा में धारण किए हुए जल का दबाव 1 सेन्टीमीटर ऊँचे जल स्तम्भ के भार के समान हो तो पी एफ शून्य होता है क्योंकि 1 का लघुगणक शून्य होता है। वातावरण का दाब लगभग 1000 सेन्टीमीटर जल के स्तम्भ के भार के समान होता है जबकि इसका पी एफ मान 3 होता है। इस प्रकार दबाव तुल्यांकों (Pressure Equivalents) को निम्न प्रकार तालिका के रूप में प्रकट किया जा सकता है -

इकाई जल स्तम्भ की सेन्टीमीटर में ऊँचाई	लगभग वायुमण्डल दबाव	तुल्यांक पी एफ मान
1	1/1000	0
10	1/100	1
100	1/10	2
1,000	1	3
10,000	10	4 आदि

क्षेत्र क्षमता (Field Capacity)

जब दानेदार मृदा जिसमें उचित जल निकास हो, जल द्वारा पूर्णतया संतृप्त हो जाती है तो जल का कुछ भाग गुरूत्वाकर्षण बल के कारण नीचे की ओर गति करता रहता है। जब और अधिक जल नीचे की ओर नहीं खिंच कता तो मृदा की इस दशा को **क्षेत्र की जलधारण क्षमता** कहते हैं अर्थात् जल की

स्वतन्त्र मात्रा के पृथक हो जाने के पश्चात् मृदा में अवशेष जल मात्रा को **क्षेत्र क्षमता** कहते हैं। **''क्षेत्र क्षमता जल की वह मात्रा है जिसको जल निकास की उचित व्यवस्था होते हुए भी मृदा गुरूत्वाकर्षण बल के विरूद्ध कार्य करके नीचे जाने से रोक लेती है।''**

भारी कणाकार, कोलॉइडी तथा अधिक कार्बनिक पदार्थयुक्त मृदाओं की क्षेत्र क्षमता अधिक होती है। सूक्ष्म कणों वाली चिकनी मृदा या °यूमस युक्त मृदा में बलुई मृदा की अपेक्षा क्षेत्र क्षमता अधिक होती है। मृदा की सघनता (Compactness) तथा कणिभवन (Granulation) से क्षेत्र क्षमता में वृद्धि हो जाती है।

मृदा का आर्द्रता तुल्यांक (Moisture Equivalent of Soi)

जल की वह प्रतिशत मात्रा, जिसको मृदा से बाहर निकालने के लिए गुरूत्व से 1000 गुना से अधिक बल लगाना पड़े, **मृदा का आर्द्रता तुल्यांक** कहलाती है। विभिन्न प्रकार की मृदाओं का आर्द्रता तुल्यांक भिन्न होता है। दूसरे शब्दों में यदि मृदा को एक रन्ध्रमय (Perforated) पेन्दी वाले प्याले में रख दें तो उसके ऊपर गुरूत्वाकर्षण शक्ति का एक हजार गुना प्रभाव पड़ता है। मृदा की आर्द्रता धीरे-धीरे कम होती जाती है। जब कणान्तरिक शक्ति और एक हजार गुनी गुरूत्वाकर्षण शक्ति में समानता हो जाती है तो इ अवस्था में मृदा की प्रतिशत जलधारण शक्ति को **मृदा का आर्द्रता तुल्यांक** कहते हैं। इसकी मात्रा सदैव मुरझान गुणांक (Wilting Coefficient) से अधिक और कृषि मृदा की अधिकतम जल धारण क्षमता से कम होती है। आर्द्रता तुल्यांक को निम्न समीकरणों द्वारा प्रदर्शित कर सकते हैं -

आर्द्रता तुल्यांक = (जलधारण क्षमता-21) x 0.635

आर्द्रता तुल्यांक = आर्द्रता गुणांक (Hyg. Coef.) x 2.71

आर्द्रता तुल्यांक = मुरझान गुणांक (Witing Coeff.) x 1.48

मुरझान गुणांक (Wilting Coefficient)

जब तक मृदा में जल पर्याप्त मात्रा में रहता है तब तक पौधों की जड़ें इसे शोषित करती रहती हैं, जिससे मृदा में उपस्थित जल की मात्रा मक होती रहती है। वाष्पीकरण और पत्तियों द्वारा वाष्पोत्र्जन होकर भी मृदा में नमी की मात्रा कम होने लगती है। मृदा में नमी की मात्रा कम होने पर ऐसी अवस्था आ जाती है जबकि पौधों की जड़ पानी का शोषण करने में असमर्थ हो जाती है और पौधे मुरझाने लगते हैं। इस स्थिति में पौधे की पत्तियाँ तीव्रता से वाष्पोत्सर्जन द्वारा अधिक जल वाष्प के रूप में बाहर निकाल देती हैं किन्तु जड़ें इस जल को उसी गति से ग्रहण नहीं करतीं। इस प्रकार जल के अभाव में पौधा मुरझाने लगता है और अन्त में स्थायी रूप से सूख जाता है। ऐसी अवस्था में मृदा में जल बहुत कम रहता है और उसे मृदा से पृथक करने के लिए अधिक शक्ति की आवश्यकता होती है। पौधे के स्थायी रूप से मुरझाने के समय मृदा में नमी की जितनी प्रतिशत मात्रा विद्यमान रहती है उसे **मुरझान गुणाँक** या **क्रान्तिक आर्द्रता बिन्दु** (Critical Moisture Point) कहते हैं। इस अवस्था में पी एफ 4.2 होता है जो 15 वायुमण्डलीय दबाव के बराबर होता है। मुरझान गुणांक से मृदा के कोलॉइडी पदार्थ तथा निष्क्रिय जल की मात्रा का ज्ञान होता है। अत: इसकी अत्यधिक उपयोगिता होती है।

असलाँग बिन्दु (Sticky Point)

मृदा में नमी की वह प्रतिशत मात्रा जिस पर मृदा व जल का लेप **(Paste)** किसी दूसरे पदार्थ से चिपकना बन्द कर देता है**,** असलाँग बिन्दु कहलाती है। यदि मृदा को पीसकर महीन बना दें और उसमें पानी डालकर भली-भाँति मसल दें तो मृदा एक ढेला बन जाएगी। जब इस ढेले को चाकू से काटने पर मृदा के कण चाकू के साथ नहीं चिपकते तो उस जल की मात्रा को ही स्टिकी बिन्दु कहते हैं। यह जल मृदा के कोलॉइडी पदार्थों द्वारा पूर्ण रूप से शोषित जल का प्रतीक है। कणान्तरिक रन्ध्रों का जल भी इसमें सम्मिलित होता है। यह जल मृदा में भार की दृष्टि से लगभग **16** प्रतिशत होता है। अत**:** असलांग बिन्दु की जल की मात्रा में से **16** घटा देने पर कोलॉइडी पदार्थों द्वारा शोषित किए गए जल का पता चलता है।

कुछ मृदाओं की जल धारण क्षमता, आर्द्रता तुल्यांक और असलांग बिन्दु निम्न प्रकार हैं-

मृदा	**अधिकतम जल धारण क्षमता**	**आर्द्रता तुल्यांक** (Hyg. Eq.)	**स्टिकी बिन्दु**
भारी मृदा	81	44	49
रेतीली दोमट	53	36	38
मटियार दोमट	66	40	40

8.2.4 मृदा आर्द्रता को मापने की विधियाँ – ये निम्नलिखित हैं **-**

1. **भारात्मक विधि** (Gravimetric Method)
2. **आयतनी विधि** (Volumetric Method)
3. **पृष्ठतनावमापी विधि** (Tensiometer Method)
4. **विद्युत चालकता विधि** (Electrical Conductivity Method)
5. **न्यूट्रॉन प्रकीर्णन विधि** (Neutron Scattering Method)

1. भारात्मक विधि **(Gravimetric Method)** - एक सिलिका डिश में मृदा लेकर तोल लिया। डिश को मृदा सहित ऑवन में **105º** सै**0** पर स्थिर भार होने तक गर्म करते हैं डिश को मृदा सहित तोलकर नमी की प्रतिशत मात्रा निम्न प्रकार ज्ञात कर सकते हैं **-**

$$\text{आर्द्रता की प्रतिशत मात्रा} = \frac{\text{भार में कमी } \mathbf{x\ 100}}{\text{ऑवन शुष्क मृदा}}$$

इस विधि में समय अधिक लगता है और कार्य भी अधिक करना पड़ता है।

2. आयतनी विधि (Volumetric Method) - एक ज्ञात आयतन **(V)** वाले ट्यूब बरमे **(Tube Auger)** की सहायता से मृदा में से नमूने लेते हैं। मृदा के नमूने को तोल लेते हैं। इसे ऑवन में **105º** सै**0** पर स्थिर भार होने तक गर्म करते हैं। इसे डेसीकेटर में ठण्डा करके पुन**:** तोल लेते हैं। यदि मृदा के आरम्भिक तथा अन्तिम भार क्रमश**:** $\mathbf{Ws_1}$ तथा $\mathbf{Ws_2}$ हों तो मृदा में जल की मात्रा का निर्धारण निम्न प्रकार किया जा सकता है **-**

$$\text{नमी की प्रतिशतता} = \frac{Ws_1 - Ws_2}{\text{जल का घनत्व} \times V} \times 100$$

3. **पृष्ठतनावमापी विधि (Tensiometer Method)** - पृष्ठ तनावमाली **(Tensiometer)** में एक सरंध्र क्ले कप होता है जो कि जल से भरा रहता है। यह कप एक मैनोमीटर से जुड़ा रहता है। पृष्ठ तनावमापी को मृदा में प्रतिष्ठापित **(Installed)** किया जाता है। मृदा के सूखने पर जल कप से बाहर प्रवाह करने लगता है। इस प्रकार एक निर्वात उत्पन्न हो जाता है जो कि गोज **(Gauge)** की सहायता से माप लिया जाता है। प्राप्त तनाव माप और नमी की प्रतिशतता के बीच एक ग्राफ बना लेते हैं। इसकी सहायता से अन्य किसी मृदा के नमूने में जल की प्रतिशतता ज्ञात कर सकते हैं। पृष्ठ तनावमापी के प्रयोग करने में मुख्य कमी यह है कि इससे मापी गयी तनाव की श्रेणी **(Range)** बहुत कम होती है। इससे मापी गयी तनाव **0** से **0.85** वायुमण्डल होती है जबकि मृदा में प्राप्य नमी की तनाव की माप **15** वायुमण्डल तक होती है। तनावमापी रेतीली मृदाओं में सफलतापूर्वक प्रयोग किए जा सकते हैं।
4. **विद्युत चालकता विधि (Electrical Conductivity Method)** - यह विधि इस सिद्धान्त पर आधारित है कि मृदा नमी में परिवर्तन होने विद्युत चालकता भी परिवर्तित होती रहती है। इस विधि में जिप्सम ब्लॉक को उपयोग में लाया जाता है जिसमें निश्चित दूरी पर दो इलेक्ट्रॉड्स लगे रहते हैं। जिप्सम ब्लॉक मृदा में एक ऐच्छिक गहराई में दबा दिए जाते हैं। ये मृदा से नमी शोषित करते हैं और संचालन को एक रूपान्तरित **(Modified)** व्हीट स्टोन ब्रिज की सहायता से माप लेते हैं। प्राप्त व्हीटस्टोन ब्रिज की माप और मृदा की नमी की मात्रा के बीच एक ग्राफ बना लेते हैं। इसकी सहायता से मृदा में उपस्थित जल की लगभग मात्रा ज्ञात कर लेते हैं। जिप्सम ब्लॉक नमी की उपस्थिति में शीघ्र खराब हो जाते हैं। अत: अब नायलॉन के ब्लॉक प्रयोग किये जाने लगे हैं।
5. **न्यूट्रॉन प्रकीर्णन विधि (Neutron Scattering Method)** - इस विधि का यह सिद्धान्त है कि जल तीव्र गति से चलने वाले न्यूट्रॉन को सोख लेता है किन्तु मन्द गति से चलने वाले न्यूट्रॉन को वापस संसूचक **(Detector)** के पास भेज देता है। यह एक आधुनिक विधि है जिसका विकास हो रहा है।

8.2.5 मृदा में जल धारण (Retention of Water in Soil)

मृदा में जल सर्वप्रथम कोलॉइडी जटिल तथा सूक्ष्म रन्ध्रों द्वारा शोषित होता है। जब जल वर्षा या सिंचाई से शुष्क मृदा पर गिरता है तो यह केशिकत्व तथा गुरूत्वाकर्षण बल के कारण रन्ध्रों से वायु के समान आयतन को विस्थापित कर मृदा में प्रवेश करता है। नीचे की ओर गति करते हुए जल में कुछ मुक्त वायु सूक्ष्म रन्ध्रों में अब भी रह जाती है जिसे वनस्पति अपने उपयोग में ले लेती है। जब जल की शोषित मात्रा शोषण शक्ति से अधिक हो जाती है तब वह गुरूत्वाकर्षण द्वारा नीचे के संस्तरों की ओर प्रवेश करने लगता है। अधिक वर्षा वाले स्थानों में यह जल अन्त में जल स्तर **(Water Table)** में मिल जाता है।

सामान्य दशाओं में मृदा की ऊपरी सतह से जल का वाष्पीकरण निरन्तर होता रहता है। जल की इस हानि की आंशिक रूप से पूर्ति करने के लिए गुरूत्वाकर्षण बल के विरूद्ध जल नीचे से ऊपर की ओर गति करता रहता है। यह केशिका गति **(Capillary movement)** कहलाती है। जल तल तनाव के आधार पर सूक्ष्म छिद्रों में से होता हुआ ऊपर की ओर आता है।

मृदा में जल अस्थायी रूप से धारण किया जाता है और मृदा जल धारण में दो प्रकार के बल कार्य करते हैं। एक बल मृदा कणों और जल अणुओं के बीच आकर्षण शक्ति के कारण होता है। इसे आसंजन बल **(Force of adhension)** कहते हैं। मृदा जल का अधिशेषण **(Adsorption)** इसी बल द्वारा होता है। मृदा कणों पर जल के ये अणु स्थिर वैद्युत बल **(Electrostatic Force)** द्वारा महीन परतों के रूप में आकर्षित रहते हैं। इस बल का विद्युत-क्षेत्र कोलॉइडी कणों के बा°य तथा भीतरी सतहों तक विस्तृत रहता है। इसका प्रभाव ठोस-द्रव अन्त:सीमा पर होता है। अधिशोषण के पश्चात् एक अन्य प्रकार का बल कार्य करता है। जिसके द्वारा ठोस सतह पर अधिशेषित जल अणु अन्य जल अणुओं को अपनी ओर आकर्षित करते है। इसे ससंजन **(Cohesion)** बल कहते हैं। इस बल के कारण ठोस सतह पर आसंजन बल द्वारा बनी हुई जल अणुओं की पतली परत मोटी हो जाती है। यह जल द्रव-द्रव अन्त:सीमा पर अपना कार्य करता है।

इन दोनों बलों के संयुक्त प्रभाव से जल मृदा के सूक्ष्म तथा दीर्घ दोनों प्रकार के रन्ध्रों में पाया जाता है। ससंजन बल द्वारा जल की परत जैसे-जैसे मोटी होती जाती है, उसी के अनुसार तनन बल **(Tensile Force),** जिसके द्वारा जल परत ठोस के चारों ओर स्थापित रहती है, शिथिल हो जाता है। इसके फलस्वरूप गुरूत्वीय बल अधिक हो जाने पर परतों का यह जल नीचे की ओर रिसने लगता है। इस प्रकार का जल प्राय: स्वतन्त्र होता है जिसपर किसी प्रकार का बल कार्य नहीं करता।

8.2.6 मृदा में जल का संचालन(Movement of Water in Soil)

मृदा में पौधों की जड़ों के समीप जल का रहना परम आवश्यक है। जल की उपयोगिता उसके गतिमान होने पर निर्भर करती है। मृदा जल निम्न तीन प्रकार से गतिमान होता है -

(i) वाष्प गति (Vapour Movement)

(ii) गुरूत्वाकर्षण गति (Gravitational Movement)

(iii) केशिका गति (Capillary Movement)

(i) वाष्प गति (Vapour Movement) - वायुमण्डल में नमी के कम होने, तापक्रम के बढ़ने और वायु की गति तीव्र होने के कारण मृदा की ऊपरी सतह से जल का वायुमण्डल में वाष्पीकरण एक साधरण एवं स्वाभाविक क्रिया है। मृदा में अधिकांश नमी ऊपर की6 इंच मोटी सतह में होती है। यह समस्त नमी लगभग 10 दिन में वाष्पित हो जाती है। मृदा जल वाष्प का विसरण (Diffusion) एक सूक्ष्म रन्ध्र से दूसरे रन्ध्र की ओर, एक संस्तर से दूसरे संस्तर की ओर प्राय: होता रहता है। यह विसरण वाष्प घनत्वों के कारण होता है। समांगित नमी (Homogeneous Moist) मृदा के विभन्न भागों में तापक्रम के अन्तर के कारण जल वाष्प का विसरण अधिक तापक्रम वाले स्थान से कम तापक्रम की ओर होता है। साम्यावस्था

(Equilibrium) में जल वाष्प का विसरण उच्च वाष्प तनाव (Aqueous Tension) से निम्न वाष्प तनाव की ओर होता है।

(ii) गुरूत्वाकर्षण गति (Gravitational Movement) - जब जल सिंचाई या वर्षा से मृदा में प्रवेश करता है तो मृदा के सभी रन्ध्र जल से संतृप्त हो जाते हैं और जल परत (Film) का तनन बल (Tensile Force) गुरूत्वाकर्षण बल से अधिक हो जाता है तो जल नीचे की ओर बहने लगता है। जल के इस प्रकार नीचे की ओर बहने को **रिसना** या **अन्त:स्रवण** (Fercolation) कहते हैं। जल का नीचे की ओर रिसना मृदा कणों के आकार पर निर्भर करता है। रेतीली या कंकरीली मृदाओं में रन्ध्राकाश (Pore space) बहुत बड़े होने के कारण जल शीघ्रता से नीचे को बह जाता है। इसके विपरीत चिकनी मिट्टी (Clay) में रन्ध्राकाश बहुत कम होने के कारण जल का नीचे की ओर संचालन मन्द गति से होता है।

(iii) केशिका गति (Capillary Movement) - गुरूत्वाकर्षण गति बन्द हो जाने पर जल मृदा के केशिका व कोशिका विहीन रन्ध्रों में भरा रहता है। मृदा में इस जल का संचालन केशिकत्:व द्वारा होता है। केशिका गति गुरूत्व (Gravity) के विरूद्ध होती है। इससे जल का संचार अधिक नम मृदा से कम नम मृदा की ओर होता है। यह गति रेतीली मृदा में तेज और चिकनी मृदा में मन्द होती है।

8.2.7 उपयोगी मृदा नमी को प्रभावित करने वाले कारक -

मृदा में विद्यमान केशिका जल पौधों के लिए प्राप्य एवं आवश्यक जल होता है जो पौधों तथा सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा उपयोग में लाया जाता है। इस प्राप्य जल को प्रभावित करने वाले कारक निम्न प्रकार हैं -

1. **आदर्र तनाव सम्बन्ध** - मृदा में कार्बनिक पदार्थ, कणाकार तथा संरचना प्राप्य जल को प्रभावित करते हैं। महीन कण वाली मृदाओं में प्राप्य जल की मात्रा अधिक होती है परन्तु दानेदार संरचना से जल प्राप्यता बढ़ जाती है। कार्बनिक पदार्थ की जल धारण क्षमता अधिक होने के फलस्वरूप इसकी पर्याप्त मात्रा होने पर मृदा में प्राप्य जल की मात्रा बढ़ जाती है।
2. **मृदा गहराई** - उथली मृदा में प्राप्य जल की मात्रा सामान्यत: गहरी मृदा की अपेक्षा कम होती है।
3. **मृदा परत** - भुरभुरी एवं कोमल परतों के मध्य प्राप्य जल की मात्रा पर्याप्त होती है जबकि अप्रवेश्य परतों में प्राप्य जल का संचलन बहुत कम या नगण्य होता है।
4. **लवणों की सान्द्रता** - मृदा में अधिक लवणों की उपस्थिति में मृदा विलयन का परासरण दाब अधिक होकर प्राप्य जल पौधों को सुगमतापूर्वक उपलब्ध नहीं होता है। शुष्क एवं अर्द्धशुष्क प्रदेशों की ऊसर मृदाओं में लवणों की सान्द्रता का प्राप्य जल पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है।

8.3 मृदा वायु

8.3.1 मृदा वायु का संगठन (Composition of Soil Air)

रसेल (Russel) के अनुसार मृदा वायु एवं वायुमण्डलीय वायु का **आयतन की दृष्टि से संगठन** निम्न तालिका के रूप में दिया गया है -

गैस का नाम	मृदा वायु की प्रतिशतता	वायुमण्डलीय वायु की प्रतिशतता
ऑक्सीजन	20.50	20.97
नाइट्रोजन	79.20	79.00
कार्बन डाइऑक्साइड	0.25	0.03

विभिन्न प्रकार की मृदाओं में नाइट्रोजन आयतन की दृष्टि से 79 से 80 प्रतिशत तक होती है परन्तु ऑक्सीजन तथा CO_2 की मात्राएँ भिन्न होती हैं।

8.3.2 मृदा वायु के संगठन को प्रभावित करने वाले कारक

1. **मृदा गुण** (Soil Properties) - मृदा के कणाकार, संरचना, नमी की मात्रा तथा मृदा में उपस्थित कार्बनिक पदार्थ की मात्रा, मृदा वायु के संगठन को प्रभावित करते हैं। दानेदार मृदा में चूर्ण (Powdery) मृदा की अपेक्षा CO_2 अधिक होती है। जल से मुक्त दानेदार संरचना वाली मृदा में CO_2 की मात्रा प्राय: कम और O_2 की मात्रा अधिक होती है। जल की अधिकता रहने से मृदा में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है।
2. **कार्बनिक पदार्थ तथा जैविक सक्रियता** (Biological Activities) - मृदा में कार्बनिक पदार्थ मिलाने से सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि हो जाती है जो श्वसन क्रिया द्वारा CO_2 बाहर फैंकते हैं। यही कारण है कि गोबर तथा अन्य कार्बनिक पदार्थ मृदा में मिलकर CO_2 की मात्रा में वृद्धि करते हैं।
3. **अवमृदा तथा ऊपरी मृदा** (Sub Soil and Top Soil) - अवमृदा में ऊपरी मृदाओं की अपेक्षा ऑक्सीजन कम होती है। मृदा में CO_2 की प्रतिशत मात्रा गहराई के बढ़ने से बढ़ती है परन्तु ऑक्सीजन की मात्रा घटती है। मृदा के भीतरी भाग में वायु का संचालन होना आवश्यक है। ऐसा मृदा के ऊपरी भग से आवश्यक जल का निष्कासन और सरन्ध्रता (Porosity) अधिक होने पर ही हो सकता है। मृदा में 10 प्रतिशत से कम सरन्ध्रता होने पर मृदा में वायु का संचालन बन्द हो जाता है।
4. **ऋतु परिवर्तन** (Seasonal Variations) - ऊष्ण प्रदेशों की मृदाओं में ऑक्सीजन की उतनी ही आवश्यकता होती है जितनी की शुष्क प्रदेश की मृदाओं में जल की आवश्यकता होती है। वायु में CO_2 की मात्रा मृदा की सतह पर सर्दियों में कम और गर्म ऋतु में अधिक होती है।

5. **फसलों का प्रभाव** (Effect of Cropping) - जिस समय मृदा पर पौधे नहीं उपजाए जाते, उसमें CO_2 की मात्रा कम रहती है। उगते हुए पौधे मृदा वायु में ऑक्सीजन की मात्रा कम और CO_2 की मात्रा अधिक कर देते हैं क्योंकि पौधे श्वसन क्रिया में O_2 ग्रहण कर CO_2 का निष्कासन करते हैं।

8.3.3 मृदा की वायु क्षमता (Air Capacity of Soil)

मृदा वायु की वह मात्रा, जो मृदा में क्षेत्र क्षमता (Field Capacity) नमी वाली अवस्था में पायी जाती है, **मृदा की वायु क्षमता** कहलाती है। दूसरे शब्दों में - **मृदा की वायु क्षमता** मृदा के अकेशिका रन्ध्राकाशों (Non-capillary pore Spaces) के समान होती है।

अकेशिका रन्ध्राकाश को प्रभावित करने वाले कारक जो कणाकार, संरचना, जल निकास, कार्बनिक पदार्थ, जुताई करना, दरारें पड़ना, जड़ों का प्रवेश्य और जन्तुओं द्वारा मृदा में बिल बनाना आदि हैं, मृदा क्षमता को भी प्रभवित करते हैं।

मृदा की ऊपरी सतह में मृदा वायु अधिक होती है। जल स्तर (Water Table) पर मृदा वायु की मात्रा शून्य होती है। मृदा में गहराई बढ़ने से वायु कम होती जाती है क्योंकि निम्न संस्तरों में जल की मात्रा अधिक और अकेशिका रन्ध्राकाशें की संख्या कम होती है।

हल्की तथा भुरभुरी मृदा की मृदा क्षमता अपेक्षाकृत अधिक होती है। मृदा में रेत या कार्बनिक पदार्थ मिलाने से अथवा जुताई करने से मृदा ढीली हो जाती है, जिसके फलस्वरूप मृदा में वायु की मात्रा में वृद्धि हो जाती है। मृदा के पलटने से कृत्रिम नालियों में, मृदा के सिकुड़ने पर बनने वाली दरारों से, जड़ों के फैलने से और केंचुओं व अन्य जीवों द्वारा बिलों के बनाने से वायु संचार बढ़ जाता है। मृदा जल का रिसकर नीचे की ओर चले जाने से मृदा के सूखने पर इसमें वायु की मात्रा बढ़ जाती है। रेतीली तथा लोमी मृदाओं में जल की जितनी हानि होती है उतनी मात्रा में वायु उसका स्थान ग्रहण कर लेती है। चिकनी मृदा सुखाने पर जल की हानि होने से सिकुड़ने के कारण वायु कम मात्रा में प्रवेश करती है।

8.3.4 मृदा वायु की पुन पूर्ति (Replenishment of Soil Air)

पौधों की जड़ें मृदा के अन्दर रहती हैं और तना तथ पत्तियाँ आदि अन्य भाग बाहर वायुमण्डल में रहते हैं। पौधे श्वसन क्रिया में ऑक्सीजन ग्रहण कर CO_2 बाहर निकालते हैं। पौधों की जड़ों को ऑक्सीजन मृदा वायु से प्राप्त होती है जबकि पौधे के बाहरी भाग ऑक्सीजन वायुमण्डल से प्राप्त करते हैं। यदि मृदा में ऑक्सीजन का उपयोग तथा CO_2 का बाहर निकलना तेजी से होता है तो वायुमण्डल से गैस का विनिमय (Interchange) भी शीघ्रता से होने लगता है। जीव रासायनिक अभिक्रियाओं की गति तेज होने से O_2 का उपयोग तथा CO_2 का निष्कासन शीघ्रता से होने लगता है।

मृदा वायु और वायुमण्डलीय गैसों में विनिमय निम्न दो प्रक्रमों द्वारा होकर मृदा वायु की पुन: पूर्ति होती रहती है -

1. गैसों का बहाव (Mass Flow), 2. विसरण (Diffusion)।

1. **गैसों का बहाव (Mass Flow)** - गैसों का एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर बहाव दाब के अन्तर के कारण होता है। सिंचाई या वर्षा जल के मृदा में प्रवेश करने पर मृदा वायु का शारीरिक

प्रतिस्थापन (Bodily Replacement) हो सकता है। मृदा वायु और वायुमण्डल में गैसों का विनिमय निम्न कारकों पर निर्भर करता है -

(i) **तापक्रम (Temperature) -** मृदा ताप मृदा वायु के नवीनीकरण (Renewal) को दो प्रकार से प्रभावित करता है -

(अ) मृदा का विभिन्न परतों के बीच ताप में अन्तर - रन्ध्राकाशों (Pore spaces) में वायु संकुचन एवं प्रसार और गर्म वायु का ऊपर की ओर संचार होने के कारण विभिन्न संस्तरों के बीच गैसीय विनिमय होता है।

(ब) मृदा वायु और वायुमण्डल के ताप में अन्तर- इस ताप के अन्तर के कारण मृदा वायु और वायुमण्डल की संलग्न सतहों के बीच गैसों का विनिमय होता है।

(ii) **बैरोमीटर दाब -** बॉयल के नियमानुसार वायुमण्डल के बैरोमीटर दाब में वृद्धि होने से मृदा वायु के आयतन में कमी हो जाती है। आयतन में इसी कमी की पूर्ति के लिए वायुमण्डल से वायु की एक तुल्य मात्रा मृदा रन्ध्रों (Pores) में प्रवेश करती है। इसी प्रकार बैरोमीटर दाब में कमी होने से मृदा वायु का प्रसार होता है। फलत: मृदा से वायु निकलकर वायुमण्डल में मिल जाती है।

(iii) **वायु -** वायु की गति तेज होने से गैसों का विनिमय अधिक होता है।

(iv) **वर्षा -** मृदा रन्ध्राकाशों में से वायु का वर्षा जल द्वारा प्रतिस्थापन होने पर मृदा वायु का नवीनीकरण होता है।

2. **विसरण (Diffusion) -** गैसों का विनिमय अधिकतर विसरण प्रक्रम द्वारा होता है। विसरण गैसों का एक प्रमुख गुण है, जिसके कारण वे परस्पर मिलकर समांगी मिश्रण बनाती हैं। गैसीय मिश्रण में गैसें अपने व्यक्तिगत आंशिक दाब (Partial Pressure) में अन्तर के कारण विसरित होती है। गैसीय मिश्रण में किसी गैस का आंशिक दाब वह दाब है जो यह गैस उस मिश्रण द्वारा ग्रहण किए हुए आयतन में अकेले विद्यमान रहने पर उत्पन्न करती है। मिश्रण में प्रत्येक गैस अपने आंशिक दाब के अनुसार अधिक दाब से कम दाब की ओर विसरित होती है।

वायुमण्डलीय वायु की अपेक्षा मृदा में CO_2 का आंशिक दाब बहुत अधिक परन्तु O_2 का आंशिक दाब कम होता है। अत: मृदा से CO_2 वायुमण्डल में प्रवेश करती है और O_2 वायुमण्डल से मृदा में पहुँचती है। इसी कारण जल वाष्प भी मृदा से वायुमण्डल में विसरित होती है। इस प्रकार मृदा वायु की गैसें विसरण प्रक्रम द्वारा वायुमण्डलीय गैसों के साथ स्वयं सन्तुलन बनाए रखने की प्रवृत्ति रखती हैं। यदि मृदा रन्ध्राकाश स्वतन्त्र रूप से खुले हों और सीधे रूप से वायुमण्डल के साथ सम्पर्क स्थापित किए हुए हों तो यह विसरण सम्भव है और निरन्तर होता रहता है।

विसरण की गति को आंशिक दाब अन्तर के अतिरिक्त सम्पूर्ण वायु तथा अकेशीय रन्ध्राकाश आदि अनेक कारक भी प्रभावित करते हैं। सघन एवं भारी मृदाओं में सम्पूर्ण वायु की मात्रा कम होने के कारण गैसीय प्रवाह की गति बहुत कम होती है।

इस प्रकार मृदा वायु तथा वायुमण्डलीय वायु के बीच गैसों के बहाव तथा विसरण द्वारा गैसीय विनिमय निरन्तर होता रहता है।

पादप वृद्धि के लिए मृदा वायु का उचित संचार होना अत्यन्त आवश्यक है। अनुचित वायु संचार में पादप वृद्धि निम्न प्रकार प्रभावित होती है -

(i) मृदा वायु के उचित संचार न होने पर जड़ों की वृद्धि कम हो जाती है। अत : अनुचित वायु संचार की दशा में मूली, गाजर, आलू तथा शलजम आदि जड़ों वाली फसलों की जड़ों का आकार असामान्य होकर फसल पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। पौधों के श्वसन के लिए मृदा में ऑक्सीजन होना आवश्यक है। मृदा में अप्रवेश्य परतों की उपस्थिति में वायु की कमी के कारण जड़ों का विकास रूक जाता है।

(ii) मृदा में वायु संचार कम होने से पौधे मृदा वायु से पोषक तत्व ग्रहण नहीं कर सकते। ऑक्सीजन के अभाव में कार्बनिक नाइट्रोजन का खनिजन कम हो जाता है। फलत: पौधों को अपनी वृद्धि के लिए आवश्यक नाइट्रोजन नहीं मिल पाती।

(iii) अनुचित मृदा वातन (संचार) से पौधों द्वारा जल का शोषण कम हो जाता है। इससे कोशिकाआं की पारगम्यता कम हो जाती है। दोषपूर्ण वातन में पौधों की श्वसन क्रिया मन्द हो जाती है जो कि पौधों द्वारा जल के शोषण के लिए आवश्यक है। इस प्रकार जल शोषण कम होकर पादप वृद्धि रूक जाती है।

(iv) दोषपूर्ण वातन की अवस्था में कार्बनिक पदार्थें के अपघटन से कुछ विषैले पदार्थ बन जाते हैं जो पादप वृद्धि के लिए हानिकारक होते हैं। उदाहरणार्थ -शर्करा के अवायुजीवी अपघटन से मेथेन तथा CO_2 उत्पन्न होती है।

$C_6H_{12}O_6 \longrightarrow 3\ CH_4 + 3CO_2$

मेथेन, ब्यूटिरिक अम्ल तथा लैक्टिक अम्ल आदि की अधिक मात्रा पौधों के लिए हानिकारक होती है।

8.4 मृदा ताप (Soil Temperature)

पौधें तथा जन्तुओं की जीवन-प्रक्रमें 40º से 120º फेरेनहाइट (4.5 से 49º सै0) तापक्रम के बीच सुचारू रूप से होती है। 40º फेरेनहाइट (4.5º सै0) के नीचे प्राय: सभी पौधे नष्ट हो जाते हैं। अत: पौधों की वृद्धि एवं जीवन मृदा तथा जलवायु के तापक्रमों पर निर्भर हैं।

8.4.1 मृदा को ताप के साधन (Sources of Heat to Soil)

मृदा को ताप के लिए निम्न स्रोत हैं -

1. सूर्य की विकिरण ऊर्जा (Radiant Energy)
2. गर्मवर्षा
3. क्लेदन ऊष्मा (Heat of Wetting)
4. कार्बनिक पदार्थ

1. **सूर्य की विकिरण ऊर्जा (Radiant Energy)** - यह मृदा को ताप के लिए सबसे प्रमुख एवं महत्वपूर्ण स्रोत है। सूर्य की प्रखर किरणें उसके चारों ओर जाती हैं। सूर्य की विकिरण ऊर्जा का कुछ भाग वायुमण्डल में से होता हुआ पृथ्वी की ओर आता है। वायुमण्डल में धूल के कणों तथा जल वाष्प का आधिक्य होने पर मृदा पर पहुँचने वाली ऊष्मा में कमी हो जाती है।

   सूर्य से स्वच्छ आकाश के दिनों में मृदा की प्रति वर्गमीटर सतह पर प्रति घण्टा एक मिलियन कैलोरी ऊष्मा प्राप्त होती है। सर्दियों में प्रति दिन प्रति वर्ग सेन्टीमीटर लगभग 50 कैलोरी और गर्मियों में प्रतिदिन प्रति वर्ग सेन्टीमीटर लगभग 500 से 700 कैलोरी ऊष्मा प्राप्त होती है।
2. **गर्म वर्षा (Warm Rain)** - वर्षा ऋतु के आगमन के समय वर्षा के पानी का तापक्रम उस समय के वायुमण्डलीय ताप से अधिक होता है। इस प्रकार वर्षा में भी मृदा की ऊपरी सतह को कुछ ऊष्मा प्राप्त हो जाती है। एक इन्च बरसात मृदा से 10° अधिक गर्म होती है जो कि 7 इन्च तक की ऊपरी सतह के ताप 5° तक बढ़ा देती है।
3. **क्लेदन ऊष्मा (Heat of Wetting)** - यह मृदा अपने अन्दर जल या जल वाष्प शोषित करती है तो इसके ताप में वृद्धि हो जाती है। यह मृदा **क्लेदन ऊष्मा** कहलाती है। क्ले में क्लेदन ऊष्मा के कारण ताप में लगभग 0.5° से 1° C तक वृद्धि होती है जबकि रेतीली मृदा में यह 0.1 सै0 से कम होती है।
4. **कार्बनिक पदार्थ (Organic Matter)** - जब मृदा में कार्बनिक पदार्थ सड़ने लगते हैं तो रासायनिक क्रिया के परिणामस्वरूप ऊष्मा उत्पन्न होती है।

8.4.2 मृदा विशिष्ट ऊष्मा (Soil Specific Heat)

एक ग्राम मृदा का तापक्रम 1° सै0 बढ़ाने के लिए कैलोरी में आवश्यक ऊष्मा की मात्रा और एक ग्राम जल का तापक्रम 1° सै0 बढ़ाने के लिए आवश्यक कैलोरी में ऊष्मा के अनुपात को **मृदा की विशिष्ट ऊष्मा** कहते हैं। जल की विशिष्ट ऊष्मा लगभग एक होती है। अत: मृदा की **विशिष्ट ऊष्मा** इसके एक ग्राम का तापक्रम 1° सै. बढ़ाने के लिए आवश्यक कैलोरी में ऊष्मा की मात्रा होती है। शुष्क खनिज मृदा की औसत विशिष्ट ऊष्मा लगभग 0.2 तथा हुमस की 0.5 होती है।

यदि मृदा की विशिष्ट ऊष्मा कम हो तो उसके ताप में परिवर्तन (वृद्धि या कमी) शीघ्रता से होता है। विशिष्ट ऊष्मा अधिक होने पर ताप में परिवर्तन धीरे-धीरे होता है। विशिष्ट ऊष्मा मृदा में नमी की मात्रा पर निर्भर करती है। 0.2 विशिष्ट ऊष्मा वाली शुष्क खनिज मृदाओं में 20% नमी होने पर विशिष्ट ऊष्मा 0.33% और 30% नमी होने पर विशिष्ट ऊष्मा 0.38 हो जाती है। इस प्रकार क्ले मृदाएँ जिनमें पानी अधिक मात्रा में होता है, ठण्डी रहती हैं और रेतीली तथा अन्य हल्की मृदाएँ अति शीघ्रता से गर्म हो जाती हैं।

मृदा के अवयवों में °यूमस की विशिष्ट ऊष्मा सबसे अधिक और क्वाटर्ज की विशिष्ट ऊष्मा सबसे कम होती है। जल के अतिरिक्त °यूमस तथा क्वाटर्ज आदि पदार्थ भी मृदा की विशिष्ट ऊष्मा को प्रभावित करते हैं।

8.4.3 मृदा के तापीय गुणों को प्रभावित करने वाले कारक

मृदा ताप को निम्नलिखित कारक प्रभावित करते हैं -

(i) **विशिष्ट ऊष्मा** - विशिष्ट ऊष्मा मृदा ताप को अत्यधिक प्रभावित करती है। मृदा की विशिष्ट ऊष्मा कम होने पर मृदा ताप शीघ्रता से परिवर्तित होता है। विशिष्ट ऊष्मा कम होने पर मृदा ताप में परिवर्तन धीरे-धीरे होता है।

(ii) **मृदा नमी** - मृदा ताप उसमें विद्यमान जल का वाष्पीकरण होने से कम हो जाता है। मृदा में जितनी अधिक नमी होती है, उसका ताप बढ़ाने के लिए उतनी ही अधिक ऊष्मा की आवश्यकता होती है। मृदा में नमी की मात्रा विशिष्ट ऊष्मा को प्रभावित करती है। 0.2 विशिष्ट ऊष्मा वाली शुष्क खनिज मृदाओं में 20% नमी होने पर विशिष्ट ऊष्मा 0.33 और 30% नमी होने पर विशिष्ट ऊष्मा 0.38 हो जाती है।

(iii) **मृदा रंग**- मृदा का रंग अधिक गहरा होने से उसकी ऊष्मा सोखने की शक्ति भी अधिक होती है। यही कारण है कि लाल तथा पीली मृदाओं के ताप में श्वेत मृदाओं (जिनमें चूने की मात्रा अधिक रहती है) की अपेक्षा शीघ्रता से वृद्धि हो जाती है। काली मृदाओं में सूर्य की किरणों अत्यधिक शोषित होकर उनका तापक्रम अधिक शीघ्रता से बढ़ जाता है।

(iv) **कार्बनिक पदार्थ** - मृदा में कार्बनिक पदार्थ के सड़ने से ऊष्मा उत्पन्न होती है। फलत: मृदा ताप में वृद्धि हो जाती है।

(v) **फसल** - वनस्पतिहीन मृदा पर सूर्य की किरणें सीधी पड़ने के कारण मृदा ताप फसलयुक्त मृदा के ताप की अपेक्षा अधिक हो जाता है। अत: फसलों से ढकी हुइ मृदा का ताप शीघ्र्रता से नहीं बढ़ता।

(vi) **मृदा की ढाल** - ढलान वाली मृदा पर सूर्य की किरणों का प्रभाव कम पड़ता है। यही कारण है कि मृदा के उस भाग का ताप जो सूर्य प्रकाश से अधिक दूरी पर होता है , कम होता है।

(vii) **जुताई (Tillage)** - जुताई करने से प्रारम्भ में मृदा से जल का वाष्पीकरण अधिक होकर मृदा ताप कम हो जाता है। इसके विपरीत जुताई करने से मृदा ढीली हो जाती है जिससे रन्ध्रों में वायु भर जाने से मृदा ऊष्मा का चालन नहीं हो पाता क्योंकि वायु कुचालक होती है। अत: मृदा सतह से 2" से 3" की गहराई तक ऊष्मा की मात्रा अधिक होकर मृदा ताप अधिक हो जाता है।

8.4.4 मृदा में ताप का बहाव (Flow of Heat in Soil)

मृदा ताप घटता-बढ़ता रहता है। मृदा की ऊपरी सतह पर ताप का पहुँयना - यह निम्न पाँच प्रकार से होता है -

(i) सूर्य की किरणों के शोषण से मृदा में गर्मी आ जाती है। यह मृदा ताप के बढ़ने की प्रधान क्रिया है। अत: सूर्य की किरणों द्वारा ताप बढ़ जाता है।

(ii) ग्रीष्म ऋतु में जब वर्षा होती है तो वर्षा का गर्म पानी मृदा की सतह के अन्दर जाकर मृदा के तापक्रम को बढ़ा देता है।

(iii) जब जल मिली हुइ भाप मृदा के ऊपर जमती है तो मृदा का तापक्रम बढ़ जाता है।

(iv) मृदा के नीचे जो गमी रहती है, उसके ऊपर की ओर संचालित होने से मृदा की ऊपरी सतह गर्म हो जाती है, जिससे मृदा ताप बढ़ जाता है।

(v) मृदा में कार्बनिक पदार्थ के सड़ने की रासायनिक क्रिया द्वारा ऊष्मा उत्पन्न होती है। इससे मृदा में गर्मी पहुँचती है।

मृदा के ऊपरी सतह से ताप का घटना -

(i) जब मृदा पर पानी जमता है और वाष्प बनकर ऊपर उठता है तो इस क्रिया से मृदा ताप घट जाता है। साधारण तापक्रम पर एक पौण्ड पानी के वाष्पीकरण द्वारा इतना ताप शोषित होता है कि 7500 पौण्ड मृदा का ताप 1° फेरनहाइट घट जाता है।

(ii) जब ऊपरी वायु में ताप की मात्रा कम रहती है तो मृदा ताप घटकर वायु का तापक्रम बढ़ जाता है। इस संचारण क्रिया द्वारा नीचे की मृदा में भी ताप बढ़ सकता है और ऊपर की मृदा में ताप घट सकता है।

मृदा के तापक्रम को बढ़ाने या घटाने का श्रेय उसकी ऊपरी वायु को है जो प्राय: गर्म या ठण्डी हुआ करती है।

8.4.5 मृदा ताप में परिवर्तन (Soil Temperature Fluctuations)

ताप मृदा का एक महत्वपूर्ण गतिक (Dynamic) गुण है, जिसमें दैनिक तथा मौसमी परिवर्तन होते रहते हैं। ताप में ये परिवर्तन मृदा की अन्य दशाओं और पौधों के जीवन को प्रभावित करते हैं। मृदा ताप परिवर्तन को प्रभावित करने वाले कारक वही होते हैं जो मृदा ताप को प्रभवित करते हैं।

दैनिक परिवर्तन (Daily Changes) - मृदा ताप में दैनिक परिवर्तन केवल मृदा सतह पर अधिक होते हैं और 20 से.मी. (लगभग 8 इन्च) की गहराई पर अल्पतम होते हैं। दो-तीन फीट की गहराई पर मृदा ताप चौबीस घण्टे स्थिर रहता है। साधारणतया प्रत्येक दिन प्रात:काल से लेकर दूसरे दिन प्रात:काल तक 24 घण्टे में ताप बढ़ता-घटता रहता है और दिन में 1 से 2 बजे के बीच अत्यधिक रहता है।

मृदा ताप, दैनिक परिवर्तन और विकिरण की प्रचण्डता जो मृदा सतह पर आती है, विकिरण तथा चालन द्वारा ऊष्मा का ह्रास और निम्न संस्तरों में ऊष्मा के चलन की गति आदि पर निर्भर करता है। मृदा की ऊपरी सतह अधिक गर्म हेने के कारण ऊष्मा दिन में नीचे के संस्तरों की ओर गति करती है। रात्रि में निम्न संस्तरें अधिक गर्म होने के कारण ऊष्मा नीचे से ऊपर की ओर गति करती है। इसी प्रकार सूर्योदय तथा सूर्यास्त के साथ मृदा ताप में दैनिक उतार-चढ़ाव होते रहते हैं। दैनिक परिवर्तन मृदा में जल की अधिक मात्रा, बादल, पाला और वनस्पति आदि द्वारा कम किए जा सकते हैं।

मौसमी परिवर्तन (Seasonal Changes) - मृदा ताप में मौसमी परिवर्तन मृदा में अधिक गहराई तक होते हैं। ये 10 मीटर की गहराइ तक भी हो सकते हैं। ये परिवर्तन मौसम से सूर्यताप (Insolation) तथा मृदा में नमी की मात्रा में परिवर्तन के कारण होते हैं। मृदा ताप परिवर्तन को अधिकतर स्थलाकृति (Tropography) प्रभावित करती है। जो ढलान सूर्य के सामने होते हैं उनके ताप में दैनिक तथा मौसमी परिवर्तन अधिक होते हैं।

दिसम्बर और जनवरी के महीनों में वायु ताप कम होने से मृदा ताप भी कम होता है। इसके पश्चात् मृदा ताप वायु ताप में वृद्धि होने के साथ-साथ बढ़ता रहता है। जून-जुलाई के महीनों में मृदा में सबसे अधिक गर्मी उत्पन्न होती है। अत: गर्मियों में मृदा ताप अधिकतम होता है। वर्षा आरम्भ होने के साथ ताप में कमी हो जाती है। यह ताप सम्पूर्ण वर्षा ऋतु में लगभग स्थिर रहता है। अक्टूबर में ताप में कुछ वृद्धि होती है। इसके पश्चात् ताप पुन: कम होने लगता है। यह दिसम्बर में फिर न्यूनतम हो जाता है।

ताप धारता या ऊश्मा क्षमता

किसी पदार्थ के एक ग्राम तापमान 1 डिग्री सै. बढ़ाने के लिए आवश्यक कैलोरी में ऊष्मा की मात्रा को विशिष्ट ऊष्मा कहते हैं। किसी पदार्थ की विशिष्ट ऊष्मा और संहति का गुणनफल उस पदार्थ की ऊष्मा क्षमता या ताप धारिता कहलाती है।

मृदा की ताप धारिता को निम्न प्रकार प्रर्दशित कर सकते हैं -

$C = C_1M_1 + C_2M_2 + C_3M_3 + \ldots\ldots\ldots$

जबकि मृदा की सम्पूर्ण ऊष्मा क्षमता और C1, C2 और C3 आदि मृदा के विभिन्न अवयवों M1, M2 और M3 आदि की विषिश्ट ऊश्माएं होती है।

ऊष्मा चालकता -

किसी पिण्ड के संलग्न भागों के मध्य अथवा संलग्न पिण्डों के मध्य आण्विक अथवा उप-आण्विक कणों की क्रिया फलस्वरूप् ऊष्मा का स्थानान्तरण संचलन या संवहन कहलाता है। यदि मृदा के एक आयताकार काट के प्रत्येक और तापक्रम T1 तथा T2 हो, काट की मोटाई d हो, किसी समय teas इस काट में होकर बहावमान ऊष्मा Q हो तो ऊष्मा बहाव प्रति इकाई क्षेत्रफल Q/At होगा और तापमान प्रवणता (T1-T2) होगी। परिभाषानुसार ऊष्मा चालकता या संवाहकता K हो निम्न प्रकार व्यक्त की जा सकती है –

$$K = \frac{Q/At}{(T_1-T_2)/d} \quad \text{या} \quad K = \frac{Qd}{At\,(T_1-T_2)}$$

विभिन्न मृदाओं में उष्मा चालकता निम्न क्रम में हैं -

रेत < दोमट < मृतिका < पीट

8.4.6 पादप वृद्धि पर मृदा तापक्रम का प्रभाव

- मृदा ताप पादप वृद्धि को निम्न प्रकार अत्यधिक प्रभावित करता है '

1 मृदा से पोषक की प्राप्यता – मृदा ताप पादप पोषकों में गति उत्पन्न करने, सतह पर विनिमय क्रियाओं के होने और पादप जडों में मेटाबोलिक क्रियाओं के होने से महत्वपूर्ण कार्य करता है।

2 पौधों द्वारा जल शोषण – मृदा ताप में वृद्धि होने पर पौधों की जल शोषण क्षमता में एक सीमा तक ही वृद्धि होती है। अधिक ताप पर प्राय: पौधों के मूलरोम नष्ट हो जाते हैं तथा जडे शीघ्र परिपक्व हो जाती है जिससे पौधों की जल शोषण क्षमता कम हो जाती हैा

3 बीजाकुरण पर प्रभाव – बीजों का अंकुरण उपयुक्त मृदा ताप पर सर्वोत्तम होता है।

4 जडों की वृद्धि – विभिन्न पौधों को जडों की वृद्धि एवं विकास के लिए उपयुक्त मृदा ताप निश्चित होता है। किसी फसल के लिए निर्धारित न्यूनतम ताप से कम या अधिकतम ताप से अधिक मृदा ताप होने पर पादप जडों की वृद्धि रूक जाती है।

5 पौधों की बीमारियां – पौधों में कुछ बीमारियां मृदा ताप कम होने पर फैलती है परन्तु कुछ ऐसे भी रोग हैं जो फसलों को अधिक ताप पर हानि पहुंचाते हैं

6 सूक्ष्म जीवों की सक्रियता – मृदा में अधिकांश सूक्ष्म जीव 50फे. से 104 फे. ताप पर भली भांति वृद्धि करते है।

7 कार्बनिक पदार्थों का विच्छेन – मृदा ताप कार्बनिक पदार्थों के अपघ्टन को भी प्रभावित करता हैा यह प्राय: 54 फ. से 98 फे. ताप पर सर्वोत्तम होता है। नाइट्रेट का बनना 77.फे. पर अत्यधिक होता है।

8.4.7 उपयुक्त मृदा तापमान बनाए रखने के लिए सुझाव (मृदा ताप का प्रबन्ध) –‘ खेतों में मृदा ताप का नियंत्रण करना कठिन कार्य है जिसे निम्न प्रकार किया जा सकता है -

1 कार्बनिक मल्वों द्वारा – मृदा की सतह को घास फूस जैसे कार्बनिक पदार्थों से ढकने पर मृदा ताप लगभग अपरिवर्तित रहता है। घास फूस के प्रयोग से सूर्य की किरणें भूमि पर सीधी नहीं पहुंचती है और मृदा ताप में अधिक वृद्धि नहीं होती। इसी प्रकार से ये मल्व सूर्यास्त होने पर पृथ्वी से निकलने वाली उष्मा को बाहर जाने से रोकते हैं। फलत- मृदा ताप अधिक नही घटता । इस प्रकार विस्तृत क्षेत्रों को कार्बनिक पदार्थों से ढकना कठिन है। अत: यह विधि बगीचों तथा फूलों की क्वारियों में ही प्रयोग में लायी जाती है।

2 मृदा नमी का नियंत्रण – जल का आपेक्षिक ताप तथा गुप्त ताप अधिक होने से जल के ताप में परिवर्तन आसानी से नहीं किया जा सकता। मृदा ताप को नियंत्रित करने के लिए मृदा नमी पर नियंत्रित करना अनिवार्य है। इसके लिए मृदा में जल निकास उचित होना चाहिए।

3 मृदा रंग तथा ताप – गहरे रंग की मृदाएं ऊष्मा को आसानी से शोषित करती है।मृदा में ताप अधिक सोखने के लिए मृदा का रंग काला होना चाहिए। अत: मृदा की सतह पर काले कागज की पतली परत फैलाकर मृदा ताप को नियंत्रित किया जा सकता है। यदि ताप कम करना हो तो मृदा पर सफेद खडिया की पतली तह बिछा कर मृदा ताप को नियंत्रित किया जा सकता है।

8.5 सारांश

स्पष्ट है कि मृदा वायु में ऑक्सीजन की मात्रा वायुमण्डलीय वायु की अपेक्षा कुछ कम होती है जबकि CO_2 की मात्रा लगभग सात गुना अधिक होती है। मृदा में CO_2 की प्रतिशतता 0.2 से 1.0% तक परिवर्तनीय होती है। पौधों तथा फसलों की वृद्धि के लिए जल एक अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण पदार्थ है। जल स्वयं एक पोषक पदार्थ नहीं है अपितु यह अन्य पोषक तत्वों को घोलकर पौधों में पहुँचाने के लिए एक उपयुक्त माध्यम है।मृदा ताप धारिता को प्रभावित करने वाले कारक मृदा में उपस्थित

खनिजीय अवयव हुमस तथा जल की मात्रा आदि है। जल की विशिष्ट उष्मा 1.0 होती है। मृदा के हल्के अवयवों जैसे क्वार्टज की विशिष्ट उष्मा होती है। मृदा में विद्यमान हूमस तथा जल की मात्राएं मृदा उष्मा क्षमता को अधिक प्रभावित करती है। शुष्क मृदा की विशिष्ट उष्मा जल की विशिष्ट उष्मा लगभग 1/5 होती है। नम मृदाएं अपनी अधिक विशिष्ट उष्मा और मृदा जल के वाष्पन में उष्मा व्यय हो जाने के परिणास्वरूप शुष्क मृदाओं की अपेक्षा ठण्डी होती है। अत: मृदा की गर्मी को समुचित बनाए रखने के लिए जल निकास आवश्यक होता है।

8.6 अभ्यास प्रश्न

1. विभिन्न मृदाओं में उष्मा चालकता किस क्रम में होती हैं -

   (अ) रेत < दोमट < मृतिका < पीट (ब) पीट < दोमट < मृतिका < रेत

   (स) रेत < मृतिका < दोमट < पीट (द) रेत < दोमट < पीट < मृतिका

   (अ)

2. शुष्क मृदा की विशिष्ट उष्मा जल की विशिष्ट उष्मा कितनी होती है?

   (अ) 1/5 (ब) 1/2

   (स) 1/8 (द) 3/4

   (अ)

3. क्ले में क्लेदन ऊष्मा के कारण ताप में लगभग कितनी वृद्धि होती है?

   (अ) 2.5° से 5° C (ब) 5° से 10° C

   (स) 12° से 15° C (द) 0.5° से 1° C

   (द)

4. मृदा जल का भौतिक वर्गीकरण समझाए ?
5. मृदा वायु के संगठन को प्रभावित करने वाले कारक कौनसे हैं ?

8.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

- यादव, एस.पी.एस. 2007. ऊसर भूमियों को उपजाऊ बनाएं. विश्व कृषि संचार, जून-2007.
- शर्मा, ओ.पी., इन्टोदिया, एस.के., शर्मा, एस.एल. एवं नकेला, एन.एस. 2009. शस्य विज्ञान (कृषि वर्ग), माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर.
- चौधरी, जे. पी., 2000. मृदा विझान : खाद एवं उर्वरक. भारती पब्लिकेशन, बडोत (बागपत).
- जाट, बी.एल. 2012. क्षारीय व लवणीय भूमि सुधार. विश्व कृषि संचार, मई- 2012.

इकाई - 9

मृदा अपरदन तथा इसका नियंत्रण

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 अपरदन के मुख्य रूप

9.3 मृदा अपरदन के प्रभाव

9.4 अपरदन के कारण

9.5 पवनीय अपरदन को प्रभावित करने वाले कारक

9.6 मृदा क्षरण नियंत्रण के उपाय

9.7 वायुवीय मृदा क्षरण

9.8 वायुवीय मृदा क्षरण के रूप

9.9 सारांश

9.10 अभ्यास प्रश्न

9.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

9.0 उद्देश्य

इस अध्याय से आप निम्न ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे:-

- वातीय या पवनीय अपरदन
- जल अपरदन
- मृदा अपरदन के प्रभाव
- अपरदन के कारण
- मृदा क्षरण नियंत्रण के उपाय

9.1 प्रस्तावना

पृथ्वी की ऊपरी सतह पर कृषि योग्य उपजाऊ मिट्टी की 6 से 9 इंच मोटी परत को मृदा कहते है। यह पौधों के जीवन एवं वृद्धि के लिए आवश्यक तत्वों के भण्डार है। मृदा की ऊपरी परज जल तथा वायु नामक प्रमुख प्राकृतिक साधनों द्वारा बहकर या उड़कर दूसरे स्थानों पर एकत्रित होती रहती है। इस प्रकार जल तथा वायु द्वारा मृदा के बहने व कटने अर्थात मृदा सतह के नग्नीकरण को मृदा अपरदन या मृदा कटाव कहते है।

9.2 अपरदन के मुख्य रूप

यह निम्न दो प्रकार के होते है -

1. वातीय या पवनीय अपरदन

2. जल अपरदन

1. वातीय अपरदन - तेज वायु या तूफान द्वारा मृदा के कटाव व बहाव को वातीय या पवतीय अपरदन कहते है। वातीय अपरदन प्रायः वनस्पहीन व शुष्क प्रदेशों में अधिक गति वाली पवन द्वारा होता है। तेज वायु अथवा तूफान के साथ मृदासतह के कण अपने मूल स्थान से उड़कर दूसरे स्थान पर स्थानान्तरित हो जाते हैं। पवन या तूफान की गति धीमी हो जाने पर मृदा कण टीलों के रूप् में एकत्रित हो जाते हैं। इस प्रकार उपजाऊ मृदा कृषि योग्य नहीं रह पाती। रेतीली मृदाओं पर वायु के झोंकों द्वारा रेत एक स्थान से बहकर दूसरे स्थान पर ढेर के रूप् में एकत्रित हो जाती है।

2 जल अपरदन - पानी के द्वारा मृदा के कटाव व बहाव को जल अपरदन कहते है। पानी द्वारा किए गए अपरदन को निम्न मुख्य रूपों में वगीकृत किया जाता है -

(i) उच्छल अपरदन - वर्षा की बूंद जिस स्थान पर गिरती हैं वहां की नग्न मृदा के छोटे छोटे कण टूट कर छिन्न भिन्न हो जाते हैं। ये कण अपने मूल स्थान के उपर नीचे और किनारे की ओर गति करते हैं। इस प्रकार मृदा कण जल की बूंदों द्वारा मूल स्थान से अलग फेंक दिए जाते हैं।

(ii) परत अपरदन - जब मृदा की सम्पूर्ण ऊपरी परत द्वारा समान रूप् से अपक्षरित होकर बह जाती है तो इस क्रिया को परत अपरदन कहते हैं। इसे समतल कटाव भी कहते हैं। समतल ढलाव वाले खेतों में तेजी से बहने वाले वर्षा जल द्वारा मृदा की उपरी सतह धीरे धीरे कटकर बह जाती है। इस अपरदन के परिणामस्वरूप मृदा की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है।

(iii) नालीदार अपरदन - यदि परतदार अपरदन की कुछ समय तक रोकथाम न कि जाये तो जलप्रवाह की गति बढ़ जाती है फलतः मृदा में छोटी-छोटी खाईयां व नलिया बन जाती है इस प्रकार मृदा की उपरी सतह से ही नहीं अपितु नीचे की मिट्टी भी कटकर बह जाती है। ऐसे अपरदन वाली मृदा कृषि योग्य नहीं रहती । यदि रोकथाम का उचित प्रबंध न हो तो यह नालेदार अपरदन में परिवर्तित होकर अधिक हानिकारक हो जाता है।

(iv) नालेदार अपरदन - अधिक ढालवाली मृदा पर जब जल अत्यन्त तीव्र गति से प्रवाहित होता है तो मृदा की सतह उस वेग को सहन नहीं कर सकती। जल अपने प्रवाह के साथ मृदा में बहुत बड़े उपरी अंश को बहा ले जाता है। और मृदा में दरार खाईयां बन जाती है। यदि नालीदार कटाव की रोकथाम का उचित प्रबंध नहीं किया जाये तो नालेदार कटाव आरम्भ हो जाता है। इस प्रकार मृदा में नालियां इतनी गहरी व चौड़ी हो जाती है। कि मृदा के नीचे की सतह दिखाई देने लगती है। इस प्रकार के अपरदन द्वारा मृदा की उर्वरा शक्ति अत्यन्त कम हो जाती है।

(v) सरिता तीर अपरदन - जहां नदियां तथा सरिताएं बहती है वहां पर वे अपने किनारों की मिट्टी का कटाव करती है। इसे सरिता तीर अपरदन कहते है। बरसात में भीषण बाढ़ आने पर यह क्षति और भी अधिक होती है।

(vi) समुद्र तट अपरदन - यह अपरदन वायु तथा जल दोनों की सुयक्त किया से होता है। समुद्र में जल की लहरों के तेज थपेड़े किनारों की मृदा का कटाव करते रहते है।

9.3 मृदा अपरदन के प्रभाव

मृदा अपरदन में मृदा की उपरी परत जल तथा वायु द्वारा बहकर या उड़कर दूसरे स्थानों पर संचित हो जाती है। मृदा के पोषक पदार्थों युक्त उपरी परत उडकर पृथक हो जाने के परिणामस्वरूप मृदा की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है। अपरदन में मृदाऐं उथली हो जाती है। और उपज घट जाती है ।पानी उपरी मृदा को निरन्तर मृदा ले जाता है। फलत मृदा की उत्पादकता कम हो जाती है।

अपरदन द्वारा नदियों में रेत भर जाने के कारण बाढ़ का भय बढ़ जाता है। जिससे जान एवं माल दोनो की हानि होती है। बाध और जलाशयों में आंके गये उपयोगी समय से पूर्व ही सिल्ट जमा हो जाती है। अपरदन में प्रायः संचार व्यवस्थाऐंब न्द हो जाती है। जिन क्षेत्रों में अपरदन की समस्याऐं अधिक गंभीर होती है वहां कृषि करना कठिन हो जाता है।

9.4 अपरदन के कारण

जल द्वारा मृदा अपरदन को प्रभावित करने वाले कारक -

1 जलवायु

2 वनस्पति

3 स्थालाकृति

4 मृदीय कारक

5 मानवीय कारक

6 जैविक कारक

इन कारकों का वर्णन निम्न प्रकार कर सकते है।

1. जलवायु - इसके अन्तर्गत निम्न कारक आते है -

(i) वर्षा

(ii) ताप

(iii) वायु

(i) वर्षा - वर्षा की मात्रा, अवधि तथा प्रचण्डता अधिक होने पर अपरदन अधिक होता है । वर्षा की बूंदों का आकार एवं वेग अधिक होने से भी अपरदन अधिक होता है।

(ii) ताप - ताप तथा शीतन के कारण चट्टानें टूट कर इनमें दरारें पड़ जाती है। वर्षा के समय इन दरारों में पानी भर जाता है। ताप कम होने पर पानी यहां जम जाता है। जिससे इसके आयतन में

वृद्धि हो जाती है। और चट्टानें टूट जाती है। बसन्त ऋतु में बर्फ के तीव्रता से पिघलने के कारण अपरदन अधिक होता है।

(iii) वायु - वनस्पतिहीन एवं शुष्क प्रदेशों में तेज वायु अथवा तूफान के साथ मृदा सतह के कण अपने मूल स्थान से उड़कर दूसरे स्थान पर स्थानान्तरित हो जाते है। पवन या तूफान की गति धीमी हो जाने पर मृदा कण टीलों के रूप् में एकत्रित हो जाते है।

2. वनस्पति -

वनस्पति के प्रभाव से जल के काटने तथा बहने की शक्ति कम हो जाती है। वनस्पति से पानी के बहाव का वेग कम हो जाता है। अतः किसी भी वनस्पति के आवरण से मृदा अपरदन कम हो जाता है।

3 स्थालाकृति -

ढालु मृदा पर जल के बहाव की गति अधिक होती है। ढाल की मात्रा तथा लम्बाई अधिक होने पर मृदा अपरदन अधिक होता है।

4 मृदीय कारक -

दानेदार संरचना वाली मृदाओं में अधिक रन्ध्र होने के फलस्वरूप् जल शोषण अधिक होता है और अपरदन कम होता है। रेतीली तथा कर्करीली बालु वाली मृदाओं का शोषण अधिक शीघ्रता पूर्वक होता है। जिससे अपरदन कम होता है। क्लेयुक्त मृदाऐं पानी के साथ नीलम्बन बनाती है। इससे सतह के रन्ध्र महीन कणों द्वारा बन्द होकर अपरदन अधिक होता है।

5 मानवीय कारक

(i) जुताई का ढंग - ढाल के समान्तर जुताई करने से अपरदन अधिक होता है क्योंकि कूडों में को जल का बहाव होकर मृदा में गली बन जाती है।

(ii) फसल उगाने का ढंग - फसलों की लाईन ढाल के समान्तर रखने पर मृदा अपरदन अधिक होता है।

(iii) फसल चक्र का प्रभाव - उचित फसल चक्र से मृदा की सतह वनस्पति से ढकी रहने पर मृदा की भौतिक दशाओं में सुधार होता है। और मृदा को कार्बनिक पदार्थ अधिक उपलब्ध होता है। जिससे अपरदन कम होता है।

(iv) कार्बनिक पदार्थ - मृदा में हरि खाद उगाने, कम्पोस्ट तथा गोबर की खाद आदि कार्बनिक पदार्थ मिलाने से अपरदन कम होता है।

(v) जैविक कारक - केचूएं, रोडन्टस, चूहें तथा लोमड़ी अधिक जीव मृदा में नलिया तथा बील बनाकर मृदा में वायु संचार तथा जल के रीसने की मात्रा अधिक करते है जिसे अपरदन अधिक होता है।

9.5 पवनीय अपरदन को प्रभावित करने वाले कारक

1 जलवायु - अ पवन वेग - शुष्क तथा वनस्पतिहीन मृदाओं में पवनीय अपरदन अधिक जबकि वनस्पतियुक्त मृदाओं में कम होता है।

ब वायु - तापन तथा शीतन द्वारा चट्टानें छोट छोटे कणों में टूट जाती है जिन्हें वायु सरलतापूर्वक अपने साथ उड़ा ले जाती है।

स आर्द्रता - वायुमंडल में आर्द्रता कम होने पर पवनीय अपरदन अधिक होता है। जबकि आर्द्रता अधिक होने पर अपरदन कम होता है।

द वर्षा तथा सूखा - पवनीय अपरदन बरसात में कम और सूखे के क्षेत्रों में अधिक हो जाता है।

2 मृदीय कारक - रेतीली मृदाओं में वायु द्वारा अपरदन अधिक परन्तु क्लेयी मृदाओं में कम होता है।

इसके अतिरिक्त स्थलाकृति तथा मृदा की सतह का वनस्पति से ढका आदि कारक भी पवनीय अपरदन को प्रभावित करते है।

9.6 मृदा क्षरण नियंत्रण के उपाय

1. कृषि विधियां
2. वृक्षारोपण
3. घास रोपण विधियां
4. यांत्रिक विधियां

1. कृषि विधियां

विभिन्न कृषि विधियों का सही उपयोग करके मृदाक्षरण को कम कर सकते है जैसे -

(i) जुताई - भूमि क्षरण को रोकने के लिये जुताई की संख्या गहराई व विधि का विशेष महत्व है। ग्रीष्म ऋतु में खाली खेत छोड़ना, जुताई करने की अपेक्षा हानिकारक है, क्योंकि ग्रीष्म में जुताई किये गये खेत में अधिक पानी शोषित हो सकता है तो कि भूमि क्षरण को कम करता है।

जल द्वारा भूमि क्षरण वाले खेत की जुताई की संख्या कम रखना ही लाभप्रद है क्योंकि जहां पर जुताई में अपधावन की मात्रा कम होती हैं क्योंकि जहां पर जुताई से अपधावन की मात्रा कम होती हैं वहीं पर मिट्टी के कण भी ढीले पड़ जाते हैं अर्थात जल क्षरण का पहला चरण पूरा हो जाता है। अतः जुताई की कम संख्या ही लाभप्रद है।

(ii) फसलों का चयन - खेत में उगाई जाने वाली फसलों को भूमि संरक्षण के उद्देश्य से निम्न भागों में विभाजित किया जाता है -

क्षरण अरोधी फसलें - दाल वाली फसलें जैसे उर्द, मूंग, लोबिया, ग्वार,लुसर्न, मंगफली हुलगो व कुल्थी आदि।

छोटे दाने वाली फसलों में जई, जौ, गेहूं, व बाजरा आदि व विभिन्न प्रकार की घासें इस वर्ग के अन्दर सम्मिलित हैं।

क्षरण अवरोधी फसलें - इस वर्ग में वे फसलें जिनका वानस्पतिक आच्छादन, जिनकी बीज दर नम अथवा कतारों से कतारों या पौधों से पौधों की दूरी अधिक होती है, सम्मिलित की जाती है। जैसे मक्का व कपास आदि।

विभिन्न अधिक आच्छादन प्रदान करने वाली फसलों के मुख्य लाभ निम्नलिखित हैं -

1 वानस्पति आच्छान वर्षा की बूंदों के सीधे भूमि पर आक्रमण को रोकता है।

2 अपधावन की गति व मात्रा को कम करता है।

3 मृदा जलस्त्राव को बढ़ाता है।

4 मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा बढ़ाकर भूमि के विभिन्न रासायनिक, भौतिक व जैविक क्रियाओं में सुधार करताहै। मृदा में जीवांश पदार्थ, मृदा कणों को आपस में बांधकर रखता है व मृदा जल को रोक व सोखकर मृदा क्षरण को कम करता है।

(iii) फसल चक्र - भूमि की उर्वरता को स्थिर रखने में फसल चक्र का महत्वपूर्ण स्थान हैं। फसल चक्र में क्षरण अवरोधी फसल का होना आवश्यक है। अगर भूमि व जलवायु के आधार पर क्षरण अवरोधी चक्र में रखनी पडती है तो अरोधी फसलों का मिश्रण अधिक लाभकारी पाया जाता है। फसल चक्र के प्रमुख उद्देश्य निम्न होते है -

1 क्रमबद्ध खेती।

2 मृदा उर्वरता में वृद्धि

3 विभिन्न खरपतवार, बीमारी व कीट पंतगों के आक्रमण की रोकथाम

4 खेती की भूमि क्षरण से सुरक्षा

किसी भी क्षेत्रों में लगातार अरोधी फसल जैसे ज्वार आदि के उगाने की अपेक्षा अगर फसल चक्र मं अपरोधी फसल जैसे हुगली, मूंगफली, उर्द, बरसीम, मूंग व लोबिया आदि की सम्मिलित कर लिया जाये तो भूमि क्षरण को रोकने से फसलें महत्वपूर्ण योग देती है।

(iv) कृषि आवरण - मृदा की सतह पर भूसा, पत्तियों या पोलेथीन का कृत्रिम आवरण बहुत ही लाभकारी पाया जाता है। कृत्रिम आवरण की मृदा सतह पर जितनी मोटी परत होती है, उतनी ही अधिक लाभकारी यह सिद्ध होगी। मल्च के प्रयोग से मृदा में नमी की मात्रा व ताप का नियंत्रण भी रहता है। वानस्पतिक मल्च से, मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा बढ़ती है।

(v) पट्टियों में फसल उत्पादन - जिन क्षेत्रों में जल द्वारा मृदा क्षरण की सम्भावना होती है भूमि पर अवरोधी व आरोधी फसलों को एकान्तर पट्टियों में उगाते है। अवरोधी फसल पट्टि अपधावन की मात्रा व गति को कम करने के साथ साथ उपर से अपधावन में बहाकर लाई गई मिट्टी को भी अपने क्षेत्र में जमा कर देती है। पट्टियों में फसल की निम्न किस्में हैं -

(a) कन्दूर पट्टिका खेती

(b) समतल पट्टिका खेती

(c) वायु अथवा पट्टिका खेती

(d) बफर अथवा अन्तस्थ पट्टिका खेती

कन्दूू पट्टिका खेती: - ढालू भूमियों पर ढाल के विपरीत दिशा में अरोधी या अवरोधी फसलों को पट्टियों में उगाना कन्दूू पट्टिदार खेती कहलाता है।

समतल पट्टिका खेती: - समतल क्षेत्रों में फसलों क्रो यष्टिरंटयों में उगाना समतल पट्टिदार खेती कहलाता है है इसके अन्दर क्री स्रमानान्तरपट्टियों में अरोधी त अवरोधी फसलें उगाते हैं

वायु पट्टिका खेती: - जिन 'क्षेत्रों में मुद्रा क्षरण वायु द्वारा होता है वहाँ पर अरो धी फसलों में लम्बी ऊँचाई चाली फसल जैसे ज्वार , बाजरा व मक्का क्री पट्टि के खाद के बाद कम ऊंचाई वाली ऊँचाई वाली अवरोधी फसल जैसे हुलगो , उर्द मूंग आदि को उगाते हैं। इस प्रकार की पट्टियां वायु क्री दिशा के विपरीत लाईन में बोई जाती है। इन पट्टियोंमें खेती करना वायु पट्टिका खेती 'कहलाता है।

(vi) खादों का प्रयोग - भूमि में पौधों के खाद्य तत्त्वों की पूर्ति के लिये विभिन्न प्रकार के जीवांश जैसै गोबर है कम्पोस्ट व हरी खाद तथा अकार्बनिक खाद खेतों में डालते है। विभिन्न जीवांश पदार्थ जो भूमि में मिलाये जाते हैं वे भूमि के कणों को आपस में बाँधते हैं जिससे मृदा कण तितर - बितर नहीं को पाते तथा जीवांश पदार्थ खेत में मिलाने पर पानी अपने अन्दर रोकता है अत : अपधावन की मात्रा कम होती है। इस प्रकार जीवांश खाद मृदा में जल कटाव के दोनों चरणों , कणों के वितरण व बहाकर ले जाने की क्रिया को प्रभावित कर हैं मृदा क्षरण को कम करते हैं। हरी खाद की फसलें इन गुणों के अलावा, खाली खेत की तुलना में विभिन्न वानस्पतिक आच्छादन का लाभ पहुंचाकर मृदा क्षरण क्रो रोकती हैँ।

(vii) बुआई को विधियों - खेतों में बुआई छिटकवां विधि की तुलना में कतारों में बुआई लाभदायक रहती है। क्योंकि कतार यदि ढाल के विपरीत दिशा में जो दें तो वे पानी के कटाव क्री गति के कम कर देते हैं। छिटकवाँ विधि में इस प्रकार की रुकावट नहीं होती। इसके अतिरिक्त यदि फसलों को खाइयों या डोलियों में अगर बुआई करें तो ये खाइयाँ था डोली पूरी डाल के विपरीत दिशा में ही बनानी चाहिए है

(viii) बीज का दर - खेतों में जहाँ पर जल द्वारा मृदा क्षरण की समभावना होती है . बीज की इतनी दर प्रति इकाई क्षेत्रफल पौधों की संख्या , भूमि धरातल को अधिक से अधिक वानस्पतिक आवरण प्रदान कर सके। ऐसे क्षेत्रों में साधारण खेतों की तुलना में चीज की दर अधिक रखते है।

(ix) सिचाई विधियाँ - इस प्रकार की विधि को अपनायें जिसमें कम पानी से खेत में लगाकर अधिक क्षेत्रफल सींचा जा सके। बाढ़ विधि हमेशा ऐसे दोनों में हानिकर होती है। बौछारी विधि से सिचाई अधिक लाभदायक है। ऐसे क्षेत्रों में आवश्यकता होने पर की सिचाई दें क्योंकि नमी; मृदा में जितनी कम रहेगी; वर्षा के पानी को भूमि उतना की अधिक सोख सकेगी।

(x) निदाई गुड़ाईं - निकाई भुड़ाई से भूमि ढीली होती है अत: मृदा क्षरण की सम्भावना बढ़ सकती है, दूसरी और ढीली मृदा जल का शोषण अधिक करके, मृदा को जल कटाव से सुरक्षित रखती है । इसके अतिरिक्त निकाई गुड़ाई में खरपतवार नष्ट करके भी भूमि वानस्पतिक आच्छादन रहित किया जाता है अत : मृदा क्षरण की सम्भावना बढ़ती है , दूसरी और खरपतवार के द्वारा उपयोग किये जाने वाले खाद्य तत्व व मानी, फसलों के द्वारा चूषित कर लिये जाते है अत: फसलों को वानरपतिक वृद्धि होकर; अधिक से अधिक पैदावार होती है जो कि हमारा मुख्य उद्देश्य है।

(xi) कटाई - फसलों को देर से पकने वाली) जातियाँ खेत में उगायें जिससे कि वर्षा का मौसम समाप्त होने के बाद ही फसल की कटाई हो। ऐसी फसलें जिनकी कई बार कटाई करनी पड़ती है , फसल को भूमि से हटाकर न काटे बल्कि भूमि से उपर फसल का कुछ भाग छोड़कर काटना चाहिये । अगर सम्भव हो सके तो फसल कटते समय हैं फसल के अधिक से अधिक अवशेष खेत में ही छोड़ दें जो कि मृदा के जल क्षरण के बचाता है ।

विभिन्न फसलों का भूमि क्षरण अवरोधन के आधार वर्गीकरण फसल किस भीमा तक मृदा क्षरण को रोकती है या बढाती है के आधार पर हैं फसलों को निम्न वर्गों में बाँटते हैं –

1 मृदा क्षरण अवरोधी फसलें

(A) Perennial & grasses

Trimonthy, Betmuda grass, Canadian blue grass & Kentuoky grass.

(B) Biennaial & perenniallegume

Alfaifawhite clovers,Common lespedeza, Peronnial lespodeza,Field pea, cowpea & timothy,

(C) Orchards- Shelterbelts of Forest Planting

2 . मृदा क्षरण भी अवरोधी

Oat, Barley, wheat,Flex,Millets, Buck Wheat :Sorghum,pea,Berseem, Sunhemp etc.

3. मृदा क्षरण अरीधी फसलें

Maize: Cotton, Potato,Soyaban & tobacco etc.

2 वृक्षारोपण

भूमि संरक्षण में वनों की महत्ता को ध्यान में रखते हुए भूतपूर्व केन्द्रीय एवं कृषि मंत्री श्री के.एस. मुन्शी ने जून 1950 में वन महोत्सव अथवा अधिकवृक्ष लगाओं आन्दोलन प्रारंभ किया। इससे पहले वृक्ष लगाने का आंदोलन कभी देश में नहीं हुआ था। इसी वर्ष लाखों वृक्ष विभिन्न क्षेत्रों में लगाये गये। प्रत्येक वर्ष् वन महोत्सव एक वार्षिक राष्ट्रीय त्यौहार केरूप में 1-8 जुलाई तक मनाया जाता है।

वृक्षारोपण एवं वनों की सुरक्षा इनकी निमनलिखित महत्ताको ध्यान में रखकर करनी चाहिए –

1 वृक्षों से भूमि के क्षरण को जल अथवा वायु से होता है, सुरक्षा होती है।

2 वृक्षों से किसी स्थान की जलवायु सुहावनी होती है।

यदि किसी क्षेत्र से काट दिये जायें तो वहां पर वार्षिक वर्षा कम हो जाती है तापक्रम इन क्षेत्रों में बढ जाता है। हमारे देश में गोवर्धन, वृदावन, मधुवन व शिवालिक पर्वतों के वृक्ष नष्ट होने पर वहां की जलधाराओं में केवल रेत ही रह गया है। इसके अतिरिक्त जहां आजकल राजस्थान 80000 स्वायर मील्स में रेत ही रेत में कभी अच्छा सधन वन था। आजकल राजस्थान का यह रेगिस्तान 100 मील की लम्बी पट्टि में आधा मील प्रति वर्ष उत्तर प्रदेश की उर्वरा भूमि को ढककर नष्ट कर रहा है। इस प्रकार 50 वर्ग मील भूमि प्रत्येक वर्ष उत्तर प्रदेश को नष्ट को रही है। यदि हम बढ़ते हुये रेगिस्तान क्री समस्यापर ध्यान नहीं दिया गया तो उत्तरी भारत की अधिकार उपजाऊ भूमि को यह आने वालेवर्षो में नष्ट कर सकता है। दक्षिण में नीलगिरी पर्वत भी अब वनस्ततिहीन होता जा रहाहै। अत: अपनी आवश्यकता को पूर्ति के लिये वनों व चरागाहों को नष्ट न कर उनकी सुरक्षा करना आवश्यक है।

3 वृक्ष चाहों के आवेग को कम करते हैं व भूमि में जल स्तर क्रो नीचा जने से रोकते हैंं

4 मृदा में कार्बनिक पदार्थ मिलाकर इसको उर्वरा बनाते हैं।

5 वृक्ष हमेंं इमारतों के लिये व इंधन के लिये लकडी प्रदान करते है।

6 वृक्ष मनुष्य केलिये फलों के रूप में भोजन प्रदान क्यो है जो हमारे के लिये चारा।

7 जंगली जानवरों की सुरक्षा करते हैं जो कि हमारे लिये अपरोक्ष रूप में लाभदायक होते हैं।

8 वन कहीं कहीं पर हमारी अन्तर्राष्ट्रीय सीमा निर्धारण भी करते हैं।

श्री के. एम. मुन्सी ने वनों अथवा वृक्षों की महत्ता को सिद्ध करने के लिये निम्न जाते बातें कहीं जो कि वास्तव में अपनी कसौटी पर चरितार्थ होती है।

"Trees means water, water means bread and bread is the stuff of life."

वृक्षों की महत्ता के बने में दार्शनिक Max well ने वल्ला या कि कोई. भी राहु लडाई से नष्ट नहीं होता । लडाई समाप्त होने पर वह अपनी प्रत्येक प्रकार की नष्ट शक्ति आने वाले समय में पूरी कर सकता है । अगर किसी राष्ट्र में वनों को साप्त कर दिया जाये तो उसको पूर्ण सम्पत्ति ही नष्ट हो सकती है । अत: किसी देश की सुरक्षा व सम्पन्नता वनों में निहित है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्दर राजस्थान के मरूस्थल जो कि उत्तर पदेश व देहली की और बढ रहा है, रोकने की योजना बनायी गई । इसी योजना के अन्दर 1952 मेंं जौधपुर के अन्दर मरूस्थल 'वृक्षारोपण एवं अनुसंधान केन्द्र स्थापित किया गया। राजस्थान में पश्चिमी सीमा यर 400 मील लम्बी च 5 मील चौडी वानस्पतिक पट्टि लगाने को योजना पर कार्य आरम्भ किया व 150 मील से भी अधिक लम्बाई में वृक्ष लगाये गये इसी योजना के

अन्तर्गत 100 वर्ग मील भूमि को चरागाह सुधार एवं अनुसंधानात्मक वृक्षारोपण के लिये अलग किया गया।

उत्तर प्रदेश सरकार ने भी 1952 में एक योजना बनाई जिसका उदेश्य राजस्थान के मरूस्थल को उत्तर प्रदेश की और बढ़ने से रोकना था। इस योजना का नाम उ.प्र राजस्थान सीमा जिला वृक्षारोपण है। इस योजना के अन्तर्गत अवनालिकाओँ की रोकथाम के लिये वृक्षारोपण सड़कों, नहरों और रेल पटरियों के सहारे वृक्ष

लगाना था। उत्तर प्रदेश के चार जिलों, आगरा , मधुरा, अलीगढ़ और इटावा में यह योजना ' "_ को चालू की गई। इस योजना के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश के कृषि विभाग, वन विभाग व बागबानी विभाग से सहायता ली गई।

वृक्षारोपण के लिये वृक्षों को छांट - वृक्षों को छांट करते समय यहाँ क्री जलवायु, मृदा क्री किस्म ढाल वनस्पति की प्रकृति आदि का ध्यान रखना चाहिये। ऐसी भूमियों में विशेष रूप से खाद्य तत्वों का हास को जाता है अत : ऐसी जातियों छांटनी 'चाहिये जो कम उर्वरा भूति में भी वृद्धि कर सके । वृक्षारोपण कि लिये वृक्षों की कुछ क्रिस्पें निम्नलिखित हैं 1 ये किस्मे क्षेत्रों में सीधे उगे सकते हैं।

S.No.	Locial Name	Botanical Name
1	बबूल (Babool)	Acacia Arabica
2	बबूल	A. Catechu
3	बबूल	A. Leveophbea
4	बबूल	A. Myedsta
5	नीम (Neem)	Azadirecta indica
6	सिरस	Albizzia lebbek
7		Annona spumosa
8		Aegle maronelos
8 अ	कंचन (Kunchan)	Bauhinia rawil
9		Butea fromdosa
10		Bassia Iatifolia
11		Buchachania Iatifolia
12	अमलतास	Cassia fistula
13		Cassia saimea

14		Chloroxylom swietonia
15	(Sissum)	Dalbergia sisso
16		Discyras Montana
17	जामुन (Jamun)	Eugenia jamontana
18	यू: के; लिपटस ‘ स्पिेसीज	Eucalyptus sp.
19		Feronia elephant
20		Gemelina arborea
21		Holoptelia sntegrifolia
22		Haadwickia binta
23	आम	Melia azadirachta
24		Mangifera indica
25		Prosopis specigera
26		Poruliflora
27	करंज(Caraj)	Pougamina glabra
28	आंवला (Aola)	Phyllanthus emblica
29		Pterocarpus marsupsum
30	गुलमोहर (Gulmohar)	Poinciana regia
31		Swietans mahogany
32		Sapindus trifoliatus
33		Santalum album
34	इमली	Tamarindus indica
35		Tectona grondis
36	वेर	Zizyphus jujube
37	शहतूत (Sahtut)	Morus alba
38	खाजौंरी (Khjory)	Phoenixdaety Iifera
39	बांस (Bamboo)	Dendrocalamus etrictus
40	हिरडा (Hirda)	Terminalia chobula

वृक्षारोपण की विधि -

वृक्षारोपण की अलग अलग विधियां है। डी.वी. खिस्ती 1966 के अनुसार ढाल भूमियों पर 2×2'' की नलियां तैयार करते है। इन नलियों को एक दूसरे से फासला ढालू भूमि पर 100 रखतेहैं। अधिक ढालू भूमि पर नलियों कोएक दूसरे से दूरी 12 तक भी लेते है। वृक्षों के बीजों को खाई केढाल की उचाई के बीच में दो लाइनों के बीच में दो लाईनों में 6'' के अन्ती पर बो देते है। अगर बीजलों के अंकुरण की संभावना कम हो तो पोलथीन ही थैलियों में बीज उगाकर खाई में 12 के अन्तर पर 2-3 उगे हुए बीजों का रोपण कर देते हैं। इसके अतिरिक्त ऐसे क्षेत्रों में 12×12 के अन्तर पर 1×1×1 आकार के गड्डे तैयार उनमें भी वृक्षों का रोपण किया जा सकता है।

ढाली अथवा अवनलिकाओं के किनारों पर वृक्षारोपण करते समय इनके मुहानों पर बांध बना देते हैं। बांध पक्का सीमेंट का बनाया जाता है तथा इसमें पानी का रास्ता छोड दिया जाता है। इस बांध के कारण नाले में कुछ उर्वरा मिट्टी की एकत्रित होजाती है। नाली या अवनलिकाओं के किनारे अथवा ढालू भूमियों पर 15-20 के अन्तर पर करीब 3 गहरी खाईयां खोद देते हैं। बाद में वृक्षों की कटाई छटाई भी करते रहते है, ताकि आवश्यकता पडने पर सीधी लकडी प्राप्त की जा सके। कटाई छटाई करते समय ध्यान रहे कि पौधों के मुख्य तने को कोई हानि न होने पाये।

वृक्षारोपण करते समय वृक्षों की उन्हीं किस्मों का प्रयोग करें जो निमनलिखित गुणों की अधिकाधिक पूर्ति करती हो –

1 खाद्य तत्वों की कम से कम आवश्यकता हो
2 सिंचाई की कम आवश्यकता हो
3 प्रत्येक प्रकार की भूमि में भूमि की दशानुसार अपनी वृद्धि करने की क्षमता हो
4 जडों की वृद्धि भूमि के समान्तर व नीचे अधिक गहराई तक होती है।
5 बढ्वार करने की गति कम समय में अधिक हो।
6 वृक्षों की वृद्धि वानस्पतिक वृद्धि के रूप में अधिक हो
7 सूखा पाला आदि सहन करने की क्षमता अधिक हो।
8 बीमारियों व कीट पंतगों के आक्रमण की अधिक सहन करते हुए वृद्धि कर सके।

3. घास रोपण विधियां

अधिक ढालू के कारण जहाँ पर फसलें भूमि क्षरण रोकने में असमर्थ सिद्ध होती हैं घासों द्वारा भूमि का कटाव रोका जा सकता है है कटाव ग्रस्त क्षेत्रों में जहाँ मृदा क्षरण गम्भीर रूप धारण कर चुका है, गहरे खड्डें बन जाते हैं वहाँ पर भूमि का कटाव रोकने के लिये तथा मृदा संरचना में सुधार करने के लिये घासों को स्थापित किया जाता है । घासों की जडों द्वारा भूमि में दानेदार रचना बनती है तथा घास भूमि क्षरण को रोकने के लिये बनाये गये मेंड व वेदिका को भी सुरक्षित रखती है ।

इसके अतिरिक्त अवनालिकाओं, नालों आदि के किनारों को सुरक्षा भी घासों से की जा सकती है । संक्षेप में घासों का भूमि क्षरण में महत्व निम्न प्रकार प्रदर्शित कर सकते हैं -

1 मृदा ग्रेम्यूलेशन में सुधार होता है।

2 मृदा क्षरण में रोकथाम होती है।

3 मृदा क्षरण से ग्रसित क्षेत्रों में जल मार्ग धरातल को स्थिर करती है।

4 मृदा में जैविक क्रियाओं में सुधार करती है।

5 अवनालिकाओं के किनारों, वेदिकाओं की दीवारों, नालों व सड़कों के किनारों को घास स्थायी करती है।

6. मृदा में कार्बनिक पदार्थ बढाकर उत्पादन शक्ति बढाती है।

भूमि' क्षरण व अपधावन की मात्रा पर घासों के प्रभाव का निरीक्षण करने के लिये डॉ. एससी. सिंह तेवतिया (1965) ने भूमि संरक्षण केन्द्र हजारी बाग (बिहार) में प्रयोग किये जिनके परिणाम नीचे तालिका में प्रदर्शित किये गये है।

Table : Showing the effect of different grasses on soil & water loss (Mean of year 1956-57)

S.No.	Nameof grasses	Run off % of Precipitation	Soilin Ibs/acre
1	Cynodon plectostachyon	33.5	2093
2	Urochloa stolniferees	31.0	3615
3	Urochloa mosambicencis	53.0	12056
4	Ponicum ant idotale	30.9	16591
5	Cenchure plectostachyon	29.0	2960
6	Cenchurs cilliaris	31.7	5682

Source- Journal of soil and water conservation – Vol. 14 No. page 40

उपर्युक्तानुसार म़दा कासबसे कम क्षरण दूब क्षेत्र के अन्दर होता है। भूमि संरक्षण में अन्य घासों की सूची निम्न प्रकार है

Table: Showing the list of grasses.

घासों की सूची (List of Grasses)

Common Name Botabical Name	
1 अंजन (Anjan)	Canchrus cilaris
2 ब्लू पैनिक (Blue panic)	Punicum antidotale
3 कुशाल (Kushal)	Hetropogon contortus
4 सूडान (Sudan)	Sorghum vulgare var. sudanesis

5 जैन्ट स्टार (Gant star)	
6 डैलिस (Dallis)	Paspalum dilatatum
7 जनेवा (Jenewa)	Dicanthium annulatum
8 नैपियर (Napier)	Pennisatumpolystachyoh
9 पराना (Parana)	Sachiha nervosum
10 दूब (Dub)	Cynodon dectylon
11 रोहडस (Rhodes)	Chloris gayana
12 पारा (Para)	Brancharia nutica
13 काला अंजन (Black anjan)	Conchrus setigerus
14 थिन नैपियर (Thin Napier)	
15 गिनिया (Guinea)	Panicunt
16 लव ग्रास (Love grass)	sp.
17 स्पीयर (Spear)	Eragrostis curvula
18 लेमन घास (Lemon grass)	Heteropogon contortus
19 सिवान (sewan)	Cymbopogon nords
	Losiurus sindicus

अन्य घासों Other grasses

1 लैसपैडेजा (Lespedeza)
2 गिनिया (Ginea)
3 किकून (Kikuna)
4 टिमोथी (Timothy)
5 नील (Neel)
6 ब्यूफैलो (Buffalo)
7 मिडो (Meadow)
8 व्हीट ग्रास (Wheat grass)
9 ब्ल्यू (Blue)
10 स्वीट क्लोवर (Sweet clover)
11 होप क्लोवर (Hop clover)
12 जोहनसन (Johnson)
13 वलाइल्ड बीनस (Wild beans)

14 व्हाइट क्लोवर (White clover)

अच्छी घास के गुण

घासों का चयन करते समय निम्न बातों का ध्यान रचना चाहिए -

1 चारे के रूप में पैदावार अधिकदे सकें।

2 चरागाह को चराने के बाद, पुन: वानस्पति व़ृद्धि शीघ्र हो सके।

3 जडों का विकास सघन हो तथा कम समय में हों।

4 धरातल पर फैलाव शीघ्रता से हो।

5 घास की व़द्धि वानस्पति प्रजनन से होती है

6 सूखा सहन करने की शक्ति हो

7 जलमग्न दशा को सहन कर सके

8 भूमि के विकार जैसे लवणीकरण व अम्लता आदि को सहन कर सके

9 धारी लम्बी अवधि तक भूमि पर आच्छादित रहे

10 घासें तेज वायु व वर्षा के प्रहार से प्रभावित न हो

ले फार्मिंग - फसल चक्र से विभिन्न फसलों के साथ घासों को उगाना फार्मिंग कहलाताहै। ले फार्मिंग से चारे की समस्या हल होती है व मृदा का संरक्षण एवं सुधार होता है।

4. **यांत्रिक विधियां**

यांत्रिक विधि से जल द्वारा भूमि क्षरण को रोकने के लिये निम्नलिखित विधियां अपनाई जाती है।

(i) कन्टूरिंग
(ii) वेदिकायें
(iii) मेडबन्दी
(iv) स्कूरपिंग
(v) बेसिनलिस्टिंग
(vi) सबसोयालिंग
(i) कन्टूरिंग

ढाल के उपर एकही उंचाई के अलग अलग दो बिन्दुओं को मिलाने वाली काल्पनिक रेखा को कन्टूर कहते है।

परिभाषा – ढाल के विपरित कन्टूर रेखा पर किसी भी प्रकार की कर्षण क्रिया को कन्टूरिंग कहते है।

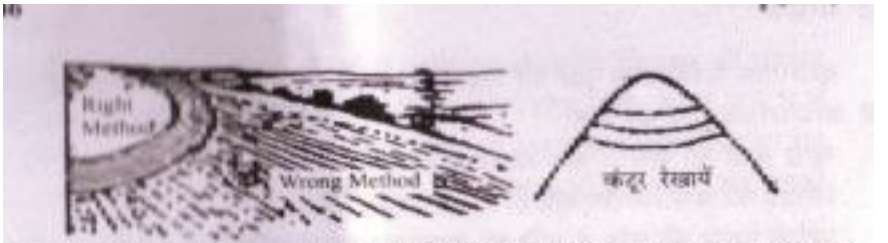

चित्र 23.4 : Showing cultivation across the slope and not along the slope, is the right method

हमारे देश के अन्दर किसान साधारणतया ढाल के उपर से नीचे या नीचे से उपर कृषण क्रियायें करते हैं। इस विधि से मृदा से जल की हानि अधिक होती है। इसके अतिरिक्त यदि ढाल के विपरित कन्टूरिंग विधि में खेती करें तो इसके अनेक लाभ होते हैं।

कन्टूरिंग के उद्देश्य -

कन्टूरिंग विधि से खेती करने के मुख्य उद्देश्य एवं लाभ निम्नलिखित हैं -

1 कम वर्षा वाले क्षेत्रों में नमी की सुरक्षा

2 अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में मृदा क्षरण से बचाव

3 सम्पूर्ण क्षेत्र में नमी का समान वितरण

4 वर्षा केपानी को जो अपधावन के रूप में बहता है, गति में अवरोध करती है। अत: पानी निचले धरातल परएकसाथ् इकट्ठा नहीं होता। बाढ आने से बच जाती है।

5 वेदिकाओं की सुरक्षा करना, जिससे कि वेदिकायें अपने उद्देश्य की पूर्ति करती रहती है।

6 विभिन्न कृषि कार्यों मे समय की बचत

कन्टूरिंग विधि से खेती करने पर पैदावार काफी बढाई जा सकती है। पर्वतीय क्षेत्रों में प्राय: कन्टूरों की निर्माण 1.5-2.0 मी; के अन्तर पर करते हैं।

(ii) वैदिका

अधिक ढालू भूमि पर डाल की सीढियानुमा परिवर्तित करके खेती की जा सकती है। ये सीढियां चबूतरों के रूप में बनाई जाती है। इन सीढियों अथवा चबूतरों पर खेती की जाती है। चबूतरों की रोकथाम के लिये चबूतरों के निचले सिरे की ओर बडी मेड अथवा दीवार की तरह का मिट्टी काबांध होता है। जो कि अपधावन को रोकता है। मिट्टी का यह बांध ही टेरेस कहलाती है।

वैदिका उद्देश्य -

वैदिकाओं के उद्देश्य निम्न प्रकार है -

1 कम वर्षा वाले क्षेत्रों में नमी कोमृदा में सुरक्षित रखना।

2 अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में मृदा को जल कटाव से बचाना

3 फालतू पानी का नालियों द्वारा जल निकास करना

4 अधिक ढालू भूमि को कृषि योग्य बनाना

5 अधिक फसलोत्सपादन देना

वेदिकाओं का क्षेत्र

अलग अलग प्रकार की वेदिकाओंका क्षेत्र अलग अलग होता है निम्नलिखित दशाओं में वेदिकाओं का प्रयोग अधिक लाभदायक है -

1 वेदिक प्राय: अधिक ढालू भूमियों में जहां पर मृदा क्षरण के नियंत्रण करने की अन्य विधियां जैसे कन्टूरिंग पट्टियों में खेती आदि असफल होती है अपनानी चाहिए अर्थात जहां पर सस्यविधियां असफल होती है वहां पर वेदिकायें अच्छा परिणाम देती है।

2 उन क्षेत्रों में जहां मृदा क्षरण अधिक होता है।

3 जहां पर ढाल की लम्बाई अधिकहोती है।

4 वर्षा की मात्रा व प्रचण्डता अधिक होती है।

5 जहां पा ढाल 9 प्रतिशत तक पाये जाते है।

वेदिकाओं के प्रकार -

(अ) सीढीनुमा वेदिका

इस प्रकार की रचनायें ढाल के विपरित दिशा में समतल सीढियां होती है जो क्रम मे ंएक के बाद दूसरा चबूतरे की तरह होती है सीढीनुमा वैदिका के 2 रूप हो सकते हैं -

1 खुले किनारों वाला सीढीनुमा वेदिका

2 खुले किनारों वाली ग्रेडिड वेदिका

(ब) प्रवणित जलमार्ग वेदिका -

इन वेदिकाओं का अर्थ नाली के नीचे के नीचे एक मेड के होने से हैं यह नाली डाल के विपरित उचित अन्तर के लिये होती है जो अपधावन की मात्रा व वेग को क्षरण का कारण बनने से पहले ही रोक देती है।

(iii) मेड बन्दी

यह विधि कम वर्षा वाले क्षेत्रों मेंनमी की सुरक्षा के काम में लाई जाती है। इसलिये इनका नाम प्रचूषी वेदिका या समतल वेदिका भी दिया जाता है। कुछ क्षेत्रों में इन मेडों को Right type terrace or Contour bund का नाम दिया जाता है। समतल वेदिका या निर्माण बिना ग्रेड में होता है।

9.7 वायुवीय मृदा क्षरण

मृदा के एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानान्तरित करने की क्षमता वायु के वेग पर निर्भर करती हैं वायु का अधिक वगे अधिक मिट्टी को स्थान्तरित करता है वेग कम होने पर मृदा के कण उन्हीं स्थानों पर छूटने प्रारम्भ हो जाते हैं।

वायु द्वारा मृदा कटाव में तीन क्रियायेंहोती है -

1 सतह विसपर्ण

2 उत्परिवर्तन

3 निलम्बन

1 सतह विसपर्ण – भारत में वायुवीय मृदा के दृष्टिकोण से मृदा का 5.25 प्रतिशत भाग इस प्रकार के क्षरण से प्रभावित होता है। बडे कण जिनकाकि आकर 0.5 – 1.1 मिमी; तक होता है,भूमि की सतह पर रेंगकर एक स्थान से दूसरे स्थान्तरित होते हैं।

2 उत्पपरिर्वत – जब हवा का सीधा दबाव मृदा कणों परपडता है तो मृदा कण अपने स्थान से उपर की ओर छिटकने लगते है तथा दूसरी जगह जाकर गिर जाते हैं। जिस स्थान पर कण गिरतेहैं वहां के कणों को छिटका देते हैं इस प्रकार येकण आगे बढ्ते रहते हैं।इस क्रिया द्वारा मुख्यत: 0.05 मिमी; से 0.5 मिमी. आकारवाले मृदा कण प्रभावित होते हैं । मृदा क्षरण में मृदा केभार के दृष्टिकोण से 50-75 प्रतिशत भाग इस क्रियाद्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया जाता है।

3 निलम्बन – इस प्रकार की क्रिया में मृदा के 0.05 मिमी; 0.1 मिमी; आकर के कण एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचते हैं। वायुवीय मृदाक्षरण मे भार के अनुसार मृदा का 3-4 प्रतिशत भाग इस प्रकार की क्रिया द्वाराएक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया जाता है। इस प्रकार की क्रिया में मृदा के कण वायु के द्वारा वातावरण में भटकते रहते हैं और सेकडों,हजारों मील दूरी तक स्थान्तरति हो सकते हैं।

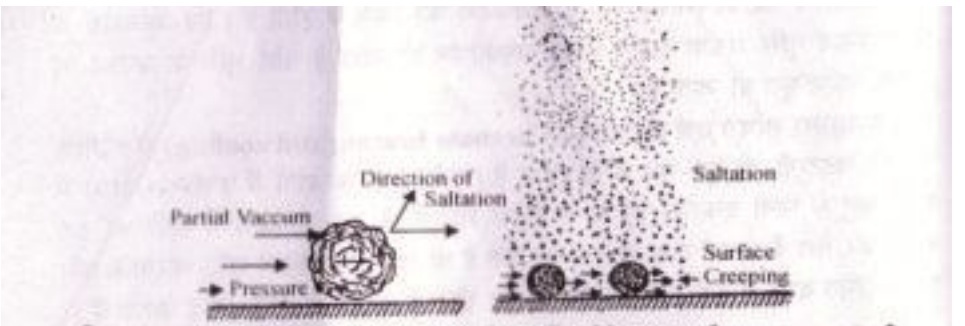

चित्र 23.5 : A- Salting soil particles, B - Nature of movement of particles by wind.

9.8 वायुवीय मृदा क्षरण के रूप

वायुवीय मृदा क्षरण के विभिनन रूप निम्न प्रकार है -

1. एफल्यूशन – मृदा क्षरण का यह रूप केल्केरियस मटियार व महीन बालू भूमियों में पाया जाता है, इस विधि में मृदा कणों पर वायु का सीधा दबाव पडता है, जिससे मृदा कणों में गति पैदा

होती है। फलस्वरूप हल्के मृदा कण हवा में उड जाते हैं व भारी कण सतह विसर्पण द्वारा स्थान्तरित होते हैं।

2. **एक्ट्रसन** – इस प्रकार का वायुवीय मृदा क्षरण मोटे एवं भारी कणों वाली बुलई भूमियों में होता है। वायु का दबाव इन कणों का नहीं उठा सकता। भारी तूफानों द्वारा ही इस प्रकार की भूमियों में मृदा क्षरण होता है।
3. **डिट्रशन** – जोत के अन्दर नई भूमियों या जिन क्षेत्रों में मेड बनी होती है, इस प्रकार का क्षरण पाया जाता है। मेड के कण फिसल फिसल कर नीचे नालियों में एकत्रित होते रहते हैं।
4. **एलफेशन** – इस प्रकार के क्षरण में मृदा के महीन कण जिस क्षेत्र में उडते हैं, वहां ले उडाकर अन्य क्षेत्रों में एकत्रित होते हैं। जिन क्षेत्रों में कण उठाये जाते हैं और जहां पर जमा होते हैं उनका आपस में सैकडों मीलों का अन्तर हो जाता है। मृतिका व सिल्ट के कणों का हास इस क्रिया में अधिक होता है।
5. **एब्रेशन** – ढेलेदार खेतों मे इस प्रकार का क्षरण पाया जाता है । हवा के प्रभाव से ढेले घिसते रहते हैं। इस प्रकार के क्षेत्रों में कणों की गति उत्परिवर्तन के द्वारा बढती है।

वायुवीय मृदा क्षरण को प्रभावित करने वाले कारकों Chepil Woodruff 1963 द्वारा निम्न समीकरण द्वारा प्रदर्शित किया गया है -

E = F (I,C, K; L, V)

Where E = Soil loss is Tons/acre/annum

F= Factors

I = Soil-erodiblity

C = Climatic Factors

K = Soil Surface roughness

L = Equivalent width of field (The mmaximum unsheltered distance across the field along the prevailing wind ersos direction) and

V = Eqvivealent quantity of vegetative cover

9.9 सारांश

मृदा क्षरण को प्रभावित करने जाले जलवायु सम्बन्धी कारकों में वर्षा कि प्रचंडता का प्रमुख स्थान है यदि प्रर्वम्ता कम है जो वर्षा को मात्रा अधिक होते हुए भी कटाव कम होता है । इसी प्रकार अधिक प्रचंडता के साथ थोड़े अवधि तक होने वाली वर्षा द्वारा क्षरण अधिक नहीं होता क्योंकि कम वर्षा को अवधि के कारण अपधावन मात्रा अधिक नहीं हो पाती। यदि वर्षा की मात्रा व प्रचंडता दोनों ही अधिक को तो मृदा अपरदन या कटाव एवं अपधावन दोनों की मात्रा अधिक होगी ।

9.10 अभ्यास प्रश्न

1. वायुवीय मृदा क्षरण को प्रभावित करने वाले कारकों का समीकरण किसके द्वारा दिया गया था ?

   (अ) Woodruff (ब) Rodford

   (स) Russell (द) Richardson

   (अ)

2. नीम का वैज्ञानिक नाम क्या हैं ?

   (अ) Albizzia lebbek (ब) Azadirecta indica

   (स) Annona spumosa (द) Aegle maronelos

   (ब)

3. निम्न में से क्षरण अरोधी फसलें कौनसी हैं ?

   (अ) उर्द (ब) मूंग

   (स) लोबिया (द) उपरोक्त सभी

   (द)

4. कन्टूरिंग विधि से खेती करने के मुख्य उद्देश्य एवं लाभ क्या हैं?

5. पानी द्वारा किए गए अपरदन को किन मुख्य रूपों में वगीकृत किया जाता है ?

9.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

- यादव, एस.पी.एस. 2007. ऊसर भूमियों को उपजाऊ बनाएं. विश्व कृषि संचार, जून-2007.
- शर्मा, ओ.पी., इन्टोदिया, एस.के., शर्मा, एस.एल. एवं नकेला, एन.एस. 2009. शस्य विज्ञान (कृषि वर्ग), माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर.
- चौधरी, जे. पी., 2000. मृदा विज्ञान : खाद एवं उर्वरक. भारती पब्लिकेशन, बडोत (बागपत).
- जाट, बी.एल. 2012. क्षारीय व लवणीय भूमि सुधार. विश्व कृषि संचार, मई- 2012.

इकाई - 10

मृदा वर्गीकरण एवं मृदा सर्वेक्षण

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 मृदा वर्गीकरण

10.3 मृदा सर्वेक्षण

10.4 भूमि-क्षमता वर्गीकरण

10.5 सारांश

10.6 अभ्यास प्रश्न

10.7 संदर्भ ग्रंथ

10.0 उद्देश्य

इस इकाई को पड़ने के पश्चात आप निम्न ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे :-

- मृदा वर्गीकरण किस तरह किया जाता हैं
- मरदा सर्वेषण के कार्य, प्रकार, विधियाँ, आदि
- भूमि क्षमता वर्गीकरण, आदि

10.1 प्रस्तावना

मृदायें संसार की बड़ी प्राकृतिक महत्वपूर्ण सम्पादायें है। जिनका समुचित उपयोग इनकी प्रकृति, गुणों, विस्तार सीमा एवं स्थान के बारे में जानकारी प्राप्त रखने तथा उस जानकारी का तर्क संगत उपयोग करने पर निर्भर करता है। मृदा वर्गीकरण एवं मृदा सर्वेक्षण का प्रमुख उद्देश्य किसी क्षैत्र की मृदाओं का अध्ययन करना और क्षैत्रानुसार मानचित्र में दर्षाना है, ताकि उनका समुचित उपयोग किया जा सके।

10.3 मृदा वर्गीकरण

मृदा अध्ययन को सुविधाजनक बनाने के लिये मृदाओं की विभिन्नताओं व समानताओं को आधार मानकर एक व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध व्यवस्था में वर्गीकृत किया जाना आवश्यक समझा गया। मृदाओं के वर्गीकरण की वैज्ञानिक पद्धतियां, जो कि रूस एवं अमेरिका में विकसित की गयी थी, इनके अनुसार इनका वर्गीकरण मृदा प्रोफाइल के अध्ययन पर आधारित है, जो कि मृदा निर्माण के सभी कारकों एवं प्रक्रमों का उत्पाद है। विभिन्न संस्तरो के वर्गीकरण, के अनुसार मृदाओं को अलग-अलग संवर्गो (Categories) में वर्गीकृत किया गया है। **उच्च संवर्ग- गण** (Order),**उपगण** (Sub-order), **वृहद**

मृदा समूह (Great soil group) एवं **उप समूह** (Sub group) है। ये वृहद क्षैत्र की मृदाओं का सामान्य ज्ञान कराते है तथा उनका सम्बन्ध सम्पूर्ण संसार की मृदाओं से दर्षाते है। **निम्न संवर्ग**- कुल (families), **श्रेणी** (series), **प्रारूप** (types) एवं **प्रावस्थाये** (phases) है। जो कि मृदा की उत्पादक क्षमताओं का मूल्यांकन करने में महत्वपूर्ण है। गण (order) के आधार पर मृदाओं को प्रमुखत: तीन समूहों में वर्गीकृत किया गया है।

क्षेत्रिय (Zonal) : ऐसी मृदायें उचित जल निकास वाले पैतृक पदार्थो पर विकसित एवं वातावरण के साथ साम्यावस्था में होती है जैसे पांडजोल्स, लैटेराइट एवं ग्रुमुसोल **अंत: क्षैत्रिय (Intra zonal):** ऐसी मृदाओं में भिन्न प्रोफाइल होती है तथा उनके गुण स्थलाकृति की स्थानीय परिस्थितियों या पैतृक पदार्थो से जलवायु और वनस्पतियों के सामान्य प्रभावों की अपेक्षा अधिक प्रभावित होते है। ऐसी मिट्टियां दो या अधिक क्षेत्रिय मृदाओं के साथ-साथ छोटे क्षैत्रों में मिश्रित पायी जाती है। उदाहरणार्थ- अक्षेत्रीय मृदाओं में अविकसित प्रोफाइल की होती है। ये मृदायें ढालू चट्टानों पर पायी जाती है, जिनमें मृदा निर्माण अच्छी प्रकार नहीं हो पाता है। ये मृदायें किसी भी जलवायु मे पायी जा सकती है। इनके उदाहरण लिथोसोल, जलोढ़ मृदायें व सूखी बालू हैं।

मृदाओं को कुछ मुख्य गुणों के आधार पर आगे भी कुछ वर्गो में वर्गीकृत किया गया है। किसी एक प्रकार की जलवायु में मृदा का वर्गीकरण दूसरे प्रकार की जलवायु में उससे भिन्न होता है।

तालिका :1 उश्ण कटिबन्धीय (Tropical) एवं उपशोष्ण (Subtropical) मृदाओं के वर्गीकरण के लिये परीक्षा के तौर पर योजना

गण	**उपगण**	**वृहद मृदा समूह**
	नम प्रदेश (humid region)	(अ) 1. काली ह्यूमस शीर्ष मृदाओं के साथ पॉडजाली पीली मृदायें। (ब) 1.लाल पीली पॉडजाली मृदायें 2.लैटराइट रहित लाल मृदायें 3.लैटराइट युक्त लाल मृदायें 4.अवक्रमित धूसर (Degraded gray) और काली क्ले मृदायें 5.जलोढ़ धूसर और काली क्ले मृदायें 6.लाल रेगिस्तानी मृदायें 7.गहरी रेगिस्तानी मृदायें
क्षेत्रीय		
	शुष्क प्रदेश	
	कैलसीमाफिक	8.चूना पत्थर के ऊपर चूनेदार लाल मृदायें

		9.चूना लाल पत्थर के ऊपर चूनेदार काली मृदायें 10.मार्लो (Marls) के ऊपर लाल चूनेदार मृदायें 11.मार्लो के ऊपर काली चूनेदार मृदायें
अन्त: क्षेत्रीय	हैलोमार्फिक	12.लवणीय मृदायें 13.भौम जल लैटराइटी मृदायें 14.प्लानोसोल (Planosols)
	हाइड्रोमार्फिक	15.कार्बनिक मृदायें 16.लिथेसोल (Lithosols)
अक्षेत्रीय	उपगण नहीं	17.रीगोसोल (Regosols) राख, शुष्क रेत, पवनो- मृतिका (Loess) 18.जलोढ़ मृदायें (Alluvial soils)

1- **क्षेत्रीय मृदायें (Zonal Soils)-** इन मृदाओं के गण (orders) को जलवायु एवं वनस्पति के क्षेत्रों के आधार पर उप-गणों में विभाजित किया जाता है तथा यह उपगण आगे वृहद् मृदा समूहों जैसे पॉडजोल, प्रेरी (Prairie) आदि में विभाजित किये जाते है इस गण के मुख्य समूहों का संक्षिप्त वर्णन निम्न है-

1.1 **पॉडजोल मृदायें** (Podsol soils)- ये मृदायें पहले केवल ठण्डे तथा नम क्षेत्रों की ही विशेषता मानी जाती थी, लेकिन इनको उश्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों में भी विकसित होते हुये देखा गया है। पॉडजोल नाम रूप के शब्द जोला (zola) से

उत्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ राख (Ash) से है। इन मृदाओं के A2 संस्तर का रंग राख के समान भूरा होता है। कुछ क्षेत्रों में ये मृदायें अम्लीय व कठोर कणों वाले पैत्रिक पदार्थो पर विकसित होती देखी गयी है। ये तटीय क्षेत्रों और उच्च ऊँचाइयों में भी पाई जाती हैं। पॉडजोल मृदाओं में हल्की भूरी संस्तर के ऊपर कच्चे जीवांश पदार्थ की एक परत पाई जाती है। इस संस्तर में आयरन ऑक्साइड व जीवांश पदार्थ होने के कारण इस का रंग गहरा बादामी या लाल होता है। उश्ण कटिबन्धीय एषिया के देशों मे जहां जीवांश पदार्थो का संचय अधिक होता है, ह्यूमस पॉडजोल प्रचुरता में पाये जाते है। ह्यूमस पॉडजोल प्राय: उच्च भौम जल-स्तर के प्रभाव में विकसित होते हैं और भौम जल पॉडजोलों के समतुल्य होती है।

ये मृदायें बहुत अम्लीय तथा प्राय: मोटे कणाकार में होती है। व अमुमन जंगलों में मिलती है तथा कृषि के दृष्टिकोण से अधिक महत्वपूर्ण नहीं है। भारत में ये मृदायें उच्च ऊंचाइयों के हिमालय पर्वतों से कुछ भागों में पाई जाती है।

लाल पीली पॉडजोल मृदायें (Red yellow Podzolic soils)

इन मृदाओं का 'ब' संस्तर लाल से पीले रंग का होता है। इसमें गीलेपन के चिन्ह नहीं होते और पॉडजोल मृदाओं की अपेक्षा कुछ शुष्क जलवायु को छोड़कर समान परिस्थितियों में विकसित होती है। ये मृदायें लैटराइटी लाल दुमट की तरह भी वर्णित की गई है और कभी-कभी इसे भौम जल लैटराइट भी कहते है। ये मृदायें प्राय: वनों में मिलती है।

भूरी पॉडजोल मृदाये (Grey podzolic soils)

इनके 'ब' संस्तर में विभिन्न प्रकार के कण पाये जाते हैं तथा इनमें विभिन्न गहराइयों पर कंकड़ मिलते हैं। भूरी पॉडजोल मृदायें अधिकतर पुरानी जलोढ़ मृदाओं की वेदियों (Terraces) पर पायी जाती है। ये नम शुष्क जलवायु में मिलती है। ये प्राय: उश्ण कटिबन्धीय एषिया के देशों में पाई जाती है।

लैटोसोल (Latosols)

लैटोसोल में वे मृदाये सम्मिलित है जो कि पहले लैटेराइटी मृदाओं में वर्गित (grouped) थी। सन् 1940 में कैलोग द्वारा लैटोसोल शब्द सुझाया गया क्योंकि लेटेराइटी मृदायें एक व्यापक अर्थ वाला शब्द था। वे मृदायें जो उश्ण कटिबन्धीय और भूमध्यरेखीय प्रदेशों में विकसित होती है और जिनमें जल निकास अच्छा हो व संस्तरो की पहचान ठीक से न हो, लैटोसोल के अन्दर आती है। इनके मुख्य गुण इस प्रकार है- (i) जीवांश पदार्थ की मात्रा कम होती है, (ii) प्राथमिक खनिज भी कम पाये जाते है, तथा (iii) सिलिका/सैस्क्वी ऑक्साइड अनुपात भी कम होता है। लैटोसोल साधारणतया क्षारीय पैतृक पदार्थ, जैसे डायोराइट, बेसाल्ट व एन्डेसाइट आदि से बनते हैं। इन मृदाओं का रंग पैतृक पदार्थ की किस्म, जलवायु व उठान (elevation) के अनुसार लाल से बादामी व पीलापन लिये होता है। इन मृदाओं की भौतिक दषा अच्छी व कटाव रोकने की शक्ति अधिक होने के कारण कृषि के लिये उपयुक्त समझा जाता है। ये अधिकतर उश्ण-कटिबन्धीय देशों ताइवान और भारत में पाई जाती है।

चर्नोजम (Chernozems)

ये मृदायें रूस, उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका, जर्मनी, हंगरी, अर्जेन्टीना तथा एषिया में पाई जाती है। इसी रूसी शब्द चर्नोजम का अर्थ काली मृदा से होता है। भारत में यह दक्षिणी पठारों तथा मध्य भारत में पाई जाती है जो रेगुर (Regur) या कपास की काली मिट्टी कहलाती है। ये मृदायें शुष्क, अर्द्धषुश्क तथा उप आदर्र (Subhumid) जलवायु के स्टेपीज (Steppes) क्षेत्रों में बनती है। इनमें केल्सियम की मात्रा काफी होती है, जिसके कारण यह मृदायें उदासीन या निर्बल आम्लिक प्रकृति वाली होती है, ह्यूमस पदार्थ के मिट्टी में 12''-15'' की गहराई तक इकट्ठा होने से रंग काला होता है। इन मृदाओं में क्ले कॉपम्लेक्स का विच्छेदन नहीं होता और सिलिका एवं सैस्क्वी ऑक्साइड निक्षालित नहीं हो पाते। चर्नोजेम मृदा में बालू से लेकर भारी क्ले तक सभी प्रकार के पदार्थ मिलते है। आपेक्षिक घनत्व 1-1.2 तक होता है। संरचना बहुत महीन होती है। ये मृदायें नमी शोशित करने वाली होती है। इन मिट्टीयों में जीवांश पदार्थ 1.5-2.0% तक होता है तथा नाइट्रोजन 0.2-0.5% तक पायी जाती है। इनमें फॉस्फोरस तथा सल्फर की मात्रा भी अधिक होती है। ये मिट्टियां अधिक उपजाऊ होती है।

चेस्टनट एवं बादामी मृदायें (Chestnut and Brown Soils)

ये मृदायें उश्ण जलवायु के शुष्क प्रदेशों में बनती है, जहां पर वर्शा 250 से 400 मिमी. तक होती है इनकी वनस्पति छोटी-छोटी घास होती है। इनमें जीवांश पदार्थ कम होती है, इस लिये ह्यूमस पदार्थ संस्तर पतला होता है। ऊपरी सतह के निकट कैल्सियम कार्बोनेट की परत मिलती है।

रेगिस्तानी मृदायें (Desert Soils)

ये मृदायें हल्के रंग की होती है, इनका अपरदन हवा व पानी द्वारा होता है। इनके बनने में भौतिक अपक्षय का मुख्य हाथ है। ये भारत के उजड़े भागों में मिलती है।

अन्त: क्षेत्रीय मृदायें (Intrazonal Soils)- इस गण को तीन उपगणों में विभाजित किया गया है-

1 हाइड्रोमॉर्फिक मृदायें (Hydromorphic Soils)- इनमें नमी की अधिकता होती है तथा जल निकास पूर्णरूप से विकसित नहीं होता है, जैसे- भौम जलीय पॉडजोल (ground water podzol), अर्द्धबौग (Half-bog) तथा बोग मृदायें शीतोश्ण क्षेत्रों की है। इनमें बिना सड़े जीवांश पदार्थ की मात्रा अधिक होती है। इनके संस्तरों में लाल, पीला या बादामी रंग की धारियें (streaks) मिलती है। नम क्षेत्रों में इस मृदा के दो समूह (i) वीसनबोडन (Wiesnboden) तथा प्लानोसोल (Planosol) होते हैं। बीसनबोडन मृदायें घास के क्षेत्रों में तथा प्लानोसोल मृदाये जंगलों में मिलती है।

2 हेलोमॉर्फिक मृदायें (Halomorphic Soils)- शुष्क प्रदेशों में जल निकास की कमी से सतह पर लवणों का सान्द्रण बढ़ जाता है। इन मृदाओं के गुणों पर लवणों के प्रभाव के कारण इन्हे हेलोमॉर्फिक मृदायें कहते है। सोलनचक (Solonchak) या लवणीय मृदायें सोडियम, कैल्शियम मैंग्नीषियम तथा पोटेशियम के विलेय लवणों के एकत्रित होने से बनती हैं। इनमें क्लोराइड, सल्फेट तथा कुछ कार्बोनेट एवं बाइकार्बोनेट ऋणायन्स मिलते हैं, इन्हे सफेद क्षारीय मृदायें भी कहते हैं। जब कोलाइडी कॉम्पलेक्स पर सोडियम की मात्रा अधिक होती है तो सोलोनेट्स (Solonetz)मृदा बनती हैं। इन्हे काली क्षारीय मृदा भी कहते हैं। इनका पी-एच अधिक होता है। ये मृदायें उपजाऊ नहीं होती हैं तथा इनके भौतिक गुण भी अच्छे नहीं होते हैं।

3 **कैल्सीमॉर्फिक मृदायें (Calcimorphic Soils)-** इन मृदाओं के पैत्रिक पदार्थ में चूना की अधिक मात्रा होती है। इसमें दो समूह- (i) बादामी जंगली मृदायें (Brown forest soils) तथा (ii) रेंडजिना (Rendzinas) होते हैं। दोनों समूहों की मृदाओं की सतह उदासीन होती है। बादामी जंगली मृदाओं का रंग सतह पर गहरा बादामी तथा रेंडजिना का रंग हल्का होता है। इस मृदा में अपरदन अधिक होता है।

2- **अक्षेत्रीय मृदायें (Azonal Soils)-** इनकी विशेष तायें जलवायु या किसी मृदा निर्माण की प्रक्रम से निर्धारित नहीं होती, परन्तु इनकी विशेष तायें इनके पैतृक पदार्थ की प्रकृति से प्रभावित होती है। इनमें साधारणतया तीन समूह, (i) लिथोसोल (ii) रेगोसोंल और (iii) जलोढ़ होते हैं।

1 **लिथोसोल (Lithosols)-** ये अपूर्ण अपक्षयित चट्टानों की अधिकता वाली बहुत उथली मृदायें है। ये प्राय: सीधें ढ़लानों पर पायी जाती है, जहां मृदा के लिये वास्तविक पैतृक पदार्थ अन्य का बिल्कुल संचय नहीं होता है। लिथोसोल के गुण वही होते है, जो नीचे की चट्टान के होते हैं।

2 **रिगोसोल (Regosols)-** इन मृदाओं में भी प्राफाइल अच्छी तरह से विकसित नहीं होती है। ये बिखरे हुए पदार्थो जैसे ज्वालामुखी की राख, मालों (Marls) व रेत टिब्बो (Sand dunes) से बनी होती है। इनके गुण विशेष कर पैतृक पदार्थो से प्रभावित होते हैं।

3 **जलोढ़ (Alluvial)-** ये मृदायें पानी द्वारा लाये गये पदार्थो से बनती है। इनमें संस्तरों का विकास पूर्णरूप से नहीं हो पाता है। प्राय: इन मृदाओं का जल निकास अच्छा नहीं होता है। इनका रंग भूरा होता है। इन मृदाओं में से अधिकतर अम्लीय ही हैं। शुष्क क्षेत्रों में बनने वाली जलोढ़ लवणीय तथा क्षारीय होती है। ये मृदायें भारत में सिन्धु, गंगा के मैदान में मिलती हैं। ये मृदायें कृषि के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है।

मृदा वर्गीकरण- 7वॉं सन्निकटन (7^{th} Approximation)

वर्गीकरण की पहली पद्धतियों की कुछ कमियां है जोकि निम्न हैं-

(i) कुछ मृदायें एक या अधिक संवर्ग स्तर पर सभी वर्गो के अनुकूल नहीं होती।

(ii) प्रत्येक संवर्ग स्तर पर केवल एक वर्ग में एक मृदा को अनुकूल बनाने के लिये परिभाषायें सदैव निश्चित नहीं होती।

(iii) कुछ संवर्ग स्तर बहुत उपयोगी नहीं होते हैं।

(iv) कुछ मृदा समूह तर्क संगत नहीं होते हैं।

अमेरिका में वैज्ञानिकों ने मृदा वर्गीकरण की एक नई पद्धति उपरोक्त कमियों को दूर करते हुए विकसित की। यह पद्धति 1950 में परीक्षण तथा मूल्यांकन के कई चरणों या ''सन्निकटिनों'' के परिणामस्वरूप विकसित की गई। प्रत्येक क्रमागत सन्निकटन पहले की अपेक्षा अधिक यथार्थ एवं पूर्ण था। इस पद्धति की 1960 में ''7वां सन्निकटन (Soil classification A comprehensive system-7^{th} Approximation) को भारत में स्थानीय परिस्थितियों में अंगीकार करने और आवश्यक हो तो सुधार करने के लिये इस पद्धति के परीक्षण के प्रयास किये है। इस नई पद्धति की दो प्रमुख विशेष ताऐं है। पहली, यह मृदा के क्षेत्रीय दषाओं में मापन योग्य गृणों पर आधारित है। ये मापित गुण पुन: जांचे एवं परखे जा सकते है। अत: किसी दी गयी मृदा को किसी वर्गीकरण स्थान में रखते समय विवाद की कम संभावना रहेगी, जबकि ऐसे विवाद इस पद्धति में प्राय: उठ खड़े होते है जो मृदा उत्पति ज्ञात या कल्पित सिद्धान्तों पर आधारित होती है। दूसरी विशेष ता वर्गीकरण संवर्गो के लिये प्रयुक्त नामकरण पद्धति है।

नई पद्धति यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से मृदा निर्माणकारी क्रियाओं तथा कारको पर आधारित न होकर स्पष्टत: मृदा के मापित गुणों पर आधारित है परन्तु इसका यह अभप्राय: नहीं है कि मृदा उत्पत्ति उपेक्षित है। वास्तव में मृदा के गुण प्राय: मृदा उत्पति से सम्बन्धित होते हैं। इसमें वर्गीकरण हेतु मृदा के सभी प्रमुख भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुणों तथा मृदा नमी, ताप, गहराई, कणाकार संरचना कार्बनिक

पदार्थ, क्ले, लोहा, एल्युमिनियम के ऑक्साइड, पी-एच, प्रतिशत बेस संतृप्ति तथा विलेय लवण सान्द्रण आदि पर विचार किया जाता है।

7 वां सन्निकटन वर्गीकरण पद्धति के महत्व:

(i) यह मृदा निर्माण की प्रक्रियाओं की अपेक्षा मृदा वर्गीकरण को अधिक महत्व देती है।

(ii) यह पद्धति मृदा से सम्बन्धित विज्ञानों, जैसे भूगर्भ विज्ञान तथा जलवायु सम्बन्धी विज्ञान की अपेक्षा मृदा पर ही केन्द्रीभूत होती है।

(iii) यह अज्ञात उत्पत्ति वाली मृदाओं के वर्गीकरण का भी अनुमोदन करती है, इसके लिये केवल मृदा गुणों के ज्ञान की आवश्यक ता होती है।

(iv) यह पद्धति विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा प्रयुक्त वर्गीकरणों में अधिक समानता दर्षाती है।

1. **निदान संस्तर** (Diagnostic Horizons)- यह व्याख्या करने के लिये कि मृदा गुण नई वर्गीकरण पद्धति में मृदाओं की वर्गीकृत करने के लिये मुख्य कसौटी (criteria) होते हैं, निष्चित निदान सतह एवं उप-सतह संस्तरों का वर्णन आवश्यक है निदान सतह (surface) संस्तरो को एपीपैडॉन्स (Epipedons, Gr. Epi= over, pedon=soil) कहते है। एपीपैडॉन के अन्तर्गत मृदा पृष्ठ का ऊपरी काला जैव संस्तर तथा ऊपरी निक्षालित (eluvial) संस्तर या दोनों सम्मिलित होते हैं। 'ब' संस्तर का कुछ भाग जिसमें कार्बनिक पदार्थ उपस्थित होता है, इसमें सम्मिलित हो सकता है। ऐसे 6 ऐपीपैडॉन्स पहिचाने गये है जिनकी विषेतायें तालिका 2 में दी गयी है। इसके अतिरिक्त कई उप-सतह (sub-surface) संस्तरें भी होती हैं। जिनमें पदार्थ एकत्रित हो जाते हैं, जैसे Gypsic (जिप्सम), Calcic (Ca, Mg कार्बोनेट्स) और Salic (विलेय लवण)।

तालिका 2- निदान संस्तरो के मुख्य लक्षण

निदान संस्तर	**मुख्य विशिष्टतायें**
मॉलिक (Mollic)	**पृष्ठ संस्तर** (इपीपेडॉन) मोटा, गहरा रंग, उच्च समाक्षार (base) संतृप्ति, प्रबल संरचना
अम्ब्रिक (Umbric)	निम्न समाक्षार संतृप्ति के अतिरिक्त शेषमॉलिक जैसी विषेतायें।
आंक्रिक (Ochric)	हल्का रंग, निम्न कार्बनिक पदार्थ, शुष्क होने पर पुंजीय और कठोर होना सम्भव।
हिस्टिक (Histic)	कार्बनिक पदार्थ में उच्च, वर्ष की कुछ अवधि में गीली।
ऐन्थ्रोपिक (Anthropic)	मॉलिक एपी के समान, प्राप्य फॉस्फोरस की उच्च मात्रा।
प्लैगेन (Plaggen)	मनुश्यों द्वारा निर्मित एक ऐसा पृष्ठय संस्तर जो वर्शो तक खेतों में लगातार खाद देने से उत्पन्न हुआ हो।

ऑर्जिलिक(Argillic)	**अवपृष्ठ** (Subsurface) संस्तर सिलिकेट क्ले संचयन।
नैट्रिक(Natric)	आर्जीलिक, सोडियम में उच्च, स्तम्भाकार (columnar), या सम्पार्श्वीय (Prismatic) संरचना।
स्पोडिक(Spodic)	कार्बनिक पदार्थ Fe और Al ऑक्साइड संचयन।
कैम्बिक (Cambic)	भौतिकीय संचालन (Physical movement) या रासायनिक अभिक्रियाओं द्वारा परिवर्तन।
एग्रिक(Agric)	जुताई स्तर (Plough layer) के ठीक नीचे कार्बनिक पदार्थ तथा क्ले संचयन।
ऑक्सिक(Oxic)	Fe, Al ऑक्साइड का प्रारम्भिक मिश्रण तथा 1:1 प्रकार के खनिज।
ड्यूरीपेन(Duripan)	कठोर परत, सिलिका से प्रबल सीमेन्टी करण।
फ्रेगीपेन(Fragipan)	भुरभुरी परत, प्राय: कणाकार दुमट, दुर्बल सीमेन्टीकरण।
एल्बिक (Albic)	हल्का रंग, क्ले तथा Fe, Al ऑक्साइड प्राय: निष्कासित।
कैल्सिक(Calcic)	CaCO3 या CaCO2, Mg CO3 संचयन।
जिप्सिक(Gypsic)	जिप्सम संचयन।
सेलिक (Salic)	लवण संचयन।

2. **पद्धति के संवर्ग** (Categories of the System)- नई पद्धति में वर्गीकरण के 6 संवर्ग होते हैं- (i) गण, (ii) उप-गण, (iii) बड़ा समूह, (iv) उप-समूह (v) कुल, (vi) श्रेणी।

(i) गण (Order)- गण संवर्ग मुख्य रूप से मृदा आकारिकी (morphology) पर आधारित है, लेकिन मृदा उत्पति एक प्रमुख कारक होता है। ये गण संख्या में 10 है।

(ii) उप गण (Sub-order)- एक ही मृदा गण के उप-गणों में भेद मृदा नमी एवं ताप के अन्तरों से उत्पन्न मृदा गुणों के आधार पर किया जाता है। अभी तक 47 उपगणों को ही पहिचाना गया है।

(iii) वृहद् समूह (Great group)- ये उपगणों के उप विभाजन होते है। 230 बड़े समूहों को निदान संस्तरों के आधार पर पहिचाना जाता है।

(iv) उप-समूह (Sub-group)- ये वृहद् समूहों के उप-विभाजन होते हैं। एक वृहद् समूह के लाक्षणिक या प्रधान (Typical or central) धारण (concept) एक उप-समूह (टिपिक Typic)

बनाती है। अन्य उप-समूहों में ऐसी विशेष तायें होती हैं जो प्रधान धारणा तथा दूसरे वृहद् (e.g. Aquic Hapludult) के बीच अन्तर श्रेणी (intergrade) होती है।

(v) कुल (Family)- इस संवर्ग को अभी तक पूर्ण रूप से परिभाषित नहीं किया जा सका है। हालांकि कुलों में अन्तर करने के लिये पौधों की वृद्धि के लिये महत्वपूर्ण गुणों को प्रयोग किया जाता है। यह संवर्ग उप-समूहों के सदस्यों, जिनकी समान विशेष ताये जैसे कणाकार, खनिज मात्रा, पी-एच, मृदा ताप तथा गहराई होती है, की वर्गीकृत करना है।

(vi) श्रेणी (Series)- प्रत्येक कुल में कई श्रेणियां होती है। श्रेणी का नाम नदी, कस्बा या वह क्षेत्र, जहां पर श्रेणी सर्वप्रथम पहचानी गई हो, के प्रदर्शित करती है। श्रेणियों में अन्तर मृदा की विशेष ताओं जैसे रंग, कणाकार, संरचना, गाढ़ता, मोटाई तथा प्रोफाइल में संस्तरों की संख्या से किया जाता है।

नाम पद्धति (Nomenclature)- मृदा वर्गीकरण की नई प्रणाली के चार उच्च संवर्गो के लिए एक वर्गीकृत (coined words) जै, जो कुछ मृदा गुणें को परिभाषित करने में सहायक होते हैं। इस नाम पद्धति में प्रत्येक संवर्ग स्तर पर इनके नाम से ही मुख्य मृदा गुणों को पहिचाना जा सकता है। उदाहरण के लिये ऐरीडीसोल (Aridisol order-Latin, aridus=शुष्क तथा = solum=मृदा) की मृदायें विलक्षण रूप से शुष्क या सूखे स्थानों पर होती है। गण इनसेप्टीसॉल (Inceptisol- Latin, inceptum= प्रारम्भिक तथा Solum= मृदा) की मृदाओं में मृदा प्रोफाइल के विकास की प्रारम्भिक अवस्था होती। इस प्रकार गण का नाम (a) निर्माणक तत्वों (Formative elements) जो मृदा की विशेषताओं को बताते है तथा (b) अन्त में साल (ending sol) का संयोग होता है।

अग्र तालिका 3 में नाम पद्धति का एक उदाहरण दिया गया है-

Category	**Method of naming**	**Example**
Order	Names end with sol	Mollisol
Sub-order	Names end with a syllable from the order name	Udoll
Great group	Name end with the sub-order name	Hapludoll
Sub-group	Ajuctive added to great group name	Topic Hapludoll
Family	Division of sub-group based on texture, mineralogy etc.	Fine loamy, mixed mesic typic, Hapludoll or Clarion family
Series	Usually geographic names	Clarion

तालिका के उदाहरण का विष्लेषण करने पर स्पष्ट होता है कि (Clarion) मृदाओं में उवससपब ऐपीपेडोन्स (Mollisols) होते हैं तथा ये आदर क्षेत्रों में मिलती है (Udolls Cambines the ud from udus, meaning humid, with oll from Mollisol) तथा इनमें सरल प्रोफाइलें (the hapl in Hapludolls comes from haplons meaning simple) होती है। उप-समूह के नाम में विश्लेषण टिपिक (typic) यह प्रदशित करता है कि ये टिपीकल (Hapludolls) होते हैं। कुल संवर्ग यह स्पष्ट करता है कि अब मृदा क्ले की मात्रा 18 से 35% के बीच होती है तथा किसी भी क्ले प्रकार की प्रधानता नहीं होती है तथा वार्षिक मृदा ताप 570 तथा 590 F के मध्य होता है।

मृदा गण (Soil orders)

दस गण स्वीकृत किये गये हैं। इनके नाम के पहले भाग मृदा के विशिष्टता या उत्पत्ति को संकेतिक करते हैं तथा अन्तिम भाग 'सॉल' (sol) लैटिन भाषा के सोलम (solum) अर्थात् मृदा का बोधक होता है। गणो के नाम तालिका 4 में दिये गये हैं। गणों का सूक्ष्म निर्णय निम्न है-

एण्टीसॉल (Entisols)- अव्युत्पत्तिमूलक, recent (नवीन) का 'ent' लिया गया है)- ये नवविकसित तथा बिना किसी प्राकृतिक संस्तरों वाली मृदायेंह , इनमें संस्तरों की रचना प्रारम्भिक अवस्था में होती है। इनमें जुताई स्तर (Plough layer) ही स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। इस गण की मृदायें पुराने वर्गीकरण की अक्षेत्रीय मृदायें जैसे एल्युवियम एवं रिगोसॉल (regosols) मृदाओं के लगभग समतुल्य है। ये मृदायें व्यापक रूप से विभिन्न् प्रकार की जलवायु वाले क्षेत्र में पायी जाती है। भारत में अधिक ढाल (strong slope) पर उपस्थित मृदायें, ऐओलियन (aeolian) पैत्रिक पदार्थ से उत्पन्न मृदायें जैसे राजस्थान की रेगिस्तान तथा नवीन जलोद् मृदायें इस गण में रखी गयी है। संसार की समस्त मृदाओं का 8.3 प्रतिषत मृदायें इस गण में आती हैं तथा 10 गणों में क्षेत्रफल के आधार पर एण्टीसॉल का छटवां स्थान है।

तालिका 4 मृदा गणों के नामों में निर्माणक तत्व

गण का नाम	गण के नाम में निर्माणक तत्व	निर्माणक तत्व के मूल शब्द की ब्युत्पत्ति (derivation)	निर्माणक तत्व के उच्चारण की रीति (Pronunciation)
Entisols	Ent	Nonsense sybol	Recent
Inceptisols	Ept	L.inceptum,beginning	Inception
Mollisols	Oll	L. mollis, soft	Mollify
Alfisols	Alf	Nonsense symbol	Pedalfer
Ultisols	Ult	L. ultimus, last	Ultimate
Oxisols	Ox	Fr. Oxide, Oxide	Oxide
Vertisols	Ert	L.verto, turn	Invert
Aridisols	Id	L. aridus, dry	Arid

Spodosols	Od	GK spodos, wood ash	Podzol,odd
Histosols	Ist	GK Histos, tissue	Histology

इनसेप्टीसॉल (L.inceptum, प्रारम्भ) - इन गण की मृदाओं में प्रोफाइल के संस्तर अपेक्षाकृत शीघ्र निर्मित होते है तथा प्राय: पैत्रिक पदार्थो के परिवर्तन के परिणाम होते हैं। ये संस्तर अत्यधिक अपक्षय को प्रदर्शित नहीं करते हैं। इन मृदाओं में क्ले, आयरन एवं एल्युमीनियम के संचयन संस्तरों का प्राय: अभाव होता है। इन मृदाओं की प्रोफाइल को विकास एण्टीसॉल मृदाओं की अपेक्षा अधिक परन्तु अन्य गणों की मृदाओं की अपेक्षा कम होता है। भारत में गंगा-सिन्धु के मैदान की कई मृदायें तथा ब्रह्मपुत्र घाटी की मृदायें इस गण में वर्गीकृत की गयी है संसार की कुल मृदाओं का 8.9 प्रतिशत इनसेप्टीसॉल मृदायें है तथा क्षेत्रफल के आधार पर दूसरा तीसरा स्थान है।

मॉलसोल (L.mollis, नर्म)- इस गण की मृदाओं की प्रमुख विशिष्टता इनमें मॉलिक ऐपीपेडॉन (Molic epipedon) की उपस्थिति है जो मोटी, गहरी काली तथा द्विसंयोजी धनायनों की प्रधानता होती है। इनमें आर्जीलिक (argilic) नैट्रिक, एल्विक या कैम्बिक संस्तर भी पाये जा सकते हैं परन्तु ऑक्सिक तथा स्पोडिक संस्तर अनुपस्थित होते हैं। पृष्ठ संस्तरों की संरचना प्राय: दानेदार या क्रम्बी (crumby) तथा सूखने पर ये कठोर नहीं होती है इसलिये इन्हें 'मॉलिस' अर्थात् नर्म शब्द से सम्बोधित किया जाता है। पुराने वर्गीकरण की चेस्टनट, चर्नोजम, रेन्डजिना, प्रेरी (Prairic), ब्रूनीजेम (Brunizem) आदि मृदायें सम्मिलित है। भारत में मॉलीसॉल गण के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र की कुछ मृदायें तथा उत्तर प्रदेश,हिमालय प्रदेश और उत्तर-पूर्व हिमालय के जंगलों की मृदायें आती हैं। संसार की इस गण में 8.6 प्रतिशत मृदायें है तथा क्षेत्रफल के आधार में 10 गणों में इस गण का चौथा स्थान है।

एल्फीसॉल (अब्युत्पति मूलक, पुराने मृदा समूह नाम पेडॉलफर (Pedolfer) से 'alf' लिया गया है) एल्फीसॉल नम खनिज मिट्टियां होती है जिनमें मॉलिक ऐपीपेडॉन या ऑक्सिक या स्पोडिक संस्तर नहीं होते हैं। इनमें भूरा से बादाम रंग के पृष्ठ संस्तर, मध्य में उच्च भार स्तर तथा सिलिकेट क्ले संचित इल्यूवियल (Illuvial) संस्तर होते हैं क्ले संस्तर प्राय: 35 प्रतिशत से अधिक क्षार संतृप्त होते हैं। यदि इस संस्तर में केवल सिलिकेट क्ले ही पायी जाती है तो इसे आर्जीलिक संस्तर कहते है, यदि क्ले के अतिरिक्त ये 15% से अधिक सोडियम संतृप्त होती है तथा संरचना प्रिज्म के समान (Prismatic) या स्तम्भाकर (columnar) होती है तो इस संस्तर को नैट्रिक कहा जाता है। एल्फीसॉल स्पोडोसॉल्स की अपेक्षा कम तथा इनसेप्टीसॉल की अपेक्षा अधिक प्रबलत: अपक्षियत होती है। ये अधिकतर आर्द्र उष्ण क्षेत्रों में प्राकृतिक पर्णपाती (deciduous) वनों में निर्मित होती है। एल्फीसॉल को पुराने वर्गीकरण में भूरा-बादामी पॉडजोलिक (Gray-brown podzolic), अकैल्सीय और वनयुक्त मृदायें (Noncalcium brown and gray wooded soil) हाफ बग्ग (Half Bag) प्लेनोसाल (Planosol) आदि में वर्गीकृत किया गया था। एल्फीसाल संसार की मृदाओं का 13.2 प्रतिशत हैं, तथा क्षेत्रफल के आधार पर इनका द्वितीय स्थान है। भारत की कुछ लाल मृदायें तथा लेटराइटिक मृदायें इस में वर्गीकृत की गयी है।

अल्टीसॉल (L.ultimus,अंतिम)- अल्टीसॉल प्राय: नम होती है तथा गर्म और उश्ण जलवायु के क्षेत्रों में विकसित होती हैं ये मृदायें अल्टीसॉल मृदाओं की अपेक्षा अधिक अपक्षियत तथा अम्लीय

परन्तु स्पोडोसॉल से कम अम्लीय होती है। इन मृदाओं में आर्जीलिक (क्ले) संस्तर होते हैं जिनमें क्षार संतृप्तता 35 प्रतिशत से कम होती है तथा उनका औसत वार्षिक ताप 50 से0मी0 की गहराई पर 8 oC से अधिक होता है। इस गण की अधिकतर मृदायें (कुछ जलीय मृदाओं को छोड़कर) लाल या पीले रंग की होती हैं इनमें आयरन में स्वतन्त्र ऑक्साइडों का संचयन होता है। इसके अन्तर्गत पुराने वर्गीकरण की लाल-पीली पॉडजोलिक लाल-भूरी लेटराइटी (Reddish brown lateritic) तथा अन्य मृदायें सम्मिलित हैं। भारत में ये मृदायें केरल, तमिलनाडू, उड़ीसा, आसाम, बिहार तथा हिमाचल प्रदेश में पायी गयी है। दस गणों में क्षेत्रफल के आधार पर इन मृदाओं का सातवां स्थान है तथा संसार की मृदाओं के कुल क्षेत्र का 5.6 प्रतिशत है।

ऑक्सीसॉल (Fr. Oxide,ऑक्साइड)- ऑक्सीसॉल सर्वाधिक अपक्षयित मृदायें हैं। इनकी मुख्य विशेष ता इनमें एक गहरी ऑक्सिक (oxic) उप-संस्तर की उपस्थिति है। इस संस्तर में क्ले आकार के गण बहुत होते हैं। जिन पर आयरन एवं एल्युमिनियम के हाइड्रस ऑक्साइड् की प्रधानता होती है। अपक्षय तथा प्रचण्ड लीचिंग के कारण इस संस्तर से अधिक मात्रा में सिलिकेट खनिजों से सिलिका निष्कासित हो जाती है और फलत: इस संस्तर में Fe ओर Al के ऑक्साइड्स का उच्च अनुपात बना रहता है। थोड़ी मात्रा में क्वार्टज और 1:1 प्रकार के सिलिकेट खनिज भी इस संस्तर में पाये जाते हैं, परन्तु हाइड्र ऑक्साइड्स की प्रधानता होती है। इन मृदाओं में क्ले की मात्रा बहुत अधिक परन्तु अचिपचिपी (nonsticky) होती है। ऑक्सीसाल में अपक्षय की गहराई बहुत अधिक (15 मीटर या अधिक) होती है। ऑक्सीसाल्स को पुराने वर्गीकरण में लेटराइड्स तथा लेटोसॉल (Latosols) के नाम से जाना जाता था। संसार में इनका पांचवा स्थान है तथा कुल क्षेत्रफल का 8.5 प्रतिशत है। केरल की अधिक अपक्षयित कुछ मृदायें ऑक्सीसाल में आती है।

वर्टीसाल (L. Verto,पलटना)- खनिज मृदाओं के इस गण की विशेषता फूलने वाली क्ले की अधिक मात्रा (30% से अधिक) में उपस्थित है जिसके कारण शुष्क होने पर गहरी चौड़ी दरारें बन जाती हैं। मृदा के ऊपरी भाग से मिट्टी के इन दरारों में गिरते रहने के कारण इनका आंषिक पलटाई (inversion) होती है। इसी कारण इस कण का सामान्य लक्षण करने के लिये 'इलवर्ट' (invert) शब्द जोड़ा गया है। प्राचीन वर्गीकरण में इन्हें ग्रुमसॉल (grumsols) कहा गया। ये मिट्टियां अति सूक्ष्म कणाकार तथा अधिक सिकुड़ने एवं फूलने के कारण कृषि कार्यो में कठिनाई पैदा करती है। भीगने पर ये अधिक चिपचिपी सुघट्य तथा सूखने पर कठोर हो जाती है। इनमें कपास, बाजरा, ज्वार और मोटे अनाज प्राय: पेदा किये जाते हैं। वर्गीसॉल का क्षेत्र संसार के कुल क्षेत्रफल का 1.8 प्रतिशत है तथा इसका स्थान नवां है। भारत में वर्टीसॉल के प्रमुख उदाहरण दक्षिण भारत की काली मिट्टी क्षेत्रों में दृष्टिगोचर होते हैं।

एरिडीसॉल (L.aridus, शुष्क)- ये खनिज मृदायें अधिकतर शुष्क और अर्द्धषुश्क जलवायु वाले क्षेत्रों में पायी जाती है। भूमिगत जल या सिंचाई वाले स्थानों को छोड़कर, ये मृदायें वर्ष के अधिकांश भागों में सूखी रहती है। फलत: इनमें प्रचण्ड लीचिंग नहीं हो पाता है। इनमें प्राय: हल्के रंग तथा निम्न कार्बनिक पदार्थ वाला ऑक्रिक (Ochric) एपीपेडॉन पाया जाता है। इनमें कैल्शियम कार्बोनेट (कैल्सिक),जिप्सम (जिप्सिक) या अपेक्षाकृत अधिक विलेय लवणों (सेलिक)के संचयन के संस्तर पाये जा सकते हैं।

एरिडीसॉल गण में विष्व के शुष्क क्षेत्रों की अधिकतर मृदायें जैसे प्राचीन वर्गीकरण के अनुसार मस्स्थल (desert), लाल मरूथल, सीरोजम, लाल-बादमी और सोलनचाक (solonochak) सम्मिलित है। भारत में एरिडीसॉल राजस्थान, गुजरात, हरियाणा, पंजाब में पायी जाती है। संसार में क्षेत्रफल के आधार पर इनका प्रथम स्थान है। तथा इनका क्षेत्रफल कुल क्षेत्रफल का 18.8 प्रतिशत है।

स्पोडोसॉल (GK. Spodos,लकड़ी की राख)- स्पोडीसॉल वे खनिज मृदायें है जिनमें स्पोडिक संस्तर (spodic horizon एक अवपृष्ठ संस्तर) पाया जाता है जिसमें कार्बनिक पदार्थ और एल्युमिनियम के आयरन ऑक्साइड सहित या रहित ऑक्साइड का संचयन होता है। यह इल्युवियल संस्तर प्राय: ऐल्युवियल (eluvial)संस्तर के नीचे मिलते हैं, साधारणत: एल्विक संस्तर है जो हल्के भूरे रंग के राख जैसे होते हैं। स्पोडोसॉल अधिकतर मोटे कणाकार वाले ऐसे अम्लीय पैत्रिक पदार्थ से विकसित होते हैं जो लीचिंग द्वारा अधिक प्रभावित होते हैं। ये आदर्् र जलवायु के शीत और समषीतोष्ण क्षेत्रों में विकसित होते हैं। पुराने वर्गीकरण की पॉडजोल, भूरी पॉडजोल तथा भूमिगत जल पॉडजोल मृदायें इस गण में आती हैं। दस गणों में क्षेत्रफल के आधार पर इसका आठवां स्थान है तथा संसार के कुल क्षेत्रफल का केवल 4.3 प्रतिशत होता है।

हस्टोसॉल (Gk. Histosol,ऊतक=जैव अंश)- इस गण में कार्बनिक मृदायें बोग मृदायें (Bog soil) तथा अर्द्ध बोग (half bog) मृदायें सम्मिलित हैं। ये मृदायें, जल संतृप्त वातावरण में विकसित हुई हैं। इनमें न्यूनतम कार्बनिक पदार्थ 20% (यदि क्ले की मात्रा निम्न है) तथा 30% (यदि क्ले की मात्रा 50%से अधिक है) पायी जाती है। कई क्षेत्रों में कार्बनिक पदार्थ के प्रारम्भिक ऊतक रूप स्पष्टत: दृष्टिगोचर होते हैं जो कृषि करने पर गायब हो जाते हैं। इस गणों में इसका अंतिम (दसवां) स्थान होता है तथा संसार के कुल क्षेत्रफल का केवल 0.9 प्रतिशत होता है।

4. उपगण (Sub orders)

दस गणों को कुल 47 उपगणों में उपविभाजित किया गया है जो तालिका 15.4 मे दिये गये हैं।

इनके वर्गीकरण का मुख्य आधार वे विशेषतायें जो इसकी किसी वर्ग (Class) को सर्वाधिक जननिक (genetic) समानता देती हैं। उपगण का नामकरण, गण नाम के पूर्व भाग में ग्रीक शब्द को जो उपगण की विशेषता बताता है, उपसर्ग (prefix) की भांति जोड़कर किया जाता है। उदाहरणार्थ एक्वेण्ट (Aquent) जपगण का 'Aqu' ग्रीक भाषा के 'aqua' से लिया गया है जिसका शब्दार्थ जल से है। अत: यह मृदा में गीली दषा में उत्पन्न होने का सूचक है तथा 'ent' भाग एण्टीसॉल (Entisol) गण का सूचक है। इसी प्रकार udult उपगण में मृदायें (ग्रीक udus,humid) अधिक आदर्र जलवायु के ultisol गण की है।

तालिका 5- मृदा गण एवं उपगण

Order	Sub order
Entisol	Aquent, Arent, Fluvent, Orthent, Psamment
Vertisol	Torrert, udert, ustert, Xerert.

Inceptisol	Andept, Aquent, Ochrept, Plaggept, Tropept, umbreft.
Aridisol	Argid, Ortihd.
Spodosol	Aquod, Ferrod, Humod, Orthod.
Mollisol	Alboll, Aquoll, Borrol, Rendoll, Udoll, Ustoll, Xeroll.
Alfisol	Aquult, Humult Udult, Ustalf, Xerult.
Ultisol	Squult, Humult Udult, Ustalf, Xerult.
Oxisol	Aquox, Humox, Orthox, Torrox, ustox.
Histosol	Fibrist, Folist, Herrist, Saprist.

5. वृहत् समूह (Great groups)

वृहत् समूह उपगण के उपविभाजन हैं। इनको मुख्यत: निदानात्मक संस्तरों की उपस्थिति या अनुपस्थित तथा इन संस्तरों के विन्यास (arrangement) के आधार पर परिभाषित किया गया है। इनके नामकरण के लिये निदानात्मक संस्तरों के एपीपेडॉन, अवपृष्ठ सेस्तरो तथा कठोर परतों (pans) के निर्माणक तत्वों को उपगण के नाम के पूर्व उपसर्ग की भांति जोड़ा जाता है। उदाहरणार्थ, यदि आर्जिड (Argid) उपगण का एक सदस्श् नैट्रिक संस्तर वाला है तो इसके वृहत् समूह को नैटेर्जिड (Natrargid) कहते हैं। अभी तक 230 वृहत् समूह पहचाने जा चुके हैं।

उप समूह (Subgropus)

ये वृहत् समूहों के उपविभाजन हैं। उपसमूह एक दिये गये वृहद् समूह की केन्द्रीय धारणा (central concept) को इस केन्द्रीय धारणा से वर्गीकरण की अन्य इकाइयों में श्रेणीकरण (gradations) को विषेशीकृत करते हैं। एक वृहत् समूह की केन्द्रीय धारणा को सर्वाधिक प्रदर्शित करने वाले उप-समूह को टिपिक (Typic) या आर्थिक (Orthic) कहा जाता है। इस प्रकार टिपिक हेप्लेल्टाल (haplaltol) उप-समूह हैप्लेल्टाल (Haplaltol) वृहत् समूह को प्रारूपित करता है। केन्द्रीय धारणा के साथ-साथ किसी अन्य वृहत् समूह के गुणों को रखने वाले उस समूह को इण्टरग्रेडस (intergrades) कहते हैं जैसे एक नैट्रिक संस्तर वाली हेलेल्टाल मृदा नैट्रिक हैप्लेल्टॉल उस समूह में रखी जायेगी। कुछ ऐसे इण्टरग्रेडस भी पाये जा सकते हैं जिनके गुण अन्य गणों या वृहत् समूहों के साथ सामान्य हो सकते हैं। इस प्रकार एण्टिक हैप्लेल्टाल (Entic Haplaltoll) एक ऐसे उपगण का द्योतित करता है जो एण्टीसॉल गण के साथ इण्टरग्रेड होता है।

6. कुल (Families)

कुल उपसमूहों के उपविभाजन हैं। इनका वर्गीकरण पादप जड़ों की वृद्धि के लिए महत्वपूर्ण गुणों पर आधारित है। इनके वर्गीकरण की कसौटी उपसमूहो कें अनुसार परिवर्तनीय होती है, सामान्य रूप से इनके वर्गीकरण के लिये व्यापक कणाकार वर्गो (broad textural classes), खनिजीय वर्गों तथा

ताप वर्गों (temperature classes) को आधार बनाया जाता है। कणाकार वर्गो के लिए महीन, महीन लोमी, बलुई और क्ले आदि शब्द प्रयोग किये जाते हैं। खनिजीय वर्गो के लिए केओलिनाइट, मॉण्टमोरिल्लोनाइट, सिलिकामय (siliceous) जिप्सिक तथा मिश्रित (mesic) तथा थर्मिक (Thermic) शब्द प्रयोग किये जाते हैं। उदाहरणार्थ इन्दौर (मध्यप्रदेश) की एक टिपिक क्रोमस्टर्ट (Typic Chromustert) महीन, मॉन्टमोरिल्लोनाइट हाइपरथर्मिक (hyperthermic) जै इसका अर्थ है कि टिपिक क्रोमस्टर्ट उच्च क्ले युक्त है तथा इसमें मॉन्टमोरिल्लोनाइट प्रकार की क्ले है तथा हाइपरथर्मिक मृदा ताप क्षेत्र में बनती है।

7. श्रेणी (Series)

कुलों को इस वर्गीकरण पद्धति के निम्न वर्ग जिसे श्रेणी (Series) कहते है, में उपविभाजित किया गया है। श्रेणी प्रोफाइल की विशेषताओं के आधार पर निष्चित की जाती है। इसके लिए संस्तरों की संख्या, गण, मोटाई, कणाकार, संरचना, रंग, कार्बनिक मात्रा तथा मृदा अभिक्रिया का सावधानी से अध्ययप् किया जाता है।

10.3 मृदा सर्वेक्षण

मृदा सर्वेक्षण, मृदाओं का प्राकृतिक वातावरण में अध्ययन करके उनके मानचित्र खेतों में तैयार करने को कहते हैं। मृदा सर्वेक्षण का कार्य आधार-भूत एवं उपयोगी है। क्योंकि (i) इससे विभिन्न मृदाओं को पहिचाना जाता है तथा उनकी विशेषताओं को परखा जाता है, जिससे कि मृदाओं के वर्गीकरण तथा आपसी सम्बन्ध स्पष्ट करने में आसानी हो सके। (ii) इससे मृदा की स्थिति, संगठन तथा विषेशाओं का ज्ञान होता है जिससे उस अमुक मृदा की भूत, भविष्य तथा वर्तमान के उपयोगी तथ्यों के बारे में कुछ बताया जा सके। यह किसी मृदा पर अपनाए जाने वाले फसल चक्रों को भी निर्धारित करता है। मृदा सर्वेक्षण कृषि सम्बन्धी खोजों के लाभप्रद परिणामों को खेतों तक प्रसार करने में एक कड़ी है।

1. **मृदा सर्वेक्षण के कार्य-** मृदा सर्वेक्षण के मुख्य कार्य निम्न हैं-
   (i) मृदा प्रोफाइल जैसी खेत में पायी जाती है उसी रूप में उनका अध्ययन करना।
   (ii) उनकी विशेषताओं का वर्णन करना।
   (iii) वर्गीकरण की कुछ समान प्रणाली की इकाईयों में उनको वर्गीकृत करना।
   (iv) किसी विशेष स्थान के उपयुक्त मानचित्र पर मृदा के प्रत्येक वर्ग का विवरण दिखाना।
2. **मृदा सर्वेक्षण के प्रकार**- मृदा सर्वेक्षण तीन प्रकार का होता है-
   विस्तृत सर्वेक्षण (Detailed survey)- इस प्रकार का सर्वेक्षण उस स्थान पर किया जाता है जहां मृदाओं का अधिकतम उपयोग होता है। इसके लिये मृदाओं का सूक्ष्म अध्ययन किया जाता है, जिससे छोटे-छोटे स्थानों के बड़े-बड़े नक्षे तैयार किये जा सकें और उस क्षेत्र की छोटी से छोटी आवश्यक सूचना प्राप्त हो सके गहन उपयोग के क्षेत्रों के लिये ऐसे सर्वेक्षण बहुत उपयोगी होते है और विभिन्न प्रकार के उपयोगों के लिये व्यवस्था करने की उचित सूचना उपलब्ध कराते हैं। इस प्रकार के सर्वेक्षण में बहुत समय लगता है।

प्रारम्भिक सर्वेक्षण (Reconnaissance-survey)- इसमें महत्वपूर्ण बातों को मानचित्र में दिखाया जाता है। ये मानचित्र अधिक विस्तृत क्षेत्र के सम्बन्ध में कुछ तथ्यों को प्रकट कराते हैं। ये सर्वेक्षण पहाड़ी क्षेत्रों जैसे कम महत्व वाले क्षेत्रों में किये जाते हैं। ये विशेषकर नये तथा अपेक्षाकृत अविकसित क्षेत्र के लिये लाभप्रद साबित हुये हैं।

प्रारम्भिक विस्तृत सर्वेक्षण (Detailed reconnaissance survey)- इनमें प्रारम्भिक तथा विस्तृत दोनों प्रकार के सर्वेक्षणों को किया जाता है। महत्वपूर्ण भागों का विस्तृत सर्वेक्षण किया जाता है, किन्तु कम महत्वपूर्ण भागों का प्रारम्भिक सर्वेक्षण किया जाता है।

3. मृदा सर्वेक्षण विधियां (Soil survey methods)- मृदा सर्वेक्षण के लिये मृदा प्रोफाइल का खेतों तथा प्रयोगशालाओं में अध्ययन किया जाता है तथा फिर आवश्यक सूचनाओं के आधार पर कुछ विशेष चिन्हों और मान्य विधियों के अनुसार मानचित्र तैयार किये जाते हैं। आवश्यक सूचनाओं में जलवायु भूगर्भ जल का बहाव तथा उनके स्त्रोत, वनस्पति, वर्तमान अवस्था में भूमि के प्रयोग में लायी गई किसफारिषों के सम्बन्ध में कुछ वैज्ञानिक आंकड़े, आर्थिक एवं सामाजिक दशा के विषय में जाना जाता है। इन सूचनाओं में स्थानीय दशाओं के अनुसार कुछ परिवर्तन और संषोधन किये जा सकते हैं। इन सूचनाओं के आधार पर मानचित्र एवं रिपोर्ट तैयार करने को उस क्षेत्र का सर्वेक्षण कहते हैं।

किसी क्षेत्र का मृदा सर्वेक्षण शुरू करने से पहले उस क्षेत्र की मृदा सम्बन्धी समस्त उपलब्ध सूचनायें एकत्रित की जाती हैं और रिकार्ड देखे जाते हैं, फिर सर्वेक्षण की योजना बनायी जाती है, आधार मानचित्र (Basw maps) तैयार कर लिये जाते है। महत्वपूर्ण आधार मानचित्र ऊपर के लिये गये चित्र (Aerial Photographs) होते हैं, त्रिकोणीय सर्वेक्षण (Triangular surveys) पर आधारित विस्तृत स्थलाकृति मानचित्र की लाभप्रद होते हैं। प्ररम्भ में उस स्थान की मृदा का निरीक्षण करके उसकी स्थिति एवं भौतिक दषा विचार कर मानचित्र बनाने के लिये आवश्यक निर्देश (Legends) एवं चक्रमों (Traverses) की योजना तैयार की जाती है। मृदा सर्वेक्षण के दो मुख्य तथ्य हैं- (i) मानचित्र तैयार करने के लिये आवश्यक इकाइयों का विस्तृत विवरण तथा (ii) मृदा सीमाओं का निर्धारण।

3- **मृदा मानचित्र इकाइयां (Soil Mapping Units)-** इन इकाइयों की परिभाषा मे जानना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि ये सही मानचित्र बनाने में सहायक होती है, ये इकाइयां निम्न हैं-

1 मृदा श्रेणी (Soil series)- ये मृदाओं के उन समूहों के लिये प्रयोग की जाती है जिनकी प्रोफाइल के संस्तर गुणों तथा विशेषताओं में समानता रखते हों तथा इनकी अवस्था भी समान हो और ये मृदायें एक ही तरह के पैतृक पदार्थ से बनती हैं तथा इन मृदाओं की ऊपरी सतह के कणाकार में भिन्नता हो सकती है। इन मृदाओं का नाम उस स्थान के अनुसार रख दिया जाता है, जहां वे विकसित होती हैं। उदाहरणार्थ- दोमट, मटियार, तिस्वा (Tiswa) भारत की एक गहरी काली मिट्टी को कहते हैं, तथा लखोली भारत की लैटोसोलीय मृदा है।

मृदा श्रेणी, मृदाओं के धरातल, जल निकास, प्रोफाइल के गुणें के बारे में सूचना देती है। इनके साथ-साथ यदि कोई और विशेषता, जैसे मृदा में धब्बों का होना, केकड़ या कठोर परत का पाया जाना व मृदा की प्रवेष्यता का वर्णन भी श्रेणी के अन्दर आता है।

2 मृदा के प्रकार (Soil type)- मृदा श्रेणियों का उपविभाजन मृदा प्रकार को प्रकट करता है। इसका नाम मृदा सतह के कणाकार के अनुसार दिया जाता है। नामकरण करने के लिये श्रेणियों के नाम के आगे ऊपरी संस्तरों के कणाकार का नाम जोड़ दिया जाता है। जैसे बलुई दोमट, मटियार दोमट, तिस्वा सिल्टी क्ले, लखोली बलुई लोम।

3 मृदा प्रावस्था (Soil Phase)- मृदा सर्वेक्षण में प्रवास, मृदा ढाल, अपरदन की मात्रा, पथरीलापन (stoniness), चट्टानीपन (rockiness) और लवणता के सन्दर्भ में प्रकारों में अधिकतर उपविभाजन है। इस प्रकार से बने सूह मृदा प्रावस्था को प्रकट करते हैं। इससे प्रायोगिक महत्व की बातों में अन्तर स्पष्ट होता है जैसे पथरीली दोमट, बालू दोमट।

4 मृदा संकीण (Soil complex)- यह मृदा वर्गीकरण की कोई किस्म नहीं है, बल्कि मानचित्र की कई इकाइयों का सामूहिक रूप है। ये दो या दो से अधिक किस्मों या श्रेणियों की मृदाओं के मानचित्र दिखाने की इकाइयां है। ये मृदायें कम क्षेत्र में एक दूसरे से जुड़े रहने के कारण, मानचित्र में पृथक नहीं दिखायी जा सकती। मृदा संकीर्ण का नाम मृदा की किस्मों तथा इनके प्रतिशत संगठन के अनुसार पड़ता है।

5 मृदा समूह (Soil association) - यह इकाई की मृदा संकीर्ण के समान है। कैटिना (Catena) एक ऐसी ही इकाई है। जिसके क्षरा एक ही प्रकार के पैतृक पदार्थो से निर्मित विभिन्न प्रकार की मृदाओं को मानचित्र में दिखाया जाता है।

1 विशेष मानचित्र इकाइयां (Special mapping units)- उन क्षेत्रों में जहां प्राकृतिक मृदायें न हों या कम हों या जब मृदा वर्गीकरण सुगम न हो, तो नाना प्रकार की मृदाओं को मानचित्र में दिखाने के लिये ये इकाइयां प्रयोग की जाती है। उदाहरणार्थ- कछार भूमि, दलदल, पठार, चट्टानी मृदायें, टूटी-फूट मृदायें, भूकम्प से अव्यस्थित मृदायें आदि।

2 निर्देश (Legend)- यह मृद के मानचित्रों की इकाइयां तथा उसके चिन्हों की सूची होती है। निर्देश की इकाइयां, मृदा की स्थिति, किस्म तथा उसके सर्वेक्षण के अनुरूप् होनी चाहिये।

3 मृदा प्रोफाइल का विवरण- मृदा प्रोफाइल मृद के लम्बवत काटे हुये भाग को कहते हैं, जिसमें विभिन्न संस्तर को एक दूसरे से रंग, कणाकार, संरचना और गाढ़ता में विभिन्न् होते हैं, सम्मिलित होते हैं। प्रोफाइल की जांच 5 या 6 फीट के गहरे गड्ढे खोदकर की जाती है। मृदा प्रोफाइल के विवरण में जहां गड्ढ़ा खोदा जाये समस्त जानकारी होनी चाहिये, जैसे भूतल स्थिति, प्राकृतिक वनस्पति, मृदा अपरदन, पानी का बहाव गांव, जिला, रास्ता आदि मृदा प्रोफाइल की विशेषताओं, जैसे विभिन्न संस्तरों का वर्णन, भौतिक तथा अन्य विशेष गुणों का विस्तृत रूप से वर्णन होना चाहिये।

6. मृदा का मानचित्र बनाना (Soil mapping)- मानचित्र तैयार करना एक कला है, जिसके लिये भौगोलिक पहलुओं का ज्ञान आवश्यक है। मानचित्र की इकाइयों तथा विभिन्न चिन्हों की सूची की सहायता से इन चित्रों को शुरू करना चाहिये। मृदा का मानचित्र पहाड़ों व नदियां आदि आकृति लक्षणों से सम्बन्धित मृदा की इकाइयों का विवरण दिखाता है। मृदा सर्वेक्षण मानचित्र मृदा किस्म (Soil types), जल के साधन-स्त्रोत (Streams), नहर जलाशय, भवन व सड़के, भू-तल (topography) पहाड़, खाड़ी कन्टूर ढाल की मात्रा (Degree of slope) आदि को दर्षाता है। मानचित्र के रंग भरने तथा छपाई के पश्चात क्षेत्रों के भूतल रूप, जलवायु, खेतीबाड़ी आदि के विचार विमर्श की एक बुलेटिन भी संलग्न कर दी जाती है। यह बुलेटिन निम्न के विशय में सूचना देती है।-

1- जलवायु- वर्षा ताप, धूप, हव तथा मौसम की अवधि।
2- कृषीय इतिहास, सांख्यिकीय विधियां और प्रबन्ध।
3- मृदा की किस्म उसका कणाकार, ह्यूमस की मात्रा, पोशकों की मात्रा आदि।
4- मृदा निर्माण करने वाले पदार्थ एवं प्रक्रमें।
5- भूमि वर्गीकरण।
6- प्रयोगात्मक प्रबन्ध के लिये प्रस्ताव।
7- स्थिति, आकार, साधन अभिगमन (Transport) बाजार की सुविधायें।

मृदा विशेषताओं के लिये प्रयोगशला में विश्लेषण

सर्वेक्षण के लिये मृदा का प्रयोगशाला में विश्लेषण करना आवश्यक है। इससे मृदा को भली-भांति जाना जा सकता है। प्रयोगशाला में किये जाने वाले कार्य की प्रकृति तथा कुल विश्लेषण परिणाम मृदा सर्वेक्षण से प्राथमिक उद्धेष्य पर निर्भर होते हैं। मृदा विश्लेषण के लिये पहले हम मृदा सैम्पल खेत से एकत्रित करते हैं, फिर उनको कूट-छानकर विश्लेषण करते हैं, जिसमें यांत्रिक-विश्लेषण, पी-एच, कार्बोनेट, कार्बनिक पदार्थ कुल विलेय लवण, जल धारण क्षमता, प्रवेष्यता, आर्दता गुणांक आदि का निर्धारण करते हैं।

1 मृदा मोनोलिथ (Soil Monoliths)- ये महत्वपूर्ण मुदा प्रोफाइल के स्थाई अभिलेख (records) होते हैं। ये मृदा प्रोफाइल को धातु या लकड़ी के बक्सों में मृदा में पाई जाने वाली अवस्था में ही सुरक्षित रखकर बनाये जाते हैं। विनाइल रेजिन (Vinyl resin) की तरह पारदर्शी व चिपचिपे पदार्थ भी मोनोलिथ को प्राकृतिक अवस्था में सुरक्षित रखने के लिये प्रयोग किये जाते हैं। भारत में मोनोलिथ 6”X2”X48” या 60’’ आकार के लकड़ी के बक्सों में तैयार किये जाते है। इन बड़े बड़े मोनेलिथ का बनाना चतुराई एवं मेहनत का कार्य है। इसलिये सूक्ष्म मोनोलिथ (Micro Monolith) सुविधाजनक होते है तथा 3”X1.5”X12” के आकार के लकड़ी के छोटे बक्सों में तैयार किये जाते हैं। मोनोलिथ मृदा के प्राकृतिक मृदा सैम्पलों को प्रदर्शित करती है तथा ये अध्यापन में भी सहायक है।

2 मृदा सर्वेक्षण रिपोर्ट (Soil Survey Report)- सर्वेक्षण रिपोर्ट के बिना मृदा सर्वेक्षण अधूरा ही माना जाता है। रिपोर्ट में अन्वेषणों के परिणाम अथवा आंकड़े दिये जाते हैं। रिपोर्ट और मानचित्र एक दूसरे के पूरक होते हैं। इन आंकड़ों की विशेषता तथा इनके आकस्मिक परिर्वनों को इस रिपोर्ट में भली-भांति कारण सहित समझाया जाता है। रिपोर्ट प्राय: कृषि दृष्टिकोण को लेते हुये मुख्य सूचनायें प्रदान करती है। सर्वेक्षण रिपोर्ट प्राय: निम्न को सम्मिलित करके लिखी जाती है-

1- सर्वेक्षण का प्राथमिक उद्देश्य।
2- क्षेत्र का सामान्य वर्णन- जैसे स्थिति, आकार, जल निकास, पानी का बहाव, भूगर्भज्ञान, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, सामान्य कृषि एवं मृदा उपयोग, सामाजिक-आर्थिक दषा एवं समस्यायें।
3- मृदा बनाने वाले कारकों, मृदा वर्गीकरण तथा मानचित्र में दिखाई गई इकाइयों का विस्तृत वर्णन।
4- मृदा फसलों के सम्बन्ध।
5- आवश्यक तालिकायें, चित्र तथा अन्य सूचनायें।

8. मृदा सर्वेक्षण से लाभ- मृदा सर्वेक्षण से निम्नांकित लाभ हैं-

1- मृदाओं के वर्गीकरण, उनकी जानकारी तथा मानचित्र बनाने में।
2- मृदा सर्वेक्षण करने से मृदा संरचना के विशय में ज्ञान प्राप्त हो जाता है, जिसके कि कृषकों को खेती-बाड़ी में संकेत दे सकते हैं।
3- मृदाओं को अपरदन से बचाने तथा अधिक उत्पादन के लिये पहले से उपाय जान लेने में।
4- किसानों को खाद एवं उर्वरकों के उपयोग के विषय में सूचना दी जा सकती है।
5- इससे मृदा के मूंल्याकन, प्रबन्ध एवं नियन्त्रण में बड़ी सुविधा मिलती है।
6- बांधों के निर्माण में।
7- मार्गों के निर्माण में।
8- नहरों व सिंचाई के अन्य साधनों को जुटाने में।
9- बाढ़ की रोकथाम तथा नियन्त्रण में।
10- सर्वेक्षण से मृदा की किस्म का ज्ञान प्राप्त हो जाता है जिससे विभिन्न प्रकार की फसलों को उगाने के लिये मृदा का चुनाव कर सकते हैं कि कौन-कौन सी फसलें किन-किन मृदाओं में सफलतापूर्वक हो सकती है।
11- कृषीय उद्योगों के लिये स्थिति का पता लगाने में ।
12- यह सभी प्रकार की मृदा एवं कृषीय अन्वेषणों का आधार है।

10.4 भूमि-क्षमता वर्गीकरण (Land Capability Classification)

मृदा सर्वेक्षणों से जो सूचना मिलती है वह मृदा प्रबन्ध से सम्बन्धित होती है और उसकी व्यवस्था कई तरीकों से की जा सकती है। ऐसा ही एक व्याख्यात्मक भूमि क्षमता वर्गीकरण है जो मुख्यत: कृषि कार्यो के लिये विभिन्न प्रकार की मृदाओं की उपयोगिता बताता है। भूमि क्षमता वर्गीकरण भूमि के किसी टुकड़े के उपयोग की सीमा निर्धारण करता है और संरक्षण समस्याओं को स्पष्ट करने तथा सम्भावित उपचार सुझाने में सहायक होता है। क्षमता वर्गीकरण निम्न तीन संवर्गो में किया जाता है- 1. क्षमता वर्ग, 2. क्षमता उपवर्ग, 3. क्षमता इकाइयां।

1. क्षमता वर्ग (Capability classes)- भूमि क्षता के आठ वर्ग होते हैं। जिन्हें रोमन अंकों द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। इनमें प्रथम चार तो फलोत्पादन के लिये उपयुक्त मृदायें होती है तथा शेषचार अनुपयुक्त होती है। लेकिन उनमें 3 चरागाह एवं घास आदि के लिये उपयुक्त होती है। अन्तिम आठवां वर्ग इसके लिये भी अनुपयुक्त होता है। उपरोक्त आठ वर्ग निम्न हैं-

1.1 वर्ग I - इस वर्ग की मृदायें प्राय: सभी दृष्टिकोण से उचित होती हैं। ये सममतल, गहरी, उपजाऊ तथा फसलोत्पादन के लिये बहुत उपयुक्त होती है। इस वर्ग में मृदाओं की जलधारण क्षमता अधिक होती है। इनमें जल निकास ठीक होता है। तथा दो या तीन फसली खेती की जा सकती है।

1.2 वर्ग II - ये लगभग वर्ग I के प्रकार की मृदायें होती है लेकिन इनमें ढ़लान का प्रतिशत अधिक होता है जिससे अपरदन की सम्भावना रहती है। इनमें पारगम्यता तथा जल निकास मन्द गति से होता है तथा जकल-धारण क्षमता वर्ग I से कम होती है। इन विकारों के कारण इनमें फसलों के चुनाव में ध्यान देना पड़ता है तथा भूमि संरक्षण, फसल चक्र, नमी संचय करने के उपाय तथा उपयुक्त भूपरिश्करण की क्रियायें अपनानी पड़ती है।

1.3 वर्ग III - वर्ग I और II की मृदाओं में जो फसलें उगाई जाती है वही फसलें इस वर्ग की मृदा में उगाई जा सकती हैं। इस प्रकार की मृदाओं में साधारण खड़ी ढ़लान होती है और मृदा अपरदन की सम्भावना अधिक होती है। इनमें जल धारण क्षमता उर्वरता बहुत कम होती है। फसलोत्पादन के लिये भूमि संरक्षण फसल चक्र, कार्बनिक खादों का प्रयोग नमी संचय के उपाय तथा आवश्यकतानुसार नाइट्रोजन उर्वरक का प्रयोग करते हैं।

1.4 वर्ग IV - इस वर्ग की मृदायें प्राय: बहुवर्षीय घास लगाने के लिये उपयुक्त होती है परन्तु उचित प्रबन्ध के साथ फसलोत्पादन भी किया जा सकता है। इस वर्ग की मृदाबों में ढलान खेड़े होते है। मृदा अपरदन अधिक होता है, मृदायें उथली होती है, जल धारण क्षमता कम होती है, जल निकास अच्छा नहीं होता।

1.5 वर्ग V - इस वर्ग की मृदायें कृषि के लिये अनुपयुक्त होती है। इनमें कंकर-पत्थर की अधिकता होती है और जल निकास उचित नहीं होता। इन मृदाओं में चारागाह या जंगल लगाये जा सकते हैं।

1.6 वर्ग VI - इस वर्ग की मृदायें भी कृषि के लिये अनुपयुक्त होती है। ये उथली शुष्क होती है तथा जल निकास अच्छी तरह नहीं होता। इनमें प्राय: अवनलिकायें भी पायी जाती हैं। इनको कभी-कभी

चारागाह या जंगल के लिये प्रयोग किया जा सकता है लेकिन इसके लिये मृदा संरक्षण के उपाय अपनाने होते हैं।

1.7 वर्ग VII - ये प्राय: खड़े ढाल वाली (Steep slope), मृदा अपरदित, पथरीली, उथली शुष्क या दलदली होती है। यदि उचित प्रबन्ध किया जाये तो इसमें कभी-कभी वृक्षारोपण सम्भव हो सकता है।

1-8 वर्ग VIII - इस वर्ग की मृदाओं में किसी भी प्रकार की व्यापारिक फसलें व पौधे नहीं उगाये जा सकते । इसके अन्तर्गत दलदली मृदायें मरूस्थली गहरी नालियां पहाड़ी क्षेत्र, खड़े ढाल वाली मृदायें आदि आती हैं। इस वर्ग की भूमिका मुख्यत: जंगली जीव मनोरंजन या पनधारा बचाव के लिये उपयुक्त होती है।

2. क्षमता उपवर्ग (Capability Sub-Class)- ये क्षमता वर्गो के उपविभाजन है जो कि चार प्रभावी सीमितताबों के आधार पर बने हैं। सीमिततायें इस प्रकार हैं- (1) अपरदन का जोखिम (e) (2) गीलापन, जल निकास या बह निकलना(w), (3) जड़ क्षेत्र सीमितता (s) (4) जलवायु सीमितता (c)। सीमितता चिन्ह को क्षमता वर्ग के अंक के साथ जोड़कर उपवर्ग मानचित्र किए जाते हैं जैसे IIe, IIIs इत्यादि। इस तरह उपवर्ग सीमितता की मात्रा और प्रकार दोनों का ही संकेत देते हैं। वर्ग में कोई उपवर्ग नहीं होता।

3. क्षमता इकाई (Capability units)- यह क्षमता उपवर्गो के आगे उप-विभाजन है। एक क्षमता इकाई में वे मुदायें हैं जो अपने गुणों, संभाव्यताओं (Potentialities) और सीमितता में काफी समान होती है तथा जिन्हे काफी हद तक समान संरक्षण उपचारों और प्रबन्ध कार्य प्रणालियों की आवश्यकता होती है।

10.5 सारांश

विभिन्न संस्तरो के वर्गीकरण, के अनुसार मृदाओं को अलग-अलग संवर्गो (Categories) में वर्गीकृत किया गया है। **उच्च संवर्ग- गण** (Order),**उपगण** (Sub-order), **वृहद मृदा समूह** (Great soil group) एवं **उप समूह** (Sub group) है। ये वृहद क्षैत्र की मृदाओं का सामान्य ज्ञान कराते है तथा उनका सम्बन्ध सम्पूर्ण संसार की मृदाओं से दर्षाते है। **निम्न संवर्ग**- कुल (families), **श्रेणी** (series), **प्रारूप** (types) एवं **प्रावस्थाये** (phases) है। जो कि मृदा की उत्पादक क्षमताओं का मूल्यांकन करने में महत्वपूर्ण है। गण (order) के आधार पर मृदाओं को प्रमुखत: तीन समूहों में वर्गीकृत किया गया है। मृदा सर्वेक्षणों से जो सूचना मिलती है वह मृदा प्रबन्ध से सम्बन्धित होती है और उसकी व्यवस्था कई तरीकों से की जा सकती है। ऐसा ही एक व्याख्यात्मक भूमि क्षमता वर्गीकरण है जो मुख्यत: कृषि कार्यो के लिये विभिन्न प्रकार की मृदाओं की उपयोगिता बताता है।

10.6 अभ्यास प्रश्न

1. लवणीय मृदायें को क्या कहते हैं?

(अ) कैलसीमाफिक (ब) कैलसीमाफिक

(स) कैलसीमाफिक (द) इनमें से कोई नहीं

2. ..... में वे मृदाये सम्मिलित है जो कि पहले लैटेराइटी मृदाओं में वर्गित थी

(अ) पॉडजोल (ब) चर्नोजम

(स) कैलसीमाफिक (द) लैटोसोल

3. ..... मृदायें रूस, उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका, जर्मनी, हंगरी, अर्जेन्टीना तथा एशिया में पाई जाती है।

(अ) पॉडजोल (ब) चर्नोजम

(स) कैलसीमाफिक (द) लैटोसोल

4. कार्बनिक मृदायें को क्या कहते हैं?

(अ) कैलसीमाफिक (ब) कैलसीमाफिक

(स) कैलसीमाफिक (द) इनमें से कोई नहीं

5. ..... मृदायें उश्ण जलवायु के शुष्क प्रदेशों में बनती है, जहां पर वर्षा 250 से 400 मिमी. तक होती है

(अ) पॉडजोल (ब) चर्नोजम

(स) चेस्टनट एवं बादामी मृदायें (द) लैटोसोल

10.7 संदर्भ ग्रंथ

- यादव, एस.पी.एस. 2007. ऊसर भूमियों को उपजाऊ बनाएं. विश्व कृषि संचार, जून-2007.
- शर्मा, ओ.पी., इन्टोदिया, एस.के., शर्मा, एस.एल. एवं नकेला, एन.एस. 2009. शस्य विज्ञान (कृषि वर्ग), माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर.
- चौधरी, जे. पी., 2000. मृदा विज्ञान : खाद एवं उर्वरक. भारती पब्लिकेशन, बडोत (बागपत).
- जाट, बी.एल. 2012. क्षारीय व लवणीय भूमि सुधार. विश्व कृषि संचार, मई- 2012.

इकाई - 11

मृदा उर्वरता तथा उसका मूल्यांकन

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 मृदा उर्वरता एवं मृदा उत्पादकता

11.3 उपजाउ मृदा की आवश्यकतायें

11.4 मृदा उर्वरता को प्रभावित करने वाले कारक

11.5 भारत में मृदा उर्वरता को बनाये रखने के प्रयास

11.6 मृदा उर्वरता का नियंत्रण

11.7 अच्छी मृदा उर्वरता स्तर बनाये रखने के तरीके

11.8 मृदा उर्वरता का मूल्यांकन

11.9 मृदा उर्वरता का मूल्यांकन करने की विधियों

11.10 सूचक पौधों का प्रयोग

11.11 पादप विश्लेषणों का प्रयोग

11.12 सारांश

11.13 अभ्यास प्रश्न

11.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

11.0 उद्देश्य

इस इकाई को पड़ने के पश्चात आप निम्न ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे :-

- मृदा उर्वरता एवं मृदा उत्पादकता में अंतर
- मृदा उर्वरता को प्रभावित करने वाले कारक
- भारत में मृदा उर्वरता को बनाये रखने के प्रयास
- मृदा उर्वरता का नियंत्रण
- मृदा उर्वरता स्तर बनाये रखने के तरीके
- मृदा उर्वरता का मूल्यांकन

11.1 प्रस्तावना

पौधों की अधिकतम वृद्धि के लिये मृदा की पोषक तत्वों को पर्याप्त तथा सन्तुलित मात्रा में प्रदान करने की क्षमता को मृदा उर्वरता कहते हैं। पौधों की अधिकतम वृद्धि तथा उपज के समस्त आवश्यक पोषकों को पर्याप्त तथा सन्तुलित मात्रा में प्रदान करने की योग्यता रखने वाली मृदा को उर्वर या उपजाउ मृदा कहते है।

11.2 मृदा उर्वरता एवं मृदा उत्पादकता

मृदा उर्वरता	**मृदा उत्पादकता**
1 पौधों की अधिकतम वृद्धि के लिए मृदा की पोषक तत्वों को प्रदान करने की क्षमता को मृदा उर्वरता कहते हैं।	1 मृदा की उपज (पैदावार) देने की क्षमता को मृदा उत्पादकता कहते है।
2 मृदा उर्वरता को क्विन्टल, किलोग्राम तथा प्रति हैक्टेयर में उसकी उपज में मापा जाता है।	2 मृदा उत्पादकता को इसकी उपज के मूल्य अर्थात् प्रति एकड़ की उपज के रूपयों में मूल्य द्वारा मापा जाता है।
3 मृदा उर्वरता अच्छी जुताई, सिंचाई, जल निकास तथा खाद आदि द्वारा बढ़ायी जा सकती है। यह उपज का मूल्य बढ़ने पर नहीं बढ़ती।	3 उपज का मूल्य बढ्ने से किसी मृदा की उर्वरता अपेक्षाकृत कम होने पर भी उसकी उत्पादकता अधिक हो सकती है।
4 मृदा उर्वरता मृदा उत्पादकता का एक मुख्य अंग है जिसके अन्तर्गत आर्थिक नियम, मांग पूर्ति, उत्पादन व्यय तथा उपज के मूल्यों का विचार लगभग नहीं है।	4 मृदा उत्पादकता एक व्यापक शब्द है जिसके अन्तर्गत अधिक नियम तथा भौतिक क्रियायें कार्य करते हैं। उपज का मूल्य मुख्यत: मृदा उत्पादकता निर्धारित करती है।
5 मृदा की भौतिक अवस्था, रासायनिक दशा तथा मृदा में पौधों के पोषक तत्वों की मात्रा एवं उनका सन्तुलन मृदा की उर्वरता को निर्धारित करते हैं।	5 मृदा की उर्वरता, परिवहन के व्यय, फसल पैदा करने में व्यय तथा उपज की मॉग मृदा की उत्पादकता को निर्धारित करते हैं।

11.3 उपजाउ मृदा की आवश्यकतायें

किसी मृदा का उपजाउ होना निम्नलिखित दशाओं पर निर्भर करता है –

1. इसमें जल संचित रखने की क्षमता पर्याप्त होनी चाहिये।
2. इसमें वायु प्रवेश अच्छा होना चाहिये।
3. इसे ऐसे खनिजों की उपस्थिति में अपघटित होता हुआ कार्बनिक पदार्थ प्राप्त होना चाहिये जो पौधों की आवश्यकता पूर्ति करने के लिये पर्याप्त तीव्र से घुलते रहते हैं।

उपरोक्त दशाओं का सही संयोग प्राप्त करना किसान का उद्देश्य होता है। उर्वर मृदा के लिये रासायनिक तथा जैविक दशाओं का उचित रहना आवश्यक है। अत: स्पष्ट है कि मृदा की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशाओं का उचित संयोग होना चाहिये। यदि मृदा में पौधों के लिये सभी आवश्यक तत्व पर्याप्त तथा सन्तुलित मात्रा में विद्यमान हो परन्तु जब निकास उचित न होने के कारण जल एवं वायु के संचार में बाधा उत्पन्न हो जाये और लाभदायक जीवाणुओं के लिये अनुकूल परिस्थिति न हो तो उर्वरता कम हो जाती है।

11.4 मृदा उर्वरता को प्रभावित करने वाले कारक

मृदा उर्वरता को बनाये रखने या बढ़ाने के लिये विभिन्न कारकों को निम्न दो प्रकार दो भागों में विभाजित किया जा सकता है -

I. प्राकृतिक कारक

1 मूल पदार्थ
2 जलवायु
3 मृदा प्रोफाइल की गहराई
4 मृदा आयु
5 स्थलाकृति
6 मृदा की भौतिक दशा

II. कृत्रिम कारक

ये कारक मृदा प्रबंध से संबंधित होते हैं। ये मनुष्यों द्वारा अपनाये जाते हैं और इनमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जाता है। ये निम्नलिखित है –

1. जलाक्रान्ति
2. मृदा की जुताई का ढंग व समय
3. फसल उगाने की प्रणाली
4. मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा
5. खरपतारों का नियंत्रण
6. खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग

I. प्राकृतिक कारक

1. मूल पदार्थ चट्टानों के ऋतुवरण द्वारा मृदा का निर्माण होता है। यदि मूल पदार्थ में पौधों के – अधिक मात्रा में विद्यमान हो तो उससेतत्व पोषकबनी मृदा साधारणतउपजाउ होती है। :
2. जलवायु - जलवायु के प्रमुख अवयव नमीतापक्रम तथा वायु हैं। नमी अथवा अधिक ,वर्षा , लीचिंग द्वारा उपरी सतह से बहकर मृदा की निचली सतह वर्षो वाले क्षेंों में अधिक पोषक तत्व । इस प्रकार उपरी मृदा उर्वरता कम हो जाती है। अधिक तापक्रम पर मृदा में में चले जाते हैं कार्बनिक पदार्थ का अपघटन शीघ्र होकर मृदा उर्वरता कम हो जाती है। निरन्तर तेज वायु चलने से मृदा के धरातल से मृदा कण उड्कर अन्य स्थानों में एकत्रित हो जाते हैं। जिससे मृदा उर्वरता कम हो जाती है।
3. मृदा प्रोफाइल की गहराई उथली मृदाओ की अपेक्षा गहरी मृदाओं की उर्वरता अधिक होती – है। गहरी मृदाओं में पौधों क जड़े अधिक गहराई तक जाकर भलीभांति फैल जाती हैं और- तथा जल अधिक मात्रा में लेती हैं।पोषक तत्व
4. मृदा आयु लींचिंग तथा लगातार फसलों के उगाने ,ट फूटपुरानी निर्मित मृदाओं में अधिक टू – धिक कम हो जाते हैं। अत्य पोषक तत्वके कारण प्राप्य अतनवनिर्मित मृदा की उर्वरता पुरानी : निर्मित मृदा की अपेक्षा कम होती है।
5. स्थलाकृति - उंचे क्षेत्रों में कटाव तथा लींचिंग द्वारा पोषक तत्व पानी के साथ बहुत निचले स्थानों में एकत्रित हो जाते है। इस प्रकार उंचे स्थानों की मृदा उर्वरता कम और साथ बहुत निचले क्षेत्रों की मृदा उर्वरता अधिक होती है। यही कारण है कि पहाड़ी या उंचे क्षेत्रों की मृदा उर्वरता निचले क्षेत्रों की मृदा उर्वरता अधिक होती हैं। यहीं कारण है कि पहाड़ी या उंचे क्षेत्रों की मृदा उर्वरता मैदानी या नीचे क्षेत्रों की मृदा की उर्वरता से कम होती है। अतमृदा उर्वरता मैदानी : मृदा की तलरूपता इसकी उर्वरा शक्ति :या नीचे क्षेत्रों की मृदा की उर्वरता से कम होती है। अत को प्रभावित करती है।
6. मृदा की भौतिक दशा , होने पर मृदा में वायु संचार सुचारू रूप से होता है भौतिक दशा अच्छी – मृदा की जलधारण क्षमता बढ़तीहै जीवों की पौधों की जड़ों का सुविकास होता है और सूक्ष्म , सुगमतापूर्वक क्रिया ठीक प्रकार से होती है। ऐसी दशा में पौधे मृदा घोल से अपने पोषक तत्व ते हैं। मृदा की संरचना तथा कणाकार भी मृदा उर्वरता को प्रभावित करते हैं। बड़े ग्रहण कर सक आकार के कणों वाली मृदओं में कणान्तरिक छिद्र बड़े होने के कारण जल नीचे की ओर शीघ्रता से चला जाता है। इस दशा में मृदा की जल शोषण शक्ति कम होकर मृदा उर्वरता कम हो जाती है। छोटे कणों वाली मृदा की उर्वरता अधिक होती है।
7. मृदा अपरदन जल के ढवायु द्वारा तथा मृदा की सतह से अतिरिक्त –जल की ओर बहने से मृदा कटाव होता है। इससे मृदा में उपस्थित पौधों के पोषक तत्व भी मृदा कणों के साथ बहकर नष्ट हो जाते हैं और मृदा उर्वरता कम हो जाती है। फसलें जितनी खाद्य पदार्थ मृदा से अपने उपयोग में लेती है। उसका लगभग हो जाता है।गुणा कटाव द्वारा नष्ट 30

8. निरोधक कारक - Fe, Mn तथा Al अधिक घुलनशील होकर फॉस्फोरस को अघुलशील रूप में परिर्तित कर देते हैं। Ca तथा Mg की भी कमी हो जाती है। इसी प्रकार मृदा उर्वरता कम हो जाती हा

II. कृत्रिम कारक

1. जलाक्रान्ति - अधिक पानी भरने से मृदा की भौतिक दशा खराब हो जाती हैं। जलाक्रान्ति से घुलनशील पोषक तत्व लीचिंग द्वारा नीचे चले जाते हैं जिसके फलस्वरूप मृदा उर्वरता कम हो जाती है। जब मृदा में फसल की आवश्यकता से अधिक नमी होती है और उसके निकास की कोई प्रबन्ध नहीं होता है तो मृदा में वायु की कमी होकर वायुजीवी जीवाणुओं की सक्रियता कम हो जाती है और हानिकारक जीवाणु सक्रिय हो जाते हैं। ।फलतमृदा की उर्वरता कम हो : जाती है।
2. मृदा की जुताई का ढंग व समय - ढलाव वाले खेतों की जुताई ढाल के समान्तर करने से मृदा का कटाव अधिक होता है जिससे पोषक तत्व पानी के साथ बहकर कम हो जाते है और मृदा उर्वरता कम हो जाती है। अतवत् खेत की जुताई करने से मृदा का मृदा के ढलाव के लम्ब : की कटाव कम होकर उर्वरता बनी रहती है। गहरी जुताई करने से मृदा उर्वरता बढ़ती है। मृदा जुताई उचित समय पर करने से मृदा की भौतिक दशा ठीक रहकर मृदा उर्वरता में वृद्धि होती है।
3. फसल उगाने की प्रणाली - विभिन्न प्रकार की फसलें अपनी आवश्यकतानुसार मृदा में विभिन्न आवश्यक पोषक तत्व विभिन्न अनुपात में ग्रहण करती हैं। यदि किसी मृदा में हर वर्ष एक ही फसल लगातार उगायी जाये तो उस फसल द्वारा शोषित किये गये पोषकों की मात्रा मृदा से कम होकर मृदा की उर्वरता क्षीण हो जाती है। अतमृदा की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के लिये : र नहीं बोना चाहिये बल्कि फसल चक्र के साथ फसलों के मिश्रण भी एक ही फसल को निरन्त पोषक का कम या अधिक शोषण न त में बार बार बदलकर बोने चाहियें। इस प्रकार समस्तखे होने से मृदाउर्वरता बनी रहती है।
4. मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा - प्राय ,जिस मृदा में जितनी अधिक कार्बनिक पदार्थ होता है : का पदार्थ पोधों के पोषक तत्वों कि कार्बनिकउसकी उर्वरता उतनी ही अधिक होती है क्यों र ग्रह होता है। मृदा में कार्बनिक पदार्थ की पर्याप्भण्डात मात्रा होने से इसकी जलधारण क्षमता एवं वायु संचार बढ़ जाता है। कार्बनिक पदार्थ मृदा के सूक्ष्म जीवाणुओं का भी प्रमुख भोज्य पदार्थ होता है।
5. खरपतारों का नियंत्रण - खरपतार भी पौधों की भांति नमी का प्रकाश तथा खाद्य तत्वों ,वायु , उपयोग करते हैं। यदि खरपतवारों की रोकथाम न की जाय और उन्हें स्वतंत्र रूप से खेत में उगने तथा बढ़ने दिया जाये तो वे पौधों के पोषक तत्वों के एक बहुत बड़े भाग को अपने भोजन के रूप में नष्ट कर देते हैं जिससे मृदा की उर्वरता कम हो जाती है।
6. खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग - मृदा में आवश्यक पोषक तत्वों की कमी की पूर्ति करने के लिये इसमें खाद तथा उपयुक्त उर्वरक मिलती हैं। अतखाद एवं उर्वरकों के प्रयोग से मृदा की उर्वरता : में वृद्धि हो जाती है।

11.5 भारत में मृदा उर्वरता को बनाये रखने के प्रयास

भारत मे मृदा उर्वरता की स्थिति – भारतवर्ष की मृदाओं में प्रमुख पोषक तत्वों के अतिरिक्त द्वितीयक पोषक गन्धक तथा सूक्ष्म पोषक तत्व जिंक आदि की उपलब्धि भी अत्यन्त कम है। फसलोत्पाद के परिणामस्वरूप मृदाओं की उर्वरता पर्याप्त सीमा तक कम हो जाती है। ऐसी अवस्था में रासायनिक उर्वरकों के उपयोग बिना उन्नतशील किस्म का उत्पदान सम्भव नहीं है। वास्तव में एक किलोग्राम उर्वरक के प्रयोग से लगभग 10 किलोग्राम खाद्यान्न का उत्पादन होता है।

भारतवर्ष में समस्त उत्पादन का लगभव 70 प्रतिशत उर्वरकों के उपयोग द्वारा ही सम्भव हो सका है।
मृदा उर्वरता के अन्तर्गत पोषक तत्वों की मात्रा के साथ साथ उसका कुशल प्रबन्ध, मृदा, जल प्रबन्ध तथा सस्य प्रबंध भी आते है। प्रधान पोषक तत्वों में असन्तुलन, कार्बनिक पदार्थ की कमी, मृदा संरक्षण व संरचना और मृदा प्रदूषण आदि कारक मृदा उर्वरता की कमी करते है। उर्वरता एवं उर्वरक के सही प्रयोग के लिए मृदा परीक्षण आवश्यक है। देश के विभिनन भागों में अनेकों अनुसंधान केन्द्रों पर इस विषय में किए गए प्रयोगों के आधार पर फसलोत्पादन में अशातित वृद्धि हुई है। पूरे देश की मृदाओं को सस्य जलवायु के आधार पर वर्गीकृत करके विभिनन सस्य चक्रों के लिए मृदा उर्वरता की दृष्टि से उन्नत एवं विशिष्ट पोषक तत्व उपयोग कर मानकों का विकास किया जा रहा है।

11.6 मृदा उर्वरता का नियंत्रण

मृदा उर्वरता बनाये रखने के लिए निम्नलिखित प्रयास अपेक्षित है -

1. उचित भू परिष्करण क्रियाओं द्वारा उत्तम मृदा संरचना का विकास करना।
2. उचित जल निकास एवं वायु संचार का होना।
3. मृदा में उचित जल संधारण एवं जल प्राप्ति होना।
4. मृदा में पर्याप्त कार्बनिक पदार्थ का स्तर बनाये रखना।
5. ख़रपतवार का नियंत्रण रखना।
6. मृदा अपरदन का नियंत्रण रखना।
7. मृदा विकार एवं हानिकारक कीडों की रोकथाम करना।
8. सुधारकों के उपयोग द्वारा मृदा पीका नियंत्रण रखना। .एच.
9. वैज्ञानिक फसल चक्र का प्रयोग करना।
10. फलीदार फसलों का उगाना।
11. संतुलित उर्वरक प्रयोग करना।
12. फार्म खाद एवं फसल अवशेषका हरि खाद्य प्रयोग करना।
13. समय समय पर मृदा परीक्षण द्वारा मृदा उर्वरता की जांच करके उसके अनुरूप मृदा उर्वरता का नियंत्रण करना।

मृदा उत्पादकता तथा इससे संबंधित कारकों को निम्नसूत्र द्वारा प्रर्दशित कर सकते हैं -

Y = f(s, cl, v m, t)

Y= Yield - उत्पादकता (उपज)

F= Function - कार्य

S= Soil - मृदा (मृदा उर्वरता तथा भौतिक अवस्था आदि)

Cl = Climate - जलवायु

V = Vegetation - वानस्पति मात्रा (पादप संख्या व वृद्धि)

M = Management - सस्य प्रबंध

T= Time - समय

11.7 अच्छी मृदा उर्वरता स्तर बनाये रखने के तरीके

निम्न कारकों को अपनाकर मृदा उर्वरता प्रबन्ध किया जा सकता है अर्थात् मृदा उर्वरता को सुरक्षित रखा जा सकता है

1 उचित जल निकास एवं वायु संचार – मृदा में उपस्थित पदाप पोष्कों को लीचिंग द्वारा नष्ट होने से बचाने के लिए जल निकास उचित होना चाहिए। जड़ों के सुविकास हेतु मृदा में वायु संचार उचित होना चाहिए। पानी के आदिक्य में वायु संचार नहीं होता जिससे मृदा में CO_2 की मात्रा में वृद्धि होकर पौधों की जड़ों के विकास में बाधा पड़ती है।

2 मृदा अपरदन नियंत्रण – मृदा कटाव के कारण नाइट्रोजन, पोटेशियम, कैल्शियम तथा मैगनिशियम आदि पादक पोषक तत्व बहकर नष्ट हो जाते है। अत: मृदा उर्वरता बनाये रखने के लिए उपयुक्त विधि द्वारा मृदा अपरदन को रोकना अत्यावश्यक होता है।

3 मृदा में उचित जल संधारण – मृदा में नमी की कमी या आधिक्य दोनों ही मृदा गुणों तथा पादप वृद्धि के लिए अहितकर है। अत: मृदा उर्वरताबनाये रखने के लिए मृदा को नमी को सुरक्षित रखा जाता है। ऐसा उचित समय जुताई करके मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि करके, खरपतवारों को नष्ट करके या वर्षा के पानी को रोककर किया जा सकता है।

4 मृदा पी.एच. – अधिकतर फसलों की वृद्धि के लिए उदासीन मृदाऐं उपयुक्त होती है। अत: अम्लीय पदार्थों में चुना मिलाकर और क्षारीय मृदाओं में रासायनिक सुधारक या कार्बनिक पदार्थ प्रयोग करके मृदा की पी.एच. को नियंत्रित किया जा सकता है।

5 खरपतवारों का नियंत्रण – खरपतवार मृदा से खादय पदार्थ ग्रहण करते है जिससे फसल को पोषक तत्व कम प्राप्त होते है। अत: मृदा उर्वरता बनाये रखने के लिए खरपतवार को हाथों से उखाड़ कर,नराई कर , पकने से पहले काटकर जला कर मल्व द्वारा या रासायनिक पदार्थों के प्रयोग द्वारा नियंत्रित किया जाता है।

6 हानिकारक कीड़ों की रोकथाम – मृदा में विद्यमान दीमक या अन्य सूक्ष्म हानिकारक जीव पौधों में नाना प्रकार के रोग विकसित करते है ऐसी दशा में रासायनिक पदार्थों का प्रयोग कर मृदा उर्वरता को सुरक्षित रखा जाता है।

7 वैज्ञानिक फसल चक्र का प्रयोग – फसलों को हेरफेर कर बोने से मृदा में किसी पोषक विशेष की कमी नहीं होती और मृदा उर्वरता बनी रहती है। अत: फसल चक्र का सही प्रयोग करना चाहिए और मुसलाजड़ वाली फसल के बाद झकड़ा जड़ वाली फसल उगाई जानी चाहिए।

8 फलीदार फसलों का उगाना –मटर, चना, लौबिया, ग्वार, मुग,उड़द, सनई तथा डेचा आदि फलीदार फसलों में सहजीवी बैक्टीरिया वायुमण्डल से मृदा में नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर देते है जिससे मृदा उर्वरता शक्ति में वृद्धि होती है अत/ दलहनी फसलें उगाना लाभकारी होती है।

9 फार्म खाद तथा हरी खाद काप्रयोग –कार्बनिक खादों में पौधों के लिए लगाग सभी पोषक उपयुक्त अनुपात में विद्यमान होते है अत: मृदा में खाद मिलाकर या हरी खाद देकर मृदा की उर्वरता सुरक्षित रखी जा सकती है।

10 उर्वरकों का प्रयोग- मृदा में विभिन्न उर्वरक मिलाने से इसकी उर्वरता में वृद्धि होती है। और अच्छी फसल प्राप्त होती है अत: मृदा उर्वरता बनाये रखने हेतु इसमें आवश्यक उर्वरक मिलाने चाहिए।

11 उचित भू-परिष्करण क्रियाओं द्वारा मृदा संरचना में सुधार – मृदा में कम या अधिक नमी की अवस्था में जुताई करने, ढेले या किचड बनकर मृदा संरचना खराब हो जाती है। अत: उचित समय पर भू परिष्करण क्रियाऐं करके मृदा संरचना को सुधारते है इससे मृदा में जल शोषण एवं धारण की क्षमता बढ जाती है और मृदा में वायु संचार भी उचित होता है।

11.8 मृदा उर्वरता का मूल्यांकन

मृदा उर्वरता के मूल्यांकन के अन्तर्गत मृदा में विद्यमान पोषक तत्वों की मात्रा का ज्ञान प्राप्त किया जाता है इससे पौधों के लिए पोषकों की आवश्यकता का पता चलता है। फलत: मृदा में उचित प्रकार के उर्वरक या मृदा सुधारक पौधों की आवश्यकतानुसार उपयुक्त मात्रा में मिलाये जा सकते है। किसी मृदा की उर्वरता की मूल्यांकन करने के लिए निम्न विधियां उपयोग में लाई जाती है-

1 पौधों में पोषक तत्वों के अभाव लक्षणों द्वारा

2 जैविक परिक्षण

3 पादप परिक्षण

4 मृदा परिक्षण

11.9 मृदा उर्वरता का मूल्यांकन करने की विधियों

1. रासायनिक विधियां –

(अ)मृदा विश्लेषण –

1 कुल विश्लेषण

2 प्राप्य पोषकों का निर्धारण

3 मृदा परिक्षण कीट की सहायता से शीघ्र मृदा परिक्षण

(ब) पादप परिक्षण

1 कुल विश्लेषण

2 शीघ्र पादप उतिका परिक्षण

3 जीव रसायनिक परिक्षण

2. जैविक विधियां

(अ)उच्च पौधों पर प्रयोग

1 उर्वरकों के साथ खेतों में प्रयोग

2 उर्वरकों के साथ गमलों में प्रयोग

3 दृश्य विधि या पोधों की भूख के लक्षण

4 सूचक पौधों का प्रयोग

5 पत्ती तना तथा स्तम्भ के लिए पोषक इंजेक्शन विधि

6 पर्ण निदान

7 मृदा से पोषक निष्कर्षक के रूप में पौधों का प्रयोग

(ब) सूक्ष्म जैविक विधियां

1 एजोटोबैक्टर विरंजिता परीक्षण,

2 एस्परजिलस नाइगर परीक्षण,

3 काबैन-डाई – आक्साइड निकास विधि

मृदा उर्वरता का निर्धारण करने के लिए आदर्श विधि वह है जिससे निम्न बातों के विषय में अधिकतम जानकारी प्राप्त हो

1 उचित समय पर मृदा में पौधों को प्राप्य पोषकों की मात्रा

2 फसल के पकने तक पौधों को निरन्तर उचित मात्रा में पोषक प्रदान करने की मृदा की क्षमता

मृदा उर्वरता मूल्यांकन मुख्य विधियां का संक्षिप्तवर्णन निमन प्रकार किया जा सकता है -
पौधों में पोषक तत्वों के अभाव लक्षण

11.10 सूचक पौधों का प्रयोग

कुछ पोधों में किसी विशेष पादप पोषक तत्वों की कमी के लक्षण बहुत स्पष्ट रूप से दिखाई देते है इन्हें देखकर तत्व विशेष की कमी का ज्ञान सरलतापूर्वक हो जाता है विभिन पोषक तत्वों की कमी प्रदर्शित

करने वाले कुछ सुचक पौधे निम्नलिखित है -

कमी वाला तत्व	**सूचक पौधे**
नाइट्रोजन	फूल गोभी, पत्ता गोभी
फास्फोरस	तोरिया
पोटेशियम	आलू
मैगनिशियम	आलू
कैल्शियम	फूल गोभी, पत्ता गोभी
आयरन	चुकन्दर
मैगनीज	चुकन्दर, जई, आलू
सोडियम	चुकन्दर
बोरान	चुकन्दर, सूरजमुखी

11.11 पादप विश्लेषणों का प्रयोग

यह निम्न प्रकार से किया जा सकता है –

1. पादप विश्लेषणों से पौधों के दिखाई देने वाले लक्षणों के निदान होता है और निदानों की पृष्टि होती है।
2. कभी कभी पौधों के तत्वों का अभाव होते हुए भी लक्षण दिखाई नहीं देते ऐसी अवस्था में पौधों में छिपी हुई भूख पादप परीक्षण द्वारा ही ज्ञात किया जा सकता है।
3. पादप परीक्षण या उत्तक परीक्षण द्वारा प्रयुक्त पोषक तत्व की पौधों के लिए प्राप्यता एवं प्रभाव का पता चलता है।
4. कभी कभी फसलों में एक पोषक तत्व प्रयोग करने से अन्य पोषक की प्राप्यता पर विपरित प्रभाव पड़ता है। पोषक तत्वों में इस प्रकार की विरोधी क्रियाओं या व्यवहार का ज्ञान पादप परीक्षण द्वारा किया जाता है।
5. पादप परीक्षण द्वारा पौधों के अन्दर होने वाली क्रियाओं का ज्ञान हो जाता है।
6. पोधों में किसी तत्व की प्रारम्भिक अवस्था में कमी का पता पादप या उत्तक परीक्षण द्वारा ज्ञात किया जा सकता है।

11.12 सारांश

हर किसान का मुख्य उद्देश्य किसी खेत से फसल की अधिकतम उपज का प्राप्त करना होता है। अधिकतम फसलोत्पादन हेतु मृदा में विभिन्न पादप पोषक तत्वों का उचित मात्रा में अनुकूल अनुपात में होना आवश्यक होता है। अतदन करने और मृदा की भौतिक तथा वैज्ञानिक ढंग से फसलोत्पा : बनाये रखने के लिए मृदा उर्वरता का सही मूल्रासायनिक दशाओं का उपयुक्तयांकन करना परम आवश्यक है।

11.3 अभ्यास प्रश्न

1. पौधों की अधिकतम वृद्धि के लिए मृदा की पोषक तत्वों को प्रदान करने की क्षमता को क्या कहते हैं ?

   (अ) मृदा उर्वरता (ब) मृदा उत्पादकता

   (स) दोनों (द) इनमें से कोई नहीं

   (अ)

2. मृदा की उपज (पैदावार) देने की क्षमता को क्या कहते है ?

   (अ) मृदा उर्वरता (ब) मृदा उत्पादकता

   (स) दोनों (द) इनमें से कोई नहीं

   (ब)

3. पोटेशियम का सूचक पौधा कौनसा है ?

   (अ) चुकुंदर (ब) मिर्ची

   (स) चावल (द) आलू

   (द)

4. मृदा उर्वरता का मूल्यांकन करने कि विधियाँ कौनसी हैं?

5. मृदा उर्वरता को प्रभावित करने वाले कारक कौनसे हैं ?

11.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

- यादव, एस.पी.एस. 2007. ऊसर भूमियों को उपजाऊ बनाएं. विश्व कृषि संचार, जून-2007.
- शर्मा, ओ.पी., इन्टोदिया, एस.के., शर्मा, एस.एल. एवं नकेला, एन.एस. 2009. शस्य विज्ञान (कृषि वर्ग), माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर.
- चौधरी, जे. पी., 2000. मृदा विज्ञान : खाद एवं उर्वरक. भारती पब्लिकेशन, बडोत (बागपत).
- जाट, बी.एल. 2012. क्षारीय व लवणीय भूमि सुधार. विश्व कृषि संचार, मई- 2012.

इकाई -12

खाद एवं उर्वरकों का वर्गीकरण तथा उनका उपयोग

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 कार्बनिक खादों का वर्गीकरण

12.2.1 स्थूल कार्बनिक खादें

12.2.2 सान्द्रित कार्बनिक खादें

12.3 रासायनिक उर्वरकों का वर्गीकरण

12.3.1 नत्रजनधारी रासायनिक उर्वरक

12.3.2 फॉस्फोरसयुक्त रासायनिक उर्वरक

12.3.3 पोटेशियम युक्त रासायनिक उर्वरक

12.3.4 सल्फरयुक्त रासायनिक उर्वरक

12.3.5 जटिल रासायनिक उर्वरक

12.3.6 सूक्ष्म पोषक तत्वधारी उर्वरक

12.3.7 मिश्रित उर्वरक

12.4 उर्वरकों के प्रयोग का समय

12.4.1 फसलों के बुवाई से पूर्व प्रयोग

12.4.2 फसलों के बुवाई के समय प्रयोग

12.4.3 फसलों के बुवाई के बाद प्रयोग

12.5 उर्वरक प्रयोग की विधियॉं

12.5.1 ठोस के रूप में उर्वरकों का प्रयोग

12.5.2 द्रव के रूप में उर्वरकों का प्रयोग

12.6 सारांश

12.7 बहु चयनात्मक प्रश्न

12.8 बहु चयनात्मक प्रश्नों के उत्तर

12.9 संदर्भग्रन्थ

12.0 उद्देश्य

कार्बनिक खाद क्या है, इनकी स्थूल एवं सान्द्रित कार्बनिक खादों के वर्गीकरण के बारे में जानना, रासायनिक उर्वरकों का वर्गीकरण एवं प्रकार तथा उनमें मौजूद पोषक तत्वों की जानकारी, उर्वरकों के प्रयोग का बुवाई से पूर्व, बुवाई के समय तथा बुवाई के बाद की जानकारी, उर्वरक प्रयोग की विभिन्न विधियों की जानकारी।

12.1 प्रस्तावना

प्राय: उर्वरक एवं खाद को प्राय समझा जाता है, परन्तु वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इसमें अन्तर है। उर्वरकों को कारखानों में तैयार किया जाता है तथा सान्द्रित होने के कारण इनमें अधिक मात्रा में पोषक तत्व पाए जाते है, जबकि खादों को कृषक अपने घर पर आसानी से तैयार कर लेता है परन्तु इनमें पोषक तत्वों की मात्रा अपेक्षाकृत काफी कम होती है।

खाद- वे सड़े पदार्थ जो जीवांश अथवा कार्बनयुक्त हो यूरिया उपवाद को छोड़कर पेड-पौधे, मानव, जीव-जन्तु आदि के अवयवों से बने हो, खाद कहलाती है। इन्हे तीन नामों से जाना जाता है-जैविक, जीवांश तथा कार्बनिक खाद। सड़ने के बाद इनका प्रयोग खेतों में फसलोत्पादन हेतु किया जाता है।

उर्वरक- वह खनिज या कारखाने से उत्पादित पदार्थ है जिससे एक या एक से अधिक पादप पोषक तत्व उपलब्ध होते है व जिनका व्यवसायिक मूल्य हो, उर्वरक कहलाता है। इस प्रकार एक उपयुक्त खनिज (रॉक फॉस्फेट) या शुद्ध किया हुआ खनिज (एम. ओ. पी.) या कारखाने में तैयार किया गया पदार्थ (यूरिया, ड़ी. ए. पी., एस. एस. सी., काम्पलेक्स आदि) उर्वरक माने जाते है।

वे तत्व जो पोषण में सहायक है पोषक तत्व कहलाते है। इनकी अनुपस्थिति में पौधें अपने जीवनचक्र को सफलतापूर्वक पूर्ण नहीं कर सकते। इसलिए इन्हें आवश्यक पोषक तत्व कहते है। विशेष तत्व की कमी होने पर उस तत्व को देकर ही कमी दूर की जा सकती है व पौधें को स्वस्थ बनाया जा सकता है। अपर्याप्त एवं असंतुलित उर्वरक उपयोग से प्रमुख पोषक तत्वो के साथ ही गौण तत्व एवं सूक्ष्म तत्वों की कमी भी होती जा रही है। पौधों को अपना जीवन चक्र पूरा करने के लिए कम से कम **16** पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। पौधे जल व वायु से कार्बन, हाइड्रोजन व ऑक्सीजन प्राप्त करते है। अत: इन तत्वों को देने की आवश्यकता नहीं होती है परंतु पौधों की आवश्यकतानुसार उर्वरकों द्वारा दिये जाने वाले तत्वों को (अ) जिनकी अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है- प्राथमिक/मुख्य पोषक तत्व (नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश) (ब) जिनकी पर्याप्त आवश्यकता होती है- द्वितीय/गौण पोषक तत्व व (स) सूक्ष्म मात्रा में आवश्यकता वालों को सूक्ष्म पोषक तत्व कहते है (लोहा, तांबा, जस्ता, मैग्नीज, बोरोन, मोलिब्डेनम, कोबाल्ट, क्लोराइड) कहते हैं।

12.2 कार्बनिक खादों का वर्गीकरण

कार्बनिक खाद जो जीवांश अथवा कार्बनयुक्त हो, पेड-पौधे, मानव एवं जीव-जन्तु आदि के अवयवों से बनी हो, कार्बनिक खाद कहलाती है। इनके सड़ने के बाद खेतों में फसलोत्पादन हेतु प्रयोग किया जाता है। इन्हें प्राय: दो भागों में विभक्त किया गया है।

12.2.1 स्थूल कार्बनिक खाद

ये वजन में भारी, आयतन में अधिक लेकिन तत्वों में कम हो स्थूल खाद कहलाती है। जैसे- गोबर की खाद (एफ.वाई.एम.), बायोगैस स्लरी, कम्पोस्ट खाद एवं केंचुआं खाद (वर्मीकम्पोस्ट) आदि। कार्बनिक खादों के उपयोग करने पर मृदा जीवांष पदार्थ की मात्रा बढती है तथा मृदा स्वास्थ्य को ठीक रखती है।

अ. गोबर की खाद : गोबर की खाद का उपयोग कर मृदा स्वास्थ्य के साथ-साथ टीकाऊ उत्पादन लिया जा सकता है। गोबर की खाद में गोबर, मूत्र, बिछाली और चारे के अवशेषों का अपघटित मिश्रण है। यह पोषक तत्त्वों एवं कार्बन का महत्त्वपूर्ण स्रोत है। इसका कुछ भाग गांवों में ईधन के लिए उपयोग में लिया जाता है। पशु उत्सर्जन में मल एवं मूत्र मुख्य रुप से होता है तथा मल एवं मूत्र की मात्रा विभिन्न पशुओंओं में क्रमश: **60-80** एवं **20-40** प्रतिशत होता है। पशुओं मल एवं मूत्र का संगठन भोजन के अवयवों पर निर्भर करता है । पशुओं मल की तुलना में मूत्र में नत्रजन एवं पोटाश की मात्रा ज्यादा होती है, जबकि फॉस्फोरस की मात्रा कम होती है।

ब. बायोगैस स्लरी :- यह एक पूर्णतया गली-सड़ी तथा खरपतवार बीजों से मुक्तहीन खाद है। बायोगैस संयंत्रद्वारा गोबर से अधिकतम मात्रा में खाद उपलब्ध होती है तथा इससे उत्सर्जित गैस को घर में खाना बनाने, रोषनी करने तथा ट्यूबवैल ईंजन चलाने में प्रयोग किया जा सकता है। इसके उपयोग से दोनों आवश्यकताएँ पूरी हो जाती है। गोबर, फसलों के अवशेष, विष्ठा एवं अन्य कार्बनिक पदार्थो के अवायुजीवी किण्वन से मैथेन गैस प्राप्त होती है जो कि रंग एवं गंधहीन होती है तथा ईंधन के रुप में प्रयोग की जा सकती है। गारा में पोषक तत्त्वों की मात्रा अच्छी होती है जिससे फसलों की उपज में बढ़ोतरी होती है। प्रदूषण की रोकथाम एवं मनुष्य स्वास्थ्य को होने वाले नुकसान से भी बचा जा सकता है।

स. कम्पोस्ट :- फसलों के अवशेषों को सडा गलाकर तैयार की गई खाद को कम्पोस्ट खाद कहते हैं। फसल अवशेष में प्रचुर मात्रा में पोषक तत्व मौजूद होते हैं जिनका कम्पोस्ट खाद बनाकर फसलो में उपयोग करने से अधिक उपज प्राप्त होती है। पशुओं तथा मनुष्यों के उत्सर्जन, वानस्पतिक अवशेषों, बिछाली तथा नगरीय एवं औद्योगिक उच्छेण के सूक्ष्म जीवों द्वारा विच्छेदित मिश्रण उत्पाद को कम्पोस्ट कहते है। कम्पोस्ट बनाने के लिए प्रयुक्त कार्बनिक पदार्थो के घटक- सैलुलोज, हैमीसैलुलोज, लिग्निन, स्टार्च, प्रोटीन, वसा, न्यूक्लिक अम्ल इत्यादि का प्राकृतिक या कृत्रिक निवेशन द्वारा विच्छेद होता है। इस दौरान उपयुक्त हवा, नमी, ताप एवं पोषक तत्त्व (खास तौर से नत्रजन यदि कार्बनिक पदार्थो में इसकी मात्रा कम है) आवश्यक होते है। साधारणतया कम्पोस्ट बनाने की अवधि **3-4** माह होती है।

द. केचुआं खाद (वर्मी कम्पोस्टं) : केचुओं की मदद से व्यर्थ पदाथोर्ं जैसे फसल अवशेष, घास फूस, घर के कूड़ा-करकट, गोबर इत्यादि को खा लिए जाने के बाद केंचुए द्वारा विसर्जित पदार्थ को केचुआं खाद (वर्मी कम्पोस्ट) कहलाता है। वर्मी कम्पोस्ट में केंचुओं की कास्ट, उनके अवशेष, मल एवं अंडे, कोकून, लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु, मूख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्व और अपचित जैविक पदार्थों का मिश्रण सम्मलित है, जो मृदा को लम्बे समय तक उपजाऊ एवं उपयोगी रखने की क्षमता रखता है। वर्मी कम्पोस्ट में पोषक तत्वों के अलावा एंजाइम एवं हारमोन पाये जाते है जो पौधों की वृद्धि के लिये उपयोगी है। केंचुआ खाद

में साधारण कम्पोस्ट की अपेक्षा आंशिक नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश के साथ-साथ सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे लोहा, जस्ता, ताम्बा, मैगनीज इत्यादि भी पाये जाते हैं। केंचुआ खाद के प्रयोग करने से रासायनिक उर्वरकों की उपयोग दक्षता बढ़ जाती है जिससे पौधों का विकास एवं वृद्धि अच्छी होती है।

केंचुओं की सहायता से कम समय में अच्छी कम्पोस्ट बनायी जा सकती है, क्योंकि ये कार्बनिक पदार्थो के मिलाने, ढेर में ऑक्सीजन की आपूर्ति और विघटन की दर को बढ़ाने में सहायक होते है। कम्पोटिंग मिश्रण में **70** प्रतिशत भाग खरपतवार, पत्तियाँ, भूसा इत्यादि, **15** प्रतिशत भाग आंशिक सड़ा हुआ गोबर और **15** प्रतिशत भाग ऊपरी सतह की मिट्टी होनी चाहिए। तीन वर्गमीटर गढ्ढे के लिए करीबन **10,000** केंचुएँ होने चाहिएँ, जिसके लिए छोटे केंचुएँ या वर्मीकम्पोस्ट का निवेश करना चाहिए। केंचुओं की प्रजनन दर तेज होती है। मिश्रण को समय-समय पर गीला करते रहना चाहिए, परन्तु अत्याधिक पानी नही होना चाहिए, नही तो अवायुजीवी अवस्था हो जाती है। केंचुओं की सहायता से कम्पोस्ट **60** दिनों में बनकर तैयार हो जाती है।

य. विश्ठा मल **:-** मनुष्य द्वारा उत्सर्जित ठोस एवं तरल रुप में मल को विष्ठा कहते है इसमें नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश की मात्रा क्रमश: **5.5, 4.0** तथा **2.0** प्रतिशत होती है जो कि गोबर की खाद की तुलना में ज्यादा होती है। विष्ठा में रोगाणु, प्रोटोजोआ, कीड़े, पुटी इत्यादि पाये जाते है, अत: इसका खाद के रुप में उपयोग करने से पहले यह सुनिश्चत करना जरुरी है कि इनका निवारण पूर्णरुप से हो गया है, वरना मृदा एवं जल के प्रदूशित होने की सम्भावना रहती है।

र. आपंक एवं वाहित मल **:-** इसके ठोस भाग को आपंक या अवमल एवं तरल भाग को वाहित मल कहते है। आधुनिक स्वच्छ तंत्र में मानव मल, मूत्र एवं अन्य पदार्थो के विसर्णन में जल का प्रयोग होता है, जिसके फलस्वरुप यह तनु हो जाता है तथा इसमें ठोस की मात्रा करीबन **0.3** प्रतिशत होती है एव पानी की मात्रा **99** प्रतिशत से भी अधिक होती है। जलाशयों, नदियों एवं समुद्रो में डालने से इनके प्रदूशित होने की सम्भावनाएँ बढ़ जाती है। बढते शहरीकरण से वाहित मल की मात्रा भी बढ़ रही है तथा इसका सुरक्षित विसर्णन एक बड़ी समस्या एवं खर्चीला काम है।

ल. हरी खाद **:-** हरे खडे पौधों (दलहनी अथवा अदलहनी फसलें) को मिट्टी में जोतकर जो शीर्ष विघटनशील (जल्द सड़ने लायक) होकर तैयार खाद ही हरी खाद है जो जैविक खाद का स्त्रोंत है। हरी खाद नत्रजन एवं ह्यूमस की आपूर्ति का एक सषक्त एवं सस्ता स्रोत है। हरी खाद के लिए मुख्यत: ढ़ैंचा, मूंग, सनई, लोबिया, ग्वार आदि फसलों का प्रयोग किया जाता हैं। अधिकतर ढ़ैंचें को हरी खाद के रूप में काम लेते है जो लगभग **40-50** दिनों में खेत में दबाने लायक हो जाती है। हरी खाद का उपयोग करने से मृदा की उर्वरता एवं भौतिक गुणों में सुधार के साथ-साथ फसल की उत्पादकता पर प्रभाव डालता है।

हरी खाद के उपयोग से मृदा गुणों पर प्रभाव-

1.2.2 सान्द्रित कार्बनिक खादें

इनमें नत्रजन, फास्फोरस, पोटाष आदि के अलावा कार्बनिक पदार्थ भी होते हैं। अत: इनका उपयोग फसल की बुवाई से पूर्व या खेत तैयार करते समय करना चाहिए। उदाहरणतया- तिलहन खलियॉं, हड्ड़ी की खाद, रुधिर चूर्ण, माँस चूर्ण, मछली चूर्ण, खुर एवं सींग चूर्ण इत्यादि।

अ. तिलहन खलियॉं :- तिलहनी फसलों से तेल निकालने के पश्चात् बचने वाले ठोस पदार्थ को खली कहते है। भारत में कई तरह की तिलहन फसलें काम में ली जाती है अत: खली भी कई तरह की होती है। इसमें से कुछ खली जानवरों को खिलाने के लिए उपयोग की जा सकती है और कुछ खली का उपयोग खाद के लिए किया जाता है। गोबर की खाद एवं कम्पोस्ट की तुलना में इसमें पोषक तत्त्वों की मात्रा ज्यादा होती है और यह फसल के साथ बदलनी रहती है। इसमें उपलब्ध पोषक तत्त्व पौधों को प्राय: **9-10** दिनों में उपलब्ध हो जाते है। खली के स्रोत, उसमें बचे हुए तेल की मात्रा, खली चूर्ण का बारीकपन भी तत्त्वों की उपलब्धता को प्रभावित करता है।

ब. रुधिर चूर्ण:- गाय, भेड़, बकरी इत्यादि को मांस के लिए मारने के समय उपलब्ध खून जो खाद का एक अच्छा स्रोत है। बूचड़खाने से इकठ्ति खून को उपचारित करके सुखा लिया जाता है और फिर चूर्ण बनाकर खाद के लिए उपयोग किया जाता है। सभी तरह की फसलों में इसका अच्छा प्रभाव देखा गया है। इसमें औसतन **10-20** प्रतिशत नत्रजन व **1-2** प्रतिशत फॉस्फोरिक अम्ल पाया जाता है।

स. माँस चूर्ण :- मृत पशुओं के मांस के संसाधन से प्राप्त चूर्ण को खाद के रुप में इस्तेमाल किया जा सकता है जिससे नत्रजन एवं फॉस्फोरिक अम्ल की मात्रा **10.5** एवं **2.5** प्रतिशत होती है। यह अधिकतर फसलों के लिए प्रभावी है।

द. मछली चूर्ण :- खाद के रुप में प्रयोग में लेने हेतु खाने के काम में नही आने वाली मछलियों, कंकाल, ओफाल इत्यादि को सुखाकर चूर्ण बना लिया जाता है। इसमें नत्रजन **4-10** प्रतिशत, फॉस्फोरस **3-9** प्रतिशत एवं पोटाश **1.5** प्रतिशत तक होता है जो फसलों के लिए पोषक तत्वों का एक अच्छा स्रौंत है।

य. खुर एवं सींग चूर्ण:- खुर एवं सींग को संसाधिक कर चूर्ण बनाने से उपलब्ध पदार्थ जिसमें **13** प्रतिशत नत्रजन होती है तथा विभिन्न फसलों के लिए खाद के रुप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

12.3 रासायनिक उर्वरकों का वर्गीकरण

इन उर्वरकों में पोषक तत्वों की मात्रा स्थूल खाद की तुलना में अधिक पाई जाती हैं। ये रासायनिक उर्वरक एकल, दो या दो से अधिक पोषक तत्व वाले नत्रजनधारी, फॉस्फेटिक, पोटाशिक एवं बहु पोशकीय होते है। विभिन्न उर्वरकों में उपलब्ध तत्वों की संख्या और मात्रा, उनके रासायनिक व भौतिक गुण, प्रति इकाई पोषक तत्व का मूल्य, उनके रखरखाव और भण्डारण, प्रयोग में आसानी, भूमि के भौतिक व रसायनिक गुणों पर प्रभाव तथा फसल उत्पादन व गुणवत्ता पर प्रभाव प्राय: अलग अलग होते हैं।

12.3.1 नत्रजनधारी रासायनिक उर्वरक

भारत की अधिकांश मृदाओं में नाइट्रोजन की कमी हैं एवं पौधे को इसकी सबसे अधिक आवश्यकता होती है। समस्त नाइट्रोजन उर्वरकों के **90** प्रतिशत से अधिक में अमोनिया होती है अथवा ये उर्वरक अमोनिया से निर्मित होते है। निर्जल अमोनिया, द्रव अमोनिया, अमोनियम नाइट्रेट, यूरिया, अमोनियम सल्फेट नाइट्रेट आदि उर्वरक अमोनिया से बनाये जाते है। केवल कैल्शियम साइनामाइड़ और

सोड़ियम नाइट्रेट ही ऐसे उर्वरक हे जिनमें निर्माण में अमोनिया का उपयोग नही होता। सभी नाइट्रोजनी उर्वरकों का उत्पादन अमोनिया से प्रारम्भ होता है। नाइट्रोजनी उर्वरकों का उनमें पाये जाने वाले नाइट्रोजन रूप के आधार पर चार वर्गो में वर्गीकरण किया गया है। बाजार में कई प्रकार के नत्रजनधारी उर्वरक उपलब्ध हैं जिनमें यूरिया प्रमुख है। नत्रजन की पूर्ति हेतु यूरिया एक श्रेष्ठ सस्ता स्रोत एवं पर्णीय छिडकाव हेतु उपयुक्त है। अधिक क्षारीय, खडी फसल में सल्फर की कमी एवं उचित जल निकास की कमी वाली भूमियों में अमोनियम सल्फेट का उपयोग उचित रहता है। बारानी, अम्लीय व असिंचित क्षेत्रों की भूमियों में कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट (केन) एक उपयुक्त उर्वरक है।

तालिका 1 : **नत्रजनयुक्त रासायनिक उर्वरक**

उर्वरक	मुख्य तत्व (प्रतिशत में)	अन्य तत्व (प्रतिशत में)
अ. अमोनियम उर्वरक		
अमोनियम क्लोराइड	**25**	क्लोरीन **(66)**
अमोनियम सल्फेट	**20.5**	सल्फर **(24)**
अमोनियम फॉस्फेट	**11**	**-**
एनहाइड्रस अमोनिया	**82**	**-**
अमोनिया घोल	**20-25**	**-**
ब. नाइट्रेट उर्वरक		
सोडियम नाइट्रेट	**16**	**-**
कैल्सियम नाइट्रेट	**15**	**-**
पोटेशियम नाइट्रेट	**13**	**-**
स. अमोनियम एवं नाइट्रेट उर्वरक		
कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट (केन)	**26**	कैल्शियम **(8.1)**
अमोनियम सल्फेट नाइट्रेट	**26**	सल्फर **(26)**
अमोनियम नाइट्रेट	**33-34**	**-**
द. एमाइड़ उर्वरक		
यूरिया	**46**	**-**
कैल्शियम साइनेमाइड़	**21**	**-**

12.3.2 फॉस्फोरसयुक्त रासायनिक उर्वरक

नाइट्रोजन के बाद किसी अन्य तत्व की न्यूनता की अपेक्षा फॉस्फोरस की ही कमी से फसलों का उत्पादन घटता है। फॉस्फोरस को कृषि की मास्टर चाबी कहा जाता है। फॉस्फोरस उर्वरकों उर्वरकों की मात्रा फॉस्फोरस पेन्टा-ऑक्साइड़ प्रतिशत में व्यक्त की जाती है। भारत में फॉस्फेटिक उर्वरकों का उपयोग पूर्व काल से चला आ रहा है। उस समय हड्डियों के चूरे का उपयोग फॉस्फेटिक उर्वरक के रूप में होता था। रॉक फॉस्फेट के चलन के बाद हड्डियों का उपयोग काफी कम होने लगा। रस जल्दी पकने वाली, उदासीन एवं क्षारीय भूमियों के लिए डाई अमोनियम फास्फेट (डी.ए.पी) सबसे महत्वपूर्ण उर्वरक है। लम्बी अवधि की फसलों तथा अम्लीय भूमियों में रॉक फास्फेट का बारीक पाउडर उपयुक्त स्त्रोंत है तथा सल्फर की कमी वाली भूमियों में सल्फरधारी फास्फेट उर्वरक जैसे सिंगल सुपर फास्फेट (एस.एस.पी) का उपयोग अधिक उपयुक्त रहता है।

तालिका 2 : **फास्फोरसयुक्त रासायनिक उर्वरक**

उर्वरक	मुख्य तत्व (प्रतिशत में)	अन् य तत्व (प्रतिशत में)
अ. जल में घुलनशील		
सिंगल सुपर फॉस्फेट	**16**	सल्फर **(12),** कैल्शियम **(20)**
ड़बल सुपर फॉस्फेट	**32**	**-**
ट्रिपल सुपर फॉस्फेट	**48**	**-**
अमोनियम फॉस्फेट	**20**	नत्रजन**(16-20)**
ब. साइट्रिक अम्ल में घुलनशील		
डाई अमोनियम फॉस्फेट	**46**	नत्रजन **(18)**
बेसिक स्लेग	**14-18**	
डाई कैल्शियम फॉस्फेट	**34-39**	कैल्शियम
स. अघुलनशील		
रॉक फॉस्फेट	**20-40**	**-**
हड् ड़ी का चूरा	**20-25**	नत्रजन**(3-4)**
वाश्पित हड् ड़ी का चूरा	**22-25**	**-**

12.3.3 पोटेशियम युक्त रासायनिक उर्वरक

तीसरा आवश्यक पोषक तत्व पोटेशियम है। पृथ्वी की पपड़ी का कुल पोटेशियम अंश **2-4** प्रतिशत है। नत्रजन और कैल्शियम को छोड़कर अन्य पोषक तत्वों की तुलना में पौधों के द्वारा इसका अवशोषण कहीं अधिक मात्रा में होता है। नत्रजन तथा फॉस्फोरस के बाद तीसरा आवश्यक पोषक तत्व पोटेशियम है। पोटेशियम उर्वरकों में के की मात्रा पोटेशियम ऑक्साइड़ के रूप में व्यक्त की जाती है तथा इस तत्व को पोटाश नाम से निर्दिश्ट किया गया है। पौधा के आयन के रूप में इसका उद्ग्रहण करता है। अधिकांश भूमियों में पोटाश की पूर्ति पोटेशियम क्लोराइड (एम.ओ.पी) से देने पर सस्ता एवं सर्वत्र उपलब्ध स्रोत है। अधिक क्लोरिन से फसलों (आलू, चुकन्दर, गाजर, प्याज आदि), सब्जियों एवं अंगूर में नुकसान को कम करने हेतु पोटेशियम सल्फेट (एस.ओ.पी.) का उपयोग अधिक उपयुक्त है।

तालिका 3 : **पोटेशियमयुक्त रासायनिक उर्वरक**

उर्वरक	मुख्य तत्व (प्रतिशत में)	अन्य तत्व (प्रतिशत में)
पोटेशियम क्लोराइड	**60**	**-**
पोटेशियम सल्फेट	**48-52**	सल्फर **(18)**
पोटेशियम कार्बोनेट	**65**	**-**
पोटेशियम नाइट्रेट	**44**	**-**
लकड़ी की राख	**0.5-36**	**-**
पोटेशियम मैग्लीशियम कार्बोनेट	**20**	**-**
पोटेशियम मैग्लीशियम सल्फेट	**20-30**	**-**
सोड़ियम पोटेशियम नाइट्रेट	**15**	**-**

12.3.4 सल्फरयुक्त रासायनिक उर्वरक

भारत में वर्तमान में पौधों को गंधक की काफी आवश्यकता है। मृदा में गंधक के मृदा खनिज, वायुमण्ड़ल एवं कार्बन से जूड़ा हुआ गंधक निम्न स्त्रोंत है। पौधें के अवशिष्ट के रूप में मृदा में प्रयोग किया हुआ गंधक प्रोटीन के रूप में होता है जो कि सूक्ष्म जीवों द्वारा अपघटित होता है। सल्फारधारी एमीनों अम्ल जैसे-सिस्टीन, सिस्टेन तथा मिथियोनिन कार्बनिक सल्फेट के रूप में उपस्थिति रहते है। सल्फर की कमी वाले खेतों में पोटेशियम सल्फेट प्रभावी उर्वरक है। सल्फर की पूर्ति फसलों में जिप्सम और फास्फोजिप्सम के द्वारा देने पर सस्ता एवं सुलभ स्रोत हैं साथ ही मूंगफली की फसल में कैल्शियम की पूर्ति फली बनने में सहायक रहती है। क्षारीय भूमि एवं अधिक चूनायुक्त चाय बागानों के लिए तत्वीय सल्फर या पाइराइट का उपयोग उपयुक्त तथा मृदा पी. एच. को कम करता है। सल्फर की पूर्ति विभिन्न प्रकार के रासायनिक उर्वरकों जैसे अमानियम सल्फेट, अमोनियम फास्फेट सल्फेट, सिंगल सुपर फास्फेट, पोटेशियम सल्फेट इत्यादि से की जा सकती है।

तालिका 4 : **सल्फरयुक्त रासायनिक उर्वरक**

उर्वरक	मुख्य तत्व (प्रतिशत में)	अन्य तत्व (प्रतिशत में)
नत्रजनधारी उर्वरक		
अमोनियम सल्फेट	**24**	**-**
अमोनियम सल्फेट नाइट्रेट	**15**	**-**
फॉस्फोरसधारी उर्वरक		
सुपर फॉस्फेट	**11-14**	**-**
अमोनियम फॉस्फेट सल्फेट	**15**	नाइट्रोजन **(16-20),** फॉस्फोरस **(20)**
पोटेशियमधारी उर्वरक		
सल्फेट	**17-18**	**-**
पोटेशियम मैग्नेशियम सल्फेट	**22**	पोटाश **(22)**
मृदा सुधारक		
जिप्सम	**13-16**	कैल्शियम **(16-19)**
फास्फोजिप्सम	**16**	कैल्शियम **(21)**

12.3.5 जटिल रासायनिक उर्वरक

वे उर्वरक जिनमें दो या दो से अधिक प्राथमिक पोषक तत्व हों, उन्हें जटिल उर्वरक अथवा बहुपोषक उर्वरक कहते है। जब उर्वरक में केवल दो प्राथमिक पोषक तत्व होते है तो ऐसे उर्वरक को अपूर्ण जटिल उर्वरक कहते है जबकि ऐसा उर्वरक जिसमें तीनों प्राथमिक पोषक तत्व हों, उसे पूर्ण जटिल उर्वरक कहते है। बाजार में बेचने के लिये जटिल उर्वरकों के अन्तर्गत मुख्य रूप से भारत में नाइट्रोफॉस्फेट और अमोनियम फॉस्फेट का निर्माण अधिक होता है। इन दो के अलावा अमोनियम-फॉस्फेट-सल्फेट तथा यूरिया अमोनियम फॉस्फेट भी बनते है। विभिन्न फसलों में नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश की पूर्ति जटिल उर्वरकों के द्वारा भी की जा सकती है।

तालिका 5 : **जटिल उर्वरकों में पोषक तत्वों की मात्रायें**

उर्वरक	पोषक तत्व (प्रतिशत में)		
	नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
नाइट्रो फॉस्फेट	**20-23**	**20-23**	**-**
एन.पी.के. काम्पलेक्स	**12**	**32**	**16**
एन.पी.के. काम्पलेक्स	**10**	**26**	**26**

एन.पी.के. काम्पलेक्स	**17**	**17**	**17**
एन.पी.के. काम्पलेक्स	**19**	**19**	**19**
एन.पी.के. काम्पलेक्स	**14**	**35**	**14**

12.3.6 सूक्ष्म पोषक तत्वधारी उर्वरक

फसलों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की पूर्ति भूमि में मिलाकर देने या पर्णीय छिड़काव करके की जा सकती है। लोहा, जिंक तथा मैंगनीज कि पूर्ति खडी फसल में चिलेटेड आयनों के द्वारा पर्णीय छिडकाव के रूप में किया जा सकता है।

तालिका 6 : **सूक्ष्म पोषक तत्व धारी उर्वरकों में पोषक तत्वों की मात्रा**

उर्वरक	पोषक तत्व	मात्रा (प्रतिशत में)	अन्य तत्व (प्रतिशत में)
बोरेक्स	बोरान	**11**	**-**
बोरिक एसिड	बोरान	**18**	**-**
सोलूबोर	बोरान	**11**	**-**
कॉपर सल्फेट	तांबा	**24**	सल्फर **(13)**
फेरस सल्फेट	लोहा	**19**	सल्फर **(12)**
चीलेटेड आयरन	लोहा	**21**	**-**
मैंगनीज सल्फेट	मैंगनीज	**30.5**	सल्फर **(15)**
जिंक सल्फेट हेप्टाहाइड्रेट	जिंक	**21**	सल्फर **(11-16)**
जिंक सल्फेट मोनोहाइड्रेट	जिंक	**33**	सल्फर **(11-16)**
चिलेटेड जिंक सल्फेट	जिंक	**12**	**-**
सोडियम मोलब्डेट	मोलिब्डेनम	**37**	**-**

12.3.7 मिश्रित उर्वरक

विभिन्न मृदाओं में प्राप्य पोषकों के संभरण की क्षमता भिन्न होती है। भिन्न मृदाओं और फसलों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उर्वरक मिश्रिण तैयार किये जाते है। दो या अधिक प्राथमिक तत्वों के मिश्रिण को उर्वरक मिश्रिण या मिश्रित उर्वरक कहते है। नत्रजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम के प्रतिशत को अभिव्यक्त करने के लिये उर्वरक मिश्रण के रासायनिक संघटन को क्रमानुसार तीन अंकों में प्रदर्शित

करते है। जैसे- **15:8:8** के ग्रेड़ के उर्वरक मिश्रण का अर्थ यह है कि इस मिश्रण में **15** प्रतिशत नत्रजन, **8** प्रतिशत फॉस्फोरस और **8** प्रतिशत पोटेशियम होता है।

12.4 उर्वरकों के प्रयोग का समय

उर्वरकों उपयोग करने के समय का उर्वरक के प्रति अनुक्रिया का विशेष प्रभाव पड़ सकता है। उर्वरक प्रयोग करने के समय को अनेक कारक प्रभावित कर सकते है जैसे- फसल की प्रकृति, फसल की वृद्वि की अवस्था और उसकी पोषक तत्वों की आवश्यकता, मृदा दशायें, उर्वरक की प्रकृति आदि अल्प अवधि की फसलों के लिए (दलहन एवं रबी की बारानी फसलों को छोड़कर) कुल उर्वरक मात्रा को दो भागों में दिया जाता है। उर्वरकों का प्रयोग फसल की बुवाई से पहले, बुवाई के समय और बुवाई के बाद खड़ी फसल में छिटक कर एवं पर्णीय छिड़काव के रूप में नत्रजनधारी उर्वरकों का किया जाता है।

12.4.1 फसलों के बुवाई से पूर्व प्रयोग

कुछ फॉस्फोरसधारी उर्वरक, जैसे- रॉक फॉस्फेट, बेसिक स्लेग आदि में फॉस्फेट जल अविलेय के रूप में होता है। मिट्टी में ड़ालने पर वे मृदा नमी के सम्पर्क में आते है जिससे अघुलनशील फॉस्फेट घुलनशील रूप में परिवर्तित हो जाता है, यद्यपिइ स प्रक्रिया में समय लगता है। अत: ऐसे उर्वरकों का प्रयोग बुवाई के **2** से **4** सप्ताह पहले विशेष लाभदायक रहता है। पायराइट का प्रयोग बुवाई के **15-20** दिन पूर्व किया जाना चाहिये।

12.4.2 फसलों के बुवाई के समय प्रयोग

बुवाई के समय या बुवाई के ठीक पहले उर्वरकों का प्रयोग आधारीय उपयोग बेसल ड्रसिंग के नाम से जाना जाता है, बुवाई के समय दिये जाने वाले उर्वरक आखिरी जुताई के साथ, बुवाई के पहले या बुवाई के साथ-साथ दिए जाते है। उसमें फसल की फॉस्फेट एवं पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की कुल मात्रा के कुछ भाग का समावेश होता है। यदि एक फसल को कुल **120-60-60** किग्रा. नत्रजन, फॉस्फोरस, पोटाश प्रति हैक्टेयर देना हो तो बेवाई के समय **30-60** किग्रा. नत्रजन, **60** किग्रा. फॉस्फोरस एवं **60** किग्रा. पोटाश दिया जायेगा और शेष नत्रजन की मात्रा **60-90** किग्रा. भाग खड़ी फसल में एक या दो बार में दिया जायेगा। चूंकि फॉस्फोरस एवं पोटाश को बुवाई के समय इसलिये दिया जाता है कि फसल को आरम्भिक अवस्था में ही इनकी आवश्यकता होती हैएवं इन्हें भूमि में शुरू में मिलाना आसान होता है। यह फॉस्फोरस के लिए अत्यन्त महत्तवपूर्ण है क्योंकि वह अपने दिये गये स्थान के आस-पास ही रहता है और इसे जड़ों की पहुंच वाले क्षेत्र में रखना ही ठीक है। अत: सक्षम उर्वरक उपयोग हेतु नत्रजन की आंशिक मात्रा एवं फॉस्फोरस, पोटाश, गंधक व जिंकयुक्त उर्वरकों की सम्पूर्ण मात्रा का उपयोग बुवाई के समय करना चाहिए। नत्रजन के बेहतर उपयोग हेतु फसल के विभिन्न वृद्विकाल के बीच में कई बार प्रयोग करना चाहिए।

12.4.3 फसलों के बुवाई के बाद प्रयोग

खड़ी फसलों में उर्वरकों के प्रयोग को टॉप ड्रेसिंग कहते है। प्राय: नत्रजनधारी उर्वरकों को ही खड़ी फसल में दिया जाता है लेकिन कुछ फसलों और भूमियों में पोटाश को भी खड़ी फसल में देने की

अब सिफारिश की जाती है। नत्रजन उर्वरकों को कई बार में तोड़कर देने को विभक्ति उपयोग कहा जाता है। ऐसा करने से नत्रजन मृदा एवं वर्षा के पानी घुलने के बाद खेतों से बाहर नही जा सके। अल्प अवधि की फसलों में नत्रजन की कुल मात्रा कम बार में दी जाती है जबकि लम्बी अवधि की फसलों में अधिक बार में दी जाती है। प्राय: यह देखा गया है कि कुल नत्रजन की मात्रा फसल में फूल आने से पहले दे देनी चाहिए।

12.5 उर्वरक प्रयोग की विधियॉं

उर्वरक प्रयोग का सबसे प्रभावी ढंग पोषक तत्व, भूमि, फसल और जल प्रबन्ध पर निर्भर करता है। इन सबका उद्देश्य उर्वरक दक्षता को बढाना है। उर्वरकों को ठोस एवं द्रव के रूप में प्रयोग की कई विधियॉं प्रचलित हैं जैसे-

12.5.1 ठोस के रूप में उर्वरकों का प्रयोग

इन ठोस उर्वरकों का प्रयोग फसलों में उनके उपयोग के आधार पर छिटकवॉं, खड़ी फसल में, संस्थापन एवं स्थानिक संस्थापन आदि के रूप में किया जाता है।

अ. छिटकवॉं विधि :- इस विधि में उर्वरक को खेत में एक समान रूप से बिखेरते है। यह कार्य जमीन में हल चलाने के पहले, रोपण के तुरन्त पहले अथवा खड़ी फसल में किया जाता है। मृदा की सतह पर बिखेरी हुई खाद जुताई के बाद स्वत: ही खूँड़ की तली में पहुंच जाती है। छिटकवॉं विधि में भी दो प्रकार से प्रयोग करते है।

1- बुवाई के पूर्व बखेरना :- फसल की बुवाई के पूर्व उन उर्वरकों का प्रयोग सुविधाजनक होता है एवं जिनकी अधिक मात्रा खेतो में देनी हो। अधिक मात्रा में दी जाने वाली खादों को खड़ी फसल में देने से कई प्रकार की कठिनाइयॉं आती है तथा छिटकवॉं विधि से बोई जाने वाली फसलों में यही विधि उपयुक्त है।

2- बुवाई के समय बखेरना :- बुवाई के समय उर्वरक ड़ालने का मुख्य ध्येय यह है कि उर्वरक को बुवाई के समय ही ड़ाला जाये ताकि उसका किसी भी प्रकार से ह्रास न हो। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत नत्रजनधारी उर्वरकों में ओनियम सल्फेट, अमोनियम सल्फेट नाइट्रेट एवं सान्द्र कार्बनिक खाद, फॉस्फोरसधारी उर्वरकों में बेसिक स्लेग, ड़ाइ-कैल्शियम-फॉस्फेट या अविलेय उर्वरक जैसे- हड्डी का चूरा तथा पिसा हुआ रॉक-फॉस्फेट (अम्लीय मृदाओं में) एवं पोटाशधारी उर्वरकों में पोटेशियम क्लोराइड़ एवं पोटेशियम सल्फेट का प्रयोग करते है।

ब. खड़ी फसल में देना :- इस विधि में खड़ी फसल में उर्वरक बिखेरते है। वृद्विशील पौधों को जल्दी से नत्रजन की पूर्ति करने के उद्देश्य से गेंहू तथा धान की फसलों में सोड़ियम नाइट्रेट, कैल्शियम, अमोनियम नाइट्रेट, अमोनियम सल्फेट नाइट्रेट जैसे उर्वरक खड़ी फसल में बिखेर कर दिए जाते है। इस विधि का प्रमुख दोष यह है कि जब पत्तियॉं गीली या नम हों उस समय उर्वरक बिखेरने से पत्तियों के झुलसने का ड़र रहता है।

1- छिटक कर देना :- बड़े-बड़े क्षेत्रों में फैले खेतों की खड़ी फसलों में उर्वरक बिखेरने के लिये वायुयान का प्रयोग भी किया जाता है। उर्वरक के साथ ही कीटनाशक दवाइयॉं भी बिखेर कर ड़ाली जा सकती है।

2- स्थानिक भुरकाव :- फसलों की बुवाई दूर-दूर करने पर पौधों के चारों ओर अथवा एक ओर पौधे के पास उर्वरक रखना स्थानिक भुरकाव कहलाता है।

3- अगल-बगल भुरकाव :- यदि बीज की बगल में उर्वरक बिखेर कर दिया जाता है तो इस विधि को अगल-बगल भुरकाव कहते है।

स. संस्थापन विधि :- इस विधि के अन्तर्गत उर्वरक को खेत में उपयुक्त स्थान पर रखते है। इसको निम्न प्रकार से रख सकते है जैसे-

1- खूँड़ की तली में रखना :- इस विधि में हल से जुताई करते समय उर्वरक को खूँड़ की तली में रखते जाते है। इस प्रक्रिया में खूँडों में रखा गया उर्वरक बगल की मिट्टी से स्वत: ही ढक जाता है। इस विधि में उर्वरक का संस्थापन मृदा में नमी वाले पृष्ठ में होता है, जहॉं से वृद्विशील पौधों को वह अधिक मात्रा में प्राप्त होगा। जब मृदा पृष्ठ शुष्क हो तो इसका प्रभाव और भी विशिष्ट होता है।

2- गहन संस्थापन :- उर्वरक के ह्रास को नियंत्रित करने के लिये इस विधि के अन्तर्गत उर्वरक को मृदा में अधिक गहराई पर रखते है। धान के खेतों में नत्रजनधारी उर्वरक जड़ों के नीचे गहराई पर रखे जाते है जिससे वे पानी से भरे खेतों में पानी के साथ बह नही पाते है। मृदा के अपचरित संस्तर में उर्वरक रखने से वहॉं से अमोनिया का ह्रास नही होता है और पौधों को नत्रजन निरन्तर प्राप्त होती रहती है।

3- अवमृदा संस्थापन :- उर्वरक को भारी मशीनों की सहायता से मृदा में रखना अवमृदा संस्थापन कहलाता है। आद्रर्श क्षेत्रों में जहॉं ज्यादातर मृदाए अम्लीय है, इस विधि का प्रचलन है। अम्लीय अवस्था के कारण प्राप्य पोषक तत्वों का स्तर कम होता है। इन परिस्थितियों में अच्छे जड़ विकास के लिए मुख्यत: फॉस्फोरसधारी एवं पोटाशधारी उर्वरक अवमृदा में रखते है।

द. स्थानिक संस्थापन विधि :- उर्वरक को बीज अथवा पौधे के निकट मृदा में रखना, स्थानिक संस्थापन कहलाता है। स्थानिक संस्थापन निम्न विधियों द्वारा किया जा सकता है जैसे-

1- पत्ती संस्थापन :- इस विधि में उर्वरक को पत्तियों में रखते है। ये पत्तियों सत्त या थोड़ी जगह छोड़-छोड़ कर हो सकती है। यह संस्थापन दो प्रकार का हो सकता है :

i- हिल संस्थापन :- हिल संस्थापन में उर्वरक को पौधे की बगल में पत्ती में रखते है। संतरा, केला, पपीता, सेव आदि फलदार वृक्षों में नत्रजनधारी तथा फॉस्फोरसधारी उर्वरकों को देने में इस विधि का उपयोग करते है।

ii- पंक्ति संस्थापन :- इस विधि में उर्वरक को फसलों की कतार के सहारे **2.5-5.0** से.मी. की दूरी पर रखते है। यह विधि आलू, गन्ना, मक्का, कपास आदि फसलों में फॉस्फोरस एवं पोटाशधारी उर्वरक देने के काम में लाई जाती है, जहॉं पौधों की कतारों के बीच की दूरी अधिक होती है।

2- श्ड्रल संस्थापन **:-** इस विधि में बीज तथा उर्वरक का थोड़ा-सा भाग एक ही पंक्ति में रखते है। अन्न वाली फसलों (गेंहू, जौ, ज्वार, बाजरा) तथा कपास और घासों में फॉस्फोरस एवं पोटाश के उर्वरक प्रयोग में यह विधि उपयोगी पाई गई। उर्वरक एवं बीज का साथ- साथ विस्थापन करने में कभी-कभी विलेय लवणों की सान्द्रता के कारण युवा पौधों को क्षति पहुंच सकती हैं। यह क्षति शुष्क रेतीली मृदाओं में अधिक होती है। वैज्ञानिक दृष्टि से अंकुर को नष्ट होने से बचाने के लिए कम मात्रा में ही उर्वरक श्ड्रिल करके देना चाहिए।

3- सम्पर्क संस्थापन **:-** खाद की मात्रा थोड़ी हो, खेत में समुचित नमी हो, कम उपजाऊ भूमि हो तो खाद का प्रयोग सम्पर्क संस्थापन विधि से करना चाहिए। इस विधि में उर्वरक को बीज के साथ ही भूमि में ड़ाला जाता है। नमी के अभाव में यह विधि हानिकारक भी हो सकती है।

4- डिब्लिंग संस्थापन **:-** जब फसल के पौधे दूर-दूर होते है तो उनके चारों तरफ खूंटियों की सहायता से गड्ढे बनाकर उनमें खाद भर देते है। इस विधि से खाद को इच्छानुसार कम या अधिक गीराई पर ड़ाला जा सकता है।

5- गोली संस्थापन **:-** इस विधि में धान की फसल की पंक्तियों के बीच में **2.5** से **5.0** से. मी. गहराई में नत्रजनधारी उर्वरक का प्रयोग करते है। उर्वरक को मृदा के साथ **1: 10** के अनुपात में मिलाते है। इसके बाद सुविधानुसार छोटी-छोटी गोलियों बना लेते है जिन्हें धान के खेतों में गीली मिट्टी में रखते है। धान में नत्रजनधारी उर्वराकों के ह्रास को रोककर उनकी दक्षता बढ़ाने के लिए इस विधि का प्रयोग किया जाता है।

12.5.2 द्रव के रूप में उर्वरकों का प्रयोग

इन द्रव उर्वरकों का प्रयोग खड़ी फसलों में प्रारम्भिक घोल के रूप में, पर्णीय छिड़काव, उर्वरक विलयन का मृदा में सीधे ही प्रयोग, सिंचाई जल के साथ उर्वरक प्रयोग, बीजों को पोषक तत्वों के घोल में डूबोना तथा पौधों में उर्वरक घोल के इंजेक्शन देना आदि के रूप में किया जाता है।

1- प्रारम्भिक घोल के रूप में **:-** नर्सरी में उर्वरकों के **1:2:1** या **1:1:1** के अनुपात में घोल तैयार करके प्रारम्भिक विलयनों का प्रयोग किया जाता है। इन विलयनों का उपयोग पौध को स्थापित करने के लिए पानी के स्थान पर किया जाता है। उर्वरक की मात्रा बहुत थोड़ी रखी जाती है। प्रारम्भिक घोल का लाभ यह है कि पोषक तत्व जड़ों तक शीघ्रता से पहुंच जाते है जिससे यह तरल विलयन वृद्वि में अवरोध पैदा नही करता है।

2- पर्णीय छिड़काव **:-** पौधों पर उर्वरक के तनु कवलयनों का छिड़काव करने की क्रिया को पर्णीय छिड़काव कहते है। इसके द्वारा एक साथ एक या अधिक पोषक तत्वों का छिड़काव किया जा सकता है। पौधों की के द्वारा पोषक तत्वों का अवशोषण शीघ्रता एवं सम्पूर्णता से होता है। पर्णीय छिड़काव करने में उर्वरक की मात्रा कम लगती है तथा पूरे खेत में उर्वरक का समान वितरण हो जाता है। इनके छिड़काव से पोषक तत्वों का मृदा में स्थिरिकरण नही होता है। सूक्ष्म पोशी तत्वों का पर्णीय छिड़काव शुष्क खेती में विशेषकर लाभकारी होता है। पर्णीय छिड़काव में तनु विलयनों का ही छिड़काव किया जाता है, कभी भी सान्द्र घोल का पत्तियों पर करने से झुलसने का ड़र बना रहता है।

पर्णीय छिड़काव फसलों की उचित अवस्था पर ही करना चाहिए। सुबह के समय पत्तियों पर ओस रहती है, अत: कुछ घंटो के बाद जब ओस सूख जाये तब छिड़काव करना चाहिए।

3- उर्वरक विलयन का मृदा में सीधे ही प्रयोग **:-** द्रव उर्वरकों या विलयनों को विशेष उपकरणों के माध्यम से मृदा में देने का पश्चिम देशों में काफी प्रचलन है। यदि इन द्रवों को बीज से **10** से.मी. नीचे सतह में प्रयोग किया जाये तो पौधों को क्षति नही होती है। जलीय अमोनिया के विलयनों को नम खेत में देना काफी लाभप्रद सिद्व हुआ है। इस विधि से दो या अधिक पोषक तत्वों का प्रयोग भी एक साथ किया जा सकता है।

4- सिंचाई जल के साथ उर्वरक प्रयोग **:-** नत्रजन, फॉस्फोरस, पोटाश के विलयशील उर्वरकों को सिंचाई जल के साथ नालियों में ड़ाला जा सकता है जिससे पोषक तत्व सिंचाई जल के साथ पूरे खेत में पहुंच जाते है। इस विधि से उर्वरक प्रयोग में कम लागत आती है। सिंचाई जल के साथ नत्रजनधारी उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है।

5- बीजों को पोषक तत्वों के घोल में डूबोना **:-** इस विधि के अन्तर्गत बीजों को बुवाई से पूर्व निश्चित अवधि के लिए उर्वरकों के तनु विलयनों में डूबो कर रख देते है जिससे बीज विलयन सोख लेता है जो अंकुरण के बाद उसके उपयोग में आता है। यह विधि कभी-कभी हानिकारक भी हो सकती है।

6- पौधों में उर्वरक घोल के इंजेक्शन देना **:-** इस विधि में उर्वरकों के तनु विलयनों के इंजेक्शन पौधों तथा मृदा में लगाये जाते है। सूक्ष्म तत्वों के विलयनों के इंजेक्शन जाइलम में दिए जाते है।

12.6 सारांश

फसलों का अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि पोषक तत्व पर्याप्त एवं संतुलित मात्रा में हो। फसलों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति मृदा से आंशिक रूप में ही हो सकती है, अत: इस कमी की आपूर्ति कार्बनिक खादों एवं रासायनिक उर्वरकों द्वारा देकर पोषक तत्वों की पूर्ति की जा सकती है। इसके साथ ही पोषक तत्वों को सही विधि एवं समय पर देकर उनका अधिक से अधिक उपयोग दक्षता बढ़ाई जा सकती है।

12.7 अभ्यास प्रश्न

1- पौधों को जीवन चक्र पूरा करने के लिए कम से कम कितने पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है।

(क) 20 **(ख) 12**

(ग) 16 **(घ) 18**

2- निम्न में से कौनसा द्वितियक/गौण पोषक तत्व नही है।

(क) कैल्शियम **(ख)** गंधक

(ग) मैग्नीनिश्चिम **(घ)** तॉंबा

3- यूरिया नत्रजनधारी उर्वरकों के किस ग्रुप में आता है।

(क) नाइट्रेट **(ख)** अमोनिया

(ग) अमोनिया एवं नाइट्रेट (घ) एमाइड़

4- यूरिया उर्वरक में कितने प्रतिशत नत्रजन पाई जाती है।

(क) 20 (ख) **46**

(ग) 35 (घ) **25**

5- निम्न में से कौनसा उर्वरक जल में घुलनशील है।

(क) बेसिक स्लेग (ख) सिंगल सुपर फॉस्फेट

(ग) रॉक फॉस्फेट (घ) हड्डीका चूरा

12.8 बहु चयनात्मक प्रश्नों के उत्तर

1- **(ग) 2. (घ) 3. (घ) 4. (ख) 5. (ख)**

12.9 संदर्भ ग्रन्थ

- ओ. पी. राजपूत एवं राजवीर सिंह. **2012-13.** सस्य विज्ञान के सिद्वान्त एवं वैज्ञानिक फसलोत्पादन। कुशल पब्लिकेशन्स एण्ड़ ड़िस्ट्रीब्यूटर्स, वाराणसी (यू. पी.)। पेज संख्या **71-88.**
- ओ. पी. शर्मा, एस. के. इन्टोदिया, सोहन लाल शर्मा एवं नरेन्द्र सिंह नकेला. **2009.** सस्य विज्ञान (कृषि वर्ग). माध्यमिक शिक्षा बोड़र्, राजस्थान (अजमेर). पेज संख्या **27-42**।
- के. के. व्यास, एस. सी. भण्ड़ारी एवं एस. ड़ी. सिंह. **1996.** मृदा विज्ञान। राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर। पेज संख्या **128-240.**
- विनय सिंह. **1991-92.** मृदा विज्ञान के मूल तत्व। वी. के. प्रकाशन, बड़ौत। पेज संख्या **255-268.**
- आई. पी. एस. अहलावत एवं ओम प्रकाश. **2002.** सस्यविज्ञान के सिद्वान्त एवं फसलें। पब्लिशिंग हाउस बड़ौत, मेरठ। पेज संख्यां **119-134.**

इकाई - 13

नाइट्रोजन उर्वरक

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य
13.1 प्रस्तावना
13.2 फसलों में नाइट्रोजन की मात्रा
13.3 नाइट्रोजन के पौधों में कार्य
13.4 पौधों में कमी के लक्षण
13.5 नाइट्रोजन – प्रोटीन निर्माता
13.6 मृदा और वायु में नाइट्रोजन
13.7 नाइट्रोजन का खनिजीकरण और स्थरीकरण
13.8 नाइट्रोजन स्त्रोत
13.9 सारांश
13.10 अभ्यास प्रश्न
13.11 संदर्भ ग्रंथ

13.0 उद्देश्य

इस इकाई को पड़ने के पश्चात आप यह ज्ञान प्राप्त कर पाएगे:-

- नाइट्रोजन के पौधों में कार्य तथा इनके कमी के लक्षण
- मृदा और वायु में नाइट्रोजन
- नाइट्रोजन का खनिजीकरण और स्थरीकरण
- नाइट्रोजन के मुख्य स्त्रोत

13.1 प्रस्तावना

नाइट्रोजन पादप वृद्धि के लिए आवश्यक है। प्रत्येक जीवित कोशिका का एक भाग है। पौधों की सामानय वृद्धि के लिये अधिक मात्रा में आवश्यक हैं। यह स्पष्ट है कि हम प्रोटीन क्षुधा पीडित विश्व में रहते हैं। सस्य विज्ञान को आजकल विश्व में एक महान जनसेवक मानते हैं क्योंकि सुदृढ़ सस्य विज्ञान पर्याप्त प्रोटीन युक्त खाद्य पूर्ति करती हे जो कि मानव एवं जानवरों के स्वास्थ्य का प्राणभूत है। यह स्पष्ट है कि हम प्रोटीन क्षुधा पीडित विश्व में रहते हैं। प्रोटीन उतपादन की प्रमुख कुंजी नाइट्रोजन उर्वरीकरण है। प्रोटीन उतपादन की प्रमुख कुंजी नाइट्रोजन उर्वरीकरण है।

13.2 फसलों में नाइट्रोजन की मात्रा

फसल	उपज स्तर (टन में)	सम्पूर्ण फसल में ली गई नाइट्रोजन (कि. ग्रा.)
गेहूँ	6.0	170
जौ	4.8	150
धान	6.0	100
मक्का	8.4	200
मूँगफली	2.0	170
सोयाबीन	3.0	220
सरसों	3.0	165
कपास	1.5	180
गन्ना	120	130
आलू	40.0	170
टमाटर	40.0	110
प्याज	35.0	120
पातगोभी	70.0	370
फूलगोभी	25.0	250
अंगूर	20.0	205
केला	40.0	250

13.3 नाइट्रोजन के पौधों में कार्य

- पौधे अपनी अधिकतर नाइट्रोजन अमोनिया या नाइट्रेट आयान के रूप में लेते हैं। कुछ भाग पत्तियों के द्वारा यूरिया के परोक्ष अवशोषण से हो सकता है और नाइट्रोजन की न्यून मात्रा जल में विलेय अमीनों अम्लों द्वारा प्राप्त की जाती है।
- धान के अलावा ज्यादातर शस्य फसलें अपनी नाइट्रोजन की बहुतायत मात्रा नाइट्रेट आयन के रूप् में लेती हैं। फिर भी शोध से यह साबित हो गया है कि मृदा में उपलब्ध होने पर पौधे काफी मात्रा में अमोनिया आयान के रूप में नाइट्रोजन का उपयोग कर लेते है।
- कुछ संकर मक्का के लिए अमोनिया आयान की आवश्यकता अधिक मात्रा में होती है जो उपज वृद्धि में सहायक होता है। गेहूँ में भी अमोनियम आयन-पोषण के लाभ प्रदर्शित हो चुके है।

- अधिक उपज का एक कारण यह भी है कि पौधों में नाइट्रेट आयन का अवकरण होने में ऊर्जा की आवश्यकता होती है। नाइट्रेट आयन का अमोनिया आयन में अवकरण होकर ही पौधों के आन्तरिक भाग में अमीनों अम्ल बनता है। ऊर्जा कार्बोहाइड्रेट के द्वारा प्रदान की जाती है जिसका अन्यत्र उपयोग वृद्धि या दाना बनने में हो सकता है।
- नाइट्रोजन पर्णहरित के संशलेषण के लिए आवश्यक है और पर्णहरित अणु के रूप में प्रकाश संशलेषण में भाग लेता है।
- नाइट्रोजन एवं पर्णहरित की अनुपसिथति में पौधे सूर्य-प्रकाश का उपयोग ऊर्जा स्त्रोत के रूप में नहीं कर पाते जो कि पोषक तत्वों के अवशोषण में आवश्यक भूमिका निभाता है।
- नाइट्रोजन पौधों में विटामिन एवं ऊर्जा तंत्र का एक आवश्यक अंग है।
- यह अमीनों अम्ल का आवश्यक भाग है जो कि पादप-प्रोटीन बनाते है।
- नाइट्रोजन परोक्ष रूप से पादप-प्राटीन की मात्रा बढ़ाने के लिए उत्तरदायी हैं।

13.4 पौधों में कमी के लक्षण

- पर्याप्त नाइट्रोजन पत्तियों में गाढ़ा हरा रंग पैदा कर देता है, जो कि पर्णहरित की उच्च सान्द्रता के कारण होता है। नाइट्रोजन की कमी पत्तियों में हरिमाहीनता (पीलापन) पैदा करता है जो कि पर्णहरित की मात्रा घटने के कारण होता है।
- यह हरिमाहीनता पहले पुरानी पत्तियों से शुरू होती है, जैसे ही कमी अधिक होती जाती है, फिर यह नई पत्तियों पर फैल जाती है।
- अपर्याप्त नाइट्रोजन पौधों के बज एवं वानस्पतिक भाग में प्रोटीन की कमी को प्रदर्शित करता है। अभावग्रस्त पौधों में प्राय: कम पत्तियाँ और कुछ फसलें जैसे कपास में परिपक्वता उनकी अपेक्षा जिसमें पर्याप्त नाइट्रोजन पूर्ति होती है जल्दी आती है।
- अनाज (मक्का) जिसमें नाइट्रोजन की पूर्ति पर्याप्त है, उन पौधों की अपेक्षा जिसमें नाइट्रोजन की पूर्ति अपर्याप्त है दानों में नमी की मात्रा कम होती है।
- धीमी वृद्धि और बौना नाइट्रोजन कमी का भी घोतक है। नाइट्रोजन की न्यून पूर्ति से दाने छोटे और पौधों के किल्ले तृण तुल्य हो जाते है।

13.5 नाइट्रोजन – प्रोटीन निर्माता

यदि सम्पूर्ण विश्व जनसंख्या के लिए प्रतिदिन प्रति व्यक्ति 40 ग्राम प्रोटीन आवश्यक माना जाये तब लगभग 80 लाख टन प्रोटीन की वार्षिक खपत होगी। यह प्रोटीन खाने की मेज पर, पौधों द्वारा परोक्ष रूप से या जानवरों द्वारा, चिडियाँ या मछली जो कि प्रोटीन युक्त पौधा उपभोग में लाया जाता है, उसके माध्यम से पहुँचती है। प्रत्यक्ष रूप से नाइट्रोजन पौधों में प्रोटीन की मात्रा में वृद्धि करता है। फोस्फोरस एवं

पोटेशियम की पर्याप्त मात्रा पौधों की नाइट्रोजन उपयोग-क्षमता को बढ़ाता है जिससे शुद्ध प्रोटीन की मात्रा एवं गुणवत्ता अधिक होती है।

पर्णहरित में निहित हरा वर्ण प्रकाश ऊर्जा को शोषित करता है जो कि प्रकाश संशलेषण को उत्तेजित करता है। पर्णहरित कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सीजन को सामान्य शर्करा में परिवर्तित होने में सहायक है। उन शर्करा और उनके परिवर्तन उत्पाद को पौधों की वृद्धि और विकास में उपयोग होता है।

नाइट्रोजन की अधिकता से वानस्पतिक वृद्धि अधिक, दाने बनने में कमी और गुणों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। विलमिबत परिपक्वता कभी-कभी अन्य पोषक तत्वों की कमी से होती है, न कि अत्यधिक नाइट्रोजन से।

13.6 मृदा और वायु में नाइट्रोजन

मृदा नाइट्रोजन की मात्रा प्राप्य रूप में कम होती है। चट्टानों एवं खनिजों जिससे मृदा निर्मित होती है, इसकी मात्रा बहुत कम होती है। मृदा नाइट्रोजन अधिकतर पृथ्वी के वातावरण से प्राप्त होती है, जिसमें असीमित पूर्ति की क्षमता हैं। वायु जिसमें हम साँस लेते है, लगभग 80 प्रतिशत नाइट्रोजन है पृथ्वी का प्रत्येक हेक्टर क्षेत्र लगभग 84000 टन नाइट्रोजन से आच्छादित होता है, किन्तु यह नाइट्रोजन एक अक्रिय गैस के रूप में होता है। पौधों के प्रयोग के पूर्व इसका अन्य तत्वों से संयोग अनिवार्य है।

मृदा में नाइट्रोजन 3 प्रमुख रूपों में होती है।

1. **कार्बनिक नाइट्रोजन -** मृदा जीवांश का वो भाग जो उगते पौधों के लिए अप्राप्य है।
2. **अमोनिया नाइट्रोजन** – यह प्राय: मृत्तिका खनिज द्वारा सिथर हो जाती है और पौधों को शनै:-शनै: प्राप्त होती है।
3. **अकार्बनिक नाइट्रोजन -** अमोनिया एवं नाइट्रेट आयन या घुलनशील यौगिक नाइट्रोजन जो पौधें प्रयोग करते हैं।

13.7 नाइट्रोजन का खनिजीकरण और स्थरीकरण

मृदा में अपेक्षाकृत अधिक अनुपात में अप्राप्या (कार्बनिक) नाइट्रोजन और न्यून अनुपात में प्राप्य (अकार्बनिक) नाइट्रोजन का भाग होता है जो कि निम्न रेखाचित्र में प्रदर्शित है –

कार्बनिक नाइट्रोजन कुल मृदा नाइट्रोजन का 97 से 98 प्रतिशत होती है। अकार्बनिक नाइट्रोजन प्राय: केवल 2 से 3 प्रतिशत प्रदर्शित करती है। इसलिए पादप वृद्धि के लिये अप्राप्य कार्बनिक रूप से प्राप्य रूप में परिवर्तित होना महत्वपूर्ण है। यह प्रक्रिया **खनिजीकरण** कहलाती है। यह सूक्ष्म जीवों के द्वारा अपने ऊर्जा स्त्रोत के लिए जीवांश पदार्थ के विघटन से होती है। जैसे ही जीवांश पदार्थ विघटित होता है, सूक्ष्म जीवों द्वारा मुक्त ऊर्जा का कुछ भाग के साथ कार्बनिक पदार्थ के आंशिक आवश्यक पोषक तत्व

प्रयोग किये जाते है। जब सूक्ष्म जीव अपनी आवश्यकता के पोषक तत्व प्रयोग कर लेते हैं तब अतिरिक्त नाइट्रोजन पादप वृद्धि के लिये मृदा में मुक्त होती है।

नाइट्रोजन अकार्बनिक से कार्बनिक रूप में परिवर्तित होती है, जैसा कि दो तीर द्वारा प्रदर्शित किया गया है। यह प्रक्रिया **स्थरीकरण** कहलाती है। यह खनिजीकरण की विलोम प्रतिक्रिया है। यह स्थरीकरण प्रक्रिया तब होती है जब उच्च कार्बन एवं न्यून नाइट्रोजन मात्रा वाले फसल-अवशेष मृदा में प्रयोग किए जाते हैं।

मृदा में खनिजीकरण एवं स्थरीकरण प्रक्रिया साथ-साथ चलती है। चाहे मृदा कार्बनिक या अकार्बनिक भंडारण की तरफ उन्मुख हो, यह विघटित होने वाले जीवांश पदार्थ के कार्बन : नाइट्रोजन अनुपात पर निर्भर करता है। वृहत कार्बन : नाइट्रोजन अनुपात वाले पदार्थ स्थरीकरण में सहयोगी होते हैं।

13.8 नाइट्रोजन स्त्रोत

मृदा में 90% से अधिक नाइट्रोजन जीवांश पदार्थ के विघटन से प्राप्त होती है ज्यादातर मृदाओं में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा कम होती है। प्राय: 2% या कम। मृदा जीवांश पदार्थ करीब 5% नाइट्रोजन रखता है, लेकिन केवल 2% या कम जीवांश पदार्थ ही प्रत्येक वर्ष में विघटित होता है। प्रत्येक वर्ष में 1% जीवांश पदार्थ द्वारा केवल 10-40 कि.ग्रा./हे. नाइट्रोजन मुक्त होती है, जो कि अधिकतर सस्य फसलों के लिए अपर्याप्त है। मुक्त मात्रा पुन: प्रबन्धन क्रियाओं पर निर्भर करती है जैसे संरक्षण कर्षण, जो कि उत्तरी अमेरिका में बहुतायत फसल क्षेत्र में क्रियान्वित है। उदाहरण के लिए शीत मृदाओं में जीवांश पदार्थ का विघटन मंद गति से होता है एवं नाइट्रोजन मन्द दर से मुक्त होता हैं।

एक समय में, करीब सभी प्रयुक्त नाइट्रोजन उर्वरक कार्बनिक पदार्थो से उत्पन्न होते है। जैसे मानव अकृष्य, जानवारों के गोबर की खाद, चिकेने बिछाली, कपास के बीज का चूरा, हडडी का चूरा (भाप से उपचारित) प्राय: प्रयोग में आते हैं। इनमें कुछ विभिन्न देशों में प्रयोग में लाये जाते है। किसी तरह, बहुतायत नाइट्रोजन उर्वरक वातावरण के नाइट्रोजन के आद्योगिक स्थरीकरण से अमोनिया रूप में आती है और कैसे अमोनिया से अन्य यौगिक संशलेषित होते हैं।

1. निर्जल अमोनिया

अन्य नाइट्रोजनधारी उर्वरकों की अपेक्षा निर्जल अमोनिया में नाइट्रोजन अधिक पाया जाता है (82%) इसको द्रव रूप में दाब के अन्तर्गत संग्रह किया जाता है। इसका प्रयोग मृदा में एक उच्च दाब टैंक से पतली इन्जेक्शन ट्यूब से चाकू समान उपकरण द्वारा या मीटर द्वारा नापकर (छिड़काव सिंचाई) किया जाता है। चट्टानी सतह, आद्र या शुष्क, ढेले युक्त मृदा में अमोनिया का प्रयोग कठिन है। खाद फसल में, यह अस्थायी जड़ों को नुकसान करता है फलत: खुरदुरी सतह जैसी दशा हो जाती है।

सामान्य तौर पर सामान्य ताप और वातावरण दाब पर कुछ अमोनिया प्रयोग करने में या प्रयोग के दौरान नष्ट हो जाती है। भौतिक एवं रासायनिक दशायें ह्रास के परिमाण को प्रभावित करत है। मृदा में नमी की मात्रा, प्रयोग की गराई, प्रयोग में आने वाले फलक (चाकू) की दूरी एवं धनायन विनिमय क्षमता,

अमोनिया की अधिशोषित मात्रा को पभावित करती है। न्यून धनायन विनिमय क्षमता जैसे रेतीली मृदा में अमोनिया का प्रयोग गहराई में करने से उत्पातन द्वारा नहीं होती।

यदि अमोनिया प्रयोग के समय मृदा अति शुष्क एवं ढेलायुक्त , प्रयोग की फलक के पीछे की स्लिट बन्द न होने पर अमोनिया या उत्पातन हो सकता है। अमोनिया स्तम्भन के लिये नमी धारण क्षमता के लगभग मृदा में नमी उत्तम होती है। जल प्लावन दशा में अमोनिया ह्रास की सम्भावनायें बढ़ जाती हैं, क्योंकि फलक के पीछे का भाग बन्द करना कठिन होता है। इन्जेक्शन बिन्दु पर अमोनिया की सांद्रता घटने पर संकीर्ण प्रयोग करने वाली फलक की दूरी या मुक्त बिन्दु अमोनिया ह्रास घटाते हैं। प्रयोग करने की कम दर भी अमोनिया सांद्रण मुक्त बिन्दु पर घटाती है आर ह्रास की सम्भावनायें कम होती हैं। प्रत्येक चीज ठीक होने पर, अमोनिया का उत्पातन द्वारा ह्रास प्राय: कम होता है और यह बड़ा आर्थिक कारक नहीं है।

2. जलीय अमोनिया और नाइट्रोजन विलयन

पानी में अमोनिया घोलकर जलीय अमोनिया बनाया जाता है। इसके गुण निर्जल अमोनिया की तरह होते हैं। इसका प्रयोग मृदा सतह के निचले स्तर पर करना चाहिए जिससे अमोनिया ह्रास न हो। नाइट्रोजन विलयन का निर्माण अमोनिया नाइट्रेट विलयन व यूरिया विलयन के मिश्रण से या कभी-कभी जलीय अमोनिया से किया जाता है। कभी-कभी नाइट्रोजन विलयन यूरिया ठोस और/या अमोनिया नाइट्रेट को पानी में घोलकर निर्मित किया जाता है। सभी नाइट्रोजन विलयनों को या तो दाब या अदाब विलयन कहते है।

दाब विलयन - इन विलयानों में स्वतंत्र अमोनिया का अच्छा वाष्प दाब होता है। इनको प्राय: विशिष्ट टैंक एवं उपकरण की आवश्यकता होती है, जब विशेष रूप से उच्च दाब एवं कार्य तापक्रम हो। अमोनिया ह्रास को रोकने के लिये मृदा सतह के नीचे प्रयोग करना चाहिए। दाब विलयनों को सीधे बीज स्पर्श कभी नहीं करना चाहिए क्योंकि अंकुरण बाधित होता है।

अदाब विलयन - इनमें प्राय: अमोनिया नाइट्रेटट, यूरिया एवं पानी होता है। इन विलयनों का प्रयोग बिना उच्च दाब टेंक एवं उपकरण से किया जा सकता है। इनमें स्वतंत्र अमोनिया नहीं होती। यूरिया एवं अमोनियम नाइट्रेट (यूएएन) विलयन में उन विलयनों की अपेक्षा जिनमें केवल पदार्थ अकेले होता है नाइट्रोजन सांद्रता अधिक होती है। दोनों यौगिकों की उपसिथति 'साल्ट आउट' तापक्रम कम करते हैं, जिससे बिना अवक्षेपण के कम दाब पर प्रयोग किया जा सकता है। जबकि यूएएन विलयनों में जैसे ही नाइट्रोजन सांद्रता बढ़ती है 'साल्ट आउट' तापक्रम भी बढ़ता है, जैसे 28% एनसाल्ट आउट - 29° सेन्टीग्रेड 30% एन साल्ट आउट - 7° सेन्टीग्रेड, 32% एन साल्ट - 2° सेन्टीग्रेड हैं।

3. अमोनिया नाइट्रेट

अमोनिया नाइट्रेट में 33.5 से 34.0 प्रतिशत नाइट्रोजन होती है। आधी नाइट्रोजन अमोनियम आयन और आधी नाइट्रेट आयन के रूप में होती है। यद्यपि अमोनियम नाइट्रेट में बहुत उपयुक्त विशेषतायें होती हैं, किन्तु यह नमी को अवशोषित करता है (आद्रता ग्राही)। इस कारण निर्माण के समय द्विपरमाणु वाले पदार्थ से लेप कर देते हैं जिससे पानी का अवशोषण नहीं होता। आद्र जलवायु में इसको कभी खुली बोरी

या टोकरी में नहीं छोड़ना चाहिए। जिन फसलों में ड्रेसिंग साइड नाइट्रोजन की करनी हो वहाँ अमोनिया नाइट्रेट बहुत ही उपयुक्त उर्वरक सिद्ध होता है।

4. यूरिया

यूरिया में अमोनिया आयन नहीं होता। फिर भी मृदा में यूरिएज एन्जाइम की उपसिथति में जल विघटित हो शीघ्र ही अमोनिया एवं बाईकार्बोनेट आयन बन जाता है। बहुत से कारक यूरिया जल विघटन को प्रभावित करते हैं, उनमें उपसिथत इन्जाइम की मात्रा एवं मृदा तापक्रम शामिल है। शीत मृदा में प्रक्रिया धीमी होती है।

जल विघटन के समय बाइकार्बोनेट आयन मृदा अम्लीयता के साथ क्रिया करते है। मृदा पीएच को इस स्तर तब बढ़ा देते हैं जिसमें यूरिया जल विघटित होती है। नाइट्रीकरण के पश्चात कुछ अम्लीयता फिर से उत्पन्न हो जाती है। अमोनिया आयन का मृदा क्ले तथा जीवांश पदार्थ पर अधिशोषण हो जाता है या पौधों द्वारा सीधे अवशोषित कर लिये जाते हैं या नाइट्रीकृत हो जाते हैं। एक बार अमोनिया आयन में परिवर्तित होने पर यूरिया अन्य व्यवसायिक नाइट्रोजन उर्वरकों की तरह हो जाता है और नाइट्रोजन का अति उत्तम स्त्रोत बन जाता है। कुछ तथ्य यूरिया के सम्बन्ध में ऐसे हैं जिनको समझना चाहिए।

- यूरिया सामान्यत: शीघ्र ही जल विघटित होता है। यदि यूरिया या यूरियायुक्त विलयन खाली मृदा सतह पर जिससे पानी तेजी से वाष्पीकृत हो रहा है या मृदा सतह पर पर्याप्त मात्रा में अवशेष हो जिसमें साड शामिल है प्रयोग करने पर बड़ी मात्रा में अमोनिया की उत्पातन द्वारा हानि हो सकती है। शीत मौसम में प्रयोग, मिटटी में प्रयोग या सतह पट्टिका, यूरिया युक्त उर्वरक समस्या निवारण में सहायक हो सकते हैं।
- यूरिया का जल विघटन सामान्यतया तेजी से होता है। जब इसका प्रयोग अधिक मात्रा में बीज के समीप या बीज के साथ संकीर्ण कतारों में निवेशन द्वारा किया जाता है। अमोनिया घातक हो सकती है। सही नियम तो कतार वाली फसल में और संकीर्ण कतारों में बोये बीज उर्वरक के सीधे सम्पर्क में न आए। छोटे दाने वाली फसलों की सहनशीलता अधिक होती है।
- यूरिया पर्णीय छिड़काव के लिये सबसे अच्छा उर्वरक है। लेकिन कुछ यूरिया में न्यून मात्रा में एक संघनन उत्पाद पाया जाता है जिसे **बाइयूरेट** कहते हैं। जब पौधों की पत्तियों पर प्रयोग किया जाता है बाइयूरेट का प्रभाव विषालु होता है लेकिन मृदा प्रयोग में घातक प्रभाव नहीं रखता।

5. अमोनिया सल्फेट

अमोनिया सल्फेट में 21% नाइट्रोजन एवं 24% गंधक होता है। यह प्राय: कोक एवं नाइलान के निर्माण के समय अपने आप दूसरे पदार्थ के रूप में बनता है। सल्फर (गंधक) की बढ़ती कमी के कारण नाइट्रोजन एवं गंधक स्त्रोत के रूप में बड़े पैमाने पर प्रयोग होता है।

6. अमोनिया फास्फेटस

मोनो अमोनिया फास्फेट और डाइ अमोनिया फास्फेट प्राय: नाइट्रोजन एवं फास्फोरस के प्रमुख स्त्रोत माने जाते हैं।

सारणी:- विभिन्न नाइट्रोजन स्त्रोत एवं उनमें नाइट्रोजन की मात्रा

स्त्रोत	% नाइट्रोजन
निर्जल अमोनिया	82
जलीय अमोनिया	20-25
अमोनियम नाइट्रेट	33.5-34
अमोनियम नाइट्रेट सल्फेट	26
अमोनियम नाइट्रेट/चूना	20.5
अमोनियम सल्फेट	21
यूरिया अमोनियम नाइट्रेट विलयन	28-32
अमोनियम क्लोराइड	26
यूरिया	46
मोनो अमोनियम फास्फेट (एमएपी)	10-11
डाई अमोनियम फास्फेट (डीएपी)	18
सोडियम नाइट्रेट	16
पोटैशियम नाइट्रेट	13
कैलिसयम नाइट्रेट	15.5
गंधक लेपित यूरिया	39
यूरिया फार्मलिडाइड	38

13.9 सारांश

नाइट्रोजन पादप वृद्धि का मुख्य पोषक तत्व हैं। नाइट्रोजन को मुख्यतः प्रोटीन निर्माता के रूप में जाना जाता हैं। नाइट्रोजन की कमी से पौधों में पीलापन पैदा होता हैं। पादप वृद्धि के लिये अप्राप्य कार्बनिक रूप से प्राप्य रूप में परिवर्तित होने की प्रक्रिया **खनिजीकरण** कहलाती है। नाइट्रोजन अकार्बनिक से कार्बनिक रूप में परिवर्तित होने की प्रक्रिया **स्थरीकरण** कहलाती है। नाइट्रोजन के मुख्य स्त्रोत हैं: 1. निर्जल अमोनिया 2. जलीय अमोनिया और नाइट्रोजन विलयन 3. अमोनिया नाइट्रेट 4. यूरिया 5. अमोनिया सल्फेट 6. अमोनिया फास्फेटस

13.10 अभ्यास प्रश्न

1. निम्न में से सबसे अधिक नाइट्रोजन की मात्रा (कि.ग्रा.) किस फसल को जरूरत पड़ती हैं?पड़ती हैं

   (अ) गेहूँ (ब) सोयाबीन (स) पत्तागोभी (द) अंगूर

2. यूरिया में कितना प्रतिशत नाइट्रोजन पाया जाता हैं

   (अ) 26 (ब) 18 (स) 82 (द) 46

3. DAP (डी ए पी) में कितना प्रतिशत नाइट्रोजन पाया जाता हैं

   (अ) 26 (ब) 18 (स) 82 (द) 46

4. पादप वृद्धि के लिये अप्राप्य कार्बनिक रूप से प्राप्य रूप में परिवर्तित होने की प्रक्रिया क्या कहलाती है।

   (अ) खनिजीकरण (ब) स्थरीकरण (स) दोनों (द) इनमें से कोई नहीं

5. नाइट्रोजन अकार्बनिक से कार्बनिक रूप में परिवर्तित होने की प्रक्रिया क्या कहलाती है।

   (अ) खनिजीकरण (ब) स्थरीकरण (स) दोनों (द) इनमें से कोई नहीं

प्रश्नों के उत्तर:

1 – स

2 – द

3 – ब

4 – अ

5 – ब

13.11 संदर्भ ग्रंथ

- सिंह, आर.एल. एवं मेहरोत्रा, जे.एन. 2004,शस्य-विज्ञान, कक्षा ग्प्, माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर.
- शर्मा, ओ.पी., इन्टोदिया, एस.के., शर्मा, एस.एल. एवं नेकेला, एन.एस. 2009, शस्य-विज्ञान (कृषि वर्ग), माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर.
- Reddy, T.Y. and Reddi, G.H.S. 2000, *Principles of Agronomy*, Kalyani Publishers, New Delhi.
- अन्तराष्ट्रीय मृदा उर्वरता मैनुअल, 2009, पोटाश एंड फॉस्फेट इंस्टिट्यूट, यूएसए.

इकाई - 14

फास्फेटिक एवं पोटेशियम उर्वरक

इकाई की रुपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 फास्फेटिक उर्वरक

14.3 फास्फोरस तत्व की रसायनकता

14.4 फास्फेटिक उर्वरको का वर्गीकरण

14.5 फास्फेटिक उर्वरको का विवरण

14.6 भूमि में फास्फोरस की समस्याऐं

14.7 भूमि में फास्फोरस का स्थिरीकरण

14.8 फॉस्फेट उर्वरकों के प्रयोग के लिये आवश्यक दशाऐं

14.9 पोटेशियम उर्वरक

14.10 पोटेशियम उर्वरको का वर्गीकरण

14.11 पोटेशियम उर्वरको की विस्तत जानकारी

14.12 पोटाश उर्वरकों का मृदा अम्लता पर प्रभाव

14.13 सारांश

14.14 बहुचयनात्मक प्रश्न

14.15 संदर्भ ग्रंथ

14.0 उद्देश्य

इस इकाई को पड़ने के पश्चात आप यह ज्ञान प्राप्त कर पाएगे:-

- फास्फेटिक उर्वरकों के बारे में
- फास्फेटिक उर्वरको का वर्गीकरण व विवरण
- भूमि में फास्फोरस की समस्याऐं तथा उनका स्थिरीकरण
- पोटेशियम उर्वरकों का वर्गीकरण तथा उनकी विस्तृत जानकारी
- पोटाश उर्वरकों का मृदा अम्लता पर प्रभाव, आदि

14.1 प्रस्तावना

उर्वरक कृत्रिम रूप से बनाये गये रासायनिक यौगिक होते है, जिनमें पौधे की आवश्यकता के एक, दो या तीन या अधिक पौषक तत्वों का समावेश होता है। पोषक तत्वों के आधार पर उर्वरक मुख्यत: निम्न प्रकार के होते है।

1. एकल उर्वरक **(Single element / Straight Fertiizers) :** जिनमें पौधे की आवश्यकता के केवल एक पौषक तत्व का ही समावेश होता है।
2. यौगिक/संयुक्त उर्वरक **(Complex element Fertiizers) :** जिनमें पौधे की आवश्यकता के कम से कम दो प्राथमिक पौषक तत्वों का समावेश होता है।
3. मिश्रित उर्वरक **(Complex element Fertiizers) :** जिनमें पौधे की आवश्यकता के दो से अधिक मुख्य पौषक तत्वों का समावेश होता है।

14.2 फास्फेटिक उर्वरक

भारत वर्ष में फास्फेटिक उर्वरकों की आवश्यकता, उपयोग एवं उत्पादन – खेती के लिए फास्फोरस की महत्ता को दर्शाते हुए पियरे Prirre 1921ने फास्फोरस को मुख्य तत्व Key Element बताया है। नत्रजन के बाद पौधों द्वारा लिया जाने वाला यह विशेष तत्व है। उर्वरक के कणों या दोनों को पौधें उसी के रूप में ग्रहण नहीं करते। जब पानी में घुलनशील फास्टेटिक उर्वरक खेत में डाला जाता हे तो वह भूमि के जल में घुल जाता है। जैसे ही उर्वरक भूमी के पानी में घुलता है, भूमि में व्याप्त एल्यूमिनियम और आरयन आक्साइड और कैल्शियम व मैग्निश्यिम कार्बोनेट इस फास्फोरस के साथ मिल कर कम घुलनशील पदार्थ बनाते है। इस अवस्था में फास्फोरस घोल में स्वतंत्र नहीं रह सकता और ठोस रूप में (precipitate) gksdj बाहर आ जाता है। यही कारण है कि उर्वरक डालने के 1-2 दिन बाद ही भूमि के घोल में बहुत कम फास्फोरस मिलता है।उपरोक्त प्रतिक्रिया से प्राप्त यौगिको से भूमि के घोल और उसमें समायोजित होने वाले भू-जल में फास्फोरस आता रहता है। इन फास्फोरस दाता यौगिको का महत्व इनकी मात्रा पर न होकर, उनकी घुलनशीलता और प्रतिक्रिया पर निर्भर करता हे। प्रतिक्रिया से प्राप्त विभिन्न यौगिकों (Al-P, Fe-P,Ca-P) को भण्डार कारक (capacity factory) कहते है, जबकि भूमि के घोल में जो फास्फेट है उसे शीघ्र उपलब्ध फास्फेट कहते है। फास्फेटिक उर्वरको में मुख्य तत्व फास्फोरस (P) होता है जो मुख्यरूप से कैल्शियम, अमोनियम, या पोटेशियम फास्फेट के रूप में होते है। फास्फेटिक उर्वरको में फास्फेट या तो पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से जल में घुलनशील या साइट्रेट घुलनशील होता है। साइट्रेट घुलनशील फास्फोरस उर्वरक धीरे-धीरे घुलते है और अम्लीय मृदाओं में ज्यादा प्रभावी पाये जाते है।

उत्पत्ति -फास्फोरस युक्त उर्वरकों में फास्फेट का मुख्य रूप से एपाटाइट (Apatite) अवयव होता है जो प्राथमिक रूप से ट्राइकैल्शियम फास्फेट $[Ca_3PO_4)_2]$ होता है जो फास्फोरस उर्वरकों के उत्पादन का मुख्य स्त्रोत है। फास्फेटिक उर्वरको में जो पोषक तत्व होता है वह फास्फोरस पेन्टाआक्साइड (P_2O_5) के रूप में प्रदूषित किया जाता है।

फास्फोरस तत्व की रसायनकता - फास्फोरस तत्व के कई प्रकार पाये जाते है एवं जब उनको जलाया जाता है तो वे फास्फोरस पेन्टा ऑक्साइड (P_2O_5) में परिवर्तित हो जाते है और पानी में घुलनशील होकर मेटा फास्फोरिक अम्ल बनाते है।

$P_2O_5 + H_2O = 2HPO_3$

लेकिन, गर्म पानी में यह, आर्थोफास्फोरिक अम्ल बनाते है -

$HPO_3 + H_2O = H_3HO_4$

आर्थोफास्फोरिक अम्ल, सामान्यत, फास्फोरिक अम्ल जाना जाता है जिसमें हाइड्रोजन के तीन अणु परिवर्तित व रूपान्तरित होते रहते है। तथा इनमें से एक, दो या तीन अणु विस्थापित होकर विभिन्न प्रकार के लवण (Salts) उत्पन्न करते है।

$H_3Po_4 \longrightarrow H_2PO_4 \longrightarrow HPO_4 \longrightarrow PO_4$

हाइड्रोजन के एक आयन का ह्रास

सभी फसलीय पौधे फास्फोरस के ऋणात्मक आयन जैसे HPO_4^- या $H_3PO_4^-$ के रूप में अवशोषित करते है। ये ऋणात्मक आयन ''एनायनस'' कहलाते है। फास्फोरिक अम्ल के तीनों प्रकार के प्रतिस्थापित/परिवर्तित आयनस, कैल्शियम के साथ मिल कर तीन प्रकार के लवण (Salts) बनाते है जो व्यवसायिक फास्फेटिक उर्वरक (fertilizers) के रूप में कृषि में प्रयोग में लाये जाते है। यह लवण है -

1- $Ca(H_2 PO_4)_2$ या $CaH_4(PO_4)_2$ - यह मोनोकैल्शियम फास्फेट कहलाता हे। यह पानी में शीघ्रता से घुलनशील है तथा फास्फेट व तृतीयक सुपर फास्फेट का मुख्य यौगिक (Compound) है तथा पौधों को शीघ्रतासे उपलब्ध हो जाता है।

2- $CaHPO_4)_2$ या $Ca_2H_4(PO_4)_2$ - यह डाइकैल्शियम फास्फेट के रूप में जाना जाता है तथा पानी में अघुलनशील है परन्तु आंशिक अम्ल (यदि कि 2 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल) में भी शीघ्रता से कुल जाता है।इस प्रकार के उर्वरक साइट्रिक एसिड घुलनशील फास्फेट के रूप में जाने जाते है। जैसा कि पौधें HPO_4 आयन के रूप में भी फास्फोरस का अवशोषण करते है अत: यह लवण भी पौधों को उपलब्ध हो जाते है।

3- $Ca_3(PO_4)$ - यह ट्राइ कैल्शियम फास्फेट के रूप में जाने जाते है जो कैल्शियम फास्टेट भी कहलाते है। इस प्रकार के उर्वरक न तो पानी में तथा न ही कमजोर अम्ल में घुलते है, परन्तु ज्यादा अम्ल में घुल जाते है। यह मूर्तरूप में पौधों को उपलब्ध नहीं हो पाते है।

14.3 फास्फेटिक उर्वरकों का वर्गीकरण

फास्फेरिक उर्वरको को आर्थोफास्फोरिक या फास्फोरिक अम्ल के कैल्शियम के साथ संबंध के आधार पर सामान्यतया तीन वर्गो में बांटा जा सकता है।

(1) फास्फेटिक उर्वरक जो जल में घुलनशील**,** फास्फोरिक अम्ल या मोनो कैल्शियम फास्फेट वाले **:** इस प्रकार के उर्वरकों में फास्फोरिक अम्ल उपलब्धता के रूप में होता है जैसे सिंगल

सुपर फास्फेट (Single super phosphate), डबल सुपर फास्फेट (Double super phosphate),ट्रिपल सुपर फास्फेट(Triple super phosphate),

इस वर्ग के फास्फेटिक उर्वरको के गुण निम्न प्रकार है-

- यह जल में घुलनशील होते है
- यह शीघ्रता से पौधों द्वारा $H_2 PO_4$ आयन के रूप में अवशोषित होते है।
- इस प्रकार के उर्वरकों के पोषक तत्व (P) प्राथमिक स्तर के पौधों को शीघ्र प्राप्त हो जाते है। जिनका जडीयतंत्र पूर्व रूप से विकसित नहीं होता है।
- भूमी के जल में घुलनशील $H_2 PO_4$ फास्फोरिक अम्ल शीघ्रता से अघुलनशील अवस्था में परिवर्तित हो जाता हे। अत: इनका प्रस्क्षालन द्वारा ह्रास कम होता है।
- इस प्रकार के फास्फेटिक उर्वरको को उदासीन से क्षारीय भूमी में काम में लेना चाहिए, अम्लीय भूमी में प्रयोग न करे क्योंकि अम्लीय स्थिति में से अनुउपलब्ध लोहा तथा एल्युमिनियम फास्फेट में परिवर्तित हो जाते है।

(2) फास्फेटिक उर्वरक जिनमें साइट्रिक अम्लीय घुलनशील फास्फेटिक अम्ल या डाइकैल्शियम फास्फेट होता है **-**

1. बेसिक स्लेग (Basic slag) : 14-18 % P_2O_5
2. डाईकैल्शियम फास्फेट (Dicalcium Phospnate) : 34-39% P_2O_5
3 रेनानिया फास्फेट (Rhenania Phospnate) : 23-26% P_2O_5
4. बोनमील (Bonemeal) :

इस वर्ग के फास्फेटिक उर्वरको के गुण निम्न प्रकार है-

- इस वर्ग के फास्फेटिक उर्वरक अम्लीय प्रकार की भूमियों के लिए उपयुक्त होते है क्योकि कम पी.एच. (P^H) मान पर साइट्रेट घुलनशील फास्फेरिक अम्ल, मोनो कैल्शियमफास्फेट (जलीय घुलनशील फास्फेट) में परिवर्तित हो जाता है।
- इस प्रकार फास्फेट के लोहा या एल्युमिनियम फास्फेट के रूप में स्थायी होने के कम अवसर रहता है।
- अत: इस प्रकार के उर्वरको की क्षारीय प्रक्रिया एवं कैल्शियम के होने से अम्लीय व लेटराइटिक भूमियों हेतु अच्छे मान जाते है।

(3) फास्फेटिक उर्वरक जिनका फास्फोरिक अम्ल न तो जल में और ना साइट्रिक अम्ल में घुलनशील है **(**अघुलनशील फास्फोरिक अम्ल/डाई कैल्शियमफास्फेट **$Ca_3(PO_4)2$**

: रॉक फास्फेट (Rock Phosphate 20-40% P_2O_5); रॉ बोनमील (Row Bonemeal, 20-25% P_2O_5) ; स्टीम्ड बोनमील (Steaned Bonemeal, 22 % P_2O_5)

- इस प्रकार के फास्फेटिक उर्वरक अधिक अम्लीय या जैविक भूमियों हेतु अधिक उपयुक्त रहते है जहॉ अधिक फास्फोरिक उर्वरक की मात्रा की आवश्यकता होती है।
- इस प्रकार के उर्वरको के पोषक तत्व (P) की उपलब्धता इन्हे हरी खाद या अन्य जैविक पदार्थो के साथ भूमि में मिलाकर बढ़ायी जा सकती है।

14.4 फास्फेटिक उर्वरकों का विवरण

1. सिंगल सुपर फास्फेट (SSP)

यह एक भूरे रंग का उर्वरक होता है जो राक फास्फेट एवं सल्फ्यूरिक अम्ल को मिलाकर तैयार किया जाता है। यह सबसे प्राचीन फास्फेट उर्वरक है जिसमें 16 प्रतिशत फास्फेट (P_2O_5), 12 प्रतिशत सल्फर और 20 प्रतिशत कैल्शियम हैं। यह राख के रंग का होता हैं। डी.ए.पी. के बाद यह दूसरे स्थान पर महत्वपूर्ण फास्फेट उर्वरक है, साथ ही, भारत में, सल्फर देने वाला सबसे प्रमुख उर्वरक भी है। इसमें उपस्थित फास्फेट पानी में एकदम घुल जाता है लेकिन सल्फर व कैल्शियम कम घुलनशील है फिर भी फसल के लिये इतनी घुलनशीलता संतोषजनक है। एस.एस.पी. में कैल्शियम फास्फेट और रॉक फास्फेट से और सल्फर गंधक के अम्ल (जो इसको बनाने के काम आते है) से आता है। एस.एस.पी. पाउडर या दानेदार दोनों रूपों में मिलता है।

$$2\ Ca_3\ (PO_4) + 6\ H_2SO_4 = 3\ H_3PO_4 + 6\ CaSO_4$$

$$4H_3PO_4 + Ca_3\ (PO_4)_2 = 3Ca_3\ (H_2PO_4)_2$$

(मोनोकैल्शियम फास्फेट या SSP)

यह हल्के अम्लीय गंध का सूखा, ढेले रहित उर्वरक होता है। जब इसे भूमि में मिलाते है तो भूमि की नमी, वर्षा या सिंचाई जल के साथ मोनों कैल्शियम फास्फेट, मृदा नमी में घुल जाता है एवं पौधों की जड़ो द्वारा आसानी से अवशोषित कर लिया जाता है। शेष, कुछ समय बाद मृदा रन्ध्रो में अवक्षेपित (Precipitate) हो जाता है और मृदा P^H के अनुसार विभिन्न फास्फेट अवयवों/यौगिकों में बदल जाता है। जो कि पानी में अघुलनशील होत है। अत: सुपर फास्फेट वर्शा जल के साथ मृदा से fuक्षालन (Leached) नही होता है।

$$Ca\ (H_2PO_4)_2 + Ca\ (HCO3)_2 = 2CaHPO_4 + 2H_2CO_3$$

(डाइकैल्शियम फास्फेट)

$$Ca_3\ (H_2PO_4)_2 + 2Ca\ (HCO3)_2 = Ca_3\ (PO_4)_2 + 2H_2CO_3$$

(मोनो कैल्शियम फास्फेट) (ट्राइ कैल्शियम बारकार्बोनेट) (ट्राइ कैल्शियम फास्फेट) (कार्बोनिक अम्ल)

इस प्रकार सुपर फास्फेट में उपस्थिति मोनो कैल्शियम फास्फेट डाई एवं कैल्शियम फास्फेट में बदल जाता है जो बाद में अघुलनशील होकर भूमि में स्थिर फास्फेट के रूप मे पड़ा रहता है। आनुवांशिक रूप से अम्लीय मृदाओं में घुलनशील मोनो कैल्शियम फास्फेट लोहे या एल्युमिनियम के साथ मिलकर इनके फास्फेट में बदल जाता है तथा घुलनशील फास्फेट, अघुलनशील फास्फेट में बदल जाते है जिन्हे पौधों

द्वारा अवशोषित करना कठिन होता हैं अत: अम्लीय मृदाओं में सुपरफास्फेट शीघ्र ही अघुलनशील रूप में आ जाता है।

$2Ca(H_2PO_4)_2 + FeO_3 = 2FeO_3 + CaHPO_4 + 3H_2O$

(मोनो कैल्शियम फास्फेट) (आयरन आक्साइड) (आयरन फास्फेट) (डाइ कैल्शियम फास्फेट) (पानी)

अत: सुपर फास्फेट को बुवाई पूर्व उचित जगह पर प्रयोग करना चाहिए। सुपर फास्फेट में फास्फोरिक अम्ल जल में घुलनशील होता है, वह मुश्किल से भूमि में एक स्थान से दूसरे स्थान पर नही जा सकता है और एक ही स्थान पर पड़ा रहता है अत: इसे पौधों की जड़ो के पास ही प्रयोग में लेने चाहिए। सुपर फास्फेट छिटकाव विधि से काम में नही लेना चाहिए। साथ ही, सुपर फास्फेट को अधिक अम्लीय मृदाओं जिनका P^H मान 5.5 से कम हो, प्रयोग में नही लेना चाहिए और यदि ले तो चूने का उपयोग पूर्व में करके ही काम में लेवें।

2. डाइ कैल्शियम फास्फेट **(Enriehed Super Phosphate)**

इस उर्वरक में 32 प्रतिशत फास्फोरस होता है। एनसिड सुपर फास्फेट को रॉक फॉस्फेट के साथ सल्फ्यूरिक अम्ल एवं फास्फोरिक अम्ल को मिलाकर एसिडलेशन प्रक्रिया द्वारा तैयार किया जाता है।

3.ट्रिपल सुपर फास्फेट **(Triple Super Phosphate)**

इस उर्वरक में साधारण सुपर फास्फेट से तीन गुणा ज्यादा लगभग 45-50 प्रतिशत मोनो कैल्शियम फास्फेट तथा 17-20 प्रतिशत चूना (lime) होता है। इसे फास्फोरिक अम्ल को रॉक फास्फेट (प्लोरीनयुक्त) में मिलाकर तैयार किया जाता है।

$Ca_{10}F_2(PO_4)_6 + 12\,H_3PO_4 = 9Ca_3(H2PO_4)_2 + CaF_2$

(रॉक फास्फेट प्लोरीनयुक्त) (फास्फोरिक अम्ल) (मोनो कैल्शियम फास्फेट) (कैल्शियम फलोरेट)

अल्प अवधि व तेजी से बढने वाली फसलों के लिए ट्रिपल सुपर फास्फेट, साइट्रेट घुलनशील स्त्रोतों से अच्छा माना जाता है क्योकि इससे शीघ्र फास्फेट मुक्त होकर पौधो की शुरूआत अवस्था में जड़ीय तंत्र को मजबूत बनाने में सहायक होता है। प्रति यूनिट फास्फोरस लागत के आधार पर यह सस्ता होता है। ट्रिपल सुपर फास्फेट के विशिष्ट गुण इस प्रकार है -

- नमी (अधिकतम प्रतिशत वजनानुसार) 12.0%
- फास्फोरिक अम्ल (मुक्त), P_2O_5 (अधिकतम प्रतिशत वजनानुसार) 3.0%
- कुल फास्फोरिक (P_2O_5) निम्नतम % वजनानुसार 46.0%
- जल में घुलनशील फास्फेट (P_2O_5) निम्नतम % वजनानुसार 42.5%

4. राँ बोनमील **(Bonemeal Raw) –**

यह मृत पशुओं की हड्डियों प्राप्त, सबसे पुराना फास्फोरस स्त्रोत माना जाता है। स्लाटरहाउसों से प्राप्त पशुओं की हड्डियों को सूखाकर एवं बारीक पीसकर यह उर्वरक तैयार किया जाता है जिसमें लगभग 20-25 प्रतिशत फास्फोरस पाई जाती है।

उर्वरक (नियंत्रण) आदेश 1957 के अनुसार रॉ बोनमील के विशिष्ट गुण इस प्रकार होने चाहिए-

1.	नमी (अधिकतम प्रतिशत वजनानुसार)	8.0%
2.	अम्लीय अघुलनशील पदार्थ (अधिकतम) प्रतिशत वजनानुसार	12.0%
3.	कुल फास्फेट (P_2O_5) निकतम % वजनानुसार	20.0%
4.	फास्फेस्टस (P_2O_5) 2% साइट्रिक अम्ल घुलनशील	8.0%
5.	नत्रजन अघुलनशील	3.0%
6.	छलनी विश्लेषण (2.36 mm की में से पास)	

5. स्टीम्ड बोनमील **(Steamed Bonemeal) -**

यह भी मृत पशुओं एवं जानवरों की हड्डियों को भाप द्वारा Sterlized करके, फिर उन्हे गर्म ओवनों में सुखाकर महीन पीसा जाकर तैयार किया जाता है। बोनमील में फास्फोरिक अम्ल साइट्रेट घुलनशील (डाइ कैल्शियम फास्फेट) तथा अघुलनशील (ट्राइ कैल्शियम फास्फेट) होता है। अत: यह अम्लीय मृदाओं एवं लम्बी अवधि की फसलो गन्ना एवं फल वृक्षों के लिए अधिक उपयुक्त रहता है परन्तु इसकी उपलब्धता काफी कम रहती है।

उर्वरक (नियंत्रण) आदेश 1957 के अनुसार रॉ बोनमील के विशिष्ट गुण इस प्रकार होने चाहिए-

1.	नमी (अधिकतम प्रतिशत वजनानुसार के आधार पर)	8.0%
2.	अम्लीय अघुलनशील पदार्थ (अधिकतम) प्रतिशत वजनानुसार	12.0%
3.	कुल फास्फेट (P_2O_5) निकतम % वजनानुसार	20.0%
4.	फास्फेस्टस (P_2O_5) 2% साइट्रिक अम्ल घुलनशील	8.0%
5.	कणो आकार (1.18mm की छलनी में से कम से कम 90 प्रतिशत वजनानुसार)	
6.	नत्रजन अघुलनशील	3.0%

6. बेसिक स्लेग **(Basic Slag)**

बेसिक स्लेग, स्टील उद्योग के उप उत्पाद के रूप में प्राप्त होता है जिसमें मुख्य लोहे अयस्को में फास्फोरस होता है इसमें लगभग 11-20 प्रतिशत तक फास्फोरिक एसिड, साइट्रेट घुलनशील प्रकार में पाया जाता है। यह मुख्यतया: जर्मनी, फ्रांस एवं इग्लैण्ड में बनाया जाता है किन्तु भारत में निम्न ग्रेड का बेसिक स्लेग मिलता है जिसमें लगभग 3-8 प्रतिशत फास्फोरस होता है एवं प्रयोग में लिया जाता है। फास्फोरस के अलावा बेसिक स्लेग में मुक्त चूना भी पाया जाता है जिससे यह अम्लीय मृदाओं हेतु अधिक उपयुक्त होता है। बेसिक स्लेग में कुल फास्फेट का लगभग 80 प्रतिशत साइट्रेंट घुलनशीलन होता है जो कि बोनमील या रॉक फास्फेट की तुलना में पौधों को आसानी से उपलब्ध हो जाता है। इसके प्रयोग हेतु इसे भूमि में अच्छी प्रकार मिलाना चाहिए क्योकि भूमि में यह मुश्किल से इधर-उधर होता है।

7. रॉक फास्फेट **(Rock Phosphate)**

आमतौर पर रॉक फास्फेट का उपयोग फास्फेटिक उर्वरक बनाने के लिये कच्चे माल के रूप में किया जाता है लेकिन अम्लीय भूमि में इसका सीधा उर्वरक रूप में भी प्रयोग किया जाता सकता है। भारत में, उर्वरक रूप में प्रयोग में लिये जाने वाली सबसे अधिक लोकप्रिय मसूरी रॉक फास्फेट है। इनका फास्फेट पानी में घुलनशील तो नहीं होता है लेकिन अम्लीय भूमि में यह घुल जाता है और पौधों के लिए उपयोगी होता है। रॉक फास्फेट में कैल्शियम भी होता है जो कुछ हद तक चूने सा प्रभाव छोड़ता है। विभिन्न देशों में यह बढ़े स्तर पर निकाला जाता है जो कि मुख्यत: सिंगल सुपर फास्फेट, ट्रिपल सुपर फास्फेट, डाइ कैल्शियम फास्फेट व मेटा कैल्शियम फास्फेट बनाने में काम में लिया जाता है। परन्तु विशिष्ट प्रकार एवं स्थितियों में इसे सीधे उर्वरक के रूप में काम में लिया जा सकता है, जो निम्न है -

- यह पूर्ण रूप से चूर्ण प्रकार होना चाहिए।
- फास्फोरस की मात्रा, सुपर फास्फेट की फास्फोरस मात्रा से कम होना चाहिए।
- रॉक फास्फेट का प्रयोग स्थायी प्रकार की फसलें एंव फल उद्यानिकी फसलों में प्रयोग करें।
- भूमी अम्लीय प्रकार की एवं अधिक ह्यूमस वाली हो तो ज्यादा अच्छा रहता है।
- रॉक फास्फेट उर्वरक कणों का आकार 6.3mm IS छलनी से पूरी तरह पास हो जाना चाहिए।

  रॉक फास्फेट में सामान्यत: 20-40 प्रतिशत फास्फोरस होता है जो मुख्यतया उसकी खनिज (mineral) गुणवता पर निर्भर करता है। रॉक फास्फेट को जब अम्लीय मृदा या अधिक कार्बनिक पदार्थ वाली भूमियों में मिलाया जाता है तो भूमि में उपस्थिति कार्बोनिक तथा साइट्रिक अम्ल क्रिया करके ट्राइ कैल्शियम फास्फेट व अनुपलब्ध फास्फेट को मोनो कैल्शियम फास्फेट में बदल देते है जो कि पौधों को उपलब्ध हो जाता है।

$[Ca_3(PO_4)_2]_3CaCO3 + 14\ HNO3 = 3Ca_3(H_2PO_4)_2 + 7\ Ca(NO_3)_2 + 2H_2CO_3$

(राक फास्फेट) (नाइट्रिक अम्ल) (मोनो कैल्शियम फास्फेट) (कैल्शियम नाइट्रेट) (कार्बोनिक अम्ल)

$[Ca_3(PO_4)_2]_3CaCO3 + 6\ H_2CO3 = 3Ca_3(H_2PO_4)_2 + 7\ CaCO_3$

(राक फास्फेट) (कार्बोनिक अम्ल) (मोनो कैल्शियम फास्फेट) (कैल्शियम नाइट्रेट)

प्राय: फसलो के प्रकार के अनुसार रॉक फास्फेट के फास्फोरस की उपयोग क्षमता प्रभावित होती है। जैसा कि - दलहनी फसलों को कैल्शियम की ज्यादा आवश्यकता होती है अत: अदलहनीय फसलों की तुलना में ज्यादा प्रभावकारी रहता है। रॉक फास्फेट की अधिक मात्रा (500-1000 किग्रा/हैक्टर) एक साथ लगभग 4-5 साल में डालनी चाहिए। रॉक फास्फेट के प्रयोग हेतु अधिक अम्लीय मृदाएँ अधिक उपयुक्त होती है।

8. डाइ कैल्शियम फास्फेट **(Dicalicum Phosphate)**

डाइ कैल्शियम फास्फेट में लगभग 34 प्रतिशत साइट्रेट घुलनशील फास्फेट होता है। यह उर्वरक अच्छी भौतिक दशा वाला होता है। चूंकि इसमें साइट्रेरट घुलनशील फास्फेट होता है जिसमें यह ट्राइ

कैल्शियम फास्फेट (अघुलनशील) में नही बदल पाता है अत: यह विभिन्न प्रकार की फसलों एवं भूमियों हेतु उपयुक्त होता है।

9. अन्य फास्फेटिक उर्वरक **:** यह ज्यादा उपयोग में नही है -

1.	कैल्शियम मेटा फास्फेट	-	64%	P_2O_5
2.	तरल फास्फोरिक अम्ल	-	20%	P_2O_5
3.	रेह मेनेनिया फास्फेट	-	25.5%	P_2O_5
4.	रोकलिंग फास्फेट	-	18.0%	P_2O_5

10. मिश्रित फास्फेट उर्वरक **-**

इस प्रकार के उर्वरकों में दो या दो से अधिक प्राथमिक पोषक तत्व पाये जाते है। मिश्रित (Mixed) प्रकार के मुख्य उर्वरक जिनमें फास्फेट होता है निम्न प्रकार है -

1. नाइट्रोफास्फेटस **(Nitro phorsphates)** : यह एक दानेदार उर्वरक है जिसमें एक स्थिरक (Stablizar) होता है जो साइट्रेट घुलनशील फास्फेट से अघुलनशील फास्फेट बनने से रोकता है। ये उर्वरक अमोनियम नाइट्रो फास्फेट (ANP) के नाम से भी जाने जाते है। इन में आधा नाइट्रोजन अमोनिकल और आधा नाइट्रेट के रूप में होता है। इन में फास्फेट की घुलनशीलता अलग-अलग हो सकती है। उदाहरण के लिये ग्रेड 15-15-15 में 30 प्रतिशत अंश पानी में घुलनशील है, जबकि ग्रेड 20-20-0 में यह 60 प्रतिशत और ग्रेड 23-23-0 में यह 80-85 प्रतिशत है। सभी ग्रेडो में नाइट्रोजन का स्वरूप एक सा ही रहता है। 23-23-0 ग्रेड का भारत में प्रचलन कुछ समय पूर्व ही हुआ है। यह कई ग्रेड में मिलता जैसे 20 : 20 : 2; 18 : 18 :9;15:15 : 15
2. अमोनियम फास्फेट सल्फेट **(एमोफास) :-** यह दो ग्रेड़ो 16-20-0 और 20-20-0 में से 20-20-0 अधिक मात्रा में बनाया जाता है। इसको अमोनियम सल्फेट और अमोनियम फास्फेट के फास्फोरस के रूप में देखा जा सकता है। दोनों ग्रेड़ो में 15 प्रतिशत सल्फर भी होता है जो अमोनियम सल्फेट वाले भाग में प्राप्त होता है। इस में उपस्थित सारे तत्व पानी में घुलनशील और उपलब्ध रूप में होते है।
3. यूरिया अमोनियम फास्फेट **(यू.ए.पी) :-** इसका सबसे जाना पहचाना उदाहरण 28-28-0 है। इसकी कुल नाइट्रोजन का 68 प्रतिशत नाइट्रोजन एमाइड (यूरिया) रूप में और 32 प्रतिशत अमोनियम रूप में होती है। इसमें उपस्थित सभी तत्व पानी में घुलनशील है और पौधों को उपलब्ध रूप में (एमाइड अमोनियम में परिवर्तित होने के बाद) है।
4. डाई अमोनियम फास्फेट **(डी.ए.पी.) :-** इसमें 18 प्रतिशत नाइट्रोजन और 46 प्रतिशत फास्फेट होता है यह न केवल फास्फेट का सबसे महत्वपूर्ण उर्वरक है बल्कि नाइट्रोजन में भी यूरिया के बाद इसका दूसरा दर्जा है। यह पानी में घुलनशील है और इसमें दोनों ही तत्व पौधों को उपलब्ध रूप में होते है। यह राख के या हल्के काले रंग के दानेदार रूप में मिलता है। यह बुवाई के समय देने के लिये विशेष उपयुक्त है।

5. अमोनियम फास्फेट **(Ammonium Phosphate** : इस वर्ग के उर्वरक, अमोनिया के साथ फास्फोरिक अम्ल की क्रिया से तैयार किये जाते है जिसमें फास्फोरिक अम्ल को रॉक फॉस्फेट के साथ नाइट्रिक अम्ल की क्रिया से प्राप्त किया जाता है।

NH_3 + H_2PO_4 = $NH_4H_2PO_4$

(अमोनिया), (फास्फोरिक अम्ल) (मोनो अमोनियम फास्फेट)

$2NH_3$ + H_2PO_4 = $(NH_4)HPO_4$

(अमोनिया) (फास्फोरिक अम्ल) (डाइ अमोनियम फास्फेट)

$Ca_3(H_2PO_4)_2 + (NH_4)_2SO_4 + H_2SO4 = 2NH_2H_2PO_4 + 3\ CaSO_4$

(रॉक फास्फेट) (अमोनियम सल्फेट) (सल्फ्यूरिक अम्ल) (अमोनियम फास्फेट) (कैल्शियम सल्फेट)

व्यवसायिक अमोनियम फास्फेट हल्का भूरे रंग का पूर्ण सूखा हुआ होता है। यह कम आद्री है जो आसानी से शीघ्र हवा से नमी को अवशोषित नही करता है। यह पानी में घुलनशील होता है जिससे इसका फास्फोरस भूमी में ज्यादा सवहंक होता है। अमोनियम फास्फेट आंशिक क अम्लीय से उदासीन क्रिया का होता है। यह कैल्शियम (calcareous) एवं क्षारीय (alkaline) मृदाओं के लिए काफी अच्छा उपयुक्त पाया गया है।

विभिन्न अमोनिया फास्फेट के ग्रेड **:-**

		नत्रजन	:	फास्फोरस मात्रा %
1.	मोनो अमोनियम फास्फेट -	11	:	52
2.	डाइ अमोनियम फास्फेट -	18	:	46
3.	अमोनियम फास्फेट सल्फेट -	16	:	20
4.	अमोनियम फास्फेट सल्फेट नाइट्रेट -	20	:	20
5.	यूरिया अमोनियम फास्फेट -	28	:	28

[2.] काम्पलेक्स फास्फेट उर्वरक **(Complex Phosphorus Containg Fertilizers)** एन**.**पी**.**के**. :-** इनमें निर्माण अवस्था में ही एम.ओ.पी. को नाइट्रोजन और फास्फोरस के स्त्रोत के साथ मिलाया जाता है जिससे इनका एन.पी.के. स्वरूप आ जाय। नाइट्रोफास्फेट 15-15-15 को छोडकर सभी एन.पी.के. काम्प्लेक्स में उपस्थित फास्फेट पानी में घुलनशील होते है और पौधों को उपलब्ध रूप में रहते है। काम्प्लेक्स साधारणतया उच्च विश्लेषण वाले (45-63 प्रतिशत पोषक तत्व) और दानेदार होते है। इस प्रकार के उर्वरको में तीनों प्राथमिक पोषक तत्व यानि नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश होता है जिन्हे NPK उर्वरक भी कहा जाता है। विभिन्न NPK मात्रा के उर्वरक निम्न प्रकार है-

- N : P: K (10-26-26)
- N : P: K (12-32-16)

- N : P: K (17-17-17)
- N : P: K (19-19-19)
- N : P: K (20-10-10)

14.5 भूमि में फास्फोरस की समस्याऐं

फास्फोरस के यौगिक के साथ समस्या यह है कि वे अधिकतर पानी में घुलकर नहीं होते हैं। जो योगिक (उर्वरक) पानी में घुलनशील है वे भी मृदा में प्रयोग के कुछ समय बाद अस्थिर व अनुपलब्ध हो जाते हैं। इस प्रकार फास्फोरस की उपलब्धि पौधों को बहुत कम हो पाती है। इसी कारण से कभी – कभी स्थिर उर्वरक (Fixation of fertilizers) कहलाते है।

साधारणतया ये लोहा व एल्युनिनियम के साथ मिलकर इसके फास्टफेट बनाते हैं। अत: फास्फेटिक उर्वरक डालते समय यह ध्यान रखे कि यह मात्रा आवश्यता से अधिक 8-10 सेमी तक की गहराई में डाल दी जायो यह मृदा में बहुत ही कम मात्रा में पाया जाता है

14.6 भूमि में फास्फोरस का स्थिरीकरण

भूमि में एक तो फास्फोरस होता ही कम है, दूसरे जो होता है इसमें से अधिकांश अघुलशील अवस्था में होता है, तीसरे जो उर्वरक डाले जाते हैं उनकी जो अधिक मात्रा प्राय: अघुलनशील अवस्था में बदल जाती है और इस प्रकार अप्राप्य (Unavailable) होते हैं। यह विधि जिसमें भूमि में दिय गये विलेय फास्फेट भूमि से उपस्थिति विभिन्न योगिकों से प्रतिक्रिया करके अचल हो जाते हैं, और कुछ समय के लिये फसलों को अनुपलब्ध (unavailable) हो जाते हैं, इसे फास्फेट स्थिरीकरण कहते (Fixation of Phosphorus) है।

1 मृतिका विषयक द्वारा (Clave complex) अवशोषण । (Absorption) कलिन (Colloid) प्रकृति होने के कारण भूमि pH 4-5&7-5 पर अपने तल पर फास्फेट आयनों का अवशोषण कर लेती है।

2 रासायनिक प्रतिक्रियाओं द्वारा मिट्टी से कैल्शियम की मात्रा अधिक होती है। अत: आयरन के फास्फेट रासायनिक प्रतिक्रियाओं द्वारा ट्राई कैल्शियम फास्फेट में बदल जाते हैं। इसी प्रकार कुछ फास्फेट रासायनिक प्रतिक्रियाओं द्वारा ट्राई कैल्शियम में बदल जाते हैं। इसी प्रकार कुछ फास्फेट एल्यूमिनियम फास्फेट में बदल जाता है यह पौधों को प्राप्त होता है। आयरन फास्फेट पौधों को अप्राप्य है।

3 भूमि के कार्बनिक पदार्थ के साथ संयोग – बहुत ही थोड़ी मात्रा में फास्फोरस का स्थिरीकरण कार्बेनिक पदार्थ से होता है। उपरोक्त तीनों प्रक्रियाओं या भूमि में फास्फोरस में स्थिरीकरण कार्बेनिक पदार्थ से होता है। उपरोक्त तीनों प्रक्रियाओं या भूमि में फास्फोरस में स्थिरीकरण पर प्रभाव डालने वाले कारण निम्न है -

(अ) हाइड्रोजन आयनों का सान्द्रण – क्षारीय मिट्टी की अपेक्षा अम्लीय मिट्टी में फास्फोरस अधिक स्थिर होता है किन्तु बहुत अधिक अम्लीय मिट्टी में आयरन फास्फेट स्थिर होता है

(ब) विनिमय क्षार - भूमि में क्षारीय पदार्थों के विनिमय द्वारा अम्ल बढ़ जाने के फास्फोरस का स्थिरीकरण बढ़ जाता है

(स) कार्बनिक पदार्थ – जिस भूमि में कार्बनिक पदार्थ होता है, उसमें फास्फोरस का स्थिरीकरण बहुत कम होता है।

(द) भूमि रचना – बालू मिट्टी की अपेक्षा चिकनी मिट्टी से फास्फोरस का स्थिरीकरण अधिक होता है। सबसे अधिक फास्फोरस का स्थिरीकरण पीली मिट्टी में होता है। चूने वाली मिट्टी में स्थिरीकरण कम होता है

(य) समय – फॉस्फेट स्थिरीकरण की क्रिया बड़ी लम्बी है इस क्रिया में महीनों लग जाते हैं।

14.7 फास्फेट उर्वरकों के प्रयोग के लिये आवश्यक दशायें

पौधों को फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ाने के लिये फास्फेटिक उर्वरकों के प्रयोग करते समय निम्न बातों का विशेष रूप से ध्यान रखना आवश्यक है

1 भूमि में फास्फेट का विलेय रूप में प्रयोग करने पर भी वह विलेय फॉस्फोरस ऐसे रूपों में बदल जाता है जो पानी में विलेय नहीं होतेा अत: फास्फेट – उर्वरकों का प्रयोग फसल बोते समय अथवा उसमें पूर्व ही किया जाना चाहिये। फास्फेट डालने के तुरन्त बाद वर्षा हो जाने पर भी वह पानी के साथ नहीं बह पाता, न उसका निक्षाल, ही होता है।

2 नाइट्रोजन पोषक तत्वों के विपरीत फॉस्फेट भूमि में गति नहीं करता। यह लगभग उसी स्थान पर पड़ा रहता है जहां उसे डाला गया होता है। यह बात उन फॉस्फेटिक उर्वरकों के लिये भी सही है जो पानी में विलेय है क्योंकि ये विलेय उर्वरक की भूमि में दो – चार सेन्टीमीटर से अधिक गति नहीं कर पाते। अत: फॉस्फेटिक उर्वरकों को फसलों की जड़ों वाले क्षेों में ही प्रयोग करना चाहिये जिससे कि फसलें उनका उपयोग कर सकें।

3 फास्फोरस को ऐसी भूमि में प्रयोग नहीं करना चाहिये जिसकी पी;एच; 5.5 से कम हो, क्योंकि अम्लीय भूमि में फॉस्फेट का अति शीघ्र ही यौगिकरकरण हो जाता है और फसलों के उपयोग का नहीं रहता है

14.8 पोटेशियम उर्वरक

पोटाश या पोटेशियम या पोटाशिक उर्वरक पौधों को पोटेशियम (K) प्रदान करने के लिए काम में लिये जाते हैं पोटाश पौधों की गृहि हेतु एक आवश्यक तत्व है। उर्वरको में पोटेशियम / पोयश की K_2O (Patassium Oxide) के रूप में दर्शाया जाता है। पोटेशियम (K) एक भूरा तत्व (metal) है जो कि शीघ्रता से पानी से क्रिया करता है तथा कभी भी मुक्त अवस्था (Free State) में नही पाया जाता हैं यह

वायु के सम्पर्क में आत ही, शीघ्रता से आक्सीकृत होकर आक्साइड (K_2O) बनाता है। इस कारण एक या अधिक यौगिको के साथ मिलाकर पोटेशियम उर्वरक तैयार किये जाते है। प्रकृति में अधिकांश खनिज पदार्थों जैसे, अवरक, जियोलाइट, फेल्सपार, पोटेशियम सल्फेट, पोटेशियम क्लोराइट व पोटेशियम क्लोराइट व पोटेशियम नाइट्राइट इत्यादि के रूप में पोटेशियम पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। पोटाश के सभी सामान्य स्त्रोत जैसे - एम.ओ.पी., एस.ओ.पी., एन.पी.के. काम्पलेक्स पानी में आसानी से घुलनशील हैं। एम.ओ.पी. की प्रतिक्रिया अमोनियम क्लोराइड के समान और पोटेशियम सल्फेट की अमोनियम सल्फेट की अमोनियम सल्फेट के समान है। अन्तर सिर्फ इतना ही है कि अमोनियम के स्थान पर यहां पोटेशियम का चर्चा है और यह भूमि को अम्लीय नहीं बनता। एन.पी.के. काम्पलेक्स का पोटाश एम.ओ.पी. की तरह ही है क्योंकि इन उर्वरकों को बनाने में एम.ओ.पी. ही काम में लिया जाता है। पोटाश का भूमि में कोई रूप परिवर्तन नहीं होता। घोल में पहुंचने के बाद यह विनिमय योग्य आयान के रूप में (अमोनियम की तरह) स्थिर हो जाता है या जड़ो द्वारा ग्रहण कर लिया जाता है या भूमि की गहरी सतह में चला जाता है।

14.9 पोटाशिक उर्वरको का वर्गीकरण

मुख्य रूप से निम्न प्रकार के पोटेशियम उर्वरक प्रयोग में लिये जाते है जिनका वर्गीकरण निम्न प्रकार है -

1. पोटाशिक उर्वरक जिनमें पोटेशियम (K) क्लोराइड के रूप में होता है - म्यूरेट ऑफ पोटाश (KCl)
2. पोटाशिक उर्वरक जिनमें पोटेशियम (K) नान क्लोराइड (कलोराइड के अलावा) रूप में होता है- पोटेशियम सल्फेट (K_2SO_4), पोटेशियम नाइट्रेट (KNO_3)

14.10 पोटाशियम उर्वरकों की विस्तृत जानकारी

1. **म्यूरेट आफ पोटाश /पोटेशियम क्लोराइड** (KCl)

   इसमें 60 प्रतिशत पोटाश (K_2O) होता है व शेष क्लोरीन। यह सफेद से लेकर लाल रंग तक का हो सकता हैं भारत में पोटाश की कुल खपत का सबसे ज्यादा प्रयोग म्यूरेट आफ पोटाश के रूप में होता है। यह पोटाश वाले खनिजों (minerals) से तैयार किया जाता है। यह ज्यादातर कणों के रूप में बनाया जाता है। यह पानी में आसानी से घुलनशील है। भूमी में प्रयुक्त करने पर यह आयोनाइनेशन द्वारा पोटेशियम (K^+) आयन एवं क्लोराइड (Cl^-) आयनस में विक्षेपित हो जाता है। जो फसले क्लोरीन से संवेदनशील होती है उनमें इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

2. **पोटेशियम सल्फेट** (K_2SO_4)

   इसमें 48-50 प्रतिशत पोटाश (K_2O) एवं 18 प्रतिशत गन्धक होता है व पोटाश सरलता से पौधों को उपलब्ध हो जाता है। यह क्रिस्टलाइन पाउडर या दानेदार रूप में आता है। इसके भौतिक गुण अच्छे होते है और सुरक्षित भण्डारण आसानी से किया जा सकता है। इसका उत्पादन गन्धक के अम्ल के साथ एन.ओ.पी की प्रतिक्रियाकरा कर दिया जाता हैं इसका लवण घातांक (Salt Index) बहुत कम होता है। यह कोई क्षारीय असर नही छोड़ता है और साथ ही

क्लोरीन से लगभग पूर्णतया मुक्त है। अत: इसे क्लोरीन से संवेदनशील फसलों में प्रयोग किया जा सकता हैं

पोटेशियम सल्फेट मुख्यतया दो तरीको से तैयार किया जाता है -

(i) लेन्गबेनाइट (Langbeinite) पोटाश meeneral (K_2So_4 $MgSo_4$) को पानी में घोलकर उसमें सान्द्र पोटेशियम क्लोराइड (KCl) का घोल डालते है तो पोटेशियम सल्फेट निक्षालित (Precipitates) हो जाता है जिसे डीकेनटेशन(decantation) द्वारा अलग कर लेते है।

K_2SO_4 2 $MgSO_4$ + 4 KCl = $3K_2SO_4$ + 2 MgCl

(लेन्गबेन्टाइट) (पोटेशियम क्लोराइड) (पोटेशियम सल्फेट) (मेग्नीशियम क्लोराइड)

(ii) पोटेशियम क्लोराइड को सान्द्र सल्फ्यूरिक अम्ल की क्रिया द्वारा

$2KCl + H_2SO_4 = K_2SO_4 + 2HCl$

(पोटेशियम क्लोराइड) (सल्फ्यूरिक अम्ल) (पोटेशियम सल्फेट) (हाइड्रोक्लोराइड अम्ल)

पोटेशियम सल्फेट जल में घुलनशील होता है। भूमि में डालने पर यह पोटेशियम (K+) आयन एवं सल्फेट ($SO4^-$) पौधों द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है।

(ii) कायानाइट

यह खनिज पोटेशियम क्लोराइड के साथ जर्मनी, फ्रांस तथा अमेरिका में अधिक मात्रा में मिलता हैा अशुद्धियों के कारण इसमें विभिन्न रंग पाये जाते हैं। इसमें प्राय- सफेद, भूरा पीला अथवा लाल रंग अशुद्धियों के कारण होता हैा मैग्निश्यिम क्लोराइड की उपस्थिति के कारण यह आर्द्रता ग्राही होता है यह एक क्षारीय पदार्थ हैा इसे भण्डार करके रखने से ढेले बन जाते है। खानों से निकाल कर पीसकर इसे सीधे उर्वरक के काम में लाते है। मिट्टी की प्रतिक्रिया पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता हैा इसका संगठन अनिश्चित है, पर व्यापारिक खनिज में 12-22 प्रतिशत पोटाश 25-45 प्रतिशत सोडियम क्लोराइड और शेष मैग्निश्यिम के सल्फेट तथा क्लोराइड रहते हैं। पौधे लगाने से काफी पहले इसका प्रयोग करना चाहिए। बीज के साथ मिलाकर प्रयोग करने से बीज का जीवन शक्ति नष्ट हो जाती है। लगभग सभी फसलों में इसका प्रयोग सफलतापूर्वक किया जा सकता हैा

3. पोटेशियम नाइट्रेट **(KNO_3)** :

इसमें 44 प्रतिशत पोटाश होता है तथा 13 प्रतिशत नत्रजन (N) होती है। भारत तथा अन्य गर्म देशों में यह मृदा तल पाया जाता हैा इसका प्रयोग गन्ना, कपास, तम्बाकू, मक्का, ज्वार, धान जूट (पटसन) के लिये किया जाता हैा सोडियम नाइट्रेट में पोटेशियम प्राप्त होता है। विलयन को गर्म कर, मणिभीकरण कर लेते हैं।

$NaNO_2 + KCl = KNO_3 + NaCl$

4. अन्य पोटेशियम उर्वरक

(i) पोटाश मेग्नेशियम सल्फेट : इसमें 25 प्रतिशत पोटाश एवं 10-12 प्रतिशत मेग्नीनिश्यम होता है।

(ii) मिश्रित पोटेशियम उर्वरक इनमें के साथ-साथ नत्रजन एवं फास्फोरस भी होती है।

14.11 पोटाश उर्वरकों का मृदा अम्लता पर प्रभाव

पोटाश उर्वरकों का मृदा अम्लता पर प्रभाव

पोटाश उर्वरक से मृदा में अम्लता घटती है इस विषय में अनेक मत हैं। कुछ वैज्ञानिकों का विचार है कि लगातार पाँच वर्षों तक पोटेशियम सल्फेट की 100 किग्रा प्रति हेक्टयर की दर से प्रयोग करने से मिट्टी की अम्लता बढ़ती है और इसे दूर करने के लिये चुना देना पड़ता है। बगर्श का मत है कि पोटाश से अम्लता घटती है परन्तु रसेल के अनुसार पोटेशियम सल्फेट से अम्लता बढ़ती है।

14.12 सारांश

फास्फोरस उर्वरको में मुख्य रूप से सिंगल सुपर फास्फेअ, डाई अमोनियम फास्फेट एवं रॉक फास्फेट मुख्यतया प्रयोग किये जाते है। इनका प्रयोग भूमी के पी.एच. मान एवं फसलों के अनुसार करना चाहिए। पोटाशिक उर्वरको के म्यूरेट आफ पोटाश पोटेशियम सल्फेट मुख्यतया काम में लिए जाते है

विभिन्न उर्वरकों में पोषक तत्वों की मात्रा

क्रम संख्या	उर्वरक	N	P_2O_5	K_2O
1	सिंगल सुपर फास्फेट (एस.एस.पी)	-	16	-
2	पोटेशियम क्लोराइड (एम.ओ.पी.)	-	-	60
3	पोटेशियम सल्फेट (एम.ओ.पी.)	-	-	50
4	डाई अमोनियम फास्फेट (डी.ए.पी)	18	46	-
5	यूरिया अमो. फास्फेट	28	28	-
6	अमो. फास्फेट सल्फेट	16	20	-
7	अमो. फास्फेट सल्फेट	20	20	-
8	नाइट्रोफास्फेट	20	20	-
9	नाइट्रोफास्फेट	23	23	-
10	एन.पी.के. काम्पलेक्स	15	15	15
11	एन.पी.के. काम्पलेक्स	12	32	16
12	एन.पी.के. काम्पलेक्स	10	26	26
13	एन.पी.के. काम्पलेक्स	17	17	17
14	एन.पी.के. काम्पलेक्स	19	19	19
15	एन.पी.के. काम्पलेक्स	14	35	14

16	रॉक फास्फेट	-	18-20	-

14.13 अभ्यास प्रश्न

1. उर्वरक कितने प्रकार के होते है ?

   (अ) एक (ब) दो (स) तीन (द) चार

2. निम्न में से कौनसे फास्फेटिक उर्वरक में साइट्रिक अम्लीय घुलनशील फास्फेटिक अम्ल या डाइकैल्शियम फास्फेट होता है -

   (अ) बेसिक स्लेग (ब) डाईकैल्शियम फास्फेट (स) रेनानिया फास्फेट
   (द) उपरोक्त सभी

3. ट्रिपल सुपर फास्फेट में कुल फास्फोरिक (P_2O_5) निम्नतम % वजनानुसार कितना होता हैं ?

   (अ) 46 (ब) 36 (स) 26 (द) 56

4. म्यूरेट आफ पोटाश /पोटेशियम क्लोराइड (KCl) में कितने प्रतिशत पोटाश (K_2O) होता हैं?

   (अ) 46 प्रतिशत (ब) 36 प्रतिशत
   (स) 60 प्रतिशत (द) 18 प्रतिशत

5. डाई अमोनियम फास्फेट (डी.ए.पी) में कुल फास्फोरिक (P_2O_5) निम्नतम % वजनानुसार कितना होता हैं ?

   (अ) 46 (ब) 36 (स) 26 (द) 56

14.14 संदर्भ ग्रन्थ

- K.S. Yawalker, J.P. Agarwal and S. Bokde. 1984. Manures and fertilizers.Agri Horticulteral Publishing House, Nagpur, India
- J.S. Kanwar. 1978. Soil Fertiling theory and Pratice. ICAR, Newdelhi, India.
- Tisdale,S. ; W.L.Nelson and J.D.Beaton. 1975. Soil fertility and fertilizers.Macmillon publishing Company,New York
- एच.एल.एस. टंडन एवं जी.सी. क्षोत्रीय .1993. उर्वरक उपयोग एवं प्रबंध: एक मार्गदशिका, फर्टीलाइजर डवलपमेंट एण्ड कन्सलटेंशन आरगेनाइजेशन अनोट कार्नर, 1-2 पाम्पोश एन्क्लेव, नई दिल्ली- 110048 (भारत).
- बी.एल.पोरवाल, पी.सिंह एवं डी.डी.शर्मा. 2000. सस्य विज्ञान के मूल तत्व. के.पी.प्रकाशन,उदय पार्क,हिरण मगरी,उदयपुर

इकाई – 15

गौण, सूक्ष्म पोषक एवं जटिल उर्वरक

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 गौण पोषक उर्वरक

15.2.1 कैल्सियम

15.2.2 मैग्निशियम

15.2.3 गन्धक

15.3 सूक्ष्म पोषक उर्वरक

15.3.1 बोरोन

15.3.2 कॉपर

15.3.3आयरन

15.3.4 मैगनीज

15.3.5 मौलिब्डेनम

15.3.6 जिंक

15.4 जटिल उर्वरक

15.4.1 जटिल उर्वरकों की विशेषताऐं

15.4.2 अमोनियम फॉस्फेट

15.4.3 नाइट्रोफॉस्फेट्स

15.4.4 एन. पी. के. जटिल उर्वरक

15.5 सारांश

15.6 बहुचयनात्मक प्रश्न

15.7 संदर्भ

15.0 उद्देश्य

इस इकाई को पड़ने के पश्चात आप निम्न ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे -:

- गौण पोषक उर्वरकों के प्रकार
- सूक्ष्म पोषक उर्वरक के बारे में

- जटिल उर्वरकों के बारे में, आदि

15.1 प्रस्तावना

कैल्शियम, मैग्निशियम तथा सल्फर पौधों की वृद्धि के लिये अति आवश्यक तत्व हैं। इन तीनों को गौण तत्व कहते हैं। ये तत्व मृदा में उर्वरको द्वारा मिलाये जाते हैं। सूक्ष्म तत्वों में आयरन, मैंगनीज, जिंक, कॉपर, बोरोन, मोलिब्डेनम तथा क्लोरीन आते हैं। पिछले कुछ वर्षों से नये प्रकार के व्यापारिक उर्वरकों जिनमें दो या दो से अधिक प्राथमिक आवश्यक पोषक ($N_1P_2O_5$ तथा K_2O) तत्व होते हैं, का बड़ी मात्रा में निर्माण किया जा रहा है इस प्रकार के उर्वरकों को जटिल उर्वरक या बहु पोषक उर्वरक कहते हैं। इस प्रकार जटिल उर्वरक वह उर्वरक हैं जिनमें दो या दो से अधिक पोषक तत्व होते हैं तथा जिनके दो पोषक तत्व रासायनिक संयोजन में होते हैं। जब इन उर्वरकों में केवल दो प्राथमिक पोषक तत्व होते हैं तो इन्हें अपूर्ण जटिल उर्वरक तथा तीन प्राथमिक पोषक वाले उर्वरकों को पूर्ण जटिल उर्वरक कहते हैं।

15.2 गौण पोषक उर्वरक

2.1 कैल्सियम- यह प्रकृति में कार्बोनेट्स, सल्फाइड्स, हाइड्राक्सी रूपों, जटिल कैल्शियम सिलिकेट्स तथा कार्बनिक पदार्थ में मिलते हैं। उदासीन या लवणीय

तालिका 1- उर्वरक एवं मृदा सुधारकों में कैल्सियम की मात्रा

उर्वरक/मृदा सुधारक	कैल्सियम की मात्रा (प्रतिशत)
नाइट्रोजन उर्वरक-	
(i) **कैल्सियम** अमोनियम नाइट्रेट	8.1
(ii) **कैल्सियम** नाइट्रेट ($Ca(NO_3)_2$)	19.5
(iii) कैल्शियम सायनामाइड	39.1
फॉस्फेट उर्वरक-	
(i) सुपर फास्फेट (सामान्य)	19.5
(ii) सुपरफास्फेट (ट्रिपल)	14.3
(iii) बोन मील (हड्डी का चूरा)	23.0
(iv) डाइ कैल्शियम फास्फेट	22.9
(v) बेसिक स्लेग	33.9
मृदा सुधारक	
(i) चूना पत्थर ($CaCO_3$)	36.0

(ii) जिप्सम ($CaSO_4 2H_2O$)	22.0
(iii) अनबुझा चूना (CaO)	70.0
(iv) बुझा चूना ($Ca(OH)_2$)	50.0
(v) **कैल्सियम** क्लोराइड ($CaCl_2$)	36.0

मृदाओं में यह विनिमेय धनायन के रूप में मिलता है और अम्लीय मृदाओं में इसकी कमी होती है। मृदा में यह चूना के रूप में मिलाय जाता है तथा इसकी पूर्ति के लिये जिप्सम का भी प्रयोग किया जाता है। सुपरफास्फेट उर्वरकों द्वारा भी पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम मृदा में मिलाया जाता है। अमोनियम फास्फेट, यूरिया आदि प्रचुर तत्वीय उर्वरकों से कैल्सियम की आपूर्ति नहीं हो पाती है। सामान्य एवं क्षारीय मृदाओं के लिए जिप्सम, कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट तथा सुपरफास्फेट का उपयोग किया जा सकता है। रॉक फास्फेट की विलेयता अत्यन्त कम होने के कारण यह अम्लीय मृदाओं के लिये कैल्शियम का उत्तम स्त्रोत है। उर्वरकों एवं मृदा सुधारकों में कैल्शियम की प्रतिशत मात्रा तालिका 1 में दी गयी है।

2.2 **मैग्निशियम-** मृदाओं में सामान्यत: इस तत्व की कमी नहीं देखी गयी है। भारतीय कृषि अनुसन्धान परिशद नई दिल्ली में गेहूँ तथा ज्वार पर तथा बंगलौर

तालिका 2- उर्वरकों एवं मृदा सुधारकों में मैग्निशियम की लगभग प्रतिशत मात्रा

उर्वरक/मृदा सुधारक	**मैग्निशियम की मात्रा (प्रतिशत)**
नाइट्रोजन उर्वरक-	
(i) कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट	4.5
(ii) कैल्शियम नाइट्रेट	1.5
फॉस्फेट उर्वरक-	
(i) सुपर फास्फेट (सामान्य)	0.3
(ii) बेसिक स्लेग	3.4
पोटाश उर्वरक-	
(i) सल्फेट ऑफ पोटाश	0.6
(ii) पोटेशियम मैग्निशियम सल्फेट	10.85
मृदा सुधारक-	
(i) डोलोमाइट चूना पत्थर	4.0 से 10.6
(ii) गोबर की खाद	0.11

(iii) मैग्नेसाइट	28.5
(iv) मैग्नीशिया	60.0
(v) डोलोमाइट	13.5
(vi) मैग्निशियम नाइट्रेट	9.4
(vii) पोटेशियम मैग्निशियम सल्फेट	11.2

में आलू पर किये गये अनुसन्धानों से स्पष्ट है कि इन फसलों की पैदावार में मैग्निशियम देने से वृद्धि होती है। कैल्शियम की भाँति मैग्निशियम भी अप्रत्यक्ष रूप से मृदा में व्यापारिक उर्वरकों तथा मृदा सुधारकों के रूप में मिलाया जाता है। मैग्निशियम प्रदान करने वाले पदार्थ तालिका 2 में दिये गये हैं।

मैग्निशियम के विभिन्न उर्वरकों को विलेयता के आधार पर दो वर्गो में विभाजित किया जाता है : (i) विलेय स्त्रोत तथा (ii) अल्प विलेय स्त्रोत। विलेय वर्ग के अन्तर्गत कीसेराइट, एप्सम लवण, पोटेशियम- मैग्निशियम सल्फेट (लान्गबाइनाइट) तथा मैग्निशियम नाइट्रेट आते हैं। अल्प विलेय वर्ग में डोलोमाइट, स्पेन्टीन, मैग्नीसिया, मैग्नेसाइट, मैग्निशियम -अमोनियम फॉस्फेट, क्षारकीय धातुमल (बेसिक स्लैग) इत्यादि आते हैं। मैग्निशियम के विलेय स्त्रोत सभी मृदा दशाओं में प्रभावी होते हैं किन्तु अल्प विलेय स्त्रोत केवल अम्लीय मृदाओं के लिए उपयुक्त माने जाते हैं।

मैग्निशियम की कमी को दर करने के लिये कुछ देशों में मैग्निशियम अमोनियम फॉस्फेट [$Mg(NH_4)PO_4.H_2O$] नामक उर्वरक मिलाया जाता है। इसमें Mg की मात्रा 14.8 प्रतिशत होती है। यह उर्वरक दोनों के रूप में होता है तथा पत्तियों पर सामान्यत: छिडका जाता है।

2.3 गन्धक- गन्धक पौधों की वृद्धि एवं विकास के लिए अति आवश्यक पोषक तत्व है और इसकी आवश्यक ता फास्फोरस के लगभग समान मात्रा में होती है। प्रचुर तत्वीय उर्वरकों जैसे यूरिया, डाइ अमोनियम फास्फेट के प्रयोग से मृदा में गन्धक की कमी होती जा रही है और विभिन्न फसलों में इस तत्व के अभाव के लक्षण दिखाई देने लगे हैं। प्रकृति में गन्धक कई रूपों में पाया जाता है, जैसे- तत्वीय गन्धक, धातु सल्फाइड (पाइराइट), सल्फेट खनिज, हाइड्रोजन सल्फाइड (प्राकृत गैस में), अशुद्ध पैट्रोल में कार्बनिक प्रदूषक तथा कोयला इत्यादि में पाइराइट एवं कार्बनिक योगिकों के रूप में। उत्पाद में गन्धक के रासायनिक रूप आधार पर गन्धक उर्वरकों को तीन वर्गो में विभाजित किया जा सकता है-

1. सल्फेटधारी उर्वरक जैसे कि- जिप्सम, अमोनियम सल्फेट, अमोनियम सल्फेट नाइट्रेट, अमोनियम फास्फेट सल्फेट, यूरिया अमोनियम सल्फेट, पोटेशियम सल्फेट, सिंगल सुपर फास्फेट, कॉपर सल्फेट, फेरस सल्फेट, जिंक सल्फेट, मैग्नीज सल्फेट इत्यादि।

2. तत्वीय गन्धकारी उर्वरक जैसे कि-यूरिया गन्धक, गन्धक, अमोनियम पॉलिफॉस्फेट-गन्धक, अमोनियम फॉस्फेट-गन्धक, ट्रिपिल सुपरफॉस्फेट-गन्धक इत्यादि।

3. अन्य रूपधारी गन्धक, जैसे कि- अमोनियम पॉलिसल्फाइड, पाइराइट, अमोनियम बाइसल्फाइट और अमोनियम थायोसल्फेट आदि।

तालिका 3 में सल्फर प्रदान करने वाले उर्वरक एवं मृदा सुधारकों के नाम दिये गये हैं। सल्फर क्षारीय मृदा में सुधार हेतु प्रयोग किया जाता है। इनमें पाइराइट, जिप्सम, तथा गन्धक प्रमुख हैं।

तालिका 3 सल्फर युक्त उर्वरक एवं मृदा सुधारक

उर्वरक/मृदा सुधारक	**सल्फर की मात्रा (प्रतिशत)**
नाइट्रोजन उर्वरक-	
(i) अमोनियम सल्फेट	24.0
(ii) अमोनियम सल्फेट नाइट्रेट	12.0
फॉस्फेटिट उर्वरक-	
(i) नार्मल सुपर फास्फेट	10 से 12
(ii) अमोनियम फॉस्फेट सल्फेट	15.4
पोटाश उर्वरक-	
(i) पोटेशियम सल्फेट	17 से 18
(ii) पोटेशियम मैग्निशियम सल्फेट	22
मृदा सुधारक-	
(i) जिप्सम	18.6
सूक्ष्म पोषक तत्व उर्वरक	
(i) कॉपर सल्फेट	12.8
(ii) फैरस सल्फेट	18.8
(iii) मैगनीज सल्फेट	21.2
(iv) जिंक सल्फेट	17.8

इन उर्वरकों में अमोनियम फॉस्फेट सल्फर (12-15% सल्फर) अमोनियम फॉस्फेट यूरिया फॉस्फेट सल्फर (5% सल्फर) सल्फर लेपित यूरिया (10% सल्फर), यूरिया सल्फर (10% सल्फर), सल्फर युक्त नार्मल सुपर फॉस्फेट (20-30% सल्फर) तथा सान्द्रित सुपर फॉस्फेट सल्फर (15-20% सल्फर) आदि प्रमुख हैं। हाल ही में अन्य देशों में सल्फर युक्त द्रव उर्वरकों का भी प्रयोग किया जाने लगा हैं।

15.3 सूक्ष्म पोषक उर्वरक

सूक्ष्म पोषक तत्वों में आयरन, मैग्नीज कॉपर, जिंक, बोरान, मोलिब्डेनम एवं क्लोरीन सम्मिलित हैं देश के अधिकांश राज्यों में एक या अधिक सूक्ष्म तत्वों का अभाव देखा गया है इनमें से जिंक का अभाव

अधिकांश मृदाओं में विस्तृत रूप में पाया गया है। इन सूक्ष्म तत्वों की कमी को दूर करने हेतु सूक्ष्म पोषक उर्वरकों के उत्पादन एवं उपयोग में पिछले वर्षों में उल्लेखनीय प्रगति की गई है। सूक्ष्म पोषक तत्वों के स्त्रोत के रूप में अनेक अकार्बनिक एवं कार्बनिक यौगिक प्रयोग में लाये जाते हैं सूक्ष्म तत्वों के इन स्त्रोतों को तीन वर्गो में विभाजित किया जा सकता है-

1. **आसानी से प्राप्य अकार्बनिक स्त्रोत** (Readily available inorganic source) -आयरन, मैग्नीज, कॉपर एवं जिंक के प्रमुख स्त्रोत इनके सल्फेट लवण है यह जल विलेय होते हैं, सोडियम बोरेट तथा सोडियम मोलिक्रेट क्रमश: बोरोन तथा मोलिब्डेनम के विलेय लवण हैं
2. **मन्द प्राप्य अकार्बनिक स्त्रोत** -इस वर्ग में प्रकृति में पाये जाने वाले अयस्क (Ores), मिश्रधातु धातु शल्क तथा फ्रिटस (Frits) सम्मिलित हैं।
3. **कार्बनिक स्त्रोत** -इस वर्ग में धातु चिलेट्स (Chelates) तथा अन्य धातु शंकुल आते हैं।

1 बोरोन- मिट्टी में बोरोन की कमी दूर करने के लिये प्राय: सबसे लाभप्रद बोरेक्स का प्रयोग पाया गया है। कुछ अनुसन्धान कर्त्ताओं ने इसके लिये बोरिक अम्ल तथा सोडियम ट्रैट्रा बोरेट का भी प्रयोग किया। बोरोन उर्वरकों के कुछ स्त्रोत तालिका 4 में दिये गये है।

तालिका 4- बोरोन उर्वरकों में बोरोन की प्रतिशत मात्रा

क्र.सं.	स्त्रोत	रासायनिक सूत्र	प्रतिशत बोरोन (लगभग)
1.	बोरिक अम्ल	H_3BO_3	17.0
2.	बोरक्स	$Na_2Ba_4O_7.10H_2O$	11.0
3.	कोलमैराइट	$Ca_2B_6O_{11}.5H_2O$	10.0
4.	सोडियम पेन्टा बोरेट	$Na_2B_{10}O_{16}.10H_2O$	18.0
5.	सोडियम ट्रेट्रा बोरेट	$Na_2B_4O_7.5H_2O$	14.0
6.	बोरोन फ्रिट्स	बोरोसिलिकेट	2-6

तालिका 5- कॉपर उर्वरकों में कॉपर की प्रतिशत मात्रा

क्र.सं.	स्त्रोत	रासायनिक सूत्र	कॉपर प्रतिशतता (लगभग)
1.	कॉपर सल्फेट	$CuSO_4.5H_2O$	25.0
2.	क्यूप्रस ऑक्साइड	Cu_2O	89.0
3.	क्यूप्रिस ऑक्साइड	CuO	75.0
4.	कॉपर ऐसीटेट	$Cu(C_2H_3O_2)2H_2O$	32.0

5.	कॉपर ऑक्सीलेट	$CuC_2O_4.1/3H_2O$	40.0
6.	कॉपर अमोनिया फास्फेट	$Cu(NH_4)PO_4.H_2O$	32.0
7.	कॉपर कीलेट	(i) Na_2Cu E.D.T.A. (ii) NaCuH E.D.T.A.	13.0 9.0
8.	मालाकाइट	$CuCO_4$-$Cu(OH)_2$	57.0
9.	एजूराइट	$2CuCO_3$-$Cu(OH)_2$	55.0
10.	फ्रिट्स	(सिलिकेट)	3-7

2 कॉपर- कॉपर की कमी को दूर करने के लिये आमतौर पर कॉपर सल्फेट (नीला थोथा) का प्रयोग किया जाता है। कॉपर की कमी और फसल के अनुसार कॉपर सल्फेट मिट्टी में अलग-अलग मात्रा में डाला जाता है। मृदा में कॉपर की कमी दूर करने के लिये कॉपर ऑक्साइड, कॉपर सल्फेट व कॉपर हाइड्रॉक्साइड के मिश्रण का भी प्रयोग किया जाता है। तालिका 5 में कॉपर के कुछ स्त्रोत दिये गये हैं।

3 आयरन- आयरन कीलेट्स तथा मृदा में आयरन की कमी दूर करने के लिए मिलाये जाते हैं। इन्हें मिट्टी में डाला एवं पेड़ों पर छिड़का जा सकता है। आयरन अमोनिया पॉली फास्फेट आयरन की कमी दूर करने के लिये मृदा में डालने हेतु एक अच्छा स्त्रोत माना जाता है। आयरन उर्वरक तालिका 6 में दिए गये हैं।

तालिका 6- आयरन उर्वरकों में आयरन की प्रतिशत मात्रा

क्र.सं.	**स्त्रोत**	**रासायनिक सूत्र**	**आयरन प्रतिशतता (लगभग)**
1.	फैरस सल्फेट	$FeSO_4.7H_2O$	19.0
2.	फैरिक सल्फेट	$Fe_2(SO_4)_3.4H_2O$	23.0
3.	फैरक ऑक्साइड	FeO	77.0
4.	फैरिक ऑक्साइड	Fe_2O_3	69.0
5.	फैरस अमोनिया फास्फेट	$Fe_2(NH_4)PO_4.H_2O$	29.0
6.	आयरन कीलेट्स	(i) Na Fe E.D.T.A. (ii) Na Fe H.E.D.T.A. (iii) Na Fe E.D.D.T.A.	5-14 5-9 6

		(iv) Na Fe D.T.P.A.	10
7.	आयरन अमोनिया पॉली फॉस्फेट	Fe (NH_4) HP_2 O_7	22
8.	आयरन मिथॉक्सीफेनिल प्रोपेन	Fe M. P. P.	5
9.	फ्रिट्स		14-19

4 मैगनीज- उर्वरक के रूप में मैंगनीज का प्रयोग करने के लिये आमतौर पर मैंगनीज सल्फेट सबसे अधिक काम में लाया जाता है। सामान्यत: मृदा में 5 से 40 किलोग्राम तक मैंगनीज प्रति हेक्टर डालने की सिफारिश की जाती है। मैंगनीज सल्फेट को विलयन के रूप में छिड़कने की भी सिफारिश की गयी है। मैंगनीज उर्वरक तालिका 7 में दिये गये हैं।

तालिका 7- मैंगनीज उर्वरकों में मैंगनीज की प्रतिशत मात्रा

क्र.सं.	**स्त्रोत**	**रासायनिक सूत्र**	**मैंगनीज प्रतिशतता (लगभग)**
1.	मैंगनीज सल्फेट	$MnSO. 3H_2O$	20-28
2.	मैंगनीज ऑक्साइड	MnO	41-61
3.	मैंगनीज मिथॉक्सीफेनिल प्रोपेन	Mn M.P.P.	10-12
4.	मैंगनीज कार्बोनेट	$MnCO_3$	31
5.	मैंगनीज कीलेट	Mn E.D.T.A.	12
6.	मैंगनीज क्लोराइड	$MnCl_2$	17
7.	मैंगनीज ऑक्साइड	MnO_2	63
8.	मैंगनीज फ्रिट्स		10-25

5 मौलिब्डेनम- इसके लिये सोडियम मौलिब्डेट, अमोनियम मौलिब्डेट या कम विलेय मौलिब्डेनम ट्राइऑक्साइड के रूप में मौलिब्डेनम का प्रयोग किया जा सकता है। मौलिब्डेनम की अल्प मात्रा पौधों में इसकी कमी दूर करने के लिये काफी होती है। इसलिये इसे चूना या उर्वरक के द्वारा प्रयोग किया जाता है। तालिका 8 में कुछ मौलिब्डेनम उर्वरक दिये गये हैं।

तालिका 8- मौलिब्डेनम उर्वरकों में मौलिब्डेनम की प्रतिशत मात्रा

क्र.सं.	**स्त्रोत**	**रासायनिक सूत्र**	**मौलिब्डेनम प्रतिशतता**

			(लगभग)
1.	मौलिब्डेनम सल्फाइड	MoS_2	60.0
2.	मौलिब्डेनम ट्राई ऑक्साइड	MoO_3	66.0
3.	सोडियम मौलिब्डेट	$Na_2MoO_4.2H_2O$	39.0
4.	अमोनियम मौलिब्डेट	$(NH_4)_6Mo_7O_{24.}4H_2O$	54.0

6 जिंक- जिंक मृदा में मिलाया जाता हैं या पेडों के ऊपर छिड़का जाता है, यह प्राय: जिंक सल्फेट के रूप में मिलाया जाता है। पेड़ो पर जिंक सल्फेट का छिडकाव करने से आमतौर पर अधिक सफलता मिलती देखी गई है। जिंक ऑक्साइड भी जिंक का एक मुख्य स्त्रोत है।

तालिका 9- जिंक के महत्वपूर्ण उर्वरक

क्र.सं.	**स्त्रोत**	**रासायनिक सूत्र**	**जिंक प्रतिशतता (लगभग)**
1.	जिंक ऑक्साइड	Zno	78.0
2.	जिंक कार्बोनेट	$ZnCO_3$	52.0
3.	जिंक सल्फाइड	ZnS	61.0
4.	बेसिक जिंक सल्फेट	$ZnSO_{4.}4Zn\ (OH)_2$	55.0
5.	जिंक सल्फेट मोनोहाड्रेट	$ZnSO_{4.}H_2O$	35.0
6.	जिंक सल्फेट हैप्टाहाइड्रेट	$ZnSO_{4.}7H_2O$	23.0
7.	जिंक फॉस्फेट	$Zn_3(PO_4)_2$	51.0
8.	जिंक कीलेट्स	Na_2Zn E.D.T.A. Na Zn N.T.A. Na Zn H.E.T.D.A.	14.0 13.0 9.0
9.	जिंक फिट्स	(सिलिकेट)	4-9
10.	जिंक अमोनियम फॉस्फेट	$Zn\ NH_4PO_4$	33.5

क्लोरीन- यह मृदा में उर्वरकों जैसे म्यूरेट ऑफ पोटाश, अमोनियम क्लोराइड आदि के अतिरिक्त पशु खादों और पौधे के अवशेषों द्वारा मिलायी जाती हैं।

15.4 जटिल उर्वरक

उर्वरक जिनमें दो या दो से अधिक प्राथमिक आवश्यक पोषक तत्व होते हैं, इस प्रकार के उर्वरकों को जटिल उर्वरक या बहु पोषक उर्वरक कहते हैं।

15.4.1 **जटिल उर्वरकों की विशेषतायें**

(i) इनमें प्राय: पादप पोषकों की मात्रा अधिक होती है (उर्वरक के प्रति 100 पौंड में 20 पौंड से अधिक) इसलिये ये उच्च विश्लेषी उर्वरक (high analysis fertilizer) भी कहलाते हैं।

(ii) ये मृदा को नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस प्राप्य रूप में प्रदान करते हैं। नाइट्रोजन नाइट्रेट एवं अमोनिकल रूप में तथा फॉस्फोरस जल विलेय रूप (कुल P_2O_5 का 50 से 90 प्रतिशत तक) में उपस्थित रहते हैं।

(iii) प्राय: इनके दानों का आकार समान तथा भौमिक दशा अच्छी होती है।

(iv) हालांकि इन उर्वरकों का निर्माण अमोनियम सल्फेट एवं सुपरफॉस्फेट की अपेक्षा महंगा होता है, लेकिन पादप पोषकों की प्रति पौंड कीमत के आधार पर ये किसान को सस्ते पड़ते हैं।

(v) ये अ-पिण्डी (non-caking) तथा अजलग्राही (non-hygroscopic) होते है। इसलिये ये भण्डारण करने के लिये सुरक्षित हैं।

(vi) जटिल उर्वरकों में पोषकों की मात्रा अधिक होती है, इसलिये इनके यातायात, वितरण तथा भण्डारण का खर्चा **पोषक** की प्रति इकाई के आधार पर कम होता है।

जटिल उर्वरकों का महत्व (value) (अ) उनमें व्यक्तिगत पोषकों, N, P_2O_5 या K_2O की मात्रा, (ब) उनमें नाइट्रोजन : फॉस्फोरस या पोटाश में अनुपात (स) उनमें उपस्थित व्यक्तिगत पोषकों का रूप, (द) उनका अम्लिक या भस्मिक आवेश प्रभाव (residual effect), (य) उनमें सूक्ष्म तत्वों तथा अन्य पदार्थ जैसे क्लोराइड्स, सल्फेट्स आदि की मात्रा पर निर्भर होता है।

जटिल उर्वरकों का वर्गीकरण

भारत में बनाये जाने वाले जटिल उर्वरकों को तीन वर्गो में विभाजित किया गया है 1. अमोनियम फॉस्फेट 2. नाइट्रोफॉस्फेट्स 3. एन. पी. के. जटिल उर्वरक।

15.**4.2 अमोनियम फॉस्फेट**-: इसमें अमोनियम एवं फॉस्फेट मूलक विभिन्न अनुपातों में होते हैं। भारत में निम्न प्रकार के अमोनियम फॉस्फेट्स का निर्माण किया जा रहा है-

(i) मोनो अमोनियम फॉस्फेट11-52-0

(ii) डाईअमोनियम फॉस्फेट 18-46-0, 20-48-0

(iii) अमोनियम फॉस्फेट सल्फेट 16-20-0, 1 : 15-19.5-0, 20-20-0, 18-9-0

(iv) अमोनियम फॉस्फेट सल्फेट नाइट्रेट 20-20-0

(v) यूरिया अमोनियम फास्फेट 28-28-0, 20-20-0, 24-24-0

अमोनियम फॉस्फेट सल्फेट तथा यूरिया अमोनियम फॉस्फेट, अमोनियम सल्फेट या यूरिया के अमोनियम फॉस्फेट के साथ मिश्रण होते हैं, 18-46-0 श्रेणी (grade) में मुख्यत: डाई-अमोनियम फॉस्फेट होता है।

मोनो अमोनियम फॉस्फेट तथा डाई अमोनियम फॉस्फेट दोनों अमोनियम तथा फॉस्फोरिक अम्ल को मिश्रित करके बनाये जाते हैं। इस प्रक्रम में फॉस्फोरिक अम्ल रॉक फॉस्फेट को नाइट्रिक अमल से उपचार करके प्राप्त किया जाता है दोनों प्रकार के अमोनियम फॉस्फेट के निर्माण में निम्न अभिक्रिया होती हैं।

(i) NH_3 + H_3PO_4 = $NH_4H_2P_4$

अमोनियम फॉस्फोरिक अम्ल मोनो अमोनियम फॉस्फेट

(ii) $2NH_3$ + H_3PO_4 = $(NH_4)_2HPO_4$

डाई अमोनियम फॉस्फेट

निम्न श्रेणी (Low grade) अमोनियम फॉस्फेट उपरोक्त विधि से या रॉक फॉस्फेट को सान्द्र सल्फ्यूरिक अम्ल या अमोनियम सल्फेट से उपचार करके बनाया जाता है।

$Ca_3(PO_4)_2 + (NH_4)_2SO_4 + 2H_2SO_4 = 3CaSO_4 + 2NH_4H_2PO_4$

Rock phosphate अमोनियम फॉस्फेट

अमोनियम फॉस्फेट की विशेषताऐं तथा प्रयोग- ये सभी उर्वरक दानेदार अजलग्राही तथा अच्छी भौमिक दशा वाले होते हैं। अमोनियम फॉस्फेट्स में नाइट्रोजन अमोनिकल रूप में होती है, केवल यूरिया अमोनियम फॉस्फेट में कुछ भाग एमाइड रूप में होता है। दानेदार होने की वजह से मृदा कणों के साथ इनके दानों का सम्पर्क कम हो पाता है जिसके कारण जल विलेय फॉस्फोरस का स्थिरीकरण भी कम होता है। यह प्रतिक्रिया में कुछ अम्लीय या उदासीन होते हैं इसलिये भण्डारण करने में बोरों को हानि नहीं होती है। दैहिक रूप से ये उर्वरक अम्लीय होते हैं तथा लम्बे समय तक लगातार प्रयोग करने से ये मृदा को अम्लीय बनाते हैं। प्रत्येक 100 पौण्ड अमोनियम फॉस्फेट के प्रयोग से उत्पन्न अम्लता को उदासीन करने के लिये 86 पौण्ड कैल्शियम कार्बोनेट की आवश्यक ता होती है। ये क्षारीय तथा चूनादार मृदाओं में प्रयोग करने के लिये उपयुक्त होते है। यह उन क्षेत्रों में भी प्रयोग किये जा सकते हैं जहाँ फॉस्फोरस की आवश्यक ता नाइट्रोजन से कुछ अधिक होती है। इनकी अत्यन्त अच्छी भौमिक दशा होने के कारण ये उर्वरक मिश्रण बनाने में प्रयोग किये जा सकते हैं।

उर्वरक (नियन्त्रण) आदेश 1957 द्वारा प्रस्तावित विषेतायें विभिन्न अमोनियम फॉस्फेट के लिये निम्न हैं।

मोनोअमोनियम फॉस्फेट (11-52-0)

(i) नमी, कुल भार का प्रतिशत, अधिकतम 1.0

(ii) कुल नाइट्रोजन (सभी अमोनिकल रूप में) कुल भार का प्रतिशत,

न्यूनतम 11.0

(iii) उदासीन अमोनियम साइट्रेट विलेय फॉस्फेट (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 52.0

(iv) जल विलेय फॉस्फेट (P_2O_5) के रूप में) कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम.....44.4

(v) कण आकार-कणों का आकार ऐसा हो कि कम से कम 90 प्रतिशत पदार्थ। और 4 मि. मी. के बीच की आई एस छलनी और 5 प्रतिशत 1 मि. मी. आई एस छलनी से छन जायें।

अमोनियम फॉस्फेट सल्फेअ (16-20-0)

(i) नमी, कुल भार का प्रतिशत, अधिकत 1.0

(ii) कुल अमोनिकल नाइट्रोजन, कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 16.0

(iii) कुल फॉस्फेट्स (P_2O_5 के रूप में) कुल भार प्रतिशत, न्यूनतम 20.0

(iv) जल विलेय फॉस्फेट (P_2O_5 के रूप में) कुल भार प्रतिशत न्यूनतम 19.0

(v) कण आकार- कणों का आकार ऐसा होना चाहिये कि कम से कम 99.5 प्रतिशत 2.36 मि. मी. आई एस छलनी में से छनकर निकल जाये और कम से कम 99.7 प्रतिशत 500 माइक्रान आई एस छननी पर रूका रहे। 1.8 मि. मी. आई एस छलनी में छनकर निकलने वाले पदार्थ की मात्रा 25 प्रतिशत से अधिक नही होनी चाहिये।

अमोनियम फॉस्फेट सल्फेट (19.5-19.5-0)

(i) नमी, कुल भार का प्रतिशत, अधिकतम 1.0

(ii) अमोनिकल नाइट्रोजन कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 19.5

(iii) उदासीन अमोनियम साइट्रेट में विलेय फॉस्फेट्स (P_2O_5 के रूप में), कुल भार का प्रतिशत न्यूनतम 19.5

(iv) जल विलेय फॉस्फेट्स (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत, नयूनतम 17.5

अमोनियम फॉस्फेट सल्फेट (20-20-0)

(i) नमी, कुल भार का प्रतिशत, अधिकतम 1.0

(ii) अमोनिकल नाइट्रोजन कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 18.0

(iii) यूरिया के रूप में नाइट्रोजन, कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 2.0

(iv) उदासीन अमोनियम साइट्रेट विलयन में विलेय फॉस्फेट्स (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 20

(v) जल विलेय फॉस्फेट (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत,

न्यूनतम 17.0

(vi) **कण आकार**- पदार्थ 3.35 मि. मी. आई एस छलनी से छन जाये तथा 1.0 मि. मी. आई एस छल पर रूका रहै।

यूरिया अमोनियम फॉस्फेट (28-28-0)

(i) नमी, कुल भार का प्रतिशत, अधिकतम 1.0

(ii) कुल नाइट्रोजन, कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 28.0

(iii) अमोनिकल नाइट्रोजन, कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 9.0

(iv) उदासीन अमोनियम साइट्रेट विलयन में विलेय फॉस्फेट्स (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 28.0

(v) जल विलेय फॉस्फेट्स (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत 25.2

(vi) **कण आकार** - सम्पूर्ण पदार्थ 3.35 मि. मी. आई एस छलनी में से छन जाना चाहिये तथा 1.18 मि. मी. आई एस छलनी पर 90 प्रतिशत रूका रहे।

अमोनियम फॉस्फेट सल्फेट (18-9-0)

(i) नमी, कुल भार का प्रतिशत, अधिकत 1.0

(ii) अमोनिकल नाइट्रोजन कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 18.0

(iii) कुल फॉस्फेट्स (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 9.0

(iv) जल विलेय फॉस्फेट्स (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 8.5

(v) **कण आकार**- कणों का आकार ऐसा होकि कम से कम 90 प्रतिशत पदार्थ और 4 मि. मी. के बीच की आई एस छलनी और 5 प्रतिशत 1 मि. मी. आई एस छलनी से छन जाए।

अमोनियम फॉस्फेट सल्फेट नाइट्रेट (20-20-0)

(i) नमी, कुल भार का प्रतिशत, अधिकतम 1.5

(ii) कुल नाइट्रोजन, कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 20.0

(iii) अमोनिकल नाइट्रोजन कुल भार का प्रतिशत, अधिकतम 17.0

(iv) नाइट्रेट नाइट्रोजन, कुल भार का प्रतिशत, अधिकतम 3.0

(v) फॉस्फेट (P_2O_5 के रूप में) उदासीन अमोनियम साइट्रेट विलयन में विलेय, कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 20.0

(vi) जल विलेय फॉस्फेट (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 17.0

(vii) **कण आकार**- कणों का आकर ऐसा हो कि पदार्थ का 90 प्रतिशत भाग 4 मि. मी आई एस छलनी से छन जाय और 1 मि. मी. आई एस छलनी पर रूका रहे तथा 5 प्रतिशत से अधिक 1 मि. मी. आई एस छलनी से न छने।

यूरिया अमोनियम फॉस्फेट (24-24-0)

(i) नमी, कुल भार का प्रतिशत, अधिकतम 1.0

(ii) कुल नाइट्रोजन कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 24.0

(iii) अमोनिकल नाइट्रोजन कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 7.5

(iv) यूरिया के रूप में नाइट्रोजन, कुल भार का प्रतिशत,
अधिकतम 16.5

(v) उदासीन अमोनियम साइट्रेटा विलेय फॉस्फेट (P_2O_5) कुल भार का प्रतिशत,
न्यनूतम 24.0

(vi) जल विलेय फॉस्फेट (P_2O_5) कुल भार का प्रतिशत,
न्यूनतम 20.4

(vii) **कण आकार**- कणों का आकार 4 मि. मी. आई एस छलनी के मध्य और 5 प्रतिशत से अधिक 1 मि. मी. आई एस छलनी से न छने।

यूरिया अमोनियम फॉस्फेट (20-20-0)

(i) नमी, कुल भार का प्रतिशत, अधिकतम 1.5

(ii) कुल नाइट्रोजन, कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 20.0

(iii) अमोनिकल नाइट्रोजन, कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 6.4

(iv) उदासीन अमोनियम साइट्रेट विलेय फॉस्फेट (P_2O_5 के रूप में)
कुल भार प्रतिशत, न्यूनतम 20.0

(v) जल विलेय फॉस्फेट (P_2O_5 के रूम में) कुल भार का प्रतिशत,
न्यूनतम 18.0

(vi) **कण आकार**- पदार्थ के कणें का आकार ऐसा होना चाहिए कि 90% पदार्थ 3.35 मि. मी. आई एस छलनी में से छन जाये तथा 1.18 मि. मी. आई एस छलनी पर रूका रहें।

डाई अमोनियम फॉस्फेट (18-46-0)

(i) नमी, कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 1.0

(ii) कुल नाइट्रोजन सभी अमोनिकल रूप में कुल भाग का प्रतिशत,
न्यूनतम 18.0

(iii) कुल फॉस्फेट्स (P_2O_5 के रूप में), कुल भार का प्रतिशत,
न्यूनतम 46.0

(iv) जल विलेय फॉस्फेट्स (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का
प्रतिशत, न्यूनतम 41.0

डाई अमोनियम फॉस्फेट (20-48-0)

(i) नमी, कुल भार का प्रतिशत, अधिकतम 1.0

(ii) कुल नाइट्रोजन, सभी अमोनिकल रूप में, कुल भार का प्रतिशत,
न्यूनतम 20.0

(iii) कुल फॉस्फेट (P_2O_5 के रूप में), कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 48.0

(iv) जल विलेय फॉस्फेट्स (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत,
न्यूनतम 43.0

अन्य अमोनियम फास्फेटी पदार्थ- अमोनियम फॉस्फेट और अमोनियम नाइट्रेट के दानेदार मिश्रणों से युक्त 20-24-0 और 30-10-0 विश्लेषणों के अमोनियम फॉस्फेट नाइट्रेटी उर्वरक बाजार से प्राप्त है। अमोनियम मैटा फॉस्फेट (NH_4PO_3) पर भी बहुत अनुसंधान किया गया है लेकिन इसका अभी व्यापारिक उत्पादन नहीं किया जा रहा है मैग्निशियम अमोनियम फॉस्फेट ($Mg\ NH_4PO_4$) का उत्पादन किया जाता है लेकिन इसकी उत्पादन लागत अधिक होती है।

अमोनियम पाली फॉस्फेट - यह एक नया द्रव उर्वरक है तथा जल में सापेक्षत: अधिक विलेय होता है। अब द्रव उर्वरक आधार पर इससे 11-37-0 ग्रेड का उर्वरक बनाया जा सकता है। पाली फॉस्फेट्स से अब तक धात्विक आयनों जैसे आयरन, एल्यूमीनियम, जिंक कॉपर के साथ विलेय स्थायी सम्मिश्रण तैयार किये जा सकते हैं। जब मृदा में सूक्ष्म मात्रिक पॉली फॉस्फेट मिश्रण मिलाया जाता है तो सूक्ष्म पोषक तत्व मृदा में अधिक समय तक विलेय बने रहते हैं। ठोस अमोनियम पॉली फॉस्फेट उर्वरकों में फॉस्फेट की मात्रा अधिक होती है। मिश्रित उर्वरकों में कणिकायन लाने के लिये ठोस अमोनियम पॉली फॉस्फेट उपयोगी होते हैं। ये अब उच्च ग्रेड में 11-37-0 तथा 10-34-0 विलयन में मिलाते हैं। इनकी खपत बढ़ती जा रही है क्योंकि ये उच्च कोटि का उर्वरक माना जाता है।

15.**4.3 नाइट्रोफॉस्फेट्स-** इन्हें नाइट्रिक फॉस्फेट्स भी कहते हैं। इनके निर्माण करने की कई प्रक्रमें है। जिनमें से चार प्रक्रमें व्यापारिक रूप से महत्वपूर्ण हैं।

(अ) प्रक्रमें जिनमें रॉक फॉस्फेट का उपचार HNO_3 से किया जाता है :

(1) नाइट्रो कार्बोनिक प्रक्रम: (16-14-0) पी ई सी या कार्बोनाइट्रिक नाइट्रोफास्फेट यह उर्वरक रॉक फास्फेट का नाइट्रिक अम्ल से अम्लीकरण करके डाइ अमोनियम फास्फेट मिलाकर तथा उत्पन्न स्लरी का अमोनियेशन करके बनाया जाता है। स्लरी को, यदि, आवश्यक हो तो पोटेशियम लवणों के साथ मिलाया जाता है। अन्तिम उत्पाद में अमोनियम नाइट्रेट, डाई कैल्शियम फास्फेट तथा मोनो अमोनियम फास्फेट तथा पोटेशियम लवण (यदि मिलाये गये हों) होते हैं

Acidulation:

$$Ca_{10}F_2(FO_4)_6+20HNO_3 \quad 6H_3PO_4+10Ca(NO_3)_2+2HF$$

रॉक फॉस्फेट

D A P addition:

$+ 7(NH_4)_2HPO_4 \quad 14NH_4NO_3+3Ca\ (NO_3)_2+CaF_2+H_3PO_4+6Ca\ (H_2PO_4)_2$

Ammoniation:

$+ 10NH_3 \quad 20NH_4NO_3+4NH_4H_2PO_4+9CaHPO_4+CaF_2$

(2) नाइट्रो-पृथक्कीकरण प्रक्रम (20-20-0) ओ डी डी ए नाइट्रोफास्फेट

इस प्रक्रम में निम्न पद हैं-

(i) रॉक फास्फेट का HNO_3 से अम्लीकरण (acidulation) तथा

(ii) ठंडा करके $Ca\ (NO_3)_2$ तथा PO_4 को $CaHPO_4$ में परिवर्तन करने के लिये फास्फेट विलयन का अमोनियाकृत करना।

(iii) 20-22 ग्रेड (grade) का N-P उर्वरक उत्पन्न करने के लिये अमोनिया स्लरी को सुखाना। $Ca(NO_3)_2$ निर्जलीकृत करके इसी रूप में बाजार भेज देते हैं या 20.5 प्रतिशत नाइट्रोजन युक्त कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट बनाने के लिए अमोनियाकृत तथा कार्बोनेटकृत (Carbonated) किया जाता है।

(ब) प्रक्रमें जिनमें अम्लों के मिश्रण का प्रयोग किया जाता है।

(3) नाइट्रिक अम्ल तथा फास्फोरिक अम्ल प्रयोग करके (फास्फोरसनाइट्रिक नाइट्रोफास्फेट)- इस प्रक्रम में रॉक फास्फेट नाइट्रिक अम्ल से उपचारित किया जाता हैं तथा फास्फेरिक अम्ल की काफी मात्रा CaO : P2O5 के आणविक अनुपात (molecular-ratio) को 2 या कम समायोजित (Adjust) करने के लिए मिलाते हैं।

$Ca_{10}\ (PO_4)_6F_2+16HNO_3+4H_3PO_4=8Ca\ (NO_3)_2$

रॉक फास्फेट $+2Ca(H_2PO_4)_2+6H_3PO+2HF$

प्रतिक्रिया के उत्पाद को द्रव अमोनिया से डाइकैल्शियम फास्फेट तथ अमोनियम नाइट्रेट बनाने के लिये उपचारित किया जाता है।

$8Ca\ (NO_3)_2+2Ca\ (H_2PO_4)_2+6H_3PO_4+2HF+17NH_3$

$=9CaHPO_4+NH_4H_2PO_4+16NH_4NO_3+CaF_2$

इस प्रक्रम द्वारा निर्मित नाइट्रोफास्फेट में कुल पादप पोषकों की मात्रा 39 से 47 प्रतिशत तक होती है।

(4) नाइट्रिक अम्ल तथा सल्फ्यूरिक अम्ल प्रयोग करके (सल्फो-नाइट्रिक नाइट्रोफास्फेट)- इस प्रक्रम में रॉक फास्फेट का उपचार HNO_3 तथा H_2SO_4 के मिश्रण से किया जाता है।

$Ca_{10}\ (PO_4)_6F_2+12HOO_3+4H_2SO_4=6H_3PO_4$

$+4CaSO_4+6Ca\ (NO_3)_2+2HF$

कैल्शियम नाइट्रेट को द्रव अमोनिया से उपचार करके मिश्रण से अलग किया जाता है।

$6H_3PO_4+4CaSO_4+6Ca\ (NO_3)_2+2HF+13NH_3$

$=5CaHPO_4+NH_4H_2PO_4+4CaSO_4+12NH_4NO_3+CaF_2$

इस प्रक्रम में निर्मित नाइट्रोफास्फेट में कुल पोषकों की मात्रा 26 से 33 प्रतिशत तक होती है।

नाइट्रोफास्फेट की विषे?तायें तथा उपयोग- ये दानेदार उर्वरक होते है इसलिये इनकी भौमिक दशा अच्छी होती है। ट्राम्वे में तीन प्रकार के नाइट्रोफास्फेट्स तैयार किये जाते हैं

खाद (नियन्त्रण) आदेश 1957 द्वारा प्रस्तावित विशेषतायें विभिन्न नाइट्रिक फास्फेट्स के लिए निम्न हैं-

नाइट्रोफास्फेट (20-2-0)

(i) नमी, कुल भार का प्रतिशत, अधिकतम 1.5

(ii) कुल नाइट्रोजन, कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 20.0

(iii) उदासीन अमोनियम साइट्रेट विलेय फास्फेट (P_2O_5 रूप में), कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम

.....20.0

(iv) जल विलेय फास्फेटस (P_2O_5 के रूप में), कुल भार का प्रतिशत न्यूनतम 5.4

(v) कैल्सियम नाइट्रेट .....अल्प मात्रा

तालिका 10 नाइट्रोफास्फेट की विषेतायें

क्रम संख्या	विशेषतायें		नाइट्रोफास्फेट्स	
		सुफला (20-0-0)	सुफला (18-18-9)	सुफला (15-15-15)
	दाने (granule) का रंग	भूरा (Ashgrey)	पीला	गुलाबी (Pink)
	प्राप्य नाइट्रोजन (N)% (i) अमोनिकल नाइट्रोजन (%) (ii) नाइट्रेट नाइट्रोजन (%)	20 53 47	18 55 45	15 55 45
	प्राप्य फास्फेट (i) जल विलेय (%) (ii) साइट्रेट (%)	20 30 70	18 30 70	15 30 70

	प्राप्य पोटाश (%)	2	9	15
	कैल्शियम ऑक्साइड (%)	14	10	10
	मैग्निशियम एवं सल्फर	उपस्थित	उपस्थित	उपस्थित

(iv) कण आकार : पदार्थ का कण आकार ऐसा होगा जिसका 90 प्रतिशत - 4 मिमी तथा + मिमी IS छलनी के परिसर में हो।

नाइट्रोफास्फेट पोटाश युक्त, ग्रेड I (18-18-9)

(i) नमी, कुल भार का प्रतिशत, अधिकतम 1.5

(ii) कुल नाइट्रोजन, कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 18.0

(iii) कुल फास्फेट्स (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 18.0

(iv) उदासीन अमोनियम साइट्रेट विलेय (P_2O_5 के रूप में), कुल भार का प्रतिशत न्यूनतम 18.0

(v) जल विलेय फास्फेट (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत न्यूनतम 9.0

(vi) जल विलेय पोटाश (K2O के रूप में) कुल भार का प्रतिशत न्यूनतम 4.9

(vii) कैल्शियम नाइट्रेट ..... अल्प मात्रा

(viii) **कण आकार** : पदार्थ का कण आकार ऐसा होगा जिसका 90 प्रतिशत-4 मिमी तथा + 1 मिमी IS छलनी के परिसर में हो।

नाइट्रोफास्फेट पोटाश युक्त ग्रेड II (15-15-15)

(i) नमी कुल भार का प्रतिशत, अधिकतम 1.5

(ii) कुल नाइट्रोजन, कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 15.0

(iii) उदासीन अमोनियम साइट्रेट विलेय फास्फेट (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 15.0

(iv) जल विलेय फास्फेट (P_2O_5 के रूप में) कुल भार का प्रतिशत, न्यूनतम 4.0

(v) जल विलेय पोटाश (K_2O के रूप में) कुल भार का प्रतिशत न्यूनतम 15.0

(vi) कण आकार : पदार्थ का कण आकार ऐसा होगा जिसका 90 प्रतिशत-4 मिमी तथा + 1 मिमी IS छलनी के परिसर में हो।

सभी नाइट्रोफास्फेट में आसानी से विलेय तथा प्राप्य नाइट्रेट नाइट्रोजन तथा अमोनिकल नाइट्रोजन होती है। सल्फोनाइट्रिक नाइट्रोफास्फेट में फास्फेरस जल तथा साइट्रेट विलेय होता है इसलिये ये पौधो की वृद्धि की प्रारम्भिक अवस्था में प्रयोग किये जाते हैं तथा इसका साइट्रेट विलेय फास्फेरस पौधों की परिपक्वता तक वृद्धि करने में सहायक होता है कार्बोनाइट्रिक नाइट्रोफास्फेट्स में सम्पूर्ण P_2O_5 साइट्रेट विलेय होता है तथा पौधों को उनके सम्पूर्ण जीवन में धीरे-धीरे प्राप्त होते रहते हैं। सभी नाइट्रोफास्फेट्स का मृदा पर प्रभाव अन्य उर्वरकों की तुलना में कम अम्लीय होता है।

15. 4.4 एन. पी. के. जटिल उर्वरक

एन. पी. के. जटिल उर्वरकों के कई ग्रेड बनाये जा रहे हैं। ये उर्वरक दानेदार होते हैं तथा इसकी भौतिक दशा अच्छी होती है। भारत में विभिन्न जटिल उर्वरकों की न्यूनतम पोषक मात्रा तालिका 11 में दी गयी है।

तालिका 11 जटिल उर्वरको की पोषक मात्रायें

उर्वरक	कुल नाइट्रोजन (%)	अमोनियम नाइट्रोजन (%)	नाइट्रेट नाइट्रोजन (%)	एमाइड नाइट्रोजन (%)	कुल फास्फेट (P_2O_6 के रूप में) (%)	जल विलेय फास्फेट (P_2O_6) (%)	प्राप्य फास्फेट (P_2O_6) (%)	पोटाष (K_2O) (%)
1. अमोनियम फास्फेट सल्फेट (16-20-0)	16.0	16.0			20.0	19.5		
2. अमोनियम फास्फेट सल्फेट (20-20-0)	20.0	18.0		2.0	-	17.0	20.0	
3. यूरिया अमोनियम फास्फेट (28-28-0)	28.0	9.0		19.0		25.2	28.0	
4. डाइ-अमोनियम फास्फेट (18-46-0)	18.0	18.0			46.0	41.0	46.0	
5. नाइट्रोफास्फेट (20-20-0)	20.0	10.6	9.4		20.0	6.4	20.0	

6. नाइट्रोफास्फेट पोटाश सहिन ग्रेड I (18-18-9)	18.0	9.9	8.1		18.0	4.9	18.0	9.0
7. नाइट्रोफास्फेट पोटाश सहित ग्रेड II (15-15-15)	15.0	8.25	6.75		15.0	4.0	15.0	16.0
8. एन.पी.के जटिल उर्वरक								
(i) (10-26-26)	10.0	10.0			26.0	22.1	26.0	26.0
(ii) (12-32-16)	12.0	12.0			32.0	27.2	32.0	16.0
(iii) (14-36-12)	14.0	14.0			36.0	30.6	36.0	12.0
(iv) (14-35-14)	14.0	13.0			-	29.0	35.0	14.0
(v) (14-28-14)	14.0	8.0		6.0	28.0	25.2	28.0	14.0
(vi) (17-17-17)	17.0	5.0		12.0	17.0	15.3	17.0	17.0

15.5 सारांश

कैल्शियम, मैग्निशियम तथा सल्फर पौधों की वृद्धि के लिये अति आवश्यक तत्व है तथा सूक्ष्म तत्वों में आयरन, मैंगनीज, जिंक, कॉपर, बोरोन, मोलिब्डेनम तथा क्लोरीन आते हैं सूक्ष्म पोषक तत्वों के स्त्रोत के रूप में अनेक अकार्बनिक एवं कार्बनिक यौगिक प्रयोग में लाये जाते हैं। इन स्त्रोतों को तीन वर्गो में विभाजित किया गया है आसानी से प्राप्य अकार्बनिक स्त्रोत, मन्द प्राप्य अकार्बनिक स्त्रोत एवं कार्बनिक स्त्रोत।

उर्वरक जिनमें दो या दो से अधिक प्राथमिक आवश्यक पोषक तत्व होते हैं, इस प्रकार के उर्वरकों को जटिल उर्वरक या बहु पोषक उर्वरक कहते हैं। जटिल उर्वरकों में अमोनियम फॉस्फेट, नाइट्रोफॉस्फेट्स तथा एन. पी. के. जटिल उर्वरक आते है । मोनो अमोनियम फॉस्फेट तथा डाई अमोनियम फॉस्फेट दोनों अमोनियम तथा फॉस्फोरिक अम्ल को मिश्रित करके बनाये जाते हैं। नाइट्रोफॉस्फेट्स के निर्माण करने की कई प्रक्रमें है। जिनमें से नाइट्रो कार्बोनिक प्रक्रम, नाइट्रो-पृथक्कीकरण प्रक्रम, नाइट्रिक अम्ल तथा फास्फोरिक अम्ल प्रयोग करके तथा नाइट्रिक अम्ल तथा सल्फ्यूरिक अम्ल प्रयोग करके व्यापारिक रूप से महत्वपूर्ण हैं। एन. पी. के. जटिल उर्वरक दानेदार होते हैं तथा इसकी भौतिक दशा अच्छी होती है।

15.6 अभ्यास प्रश्न

1. गौण पोषक तत्व कहते है।
   (अ) कैल्शियम (ब) मैग्निशियम (स) सल्फर (द) उपरोक्त सभी
2. मुदा मे जिंक की कमी को दूर करने के लिए उर्वरक मिलाया जाता है।
   (अ) मैगनीज सल्फेट (ब) जिंक सल्फेट (स) आयरन कीलेटस (द) आमोनियम मौजिब्डेट
3. निम्न लिखित उर्वरको में जिंक का स्रोत है।
   (अ) ZnS (ब)$MnSo_4.3H_2O$ (स) Fe_2O_3(द) MoS_2
4. अमोनियम फास्फेट सल्फेट उर्वरक में नत्रजन की मात्रा होती है।
   (अ) 20 प्रतिशत (ब) 16 प्रतिशत (स) 18 प्रतिशत (द) 22 प्रतिशत
5. जिप्सम मे कैल्शियम की मात्रा होती है।
   (अ) 20 प्रतिशत (ब) 22 प्रतिशत (स) 36 प्रतिशत (द) 30 प्रतिशत

उत्तर (1) द (2) ब (3) अ (4) ब (5)ब

15.7 संदर्भ ग्रंथ

- सामेल एल.टिजडेल, वेरनेर एल. नेलशन, जेमस डी.बीटोन एवं जोहन एल हेवलीन. 1997 मुदा उर्वरकता एवं उर्वरक (फीफथ एडिशन) नई दिल्ली पेज न. 266-263
- विनय सिंह 1994. मृदा विज्ञान, उर्वरक एवं खाद,राजा बलवन्त सिंह महाविद्यालय, बिचपुरी (आगरा) पेज न. 133-149.

इकाई -16

कार्बनिक खाद एवं जैविक खेती

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 मृदा उर्वरता का मूल्यांकन

16.3 कार्बनिक पोषक तत्वों के धटक

16.3.1 स्थूल खादों के प्रकार

16.3.2 सांद्रित खादें-

16.4 जैविक खेती

16.4.1 जैविक खेती के सिद्वान्त

16.4.2 जैविक खेती का उद्देश्य

16.4.3 जैविक खेती का महत्त्व

16.4.4 जैविक खेती से लाभ

16.5 सारांश

16.6 बहु चयनात्मक प्रश्न

16.7 बहु चयनात्मक प्रश्नों के उत्तर

16.8 संदर्भ ग्रन्थ

16.0 उद्देश्य

कार्बनिक खादों का फसल उत्पादन में महत्तव एवं उनका वर्गीकरण, स्थूल खादें गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, केंचुआ खाद, हरी खाद, विष्ठा आपंक व वाहित मल एवं सांद्रित खादें खली, रुधिर चूर्ण, मांस चूर्ण, मछली की खाद, खुर तथा सींग चूण की जानकारी, जैव उर्वरकों की जानकारी, फसल चक्र का उत्पादन में महत्व तथा जैविक खेती क्या है एवं उसका फसल उत्पादन में योगदान इत्यादि की जानकारी

16.2 प्रस्तावना

वर्तमान कृषि प्रणाली की वजह से फसल उत्पादकता में स्थिरता के साथ-साथ मृदा स्वास्थ्य में गिरावट आई है। टीकाऊ कृषि उत्पादकता एवं वातावरण स्वच्छता बनाये रखना संभव नही हो रहा है क्योंकि उत्पादकता का गिरता स्तर, मृदा में कार्बनिक पदार्थ की कमी, मृदा का निम्न उर्वरक स्तर, अधिक पोषक तत्वों का दोहण, असंतुलित उर्वरकों का प्रयोग तथा लगातार बढते कीटों एवं व्याधि रोगों

के कारण फसल उत्पादन लगातार घट रहा है। अपर्याप्त मृदा प्रबंधन से मृदा में जैविक पदार्थ की कमी, प्राकृतिक उर्वरता का नुकसान एवं फसल उत्पादन के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की कमी हो रही है जिससे मृदा में क्षारीयपन, अम्लीयता, भारी धातुओं की मात्रा एवं अन्य स्थिर पदार्थों की मात्रा बढ रही है। विगत वर्शो से लगातार सघन फसल उत्पादन लेने से बहुत अधिक मात्रा में मृदा से पोषक तत्वों का ह्रास तथा अपर्याप्त मात्रा में उर्वरकों की पूर्ति से मृदा में पोषक तत्वों का संतुलन नकारात्मक हो गया है। वर्तमान में प्राय: यह देखा गया है कि सतह व भूमिगत पानी भी अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से दूषित हो रहा है। नत्रजन की बहुत अधिक मात्रा अमोंनिया के रूप में मृदा सतह से, नाइट्रस ऑक्साइड या नत्रजन एवं नाइट्रेट अवशोषण के द्वारा भूमिगत जल में चली जाती है। हरित क्रान्ति में रासायनिक उर्वरकों का प्रमुख योगदान है। शुरूआत में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग सन्तुलित मात्रा में किया गया किन्तु बाद में अधिक अन्न उपजाओं की नीति के तहत् अधांधुंधउपयोग होने लगा तथा किसान उचित नत्रजन: फास्फोरस: पोटाश का अनुपात ***(4:2:1)*** से कई गुणा अधिक सस्ता नत्रजन उपयोग कर रहे है। इससे न केवल रासायनिक उर्वरकों के उपयोग में बेहतर वृद्वि हुई बल्कि किसान प्राकृतिक खादों, हरी खाद एवं फसल चक्र को ही भूल गये परिणामस्वरूप भूमि की उवर्राशक्ति का ह्रास होने लगा और उत्पादन क्षमता घटने लगी। रासायनिक उर्वरकों के साथ-साथ स्थानीय स्त्रोतों जैसे उपयुक्त फसल चक्र, बहुफसलीय प्रबधन, फसल अवशेषों, कार्बनिक खादों का उचित प्रयोग करके टिकाऊ उत्पादन प्राप्त कर सकते है। यह प्रबंधन कम उपजाऊ व वर्षा आधारित क्षेत्रों में भी अधिक फसल उत्पादन देती है साथ ही बहु फसल चक्र से न केवल किसानों की पूर्ण आवश्यकता सुनिश्चित होती है बल्कि प्रतिकूल अवस्था में पूर्ण फसल की हानि से भी बचा जा सकता है। जैविक खादें जिनमें स्थूल खादें तथा सांद्रित खादें है, इनके प्रयोग से पौधों को पोषक तत्त्वों की आपूर्ति के साथ-साथ मृदा के भौतिक एवं जैविक गुणों जैसे-पानी धारण क्षमता, उभय प्रतिरोधी क्षमता विनिमय क्षमता, मृदा अपरदन, सूक्ष्म जीवक्रिया इत्यादि पर अनुकूल प्रभाव ड़ालकर मृदा की उर्वरता एवं उत्पादकता बढ़ाने में योगदान करते है। इस कारण जैविक खादें निर्वाहप्रद कृषि के लिए पोषक तत्व का अभित्र अंग है। अत: जैविक पदार्थ का पोषक तत्त्वों के स्रोत के रुप में उपयोग की अच्छी संभावनाएँ है, हांलाकि उपलब्ध स्रोत का कुछ भाग ही इसके लिए उपयोग किया जा सकता है। अनुमानों के आधार पर कार्बनिक पदार्थो से करीबन 4 मिलियन टन पोषक तत्वों की आपुर्ति होती है

16.2 मृदा उर्वरता का आंकलन

मृदा उर्वरता का मूल्यांकन करने से भूमि में उपलब्ध पोषक तत्वों का पता लगता है कि मृदा उर्वरता निम्न, मध्यम व उच्च वर्ग की है उसी के अनुसार पौधों को पोषक तत्वों की पूर्ति की जा सके। मृदा से अधिक उत्पादन लेने हेतु विभिन्न प्रकार के जैविक खादों का प्रयोग कर फसलों द्वारा भूमि से निकाले गये पोषक तत्वों की पूर्ति करने से उपज तथा मृदा की उर्वरा शक्ति बरकरार रहती है। मृदा में खाद के प्रयोग से पहले किसान भाईयों को अपने खेत की मिट्टी का परीक्षण अवश्य करा लेना चाहिये परिणामस्वरूप फसल की आवश्यकता के अनुसार उचित प्रकार व मात्रा में उर्वरक एवं खाद का प्रयोग किया जा सके।

***तालिका* 1 : भूमि उर्वरता का वर्गीकरण**

तत्व	क्रान्तिक सीमाएं		
	निम्न	मध्यम	उच्च
जैविक कार्बन (प्रतिशत)	0.5 से कम	0.5 - 0.75	0.75 से अधिक
नाइट्रोजन (कि.ग्रा./है.)	280 से कम	280 - 560	560 से अधिक
फास्फोरस (कि.ग्रा./है.)	23 से कम	23 - 56	56 से अधिक
पोटेशियम (कि.ग्रा./है.)	130 से कम	130 - 335	335 से अधिक
जिंक (पी.पी.एम.)	0.25 से कम	0.25 - 0.5	0.5 से अधिक
लौहा (पी.पी.एम.)	2.5 से कम	2.5 - 5.0	5.0 से अधिक
मैंगनीज (पी.पी.एम.)	0.5 से कम	0.5 - 1.0	1.0 से अधिक
कॉपर (पी.पी.एम.)	0.25 से कम	0.25 - 0.5	0.5 से अधिक
बोरोन (पी.पी.एम.)	0.5 से कम	0.5 -1.0	1.0 से अधिक

16.3 कार्बनिक पोषक तत्वों के घटक

निम्नलिखित धटकों जैसे- कार्बनिक पदार्थ, जैव उर्वरक, हरी खाद एवं फसल चक्र आदि को समेकित पोषक तत्व प्रबंधन में अपनाकर फसल का टिकाऊ उत्पादन एवं मृदा उर्वरता बनाये रख सकते है। कार्बनिक खादों को दो भागों में वर्गीकरण किया गया है : (क) स्थूल खादें-गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, हरी खाद, विष्ठा आपंक व वाहित मल इत्यादि, एवं (ख) सांद्रित खादें-खली, रुधिर चूर्ण, मांस चूर्ण, मछली की खाद, खुर तथा सींग चूर्ण इत्यादि।

16.3.1 स्थूल खादों के प्रकार

कार्बनिक खादों जैसे गोबर की खाद (एफ.वाई.एम.), ***बायोगैस स्लरी***, विभिन्न प्रकार की कम्पोस्ट (शहरी कम्पोस्ट, ग्रामीण कम्पोस्ट, जलकुम्भी कम्पोस्ट आदि) एवं केंचुआं खाद (***वर्मीकम्पोस्ट***) ***आदि का विभिन्न फसलों*** में उपयोग किया जाता है। ***कार्बनिक खादों के उपयोग करने पर*** मृदा जीवांशपदार्थ की मात्रा बढती है तथा मृदा स्वास्थ्य को ठीक रखती है। ***कार्बनिक खादों के उपयोग*** से अनेक लाभ होते हैं, जैसे-

- मृदा पी.एच. मान को ठीक रखता है, जिससे अधिकांश फसलों को अनुकूल परिस्थिति मिलती है।
- मृदा की भौतिक संरचना में सुधार होता है।
- मिट्टी के अनुउपलब्ध पोषक तत्वों को उपलब्ध रूप में लाता है।
- उर्वरकों की उपयोग दक्षता में वृद्धि होती है।

- अच्छी गुणवत्ता की उपज प्राप्त होती है।
- मृदा में सूक्ष्म तत्वों की पूर्ति होती है।
- फसलों द्वारा जल उपयोग दक्षता में वृद्धि होती है।
- फसलों में सूखा सहने की क्षमता बढ़ जाती है।
- फसलों की उच्च उत्पादन क्षमता के साथ टिकाऊपन होता है।
- मृदा क्षरण को रोकता है।

अ. गोबर की खाद : वर्तमान में रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता बढ़ने के कारण गोबर की खाद प्रयोग बहुत कम हो गया है जिससे मृदा की उत्पादन क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। अत: गोबर की खाद का उपयोग कर मृदा स्वास्थ्य के साथ-साथ टीकाऊ उत्पादन लिया जा सकता है। गोबर की खाद में गोबर, मूत्र, बिछाली और चारे के अवशेषों का अपघटित मिश्रण है। यह पोषक तत्त्वों एवं कार्बन का महत्त्वपूर्ण स्रोत है। इसका कुछ भाग गांवों में ईधन के लिए उपयोग में लिया जाता है। पशु उत्सर्जन में मल एवं मूत्र मुख्य रुप से होता है जिसका औसत अनुपात 3:1 होता है परन्तु यह अनुपात विभिन्न पशुओं में भिन्न-भिन्न होता है। मल एवं मूत्र की मात्रा विभिन्न पशुओं में क्रमश: 60-80 एवं 20-40 प्रतिशत होता है। पशु मल एवं मूत्र का संगठन भोजन के अवयवों पर निर्भर करता है। पशु मल की तुलना में मूत्र में नत्रजन एवं पोटाश की मात्रा ज्यादा होती है, जबकि फॉस्फोरस की मात्रा कम होती है।

भारत में ज्यादातर पशुशालाएं नही है और पशुओं को खुले मैदान में रखा जाता है और फ़र्श मिट्टी का होता है जिससे मूत्र इकट्ठा करना कठिन होता है तथा अधिकांश भाग मृदा द्वारा सोख लिया जाता है। इसकों एकत्रित करने के लिए आवश्यक है कि पशुओं को पशुशाला में रखा जाये और फ'र पक्का हो ताकि मूत्र नालियों द्वारा इकट्ठा किया जा सके या बिछाली का उपयोग कर उसका अवशोषण किया जा सकें। मूत्र से नत्रजन की क्षति अमोनिया गैस के रुप में होती है। पशुओं को खेत, गांव एवं वन इत्यादि में छोड़ने पर पशुमल को इकट्ठा करना असम्भव-सा होता है और काफी हिस्सा व्यर्थ चला जाता है। इसके अलावा वैकल्पिक ईधन की कमी होने के कारण भी गोबर का काफी हिस्सा जलाने के काम में लिया जाता है। गांवों में किसान गोबर को खुले मैदान में एक ढेर के रुप में सड़ाने के लिए एकत्रित करते है और भण्डारण की लम्बी अवधि के दौरान एकत्रित गोबर को धूप एवं वर्षा से नही बचाया जाता, जिससे तत्त्वों की निक्षालन एवं वाश्पीकरण से क्षति होती है। पोषक तत्वों की क्षति वर्षा की मात्रा एवं अवधि, सूर्य की गर्मी एवं अवधि, अनावृत्त सतह, पी-एच. इत्यादि पर निर्भर होती है।

गोबर की खाद के हस्तन के उन्नत तरीके

पारम्परिक तरीकों के दौरान होने वाली क्षति को बचाने के लिए आवश्यक है कि गोबर, मूत्र एवं बिछाली का हस्तन सही तरीके से हो ताकि इस दौरान होने वाली क्षति को कम किया जा सके। गोबर की खाद बनाने की उन्नत ट्रेन्च विधि डॉ. सी.एन. आचार्य ने विकसित की थी। इस विधि में 6 मी. (X) 2 मी. (X) 1 मी. आकार की खाई बनाई जाती हैं। प्रतिदिन सुबह उत्सर्जन एवं बिछाली को अच्छी तरह मिलाकर खाई के एक सिरे पर डालते है, जब तक कि ढेर की लम्बाई 3 फुट और ऊँचाई भूमि की सतह

से 2 फुट नही हो जाती। तत्पश्चात इसका आकार गुम्बद के समान बनाकर गोबर व मिट्टी का लेप किया जाता है। इसके प'चात् खाई का अगला 3 फुट भाग भरा जाता है। जब खाई पूरी भर जाती है तब दूसरी खाई को भरना शुरू करते है। दूसरी खाई भरने तक पहली खाई का खाद तैयार हो जाती है, जिसे निकालकर खेतों में मिला देनी चाहिए। खाद को निकालकर ढेर नही करना चाहिए। 3-4 पशुओं के लिए दो खाइयाँ पर्याप्त है, एक वर्ष में एक पशु से 5-6 टन खाद बनती है।

तालिका-2 कार्बनिक स्रोतों की पोषक तत्त्वों के लिए उपयोग क्षमता[i]

स्रोंत	मात्रा (लाख टन प्रतिवर्ष)	पोषक तत्त्व (1000 टन)			
		नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटाश	कुल
गाय का गोबर व मूत्र	12247.1	2977.0	793.0	1332.0	5102.0
भैंस का गोबर व मूत्र	4367.1	745.0	276.0	487.0	1508.0
अन्य पशुओं का उत्सर्जन	428.4	389.9	229.0	133.0	752.5
फसल अवशेष /उपोत्पाद	1599.5	810.0	562.7	2085.4	3459.0
फल एवं सब्जी अवशिष्ट / अवशेष	0.3	0.02	0.1	0.2	0.5
जंगल अवशेष /उपोत्पाद	175.0	243.6	34.4	98.8	376.8
मानव वास-स्थान अवशिष्ट	3194.8	815.5	322.1	248.8	1386.4
जल जीवांश	30.0	60.0	30.0	60.0	150.0
कुल	22042.8	6042.1	2247.9	4445.2	12735.2

तालिका-3 कार्बनिक अवशिष्ट का वर्तमान उपयोग (मिलियन टन में)

स्रोंत	मात्रा	नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटाश
ग्रामीण कम्पोस्ट	225.0	1.250	0.657	1.575
शहरी कम्पोस्ट	9.0	0.135	0.045	0.108
आपंक	0.6	0.012	0.006	0.003
वाहित मल	500.6	0.025	0.007	0.135

तालिका-4 मुख्य जैविक खादों में पोषक तत्त्वों की मात्रा

स्रोंत	पोषक तत्त्वों की मात्रा (प्रतिशत)		
	नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटाश
गाय का गोबर	0.3 - 0.4	0.1 - 0.15	0.15 - 0.20
गाय का मूत्र	0.80	0.01 - 0.02	0.5 - 0.70
भेड़ व बकरी का गोबर	1.2 - 1.5	0.5	0.03
विष्ठा	1.2 - 1.5	0.8	0.5
मानव मूत्र	1.0 - 1.2	0.1 - 0.2	0.2 - 0.3
चमड़े का अपशिष्ट	7.0	0.1	0.2
खुर तथा सींग अपशिष्ट	12.3	0.1	0.3
गोबर की खाद	0.5 - 1.0	0.15 - 0.20	0.5 - 0.6
मुर्गी की खाद	2.87	2.90	2.35
शहरी कम्पोस्ट	1.5 - 2.0	1.0	1.5
ग्रामीण कम्पोस्ट	0.5 - 1.0	0.2	0.5
जलखुम्बी की कम्पोस्ट	2.0	1.0	2.3

तालिका-5 पशुओं के ताजा उत्सर्जन में औसतन मौजूद पोषक तत्वों की मात्रा

उत्सर्जन का स्रोंत	प्रकार	पोषक तत्त्वों की मात्रा (प्रतिशत)		
		नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटा”ा
गाय व बैल	गोबर	0.40	0.20	0.10
	मूत्र	1.00	सूक्ष्म	1.35
भेड़ व बकरी	गोबर	0.75	0.50	0.45
	मूत्र	1.35	0.05	2.10

घोड़ा	गोबर	0.55	0.30	0.40
	मूत्र	1.35	सूक्ष्म	1.25
सूअर	गोबर	0.55	0.50	0.40
	मूत्र	0.40	0.10	0.45

तालिका-6 बिछाली के लिए प्रयुक्त पदार्थ की रचना (शुष्क पदार्थ के प्रतिशत के रुप में)

वानस्पतिक पदार्थ	पोषक तत्त्वों की मात्रा (प्रतिशत)		
	नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटाश
गेहूँ का भूसा	0.43	0.17	0.91
धान का पुआल	0.40	0.26	1.16
जई का भूसा	0.55	0.29	1.39
जौ का भूसा	0.44	0.19	0.07
ज्वार का भूसा	0.40	0.23	2.17
बाजरे का भूसा	8.65	0.75	2.50
सेम का भूसा	1.57	0.74	1.62
सूखी घास	0.28	0.08	0.32
सूखी पत्तियां	1.51	0.18	0.57
धान का छिलका	0.45	0.25	0.45
मूंगफली का छिलका	1.75	0.45	1.50
पशुगोबर व कचरा	0.65	0.09	0.12
बुरादा	0.24	0.02	0.45
मिट्टी	0.05	0.10	0.20

तालिका-7 पशुओं द्वारा प्राप्त होने वाली मल-मूत्र की मात्रा एवं उनमें मौजूद पोषक तत्वों की मात्रा

पशुओं के प्रकार	औसत भार (कि.ग्रा.)	पशुओं द्वारा उत्सर्जित मल-मूत्र की मात्रा (कि.ग्रा. प्रति वर्ष)			उपस्थित पोषक तत्वों की मात्रा (कि.ग्रा. प्रति पशु प्रति वर्ष)		
		गोबर	मूत्र	कुल मल-	नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटाश

				मूत्र			
गाय	250	6560	2000	8560	42.0	10.0	35.0
बैल	325	8750	2500	11250	56.0	13.0	46.0
भेंड़	45	510	170	680	5.0	2.0	6.0
सूअर	90	1020	405	1425	5.5	4.0	4.8
घोड़ा	575	10200	2040	12240	-	-	-

ब. बायोगैस स्लरी :- ***बायोगैस स्लरी एक पूर्णतया गली-सड़ी खाद है तथा खरपतवार बीजों से मुक्तहीन होता है। बायोगैस संयंत्रद्वारा गोबर से अधिकतम मात्रा में खाद उपलब्ध होती है तथा इससे उत्सर्जित गैस को घर में खाना बनाने, रोशनी करने तथा ट्यूबवैल ईंजन चलाने में प्रयोग किया जा सकता है।*** गोबर गैस संयत्र से गाँवों में गोबर को ईंधन के रुप में उपयोग की आवश्यकता एवं खादों के कृषि में महत्त्व को देखते हुए गोबर गैस संयंत्र की उपयोगिता बढ़ जाती है। इसके उपयोग से दोनों आवश्यकताएँ पूरी हो जाती है। प्रदूषण की रोकथाम एवं मनुष्य स्वास्थ्य को होने वाले नुकसान से भी बचा जा सकता है। गोबर, फसलों के अवशेष, विष्ठा एवं अन्य कार्बनिक पदार्थो के अवायुजीवी किण्वन से मैथेन गैस प्राप्त होती है जो कि रंग एवं गंधहीन होती है तथा ईंधन के रुप में प्रयोग की जा सकती है। गारा में पोषक तत्त्वों की मात्रा अच्छी होती है जिससे फसलों की उपज में बढ़ोतरी होती है। मैथेन उत्पादन में मुख्य रुप से मेथेनोजैविक बैक्टीरिया भाग लेते है। इस समूह के लिए अनुकूलतम पी. एच. 7.0 है। मध्यतापी बैक्टीरिया (40) सै. तक क्रियाशील होते है, जबकि उच्चतापी बैक्टीरिया (50-60) सै. तक क्रियाशील रहते है। उच्चतापी बैक्टीरिया के द्वारा मेथेन उत्पादन की दर ज्याद होती है। अमोनिया का क्रान्तिक स्तर 3000 मि.ग्री. प्रति मि. ली. है, जबकि एसीटिक अम्ल 5000 मि. ग्राम प्रति लीटर तक भी हानिकारक नही होता। जीवाणुओं की क्रियाशीलता के लिए कार्बन-नाइट्रोजन का उपयुक्त अनुपात 20-30:1 लेना होता है। सूक्ष्म तत्व जैसे कि लौहा, तांबा, निकिल, मोल्ब्डेनम एवं कोबाल्ट इत्यादि भी गैस उत्पादन में भाग लेने वाले बैक्टीरिया के लिए जरुरी है।

स. कम्पोस्ट :- विभिन्न ***फसलों के अवशेषों को विभिन्न विधियों के द्वारा सडा गलाकर तैयार की गई खाद को कम्पोस्ट खाद कहते हैं। फसल अवशेष में प्रचुर मात्रा में पोषक तत्व मौजूद होते हैं जिनका कम्पोस्ट खाद बनाकर फसलो में उपयोग करने से अधिक उपज प्राप्त होती है।*** पशुओं तथा मनुष्यों के उत्सर्जन, वानस्पतिक अवशेषों, बिछाली तथा नगरीय एवं औद्योगिक उच्छेण के सूक्ष्म जीवों द्वारा विच्छेदित मिश्रण उत्पाद को कम्पोस्ट कहते है। कम्पोस्ट खाद दो तरह की होती है- ग्रामीण/फार्म कम्पोस्ट एवं शहरी कम्पोस्ट। कम्पोस्ट बनाने के लिए प्रयुक्त कार्बनिक पदार्थो के घटक- सैलुलोज, हैमीसैलुलोज, लिग्निन, स्टार्च, प्रोटीन, वसा, न्यूक्लिक अम्ल इत्यादि का प्राकृतिक या कृत्रिक निवेषण द्वारा विच्छेद होता है। इस दौरान उपयुक्त हवा, नमी, ताप एवं पोषक तत्त्व (खास तौर से नत्रजन यदि कार्बनिक पदार्थो में इसकी मात्रा कम है) आवश्यक होते है। कार्बनिक पदार्थो की विच्छेद दर इन सभी कारकों पर निर्भर करती है। साधारणतया कम्पोस्ट बनाने की अवधि 3-4 माह होती है।

कम्पोस्ट बनाने की विधियाँ -

1- ऐडको विधि- इस विधि में ऐडको चूर्ण का इस्तेमाल किया जाता है जो कि रासायनिक यौगिकों का मिश्रण होता है। इस विधि में कार्बनिक पदार्थ की 12 इंच मोटी तह बिछाकर गीली तह पर ऐडको चूर्ण की तह बनाते हैं जिसका अनुपात 100 भाग सूखे कार्बनिक पदार्थ के लिए 7 भाग है। इस तरह एक स्तर के ऊपर दूसरा स्तर लगाते रहते है, जब तक कि इसकी मोटाई 6 फुट तक नही हो जाती। आवश्यकतानुसार पानी डाला जाता रहता है जिससे 4-6 माह में कम्पोस्ट बनकर तैयार हो जाता है। अगर उच्छेद क्रिया धीमी हो रही हो तो उलटफेर की जाती है। यह विधि ठण्डे प्रदेशों के लिए ज्यादा उपयुक्त है।

2- सक्रियित कम्पोस्ट विधि- इस विधि में कम्पोस्ट बनाने के लिए ताजा सूखे कचरे के साथ संचारण द्रव्य या पूर्व में बनी कम्पोस्ट का जीवाणुओं के स्रोत के रुप में उपयोग किया जाता है जिससे कम्पोस्ट बनाने की अवधि कम हो जाती है। हालाँकि इसके बिना भी कम्पोस्ट बनकर तैयार हो जाती है, क्योकि पौधों के अवशोष, मिट्टी, विष्ठा इत्यादि में पर्याप्त जीवाणु पाये जाते है। इसके अलावा कार्बनिक पदार्थो में नत्रजन की मात्रा कम होने पर उर्वरक मिलाकर इसकी मात्रा 2 प्रतिशत तक ले आते है।

3- इंदौर विधि- यह विधि फार्म कम्पोस्ट बनाने के लिए उपयोग की जाती है। इसमें 9 मी. (X) 4.5 मी. (X) 0.6 मी. आकार का गड्ढा बनाते है। सबसे नीचे कचरे की तह (8 सेमी.) बनाते है। इस पर राख व मूत्र की मिट्टी को छिड़क देते है। इस पर गोबर एवं बिछाली की तह (5 सेमी.) बनाते है, तत्पश्चात पानी डालकर तहों को भिगोते है, फिर वापस इसी तरह तह लगाकर भिगोते है और फिर दूसरे दिन भिगोते है। इसके पश्चात हर सप्ताह तीन बार भिगोते है। वायु तथा जल की प्राप्ति के लिए तीन बार उलटफेर करते है। पहले दो उलटफेर 14 दिन के अन्तराल पर करते है एवं हर बार पानी से भिगोते है। तीसरा उलटफेर तीन माह बाद करते है और पानी से भिगोकर 3 मी. (X) 3 मी. (X) 1 मी. आकार में इकट्ठी कर परिपक्व होने तक रखते है। इस विधि को विकसित करने का श्रेय हाउवर्ड एवं वाउ को जाता है।

4- बंगलौर विधि- कम्पोस्ट का निर्माण खाई में होने और ऊपर से मिट्टी से ढँकने के कारण नत्रजन और जल की क्षति कम होती है। इस विधि में उलटफेर की आवश्यकता नही होती है। शुरू में ही कार्बन व नत्रजन का अनुपात तथा नमी की मात्रा पर्याप्त कर देते है। यह विधि प्राय: शहरी कम्पोस्ट बनाने के लिए उपयोग की जाती है। इस विधि को विकसित करने का श्रेय डॉ0 आचार्य को जाता है। खाई में कचरे (20-25 सेमी.) और विष्ठा (7-8 सेमी.) का स्तर एक के बाद एक रखते हुए जमीन से प्राय: एक फुट ऊँचा कर लेते है और सबसे ऊपर कचरे का स्तर लगाते है अगर मिट्टी उपलब्ध हो तो प्रतिदिन अन्त में तहों पर मिट्टी का स्तर (2-3 सेमी.) कर देते है ताकि दुर्गन्ध नही फैले। खाई भरने के 4-5 दिन बाद स्तर गर्म हो जाता है एवं इससे कचरे विच्छेदित हो जाता है व रोगाणु नष्ट हो जाते है। इस विधि से चार माह में कम्पोस्ट बनकर तैयार हो जाती है।

द. केचुआं खाद (वर्मी कम्पोस्टं) : केचुओं की मदद से व्यर्थ पदाथोर्ं जैसे फसल अवशेष, घास फूस, घर के कूड़ा-करकट, गोबर इत्यादि को खा लिए जाने के बाद *केंचुए द्वारा विसर्जित पदार्थ को* केचुआं खाद (*वर्मी कम्पोस्ट*) *कहलाता है। वर्मी कम्पोस्ट में केंचुओं की कास्ट, उनके अवशेष, मल एवं अंडे, कोकून, लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु, मूख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्व और अपचित जैविक पदार्थों का मिश्रण सम्मलित है, जो मृदा को लम्बे समय तक उपजाऊ एवं उपयोगी रखने की क्षमता रखता है।* वर्मी कम्पोस्ट में पोषक तत्वों के अलावा एंजाइम, पौधों की वृद्धि के लिये उपयोगी हारमोन की उपस्थिति के कारण इसे साधारण कम्पोस्ट से उन्नत माना जाता है। केंचुआ खाद में साधारण कम्पोस्ट की अपेक्षा अधिक नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश *के साथ-साथ सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे लोहा, जस्ता, ताम्बा, मैगनीज इत्यादि भी पाये जाते हैं।* केंचुआ खाद के प्रयोग करने से रासायनिक उर्वरकों की उपयोग दक्षता बढ़ जाती है जिससे पौधों का विकास एवं वृद्धि अच्छी होती है।

केंचुओं की सहायता से कम समय में अच्छी कम्पोस्ट बनायी जा सकती है, क्योंकि ये कार्बनिक पदार्थो के मिलाने, ढेर में ऑक्सीजन की आपूर्ति और विघटन की दर को बढ़ाने में सहायक होते है। वर्मीकम्पोस्ट गड्ढ़ो अथवा लकड़ी के डिब्बों में बनायी जा सकती है जिनकी ऊँचाई 60 सेमी. से ज्यादा नही होनी चाहिये और लम्बाई और चौड़ाई आवश्यकतानुसार हो सकती है। कम्पोिस्टंग ढेर की ऊपरी सतह बीच में से उठी हुई होनी चाहिए। केंचुओं को रोशनी की आवश्यकता नही होती है, अत: इन्हे ढँक कर रखना चाहिए परन्तु हवा के आदान-प्रदान के लिए उपयुक्त प्रबन्ध होना चाहिए। कम्पोटिंग मिश्रण में 70 प्रतिशत भाग खरपतवार, पत्तियाँ, भूसा इत्यादि, 15 प्रतिशत भाग आंतरिक सड़ा हुआ गोबर और 15 प्रतिशत भाग ऊपरी सतह की मिट्टी होनी चाहिए। तीन वर्गमीटर गढ्ढे के लिए करीबन 10,000 केंचुएँ होने चाहिएँ, जिसके लिए छोटे केंचुएँ या वर्मीकम्पोस्ट का निवेश करना चाहिए। केंचुओं की प्रजनन दर तेज होती है। मिश्रण को समय-समय पर गीला करते रहना चाहिए, परन्तु अत्याधिक पानी नही होना चाहिए, नही तो अवायुजीवी अवस्था हो जाती है। केंचुओं के लिए अनुकूलतम तापमान 26-30 डिग्री. सै. के मध्य होता है। । केंचुओं की सहायता से कम्पोस्ट 60 दिनों में बनकर तैयार हो जाती है।

य. विष्ठा मल :- मनुष्य द्वारा उत्सर्जित ठोस एवं तरल रुप में मल को विष्ठा कहते है इसमें नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश की मात्रा क्रमश:: 5.5, 4.0 तथा 2.0 प्रतिशत होती है जो कि गोबर की खाद की तुलना में ज्यादा होती है। भारत में उत्सर्जित विष्ठा का थोड़ा सा भाग ही खाद के रुप में उपयोग किया जाता है। इसकी अकेले या दूसरे अन्य पदार्थो जैसे कि कोयले का चूरा, राख इत्यादि के साथ मिलाकर विच्छेदन करने से अच्छी खाद बनती है। विष्ठा में रोगाणु, प्रोटोजोआ, कीड़े, पुटी इत्यादि पाये जाते है, अत: इसका खाद के रुप में उपयोग करने से पहले यह सुनिश्चित करना जरुरी है कि इनका निवारण पूर्णरुप से हो गया है, वरना मृदा एवं जल के प्रदूषित होने की सम्भावना रहती है।

र. आपंक एवं वाहित मल :- आधुनिक स्वच्छ तंत्र में मानव मल, मूत्र एवं अन्य पदार्थो के विसर्णन में जल का प्रयोग होता है, जिसके फलस्वरुप यह तनु हो जाता है तथा इसमें ठोस की मात्रा करीबन 0.3 प्रतिशत होती है एव पानी की मात्रा 99 प्रतिशत से भी अधिक होती है। ठोस भाग को आपंक या अवमल एवं तरल भाग को वाहित मल कहते है। बढते शहरीकरण से वाहित मल की मात्रा भी बढ़ रही है

तथा इसका सुरक्षित विसर्णन एक बड़ी समस्या एवं खर्चीला काम है। जलाशयों नदियों एवं समुद्रो में डालने से इनके प्रदूषित होने की सम्भावनाएँ बढ़ जाती है।

16.3.2 सान्द्रित खादें

इनमें नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश आदि के अलावा कार्बनिक पदार्थ भी होते हैं। अत: इनका उपयोग फसल की बुवाई से पूर्व या खेत तैयार करते समय करना चाहिए। उदाहरणतया- तिलहन खलियॉं, हड्ड़ी की खाद, रुधिर चूर्ण, माँस चूर्ण, मछली चूर्ण, खुर एवं सींग चूर्ण इत्यादि।

अ. तिलहन खलियॉं :- तिलहनी फसलों से तेल निकालने के प"चात् बचने वाले ठोस पदार्थ को खली कहते है। भारत में कई तरह की तिलहन फसलें काम में ली जाती है अत: खली भी कई तरह की होती है। इसमें से कुछ खली जानवरों को खिलाने के लिए उपयोग की जा सकती है और कुछ खली का उपयोग खाद के लिए किया जाता है। गोबर की खाद एवं कम्पोस्ट की तुलना में इसमें पोषक तत्त्वों की मात्रा ज्यादा होती है और यह फसल के साथ बदलनी रहती है। इसमें उपलब्ध पोषक तत्त्व पौधों को प्राय: 9-10 दिनों में उपलब्ध हो जाते है। खली के स्रोत, उसमें बचे हुए तेल की मात्रा, खली चूर्ण का बारीकपन भी तत्त्वों की उपलब्धता को प्रभावित करता है।

ब. रुधिर चूर्ण :- गाय, भेड़, बकरी इत्यादि को मांस के लिए मारने के समय उपलब्ध खून जिसकी मात्रा गाय वगैरह के लिए करीबन 15 लीटर व भेड़ एवं बकरी के लिए 1.5-2.0 लीटर तक होती है जो खाद का एक अच्छा स्रोत है। पशुओं का वध ज्यादातर बूचड़खाने में नही होने के कारण इनको इक्ट्ठा करना एक समस्या है। बूचड़खाने से इकठ्ति खून को उपचारित करके सुखा लिया जाता है और फिर चूर्ण बनाकर खाद के लिए उपयोग किया जाता है। सभी तरह की फसलों में इसका अच्छा प्रभाव देखा गया है। इसमें औसतन 10-20 प्रतिशत नत्रजन व 1-2 प्रतिशत फॉस्फोरिक अम्ल पाया जाता है।

स. माँस चूर्ण :- मृत पशुओं के मांस के संसाधन से प्राप्त चूर्ण को खाद के रुप में इस्तेमाल किया जा सकता है जिससे नत्रजन एवं फॉस्फोरिक अम्ल की मात्रा 10.5 एवं 2.5 प्रतिशत होती है। यह अधिकतर फसलों के लिए प्रभावी है।

द. मछली चूर्ण :- खाद के रुप में प्रयोग में लेने हेतु खाने के काम में नही आने वाली मछलियों, कंकाल, ओफाल इत्यादि को सुखाकर चूर्ण बना लिया जाता है। विभिन्न फसलों के लिए पोषक तत्वों का यह एक अच्छा स्रौंत है। इसमें नत्रजन 4-10 प्रतिशत, फॉस्फोरस 3-9 प्रतिशत एवं पोटाश 1.5 प्रतिशत तक होता है।

य. खुर एवं सींग चूर्ण :- खुर एवं सींग को संसाधिक कर चूर्ण बनाने से उपलब्ध पदार्थ को कई फसलों के लिए खाद के रुप में इस्तेमाल किया जा सकता है। इसमें 13 प्रतिशत नत्रजन होती है।

तालिका-8 मुख्य सान्द्रित खादों में पोशका तत्त्वों की मात्रा

समूह	स्रोंत	पोषक तत्त्वों की मात्रा (प्रतिशत)		
		नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटा"ा
खली	एरंड	5.5 - 5.8	1.8	1.0

	नारियल	3.0 - 3.2	1.8	1.7
	मूँगफली	4.5	1.7	1.5
	बिनौला	3.9	1.8	1.6
	करंज	3.9 - 4.0	0.9 - 1.0	1.3
	नीम	5.2	1.0	1.4
	नाइजर	4.8	1.8	1.3
	महुआ	2.5 - 2.6	0.8	1.8
	तोरियॉ	5.1	1.8	1.0
	अलसी	5.5	1.4	1.2
	कुसुम	4.8	1.4	1.2
	तिल	6.2	2.0	1.2
पशुचूर्ण	रुधिर	10 - 12	1.2	1.0
	माँस	10.5	2.5	0.5
	खुर एवं सींग	13.0	0.3 - 1.5	-
	अपरिष्कृत अस्थि	3 - 4	20 - 25	-
	भापित अस्थि चूर्ण	1 - 2	25 - 30	-
	मछली	4 - 10	3 - 9	1.8

16.4 जैविक खेती

यह खेती की एक ऐसी पद्धति है जिसमें रासायनिक कीटनाशियों, खरपतवारनाशियों एवं उर्वरकों के उपयोग के स्थान पर जीवांश खाद (गोबर की खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद, जीवाणु कल्चर, राइजोबियम, एजोटोबेक्टर, एजोस्पारीलियम, पी.एस.बी. आदि) पोषक तत्वों के स्त्रोत के रूप में एवं हानिकारक जीवों को नियंत्रित करने के लिए जैवनशियों (बायो-पेस्टिसाइड) जैसे एन.पी.वी., ट्राइकोग्रामा, ट्राइकोडर्मा, नीम, धतूरा, गोमूत्र एवं वायो एजेन्ट जैसे-क्राइसोपा आदि का उपयोग करना जिससे न केवल भूमि की उर्वरा शक्ति लम्बे समय तक बनी रहती है बल्कि पर्यावरण भी प्रदूषित होने से बचता है लागत घटने एवं उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ने से किसान को लाभ भी ज्यादा होता है।

16.4.1 जैविक खेती के सिद्धान्त

1- प्रकृति की धरोहर है।

2- प्रत्येक जीव के लिए मृदा ही स्त्रोत है।

3- हमें मृदा को पोषण देना है न कि पौधे को जिसे हम उगाना चाहते है।

4- ऊर्जा प्राप्त करने वाली लागत में पूर्ण स्वंत्रता

5- पारिस्थितिकी का पुनरूद्धार।

16.4.2 जैविक खेती का उद्देश्य

इस प्रकार की खेती करने का मुख्य उद्देश्य यह है कि रासायनों तथा रासायनिक उर्वरकों का उपयोग न हो तथा इसके स्थान पर जैविक उत्पाद का उपयोग अधिक से अधिक हो लेकिन वर्तमान में बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए तुरन्त उत्पादन में कमी न हों अत: इसे (रासायनिक उर्वरकों के उपयोग को) वर्ष प्रतिवर्ष चरणों में कम करते हुए जैविक उत्पादों को ही प्रोत्साहित करना है। जैविक खेती का प्ररूप निम्नलिखित प्रमुख क्रि क्रियाओं के क्रियान्वित करने से प्राप्त किया जा सकता है।

1- कार्बनिक खादों का उपयोग

2- जीवाणु खादों का प्रयोग

3- फसल उवशेषों का उचित उपयोग

4- जैविक तरीकों द्वारा कीट व रोग नियंत्रण

5- फसल चक्र में दलहनी फसलों को अपनाना

6- मृदा संरक्षण क्रियाएं अपनाना

16.4.3 जैविक खेती का महत्व

1. **भूमि की उर्वरा शक्ति में टिकाऊपन:** जीवांश खाद न केवल पौधों को पोषक तत्व उपलब्ध करवाती है अपितु भूमि की संरचना, रन्ध्रता, जलधारण क्षमता में सुधार करके भूमि संरक्षण के साथ-साथ भूमि की उर्वरा शक्ति की स्थिर ही नहीं बनाती अपितु बढ़ोतरी भी करती है जिससे भूमि लगातार लम्बे समय तक अच्छी पैदावार देती रहती है।
2. **जैविक खेती प्रदूषण रहित:** आधुनिक खेतों में उपयोग किए जारहे रसायनों के कारण आज जल, वायु, एवं भूमि प्रदूषण एक खतरनाक स्तर तक पहुंच गया है जिससे सदा स्वस्थ रहने वाले ग्रामीण आज कैंसर, हृदयाघात जैसी बीमारियों से ग्रस्त होने लगे है एवं समय पूर्व ही बुढ़ापा आ रहा है जबकि जीवांश खेती में रसायनों का उपयोग बंद हो जाने से ऐसी कोई समस्या समस्या नहीं होगी।
3. **कम पानी की आवश्यकता:** जीवांश खाद भूमि की जल धारण क्षमता बढ़ाते हैं जिससे हमें कम सिंचाईयों की आवश्यकता होती है एवं हम इस शेष पानी से और अधिक क्षेत्रफल में फसलें उगा सकतें हैं।

4. **पशुओं का अधिक महत्व:** रासायनिक उर्वराकों के कारण हमारे पशुधन का महत्व घट गया था एवं लोगों ने अपने पशुधन कौड़ियों के भाव बेच दिया परन्तु जैविक खेती में खाद की फैक्टरी ये पशु ही होते है। जो फसल आवेश खाकर न केवल हमें जीवांश खाद ही देंगें अपितु दूध प्रदान करके हमारे स्वास्थ्य को भी मजबूत बनायेंगे।
5. **फसल अवशेषों को खपाने की समस्या नहीं:** आधुनिक खेती में फसल अवशेषों का कोई समुचित उपयोग नहीं हो पाता है उनको या तो जलाना पड़ता है या उसी अवस्था में दबाने से दीमक की समस्या बढ़ती है जबकि जैविक खेती में इनका कम्पोस्ट बनाने से समुचित उपयोग हो जात है।
6. **अच्छी गुणवत्ता की पैदावार:** उर्वरक भूमि में एक या दो पोषक तत्व ही प्रदान करते हैं जिससे फसलों को संतुलित पोषण न मिलने के कारण उत्पाद की गुणवत्ता गिर जाती है जबकि जीवांश खाद के उपयोग से संतुलित पोषण मिलने से फसल अच्छी गुणवत्ता वाली होगी जो हमें आज विश्व बाज़ार में टिके रहने के लिए आवश्यक है।
7. **कृषि मित्र जीव सुरक्षित एवं संख्या में बढ़ोतरी:** हानिकारक रसायन कीटनाशी न केवल पर्यावरण प्रदूषित करते हैं अपितु कृषि के लाभदायक जीवों को भी नष्ट कर देते हैं। जबकि जैविक खेती में रसायनों पर प्रतिबंध से न केवल ये जीव सुरक्षित रहेंगे अपितु संतुलित पोषण से इनकी संख्या में भी बढ़ोतरी होगी।
8. **कम लागत:** जैविक खेती में किसान ज्यादातर अपने स्वयं के संसाधन (जैसे गोबर की खाद, कम्पोस्ट, नीम, गोमूत्र) उपयोग में लेता है, पानी की मांग घटती है जिससे उसकी खेती पर आने वाली लागत घटती है।
9. **अधिक लाभ:** जैविक खेती में लागत घटने के साथ-साथ अच्छी गुणवत्ता का उत्पाद उत्पादित होने से प्रति इकाई अधिक मूल्य भी मिलता है जिससे किसान प्रति इकाई क्षेत्रफल से अधिक लाभ मिलता है।

16.4.4 जैविक खेती के लाभ

जैविक खेती से मृदा की भौतिक रासायनिक तथा जैविक दशाओं में सुधार होता है जिससे मृदा में पौधो के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है जो पौधों की संतुलित बढ़वार तथा अधिक पैदावार में सहायक होती है।

1- इस प्रणाली से उत्पादन लागत में कमी तथा उत्पादन की गुणवत्ता में वृद्धि की जा सकती है जिससे हमारा देश वैश्वीकरण के दौर के साथ विश्व बाजार में प्रतियोगिता कर सकता है।

2- शहरों में प्रदूषण फैलाने वाले कुड़ा करकट तथा फार्म उपउत्पादों को जैविक खाद बनाने में प्रयोग लिया जा सकता है।

3- जैविक खेती में मृदा चभ् संतुलित रहता है।

4- जैविक खेती से उत्पन्न फार्म उत्पाद अधिक गुणवत्ता वाले तथा जन स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होते है।

5- जैविक खेती में पौधों की रोग तथा कीटों के प्रति प्रतिरोधकता बढ़ जाती है।

6- जैविक खेती से फार्म उत्पादों में विषैले अवशेषों के स्तर कम होते है जिससे विश्व बाजार में इनकी माग बढ़ती है जो किसान को अधिक आमदनी दिला सकती है।

7- मिश्रित खेती अपना कर लाभ को ओर बढ़ाया जा सकता है।

8- इससे स्वदेशी तकनिकी को बढ़ावा मिलेगा।

9- यह कृषि उत्पादन की वह कार्य माला है जिसमें कई उद्यमों के मध्य समन्वय स्थापित किया जाता है।

10- मृदा क्षरण को रोकती है।

11- पर्यावरण परिस्थितिकीय संतुलन को महत्व दिया जाता है।

16.5 सारांश

कृषि उत्पादन में टिकाऊ व्यवस्था बनाए रखने के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति पौधों के लिए कार्बनिक खादों के स्रोत के माध्यम से पोषक तत्वों की आपूर्ति एक उचित विकल्प है। कार्बनिक व जैविक स्रोतों से प्राप्त तत्वों का समन्वित प्रयोग व उनकी उपयोग क्षमता में वृद्धि द्वारा ही भविष्य में टिकाऊ कृषि की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

16.6 अभ्यास प्रश्न

1 निम्न में से स्थूल खाद कौनसी है।

(क) गोबर की खाद (ख) खली की खाद

(ग) हड्डी की खाद (घ) मछली की खाद

2 पशुओं के उत्सर्जन में मल का कितना प्रतिशत हिस्सा होता है।

(क) 20-30 (ख) 40-50

(ग) 60-80 (घ) 50-70

3 पशुओं के उत्सर्जित मूत्र से नत्रजन का ह्रास किस गैस के रुप में होता है।

(क) नाइट्रेट (ख) अमोनिया

(ग) नाइट्राइट (घ) उपर्युक्त में से कोई नही

4 ड़ॉ आचार्य ने कौनसी कम्पोस्ट बनाने की विधि विकसित की थी।

(क) ऐड़को विधि (ख) इंदौर विधि

(ग) बंगलोर विधि (घ) सक्रिय कम्पोस्ट विधि

5 केंचुओं के लिये खाद बनाने हेतु अनुकुल तापमान (ड़िग्री सै.) कितना होना चाहियें।

(क) 15-20 (ख) 20-25

(ग) 26-30 (घ) 10-15

2- (क) 2. (ग) 3. (ख) 4. (ग़) 5. (ग)

16.8 संदर्भ ग्रन्थ

- के. के. व्यास, एस. सी. भण्ड़ारी एवं एस. ड़ी. सिंह. 1996. मृदा विज्ञान। राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर। पेज संख्या 331-343.
- ओ. पी. शर्मा, एस. के. इन्टोदिया, एस. एल. शर्मा एवं एन. एस. नेकेला. 2009. सस्य विज्ञान (कृषि वर्ग)। माध्यमिक शिक्षा बोडर्, राजस्थान (अजमेर)। पेज संख्या 22-41.
- विनय सिंह. 1991-92. मृदा विज्ञान के मूल तत्व। वी. के. प्रकाशन, बड़ौत। पेज संख्या 228-268.

इकाई – 17

मृदा परिक्षण

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य
17.1 प्रस्तावना
17.2 मृदा परीक्षण के उद्देश्य
17.3 मिट्टी की जांच के फायदे
17.4 मृदा परीक्षण एवं प्रबन्ध
17.5 मृदा परीक्षण की विधियां
17.6 मिट्टी परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग
17.7 मिट्टी परीक्षण के चरण
17.8 मिट्टी परीक्षण में जांच किए जाने वाले बिंदू
17.9 मृदा की पोषक आवश्यकताऐं ज्ञात करने की विधियां
17.10 सारांश
17.11 अभ्यास प्रश्न
17.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

17.0 उद्देश्य

इस अध्याय से आप निम्न ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे:-

- मृदा परीक्षण के उद्देश्य
- मिट्टी की जांच के फायदे
- मृदा परीक्षण एवं प्रबन्ध
- मृदा परीक्षण की विधियां
- मिट्टी परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग

17.1 प्रस्तावना

मृदा उर्वरता निर्धारण करने की रासायनिक विधि को मृदा परीक्षण कहते है। मृदा परीक्षण को फसलोत्पाद हेतु अत्यन्त शस्त्र के रूप में किया जाता है। मृदा परीक्षण द्वारा फसल बोने से पूर्व ही मृदा में पोषक तत्वों के स्तर को ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार ना तो उर्वरक की हानि होती है और न ही पोषक कम होकर फसल ही उपज घटती है। मिट्टी की जांच से भूमि की उर्वरा शक्ति का पता चलता है। भूमि में

तत्व विशष की उपलब्ध मात्रा को आधार मानते हुए फसल के लिए संतुलित उर्वरकों की मात्रा की सिफारिश की जाती है। इसके लिए यदि हर दूसरे वर्ष एक बार खेत की मिट्टी का परीक्षण करवा लिया जाये तो ठीक है, वरना पोषक तत्वों की मात्रा में सन्तुलन बिगड़ने से भूमि के अनुपजाऊ होने का खतरा रहता है।

मिट्टी के नमूने की जांच का शुल्क मुख्य पौषक तत्वों के लिए 5 रूपये (भ्रमणशील प्रयोगशाला में जांच करवाने के लिए 10 रूपये) एवं सूक्ष्म तत्वों के लिए 20 रूपये प्रति नमूने लिये जाते हैं। जांच के लिए मिट्टी का नमूना मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला में सीधे ही या अपने क्षेत्र के कृषि पर्यवेक्षक के माध्यम से भेज सकते हैं।

17.3 मृदा परीक्षण के उद्देश्य

मृदा परीक्षण करने के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित है -

1. मृदा में पोषक तत्वों का सही निर्धारण हो जाता है।
2. विभिन्न फसलों की दृष्टि से तत्वों की कमी का आकलन किया जाता है।
3. मृदा में प्राप्य पोषक तत्वों के स्तर के आधारपर उर्वरता संस्तुति की जा सकती है।
4. मृदा उर्वरता मानचित्र एवं मृदा वर्गीकरण की दृष्टि से मृदा समूह बनाये जाते है और उर्वरक उपयोगी परिणामों का सारांश तैयार किया जाता है।
5. मृदा के सुधारकों की आवश्यकता का निर्धारण करते है1
6. मृदा की उपयोगीता निर्धारण की जाती है।

17.3 मिट्टी की जांच के फायदे

- फसल के लिए खाद व उर्वरक की आवश्यक संतुलित मात्रा का पता लगता है।
- आवश्यकता से अधिक उर्वरक प्रयोग पर रोक लगती है, इससे पैसे की बचत होती है।
- आवश्यकता के हिसाब से उर्वरक प्रयोग करने से भूमि के खराब होने का खतरा कम रहता है।
- मिट्टी की जांच कराने का समय – बुवाई से कम से कम एक-डेढ़ माह पूर्व मिट्टी की जांच करावें ताकि बुवाई से पूर्व ही परिणाम प्राप्त हो जावें तथा उसके अनुसार खाद एवं उर्वरकों की उचित मात्रा का उपयोग किया जा सके।
- मिट्टी की जांच करवा कर सही मात्रा में उर्वरक देवें।

17.4 मृदा परीक्षण एवं प्रबन्ध

(अ) मृदा प्रबन्ध : मिट्टी के नमूने लेने की विधि

अच्छी उपज लेने के लिए खेत की मिट्टी का परीक्षण कराना जरूरी है। सही विधि से नमूने हेतु एकत्रित की गई मिट्टी के अलावा ली जाने वाली फसल का नाम आदि लिखकर प्रयोगशाला में भेजने से उपयुक्त सलाह मिल सकती है। नमूना लेने की विधियॉं, किस प्रकार की सिफारिश चाहिए, निम्नलिखित बातों पर निर्भर करती है।

(I) उर्वरकों की सिफारिश के लिए मिट्टी का नमूना लेना

1. ढलान, मिट्टी का प्रकार, फसल की बढ़वार और जल निकास इत्यादि के आधर पर अपने खेत को विभिन्न भागों में बॉटें।
2. हर भाग का अलग-अलग एक मिला-जुला नमूना ले अर्थात् मिट्टी की एक ही किस्म के 15-20 जगह से नमूने लेकर एक मिला-जुला नमूना बनायें।
3. नमूना लेने की जगह से पहले घास-फूस साफ कर लें।
4. जहां पर फसलें कतारों में बोई गई हो वहॉ कतारों के बीच से नमूना लें।
5. मिट्टी का नमूना 6" की गहराई तक लीजिये।
6. एक तिकोना 6" की गहराई का गढ्ढा खुरीपी या फावड़े से नमूना लेने के लिए बनायें।
7. इस प्रकार 15-20 जगहों से एकत्रित की गई मिट्टी को साफ कागज पर रखकर हाथ से अच्छी तरह मिला लें।
8. मिट्टी के ढेर को चार भागों में बॉट लें। आमने सामने वाले भग को छोड़ दें। करीब ½ किलोग्राम मिट्टी बचने तक इस विधि को अपनाते रहें।
9. नमूने में यदि ढेले हों तो उसे तोडिये। यदि मिट्टी नम हो तो उसे 2-3 घण्टे तक सुखायें।
10. नमूने को एक साफ थैली में भरकर उसके साथ नाम, पता, क्षेत्र में उगाई जाने वाली मुख्य फसलें, सिंचित, असिंचित क्षेत्र का विवरण भेजा जाये।
11. मिट्टी की जॉच बुवाई से पूर्व करवाकर सिफारिस के अनुसार उर्वरक उपयोग किया जाना चाहिए।
12. पेड़ तथा झाड़, सिंचाई की नालियॉ, कुंए अथवा मेड़ों के आस-पास, खाद की ढेरी के आस-पास, दलदल वाली जगह आदि जगहों से नमूने न लें।

(II) ऊसर भूमि का नमूना लेना

ऊसर भूमि का नमूना गहराई से लेना चाहिए। नमूने की गहराई ऊपर से 15 सेमी., 15-30 सेमी., 30-60 सेमी., और 60-100 सेमी. की चार सतहों का लेना चाहिए।

1. ऊसर भूमियों में बरमा से 100 सेमी का गड्ढा खोदकर नमूना लिया जा सकता है। गढ्ढे की एक तरु दीवार सीधी कर लें, ऊपर से 15, 30, 60 सेमी गहराई तक निशन लगावें। सीधी दीवार से 15 सेमी तक कस्सी से मिट्टी सहित बाहर निकालें कस्सी की मिट्टी हटाकर बीच का हिस्सा साफ कपड़े में रखें, इस तरह 15-30, 30-60, 60-100 सेमी गहराई का नमूना लेवें।
2. उसके अलावा ऊपरी सतह का एक नमूना उर्वरकी की सिफारिश के लिए नमूना लेने की विधि से लेवें।
3. प्रत्येक नमूनों को अलग-अलग साफ कपड़े की थैली में भरें। गहराई, ढलान, ऊसर भूमि बनने का कारण, वर्षा, फसल चक्र, भूमि जल स्तर आदि का विवरण कागज की पर्ची में लिखकर उसी थैली में रख दें।

4. बाग लगाने के लिए मिट्टी का नमूना लेने की विधि, फल के पेड़ों की वृद्धि के लिए मृदा का पोषण स्तर अन्य परिस्थितियां महत्वपूर्ण है। बाग लगाने वाली भूमि की 2 मीटर गहराई तक नमूना लेना चाहिए।

17.6 मृदा परीक्षण की विधियां

1. मृदा पी.एच. – मृदा नमूने का जल के साथ (1:25) निलम्बन बनाकर पी.एच. मीटर की सहायता से इसकी पी एच ज्ञात की जा सकती है।
2. विद्युत चालकता – मृदा के जल के साथ (1/25) निलम्बन की कन्डक्टीविटी मीटर की सहायता से विद्युत चालकता प्राप्त की जाती है। इससे विलय लक्षणों का आकलन किया जाता है।
3. मृदा कणाकार – नम मृदा को अंगूठे व अंगूलि के मध्य रगड़कर मृदा कणाकार निर्धारित किया जा सकता है। अन्तराष्ट्रीय पिपेट विधि द्वारा भी मृदा का कणाकार का सही निर्धारण किया जाता है।
4. कार्बनिक पदार्थ - मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा का निर्धारण वाकले तथा ब्लैक आयतनात्मक विधि द्वारा करते है।
5. प्राप्य नाइट्रोजन – मृदा नमून में प्राप्य नाइट्रोजन का आकलन जैलडान विधि से आयतन ज्ञात करके कर लेते हैं।
6. प्राप्य फॉसफोरस – ओलसन विधि द्वारा मृदा का N/2 $NaHCO_3$ निष्कर्ष प्राप्त करते हैं। इस रंग की सघनता की तुलना प्रामाणित विलयन के रंग के साथ करके अमोनिया मोलिब्डेट व स्टेनम क्लोराइड द्वारा रंग की सघनता से सीधे ही या कैलोरोमीटर द्वारा करके प्राप्य फास्फोरस की मात्रा की गणना कर लेते है।
7. प्राप्य पोटेशियम – मृदा में अमोनिया ऐसीटेट के साथ निष्कर्षण करके मृदा मे प्राप्य पोटेशियम की मात्रा का निर्धारण ज्वाला प्रकाश मापी द्वारा कर लेते है। मृदा निष्कर्ष में सोडियम कोबाल्टी नाइट्राइट डालकर गदलापन उत्पन्न करके भी प्राप्य पोटेशियम का निर्धारण किया जा सकता है।
8. इसके अतिरिक्त गौण तत्व Ca, Mg तथा S अथवा सूक्ष्म तत्वों का निर्धारण प्रमाणित विधियों द्वारा किया जा सकता है। अत्यधिक अम्लीय या क्षारीय मृदाओं के लिए उपयुक्त सुधारक की मात्रा का निर्धारण भी मृदा परीक्षण की सहायता से किया जा सकता है।

17.6 मिट्टी परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग

पृथ्वी की ऊपरी सतह जिसे माटी, मृदा या मिट्टी कहते हैं। हमारे जीवन का आधार है। मृदा परीक्षण मृदा उर्वरकता को ज्ञात करने एवं फसलों की पोषक तत्व संबंधी आवश्यकताओं को शीघ्र ज्ञात करने के एक वैज्ञानिक तरीके के रूप में स्थापित हो चुका है। जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के लिए हम माटी में निरन्तर खद एवं उर्वरकों का उपयोग बढ़ाते जा रहे हैं। हमारे देश में उर्वरकों की मांग खपत से अधिक होने के कारण आयात द्वारा कमी को पूरा करना पड़ रहा है। अच्छी उपज लेने के लिए पौधों के पोषक तत्वों की आपूर्ति बनाए रखना आवश्यक है जो कि खाद एवं अर्वरकों के प्रयोग के द्वारा ही संभव है। फसल का आर्थिक उत्पादन उर्वरकों के संतुलित मात्रा में प्रयोग के ऊपर

निर्भर है। किसी भी फसल में पोषक तत्वों के लाभकारी दर का निर्धारण वैज्ञानिकों द्वारा उपलब्ध कराई गई जानकारी के बगैर किसानों द्वारा नहीं किया जाता है और सामान्य संस्तुतियां जो कि क्षेत्रीय मृदा परीक्षण के आधार पर की जाती हैं, बहुत सी दशाओं में उपयुक्त नहीं होती हैं। मिट्टी परीक्षण के बगैर उर्वरक प्रयोग करना केवल धन का अपव्यय है और मिट्टी परीक्षण के बाद ही उर्वरकों का प्रयोग करना किसान के हित में है। मिट्टी परीक्षण का मतलब केवल त्वरित रासायनिक परीक्षण द्वारा मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों की उपलब्धता ज्ञान लेने से ही नहीं बल्कि मिट्टी के नमूने एकत्र करना, उनका रासायनिक परीक्षण, उनके परिणाम का मूल्यांकन तथा अधिक उपज हेतु उपयुक्त प्रबंध बनाने के सुझाव से है। प्रत्येक नमूने को परीक्षण मान दो सवालों का जवाब अवश्य दें :

1. क्या पोषक तत्व की उपलब्धता बोई जाने वाली फसल के लिए पर्याप्त हैं?
2. यदि नहीं, तो इस फसल अथवा इसके क्रम में बोई जाने वाली फसल के लिए कितने पोषक तत्वों की आवश्यकता है?

मृदा परीक्षण का एक उद्देश्य पोषक तत्वों की बगैर कमी वाले क्षेत्रों में पोषक तत्व की कमी वाले क्षेत्रों को खोजना है। क्या कोई जमीन इष्टतम उपज प्राप्त करने के लिए आवश्यक पोषक तत्वों को प्रदाय कर सकती है या नहीं के लिये यह जानकारी महत्वपूर्ण है। जो भी किसान अपनी उपज बढ़ाना चाहते हैं वह अपने आप से पूछते हैं कि क्या उर्वरक प्रयोग उपज बढ़ायेगा और उनका प्रयोग वाकई लाभकारी है। उर्वरक उपयोग का उद्देश्य प्रति हैक्टर जमीन में अधिकतम लाभ प्राप्त करना होता है। राष्ट्रीय हित खेती वाली जमीन से अधिकतम उपज प्राप्त करना है जबकि कियानों का हित अधिकतम उपज में न होकर लाभकारी उपज में है। अनियंत्रित उर्वरकों का प्रयोग किसी भी समस्या का समाधान नहीं है। इससे फसलोत्पादन की लागत बढ़ने के साथ-साथ म़दा स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। जब हमें मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों के स्तर का ज्ञान होगा तभी हम संतुलित उर्वरक प्रयोग की दशा में कदम उठा सकते हैं।

मिट्टी परीक्षण क्यों?

1. मिट्टी की पोषक तत्व प्रदाय क्षमता ज्ञात करने की एवं जमीन में मिलाये गय उर्वरकों की उत्तरदायिता ज्ञात करने के लिये।
2. परीक्षण के आधार पर फसल की आवश्यकतानुसार उर्वरकों की उपयुक्त तथा लाभकारी दर निर्धारित करने के लिये।
3. ऐसी भूमियां जहां उर्वरकों की आवश्यकता नहीं है, वहां पर उर्वरकों का प्रयोग न करके उनकी बचत करना।
4. विभिन्न क्षेत्रों के लिए मृदा उर्वरता मानचित्र तैयार करने के लिए।
5. फसलों की इष्टतम उपज प्राप्त करने के लिये उनकी आवश्यकतानुसार उर्वरक तथा सुधारक प्रयोग करने हेतु।
6. उर्वरकों की उपयोग क्षमता में वृद्धि करना।

17.7 मिट्टी परीक्षण के चरण

1. मिट्टी के नमूनों को एकत्र करना।
2. नमूनों को तैयार करना।
3. मिट्टी परीक्षण प्रयोगशालाओं में मिट्टी परीक्षण करना।
4. मिट्टी परीक्षण के नतीजों के आधार पर उर्वरक संस्तुति करना।

नमूना कैसे लें?

1. नमूना ऐसी जगह से लिया जाये कि उन मिट्टियों का वास्तविक प्रतिनिधित्व कर सके। खेत को उसकी स्थिति (समतल, ऊंची-नीची, ढलान) एवं मिट्टी की किस्म के अनुसार बांट लेते हैं।
2. नमूना लेने के लिये लगभग एक हैक्टयर क्षेत्र से 15-20 स्थानों का यादृच्छिक (रेन्डम) चयन करते हैं।
3. नमूना लेने वाले स्थान से घास-फूंस इत्यादि साफ कर लेते हैं। खुर्पी या फावड़ा की सहायता से लगभग 15 सेमी. गहरा अंग्रेजी के 'बी' आकार का गढ्ढा खोदकर किसी भी तरु से पूरी गहराई तक की मिट्टी की एक समान परत काटकर किसी साफ बाल्टी में एकत्र कर लेते हैं।
4. एकत्र नमूनों को आपस में अच्छी प्रकार से मिला लें एवं छाया में सुखयें। सुखाने के बाद नमूनों में ढेले को फोड़कर बारीक खरपतवार, पौधें की जड़ें, कंकड़-पत्थर आदि को निकालकर फेंक दें।
5. बची हुई मिट्टी को गोल या चौकोर रूप देकर चार भागों में विभाजित करके दो विपरीत दिशा के भाग निकालकर अलग करने का कार्य तब करें जब तक 500 ग्राम मिट्टी शेष न रह जाये।
6. कपड़े की किसी साफ पॉलीथिन या कपड़े की थैली में भरकर उसमें पहचान के लिए सूचना पत्रक को अंदर डालकर प्रयोगशाला में भेज देनी चाहिए।

मिट्टी परीक्षण कब :

मिट्टी परीक्षण के लिए नमूने वर्ष के किसी भी समय एकत्र किए जा सकते हैं परन्तु खरीफ की फसलों की कटाई उपरान्त नमूने एकत्र करने में कई फायदे हैं। वर्षा आधारित बारानी दशाओं में नमूने खरीफ फसलों की कटाई उपरान्त तथा सिंचित दशा में खरीफ अथवा रबी की फसल की कटाई उपरान्त नमूने लिए जा सकते हैं।

बहुत सी दशाओं में दो या तीन वर्ष अंतराल पर मृदा परीक्षण करना चाहिए। यदि उपयुक्त मिट्टी परीक्षण विधियां नहीं अपनाई जायेंगी तो पोष्ज्ञक तत्वों की कमी अथवा आवश्यकता से अधिक उर्वरकों का प्रयोग हो सकता है।

नमूना लेने में सावधनियां : मिट्टी के नमूने एकत्रित करते समय निम्नलिखित सावधनियां रखनी चाहिए –

1. खाद के गढ्ढे, मेंढ तथा वृक्षों के नीचे से नमूने नहीं लेने चाहिए।

2. अधिक पोषक तत्व शोषित करने वाली फसलों वाले क्षेत्र के नमूने एवं जहां केवल अनाज की फसल ली गई हो तथा डंठल एवं ठूंठ वगैरह खेत में ही छोड़ दिए गए हों, के नमूने अलग-अलग लेने चाहिए।
3. ऐसे क्षेत्र जहां अधिकतर समय पानी भरा रहता हो वहां नमूने एकत्रित न करें।
4. मृदा अपरदन के कारण जिस क्षेत्र की ऊपरी सतह कटकर बह गई हो तो उसके नमूने अलग कर लेने चाहिए।
5. यिद नमूना लेनेवाला क्षेत्र बड़ा है तो नमूने की संख्या उसी अनुरूप बढ़ा देनी चाहिए। एकत्रित मृदा नमूनों को न तो उर्वरकों के बोरे के पास रखना चाहिए और न ही उन पर सुखाना चाहिए।
6. नमूने लेते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि किस क्षेत्र में उर्वरक का प्रयोग किया गया है तथा किस में नहीं।
7. नमूने का सही रिकार्ड रखना चाहिए।

नमूने को प्रयोगशाला में कैसे भेजें?

मिट्टी के नमूने के साथ भेजे जाने वाले सूचना पत्र की दो प्रतियां तैयार करके एक प्रति थैली के अंदर रखकर तथा दूसरी थैली का मुंह बांधने के साथ देनी चाहिए। सूचना पत्र पर निम्न लिखित जानकारी देनी चाहिए :-

1. किसान का नाम व पता
2. नमूना एकत्र करने की तिथि
3. खेत का नंबर या नाम
4. पिछली बोई गई फसल एवं प्रस्तावित फसल का नाम

एकत्रित नमूनों की जांच के लिए स्वयं, डाक पार्सल द्वारा या किसी कृषि प्रसार कार्यकर्ता के माध्यम से निकट की मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला में भेज देनी चाहिए।

17.8 मिट्टी परीक्षण में जांच किए जाने वाले बिंदू

1. **मृदा पी.एच. मान** :- इसके द्वारा मिट्टी की अभिक्रिया का पता चलता है कि मिट्टी सामान्य, अम्लीय या क्षारीय प्रकृति की है। मिट्टी से प्राप्त प्रोषक तत्वों को पौधों द्वारा ग्रहण करना बहुत सीमा तक मृदा पी.एच. पर निर्भर करता है। सामान्य मृदा पी.एच. मान 6.5 से 7.5 के बीच होता है। 6.5 से कम होने पर भूमि अम्लीय तथा 7.5 से अधिक होने पर भूमि क्षारीय होती है। अम्लीय भूमि के लिये चूने व क्षारीय भूमि के लिये जिप्सम की आवश्यक मात्रा ज्ञात करने के लिये मिट्टी की जांच की जाती है। ताकि उसको सुधरा जा सके। समस्याप्रद मिट्टियों में फसलों की उपयुक्त प्रजातियों की संस्तुति की जाती है। जो अम्लीयता अथवा क्षारीयता को सहन करने की क्षमता रखती हो। मृदा पी.एच. मान के आधर पर ऐसे उर्वरकों की संस्तुति भी की जाती है जिससे मिट्टी का पी.एच. मान सामान्य बना रहे।

2. **जैविक कार्बन :-** नाइट्रोजन युक्त उर्वरकों की संस्तुति के लिए जैविक कार्बन को आधार माना जाता है। क्योंकि मिट्टी में जैविक कार्बन एवं सुलभ नाइट्रोजन एवं निश्चित मात्रा में पाये जाते हैं। जैविक मात्रा की मात्रा ज्ञात होने पर भूमि में उपलब्ध नाइट्रोजन की मात्रा ज्ञात की जा सकती है।
3. **सुलभ फॉस्फोरस एवं सुलभ पोटाश :-** मृदा परीक्षण के आधर पर इन तत्वों की सिफारिश कि.ग्रा. प्रति हैक्टयर या किलोग्राम प्रति एकट के हिसाब से की जाती है। पोषक तत्वों का सुलभ रूप वह होता है कि जिसे पौधे आसानी से प्राप्त कर लेते हैं। उर्वरक संस्तुति के लिए इन तत्वों की मात्रा तय की जाती है तथा प्रति हैक्टयर कितना उर्वरक लगाना चाहिए इस बात पर निर्भर है कि अमुक फसल को किस पोषक तत्व की कितनी मात्रा की आवश्यकता है और कौन सा उर्वरक बाजार में उपलब्ध है।
4. **मृदा परीक्षण रिपोर्ट प्रस्तुत करने का तरीका -** एक अच्छी मृदा का परीक्षण आधारित उर्वरक अनुशंसा किसानों के खेतों की जानकारी, उनमें फसलोत्पाद का इतिहास, सिंचाई सुविधायें, बोई जाने वाली फसलों की किस्में तथा घरेलू स्रोतों जैसे कम्पोस्ट, गोबर की खाद हरी खाद से पोषक तत्वों की उपलब्धता आदि पर निर्भर करती है। उपरोक्त की सम्पूर्ण जानकारी, पोषक तत्वों को ज्ञात करने के त्रुटिरहित एवं सुनिश्चित तरीकों को अपनाकर तथा मृद की भौतिक अवस्थाओं को ध्यान में रखते हुए उर्वरक अनुशंसा की जाती है। फार्म पर उपलब्ध विभिन्न स्रोतों की कितनी मात्रा का एकल अथवा मिश्रित रूप में प्रयोग किया जाना है को अनुशंसित करना चाहिए। उर्वरक अनुशंसाओं को किसानों को भली-भॉति जानकारी देनी चाहिए। जिससे वे उनका पूर्णरूपेण उपयोग कर सकें। जो भी अनुशंसा हो वह किसानों तक उनकी आम बोल-चाल की भाषा में ही पहुंचाई जाये। मृदा परीक्षण कार्यक्रम को वांछित सफलता न मिलने का प्रमुख कारण मृदा नमूनों को एकत्र करने और किसानों के पास उसके परिणाम आने में लगे लंबे समय से है। किसानों के पास जो अनुशंसायें किसानों द्वारा उर्वरक आदि खरीदने से पूर्व आ जानी चाहिए जिससे किसान उनको समझकर उनका लाभ उठा सकें। अत: मृदा नमूने एकत्र करने एवं परीक्षण अनुशंसाओं के बीच के अंतराल को कम किया जाये।

उर्वरक की मात्रा ज्ञात करने के लिए सिफारिश
पोषक तत्वों के गुणांक

तत्व	**गुणांक**	**उर्वरक**
नाइट्रोजन	2.20	यूरिया
	5.56	डाई अमोनियम फास्फेट
	4.00	कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट
	5.00	अमोनियम सल्फेट
फॉस्फोरस	4.00	अमोनियम क्लोराइड
	6.25	सिंगल सुपर फास्फेट
	2.17	डाई अमोनियम फास्फेट

पोटाश	1.67 2.00	म्यूरेट ऑफ पोटाश सल्फेट ऑफ पोटाश

17.9 मृदा की पोषक आवश्यकताऐं ज्ञात करने की विधियां

1. क्षेत्र परीक्षण -

मृदा की पोषक आवश्यकता ज्ञात करने की वह विधि सबसे अधिक विश्वसनीय है क्योंकि खेत तथा मिट्टी की प्राकृतिक दशाओं में किये गये इन परीक्षणों द्वारा अमूल्य परिणाम प्राप्त होते है। इस विधि में परिश्रम अधिक करना पड़ता है, समय अधिक लगता है, बड़े बड़े खेतों व प्रयोगशालाओं की आवश्यकता होती है ओर व्यय भी अधिक होता है। इन परीक्षणों को दो भागों में विभाजित कर सकते हैं -

(i) कृषक के खेतों पर किये जाने वाले साधारण उर्वरक परीक्षण

(ii) गर्वनेमेंट फार्मों व कृषकों के खेतों पर किये जाने वाले जटिल परीक्षण

आजकल ये परीक्षण बीज की किस्म, फसल की प्रकृति बोने का समय, सिंचाई का प्रबन्ध, मृदा की प्राकृतिक दशा तथा उर्वरक प्रयोग करने का समय आदि कृषि संबंधी सभी कारकों को ध्यान में रखते हुए किये जाते हैं।

2. विभिन्न तत्वों की कमी के लक्षण

मृदा में किसी विशेष तत्व की कमी होने से पौधों को यह तत्व प्राप्त नहीं होता। पौधों में इसकी कमी के विशेष लक्षण दिखाई देने लगते हैं। उदाहरणार्थ –

1. पत्तियों का रंग पीला हो जाना नीचे की पत्तियों का सूख जाना और पौधों की उंचाई का कम हो जाना मृदा में नाइट्रोजन की कमी के घोतक है।
2. पौधों का रंग हरा, लाल और बैंगनी हो जानाधीमी वृद्धि होना और नीचे की पत्तियों का सूखना , और उनका रंग बैंगनी हो जाने से मृदा में फास्फ ोरस की कमी प्रदर्शित होती है।
3. शीघ्र परीक्षण क परीक्षण कर रासायनिक प्रतिकारकों की सहायता से इस विधि में गुणात्म – से पोषकतत वाले भागोंपत्ती व निष्कार्षित किये जाते हैं। रंग की तीव्रता के आधार पर परिणामों को निम्नधिक आदि में विभाजित कर सकते हैं। यदि अधिक तथा अत्य ,ममध्य , हो तो मृदा में उस पोषक विशेष की कमी नहीं होती है। विशेष का निम्नपरीक्षण पोषक तत्व विशेषत्वऐसी दशा में मृदा को उस त काउर्वरक प्रदान किया जाता है। वास्तव में ये परीक्षण मृदा की उर्वरक आवश्यकता ज्ञात करने का मार्ग प्रदर्शन करते है।
4. पादप भस्म परीक्षण , की मात्रा मृदा की प्रकृति तत्वोंपौधे के शरीरमें पाये जाने वाले विभिन्न – पौधे के प ,खेती करने की विधि ,पौधों की जातिरिपक्व होने की दशायें और जलवायु आदि पर निर्भरकरती है। अतकता का षण करने से मृदा की उर्वरक आवश्यपौधोंकीराख का विश्ले : केवल कुछ ही ज्ञात प्राप्त किय जा सकता है।

5. पात्र परीक्षण - इस विधि में अनेकों पात्रों में मिट्टी भर कर तथा विभिन्न उर्वरक डालकर फसल की वृद्धि या पादप राख का विश्लेषण कर मृदा की पोषक आवश्यता का पता लगाया जा सकता है। ये परीक्षण खेत की परिस्थतियों में नहीं किये जा सकते और प्रायप्रयोगशालाओं या : यह परीक्षण पूर्ण ला :कांच ग्रहों में ही नियंत्रित किये जाते हैं। अतभकारी नहीं है।
6. पादप रस तथा तन्तु परीक्षण का परीक्षण करने से इननमें उपस्थित पौधे के रस तथा तन्तु – की मात्रा का पता लगाया जा सकता है। इससे मृदा की रासायनिक दशा के विभिनन तत्वों कता ज्ञात करने यह परीक्षण मृदा की उर्वरक आवश्य :हो जाती है। अतविषय में जानकारी प्राप्त होता है। में सहायक इससे मृदा में विभिन्न तत्वों की कमी और वैधिकता का ज्ञात भी प्रापत हो सकता है।

17.10 सारांश

मृदा उर्वरता एक परिवर्ती गुण है जो एक स्थान एवं समय के साथ परावर्तित होती रहती है। इस परिर्वतन की दशा मुख्यत के हास और खादय एवंफसल के रूप में पोषक तत्वों :उर्वरक के रूप में दिये गये पोषक तत्वों की मात्रा के सतुलन पर निर्भर करती है ऐसा देखा गया है कि केवल नाइट्रोजनी उर्वरकों के निरन्तर प्रयोग करने पर मृदा में फास्फोरस तथा पोटेशियम की प्राप्य मात्रा धीरे धीरे कम हो जाती है। फलतइन : की आपूर्तिपोषक तत्वोंफास्फोरस तथा पोटेशियम युक्त उर्वरकों द्वारा किये बिना उपज प्राप्त करना असम्भव हो जाता है अतक हो जाता है। कन करना आवश्यमृदा उर्वरता का समय समय पर मूल्यां : त की मिट्टी की जांच मृदा परीक्षण प्रयोगशाला मेंक खेत प्रत्येतीन वर्ष के पश्चा-तया दोसामान्यकरा लेनी चाहिए।

17.11 अभ्यास प्रश्न

1. मिट्टी के नमूने की जांच का शुल्क मुख्य पौषक तत्वों के लिए कितने रूपये हैं ?

(अ) 5 रूपये (ब) 15 रूपये

(स) 20रूपये (द)25रूपये

(अ)

2. मिट्टी की जांचके लिए मिट्टी का नमूना कितनी गहराई तक लेना चाहिए ?

(अ) 6" (ब) 16"

(स) 10" (द)20"

(अ)

3. मृदा परिक्षण के लिए नमूना लेने के लिये लगभग एक हैक्टयर क्षेत्र से कितने स्थानों का यादृच्छिक (रेन्डम) चयन करते हैं?

(अ) 5-10 (ब) 10-15

(स) 20-25 (द) 15-20 **(द)**

4. मृदा परीक्षण के उद्देश्य क्या हैं ?

5. मृदा परीक्षण की विधियां समझाइए ?

17.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

- यादव, एस.पी.एस. 2007. ऊसर भूमियों को उपजाऊ बनाएं. विश्व कृषि संचार, जून-2007.
- शर्मा, ओ.पी., इन्टोदिया, एस.के., शर्मा, एस.एल. एवं नकेला, एन.एस. 2009. शस्य विज्ञान (कृषि वर्ग), माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर.
- चौधरी, जे. पी., 2000. मृदा विज्ञान : खाद एवं उर्वरक. भारती पब्लिकेशन, बडोत (बागपत).
- जाट, बी.एल. 2012. क्षारीय व लवणीय भूमि सुधार. विश्व कृषि संचार, मई- 2012.

इकाई – 18

कृषि रसायन

इकाई की रूपरेखा

18.1 उद्देश्य

18.2 प्रस्तावना

18.3 कृषि रासायनिक पदार्थों के प्रकार

18.3.1 कीट नाशक

18.3.2 उर्वरक

18.3.3 क्षारीय और अम्लीय घटक

18.3.4 मृदा कंडीशनर (अनुकूलन)

18.3.5 रसायन जो कि पशुपालन के उपयोग में लाये जाते है

18.4 कृषि रसायनों की डिब्बाबंदी

18.5 कृषि रसायनों का परिवहन

10.6 कृषि रसायनों का भंडारण-

18.7 अन्य तथ्य

18.8 पात्रों एवं अपशिष्टों का निस्तारण

18.9 कृषि रसायनों के पर्यावरणीय खतरे

18.10 सारांश

18.11 बहु चयनात्मक प्रश्न

18.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

18.0 उद्देश्य

इस अध्याय से आप निम्न ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे

- कृषि रसायन क्या है, व इनके प्रकार
- कृषि रसायनों की पेंकिंग कैसे की जाती है।
- इनका परिवहन व भण्डारण कैसे किया जाता है।
- साथ ही इनका सुरक्षित निस्तारण कैसे किया जाता है।

18.1 प्रस्तावना

फसल की उपज में वृद्धि इसके स्वस्थ्य पोषण, कीटों, खरपतवारों के नाश एवं मृदा की उर्वरा शक्ति बढाने के लिए विभिन्न कृषि रसायनों का उपयोग किया जाता है, कृषकों को इन रसायनों के रखरखाव एवं भण्डारण के नियमों का ज्ञान होना आवश्यक है, अन्यथा ये रसायन मानव, जीवजन्तुओं समस्त पर्यावरण को भारी क्षति पहुंचा सकते है। साथ ही उपयोग के बाद भी इनका निपटारा (निस्तारण) करना अनिवार्य होता है। जिसके लिए कृषकों को इनके निस्तारण के सुरक्षित नियमों व उपायों का ज्ञान होना आवश्यक है।

कृषि रसायनिक पदार्थ क्या हैं ?

वे रासायनिक पदार्थ जो कृषि कार्यों में उपयोग में लिये जाते है कृषि रासायनिक पदार्थ कहलाते है।

18.3 कृषि रासायनिक पदार्थों के प्रकार

18.3.1 कीट नाशक

वे पदार्थ जो आवांछनीय पादपों या जानवरों को मारने, प्रतिकर्षित करने या नियंत्रित करने के लिए उपयोग में लिये जाते है कीटनाशक कहलाते है। कीटनाशकों में शाकनाशी, कीटनाशी, कवकनाशी कीटाणुनाशी आदि शामिल है जो आवांछनीय बीजो, पैड पौधों और विभिन्न कीटों के नाश के लिए उपयोग में लाऐ जाते है। कवक नाशी विभिन्न कवकों व फफूंदी की वृद्धि को रोकते है। भोष्य उत्पादन में कृषि रसायनों का व्यापक उपयोग के रहा है। यद्यपि वैज्ञानिक इन कीटनाशासकों के अवशेषों का स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव को भली भांति ज्ञान नहीं कर पाये है। किसानों के परिवारों पर कीटनाश्कों के विपरित प्रभाव के अध्ययन से नतीजानुसार तथ्य सामने आये है कि इन परिवारों में सिर दर्द में वृद्धि, थकान, अनिद्रा, चक्कर आना, हाथ में चटके आना एवं अन्य स्नायु संबंधि लक्षण अधिक बढ गये है। साक्ष्य जताते है कि बच्चे इन कीटनाशकों के दुष्प्रभाव के प्रति अतिसंवेदनशील है। इन कीटनाशकों के संपर्क में लोग अपने घरों, विद्यालयों, अस्पताल व कार्यस्थलों पर भी आ रहे है।

शताब्दियों पहले पादप संरक्षण क्रियाविधि के लिए कोई वैज्ञानिक आधार नहीं था, फलस्वरूप पादप संरक्षण के लिए कई प्राचीन विधियां प्रयोग में ली जाती थी। उदाहरण स्वरूप गेहूं के संरक्षण के लिए इन्हें नमके के पानी में भिगोया जाता था, सिरके व राख का भी उपयोग किया जाता था। 2700 सालों पहले यूनानियों द्वारा कवकनाशी के रूप में सल्फर का प्रयोग किया जाता था जबकि इसी दौरान चीन में कीटनाशकों के रूप में आर्सेनिक के यौगिकों का उपयोग किया जाता था।

18.3.2 उर्वरक

उर्वरक वे रासायनिक यौगिक है जो पादप वृद्धि को बढाने के लिए प्रयोग में लाऐ जाते है। सामान्यतया उर्वरकों को भूमि द्वारा या पत्तियों द्वारा पादपों में पहुंचाया जाता है। उर्वरकों को मुख्य रूप से दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है कार्बनिक व अकार्बनिक उर्वरक। कार्बनिक उर्वरक प्राकृतिक प्रक्रिया द्वारा बनते है जबकि अकार्बनिक उर्वरक प्राकृतिक भण्डारों द्वारा प्राप्त यौगिकों की रसायनिक अभिक्रिया द्वारा बनाये जाते हैं जैसे सान्द्र ट्रिपल सुपर फास्फेट। कार्बनिक उर्वरकों में वे जरूरी कार्बनिक पोषक तत्व होते है जो

मृदा की उर्वर शक्ति एवं पादपों की वृद्धि को बढ़ने में सहायक होते हैं। कार्बनिक पोषक तत्व सूक्ष्म जीवों को कार्बनिक पदार्थ एवं सूक्ष्म पोषक तत्व प्रदान करते है जिससे भूमि में इनकी प्रचुरता में वृद्वि होती है। जैसे की फंगल माइकोरिज़ा, ये सूक्ष्म जीव पादपों में पोषकों के अवशोषण में सहायक होते है।

ये रासायनिक उर्वरक मृदा में उपसिथत इन जीवों एवं भूमि की उर्वरा शक्ति पर दीर्घकालिक प्रतिकूल प्रभाव डाल सकते है।उर्वरक भूमि में जरूरी पोषक तत्वों की आपूर्ति करते है जिससे फसल दर में वृद्धि होती है। सामान्यतया नाइट्रोजन फास्फोरस एवं पोटेशियम के यौगिकों के उर्वरक काम में लिये जाते है।

18.3.3 क्षारीय और अम्लीय घटक

कई फसलों की सामान्य वृद्धि के विपरित कृषि भूमि यातो अधिक अम्लीय होती है या अधिक क्षारीय, अत: विभिन्न प्रकार के रसायनिक यौगिकों का उपयोग भूमि की पी.एच. को समायोजित करने के लिए किया जाता है। अम्लीयता कृषि भूमि की प्रमुख समस्या है। मृदा का अम्लीयकरण कई कारकों द्वारा हो सकता है जैसे फसलों के जैवमास में क्षारक पदार्थों का निष्कासन, विशेष प्रकार के उर्वरकों का उपयोग, अम्लीय वर्षा, सल्फाइड लवणों का ऑक्सीकरण और मृदा में विशेष प्रकार के कार्बनिक पदार्थों की उपस्थिति। चूंकि यह एक प्रमुख समस्या है मृदा का अम्लीय करण कई कारकों द्वारा हो सकता है। चूंकि यह एक प्रमुख समस्या है अत: प्रति वर्ष मृदा में मिलाई गई मात्रा के आधार पर अम्ल उदासीनिकरण पदार्थ सर्वाधिक महत्वपूर्ण कृषि रसायन है। अम्लीय मृदा को सामान्यतया कैल्सियम युक्त लवकों द्वारा उदासीन किया जाता है जैसे कि केल्साइट यह लाइमस्टोन पाउडर क्रश् किये हुए पौधे के घोल के रूप में उपयोग में लाया जाता है। इनके अलावा मृदा अम्लता की अम्लता क्रियाशील लाइक के द्वारा भी समाप्त की जा सकती है। अम्ल उदासीनीकारक तत्वों के अनुप्रयोग की दर बदलती रखी है। जैसे कि प्रतिवर्ष कई सो; पाउडस प्रति एकड से प्रति वर्ष 1000 पाउडस प्रति एकड से भी अधिक। यह मृदा की अम्लीयता, नयी अमलता के उत्पन्न होने की दर और विशेष प्रकार की फसल की आवश्यकता पर निर्भर करती है।

कहीं कहीं मृदा में क्षारकता की कुछ मात्रा भी हो सकती है। मृदा को अम्लीय करके कुछ हद तक इसकी पीएच के उपयुक्त स्तर तक लाया जाता है। जिससे की फसलों की वृद्धि ठिक तरह से हो सकें। यह समस्या विशेषतया ऐसी मृदा में होती है जिसके उत्पति उप पैतृक पदार्थों से हुई हो जिसमें लाइमस्टोन था डोलामाइट मात्रा अधिक है।

ऐसी मृदा को सल्फर के यौगिक मिलाकर अम्लीय किया जा सकता या अम्लीय कार्बनिक पदार्थ मिलाकर जैसे

18.3.4 मृदा कंडीशनर (अनुकूलन)

वे रसायनिक पदार्थ जोकि मृदा को उसके सही आकार में बनाये रखते है सबसे महत्वपूर्ण होते है। इन्हें मृदा कंडीशनर कहते है। इनमें खाद, कम्पोस्ट घास एवं पत्तियां शामिल है सभी मृदा कंडीशनर मृदा की उपर सतह पर डाले जाते है। (लगभग 2-3 इंच गहराई में) और मिलाये जाते है।

इस प्रकार के पदार्थ मृदा की स्थिति को अधिक बहतर करने के लिए मिलाए जाते है ताकि इनमें वायु एवं जल को वहन करने की क्षमता में वृद्धि हो सके। घास, फसलों के अवशेष, मवेशियों की खाद कुछ ऐसे पदार्थ है जिनका उपयोग सामान्यतया मृदा कंडीशनर के उत्पादन में किया जाता है।

18.3.5 रसायन जो कि पशुपालन के उपयोग में लाये जाते है

जैसे की प्रतिजैविक और हार्मोन, प्रतिजैविकों एवं हार्मोन्स को पर्यावरणीय सूक्ष्म संदूषक समझा जाता है क्योंकि इनका मानव स्वास्थ्य एवं परिस्थितिक तंत्र पर विपरीत प्रभाव पडता है। कृषि उत्पादकता में वृद्धि करना कृषि रसायनों का एक लाभदायक पक्ष है। वही दूसरी ओर ये रसायन पारिस्थितिक एवं पर्यावरणीय तंत्र के लिए चेतावनी बनते जा रहे है।

8.4 कृषि रसायनों की डिब्बाबंदी

कृषि रसायनों का विवरण सामान्यतया पैकेटस में किया जाता है। इनके आकार में विविछता पाई जा सकती है जैसे कि छोटी सी बोतल या डिब्बे से लेकर बडे बडे धातु या प्लास्टिक के ड्रम। ये पैक्केट्स कांच, धातु, प्लास्टिक या कागज के बने होते है। कुछ प्रकरणों में उच्च आंतरिक दाब देकर डिब्बाबंदी की जाती है जैसे कि द्रवित गैसे मिथाइल ब्रोमाइड या निर्जलीय अमोनिया ये पदार्थ पात्रों के अन्दर वाष्पित हो सकते है जिससे पात्र की दीवार पर दाब बढ जाता है। ऐसे पदार्थों के लिए दाब प्रतिरोधी या जंगरोधी पदार्थ की आवश्यकता होती है।

ऐसे उपभोक्ता जो कृषि रसायनों का उपयोग करते है उन्हें इसका भली प्रकार ज्ञान होना चाहिए कि कृषि रसायनों की पेंकिग में राष्ट्रीय मानकों एवं नियामकों की पालना की गई देना है या नहीं। कुछ देशों में ऐसे नियामक लागू नहीं होते । इसलिए यह आवश्यक है कि उपयोगकर्ता पैकेजिंग के लिए आवश्यक सामान्य जानकारी के प्रति जागरूक रहे। यह जानकारी कृषि रसायन क्रय के समय कृषि रसायनों की व्यवस्थित पेकिंग जानने के लिए बहुत उपयोगी होती है। अव्यवस्थित पेकिंग वाले उत्पाद स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकते है।

कृषि रसायनों की पेकिंग निम्न प्रकार होनी चाहिए ताकि

1 पदार्थ इनके भण्डरण एवं वितरण के समय बाहर ना निकले।

2 पदार्थ विकृत ना हो।

3 पात्र ऐसे पदार्थ से बने हो जो कि इनमें उपस्थित पदार्थ से कोई अभिक्रिया न करे।

4 इनके सभी भाग ठीक तरह से बने होने चाहिए एवं ये वातावरणीय परिस्थितयों के बदलाव से अप्रभावित रहने चाहिए जैसे ताप, दाब, आर्द्रता।

5 ये सील बंद होने चाहिए।

6 लेबल लगे होने चाहिए या निशान होने चाहिए।

18.5 कृषि रसायनों का परिवहन

कृषि रसायनों के निर्माताओं निर्यातकों एवं आयताकों को अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय परिवहन सुरक्षा नियमो की पालना करनी चाहिए, नियमों के प्रति सजग रहना चाहिए, साथ ही कृषि रसायनों के वितरकों से खेतों तक या भण्डार ग्रहों से क्षेत्र तक के परिवहन के प्रति उपयोगकर्ताओं को सचेत रहना चाहिए।

सुरक्षित परिवहन में निम्न बिन्दु सुनिश्चित होने चाहिए -

1 वितरकों से वे उत्पाद ही ले जो अधिक गुणवत्ता वाले पात्रों में रखे गये हो।

2 पैकेटस व पात्रों का रखरखाव इस प्रकार किया गया हो कि उनमें अनावश्यक टकराव न हो न ही वे गिरे क्योंकि इनके कारण पात्र टूट सकते है या कमजोर हो सकते है जिसके परिणास्वरूप पात्रों में रखे पदार्थों का रिसाव हो सकता है।

3 कृषि रसायनों से संबंधित कोई भी सूचना जैसे कि इनकी लेवलिंग कंपनी से संबंधित ब्यौरा या डाटा सीट परिवहन के समय रसायनों के साथ ही रखे हो।

4 परिवहन के समय अव्यस्थित ढेर नहीं लगाना चाहिए जैसे कि जिनमें तरल उत्पाद भरे हो ऊपर की तरफ रखे होने चाहिए और इन पर आवश्यक भार न रखा हो जोकि विस्फोट का कारण हो सकते है।

5 एक ही वाहन में परिवहन किये जाने वाले सामानों में कृषि रसायन अन्य पदार्थों से पृथक रखे जाने चाहिए।

6 कागज़, गत्ते या जल में घुलनशील पेकेट्स को वर्षा व खराब मौसम से बचाने के लिए वाहनों पर छत या जलरोधी आवरण होना चाहिए।

7 कृषि रसायनों को किसी वाहन या ट्रेक्टर में ले जाते समय उन्हें चालक के कक्ष की तरफ नहीं रखना चाहिए।

8 चालकों को अतिरिक्त ध्यान रखना चाहिए। उन्हें किसी आपातकालीन परिस्थिति या मुढभेड के समय उपर्युक्त सावधानी बरतने के लिए सक्षम रहना चाहिए।

18.6 कृषि रसायनों का भंडारण

कृषि रसायन सामान्यतया वितरकों या उपयोगकर्ताओ द्वारा भंडार ग्रहों तक पहुंचाये जाते है । इन्हें खेत में आंशिक उपयोग के बाद पुन: भंडार ग्रहों में लौटया भी जाता है। भंडारण के समय इन पर चोरी होने, दुर्घटना या दुरूपयोग या खराब मौसम से प्रभावित होने का सर्वाधि क खतरा होता है। जो उपयोगकर्ता इन कृषि रसायनों का भंडारण करते हैं उन्हें भली भांति ज्ञात होना चाहिए कि इनके भंडार ग्रहों का निर्माण एवं रखरखाव किस प्रकार किया जाए ताकि इनकी एवं दूसरों की सुरक्षा सुनिश्चित हो सके। उपयोगकर्ताओ को इन रसायनों से होने वाले प्रदूषणों को रोकने के लिए आवश्यक कदम उठाने चाहिए।

सामान्यतया कृषि रसायनों का भंडारण सुरक्षित रूप से इस प्रकार होना चाहिए ताकि इनका वितरण खेतों तक आसानी से हो सके। यदि इनका भण्डारण ऐसी इमारत में है जहां अन्य उपयोगी पदार्थ भी उपस्थित रहे तो इन रसायनों को दूसरे सामानों से अलग रखना चाहिए जैसे कि ज्वलनशील सामग्री।

इन रसायनों के रिसाव व छलकने से होने वाले प्रदूषण को ध्यान में रखते हुए भण्डारण उपर्युक्त स्थान पर होना चाहिए जैसे कि रहवाशी इलाकों, पीने के पानी के स्रोतों (नदी, तालाब, झरनों) या खेती के उपयोग के जल के स्थानों से दूर होना चाहिए।

भण्डार या गोदाम निम्न स्थानों पर स्थापित नहीं होने चाहिए -

1 बाढ के उत्तरदायी स्थानों या भूमिगत जल स्रोतों (कुंए, बोरवेल्स, जलापूर्ति के लिए नदी पर जलग्रहण क्षेत्रों में)

2 पर्यावरण की दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्रों में

गोदामो में कृषि रसायनों की अधिकतम मात्रा के लिए पर्याप्त क्षमता होनी चाहिए एवं इनके सुरक्षित भण्डारण एवं निकास के लिए पर्याप्त प्रावधान होने चाहिए।

उपयोगकर्ताओं को कृषि रसायनों के किसी इमारत में संग्रहण करने से पूर्व निम्न तथ्यों को सुनिश्चित कर लेना चाहिए-

1 इमारत सही तरह से बनी हो, आग के लिए प्रतिरोधी, ताप व रासायनिक अभिक्रिया कि चरम अवस्था और तरल पदार्थ के लिए अभेदक हो फर्श इस प्रकार बना हो कि रिसाव या छसकन को रोक सके एवं आसानीर से साफ किया जा सके साथ ही फिसलन भरा न हो गोदम की बाहरी दिवारें कम से कम 30 मिनट का आग प्रतिरोध देने के सक्षम हो तथा आन्तरिक दीवारें जलाभेदय, चिकनी सतह वाली व आसानी से धो सकने वाली होनी चाहिए।

2 यदि गोदाम एक मंजिला इमारत का बना हो तो इसकी छत गैर दहनशील पदार्थ की बनी होनी चाहिए जो आग लगने के समय आसानी से गिर सके ताकि ऐसे मामलों में वेंट (छिद्र) का काम कर सके।

3. उपयुक्त प्रवेश द्वार हो एवं बाहर निकलने के लिए आग प्रतिरोधी दरवाजे होने चाहिए। दरवाजे, सामग्री की सुरक्षित अवाजाही के लिए पर्याप्त आकार के होने चाहिए व भीतरी दरवाजे दोलायमान प्रकार के होने चाहिए। जहां सामान्य प्रयोजन की इमारत में ही गोदाम निर्मित हो वहां गोदाम के दरवाजे सीधे बाहर की तरफ होने चाहिए। यदि ऐसा संभव ना हो तो इनमें पहुंचने के लिए मार्ग की खाद्यपदार्थों के भंडारण, घरेलू उद्देश्यों की वस्तुओं एवं पशुओं के रखने वाले क्षेत्र में साझा नहीं करना चाहिए क्योंकि ये रसायन मानव व पशुओं के लिए हानिकारक हो सकते है।

4. गोदाम ऐसे बने हो कि जो रिसाव आदि को रोक सके ताकि बाहरी पर्यावरण प्रदूषित होने से बच सके।

5. जहां पर्यावरणीय में संवेदनशील हो इस स्थिति में यह आवश्यक होता है कि रसायन युक्त टैंक से जुडा हुआ आतंरिक निकासी तंत्र की व्यवस्था कि जाए या चारदीवारी बनाई जाये जिसमें सभी कृषि रसायनों के भंडारण की क्षमता हो।
6. यह सुनिश्चित कर ले कि गोदाम सुखे है कि नहीं और ताप कि चरम अवस्था के लिए प्रतिरोधी है कि नहीं बहुत गर्म या ठंडी स्थिति में कृषि रसायन खराब हो सकते है या पात्रों को नुकसान पहुंचा सकते है। इसी प्रकार नमी होने पर कागज की बोरियां कमजोर पड जाती है जिससे इनके अंदर उपस्थित पदार्थ बाहर फैल सकते हैा आजकल जल में घुलनशील पाउस में कीटनाशकों की आपूर्ति बढती जा रही है। (यह बहुत महत्वपूर्ण है इन्हें पूर्ण रूप से शुष्क परिस्थितियों में रखा जाता है)
7. पर्याप्त खिडकी या कृत्रिम बिजली की व्यवस्था है कि नहीं ताकि गोदाम में पर्याप्त रोशनी बनी रहे।
8. कृषि रसायनों पर खिडकी द्वारा सीधे सूर्य का प्रकाश नहीं पडना चाहिए क्योंकि इसमें उपस्थित परा बैंगनी विकिरणें इन रसायनों को विकृत कर सकती है।

18.7 अन्य तथ्य

जलापूर्ति – जल की आपूर्ति की व्यवस्था गोदाम के पास होनी चाहिए ना कि गोदाम के अन्दर।

रिकोर्ड – गोदाम में उपस्थित सभी कृषि रसायनों के विवरणों का रिकार्ड बनाना चाहिए एवं इसे रसायनों से पृथक सुरक्षित स्थान पर रखना चाहिए ताकि आपतकाल के समय इसे आसानी से उपयोग में लाया जा सके।

प्राथमिक चिकित्सा – पर्याप्त प्राथमिक चिकित्सा के सामान भण्डार कक्ष में उपस्थित होने चाहिए ताकि छोटी मोटी चोटों या आंखों एवं त्वचा पर संदूषण के समय इनका उपयोग किया जा सके।

अग्नि के प्रति पूर्वोपाय – भंडारण कक्ष में धूम्रपान या खुली आग जलाना निषेध होना चाहिए। उपर्युक्त अग्नि शामक हमेशा भण्डार में उपस्थित होना चाहिए ताकि आपातकाल के समय इनका उपयोग किया जा सके।

सफाई सुविधा – जो भी व्यक्ति भण्डार को संभालते है उनके लिए साफ पानी, साबुन, टॉवेल, आदि की व्यवस्था होनी चाहिए।

सुरक्षित पहनावे की जगह – कृषि रसायन भण्डार से अलग हवादार सुरक्षित पहनावे की जगह होनी चाहिए ये स्थान कभी भी भंडार कक्ष के अन्दर नहीं होने चाहिए।

खाली पात्रों एवं ठोस कृषि रसायनों के अपशिष्टों का भण्डार -कई खाली पात्र जल से क्रिया करके गैस उत्पन्न करते है जैसे कि फॉक्साइड ऐसे पात्रों को कम से कम तीन-चार बार पानी से अच्छी तरह धोकर सुखा कर कृषि रसायनिक अपशिष्टों के साथ सूखे स्थानों पर रखना चाहिए। इनमें कभी भी भोजन एवं जल या ऐसे उत्पाद जो मानव या पशुओं द्वारा उपभोग किये जाते है नहीं रखने चाहिए। यह बात हमेशा

ध्यान रखनी चाहिए कि पात्रों में बची कृषि रसायनों की सूक्ष्म मात्रा भी गंभीर बीमारी या मृत्यु का कारण बन सकती है।

पूर्व तैयारी क्षेत्र – भण्डार के पास वह स्थान जहां कृषि रसायनों को उपयोग में लाने के लिए उपयोगी उपकरणों में डाला जाता है चार दीवारी से घिरा होना चाहिए ताकि बाहरी पर्यावरण प्रदूषित होने से बच सके।

18.8 पात्रों एवं अपशिष्टों का निस्तारण

कई बार ऐसी परिस्थितियां भी बन जाती है जब कृषि रसायनों का सुरक्षित निस्तारण करना पडता है यह स्थिति तब आती है जब इन रसायनों को यदि लम्बे समय में उपयोग में न लिया जाए, इनके उपयोग की अवधि समाप्त हो जाए या पेकिंग टूट जाय या पात्र क्षतिग्रस्त हो जाए। इसी प्रकार सफाई के लिए उपयोग में लाये गए सामान, रसायनों के छलकने से गिरे निक्षेप, अलग किये हुये सामान इन रसायनों से समग्र संदूषित रहते है, इन सभी का सुरक्षित निस्तारण होना आवश्यक है।

इन अपशिष्टों के निपटारे के लिए निम्नलिखित साधारण उपाय काम में लिये जाने चाहिए -

- कृषि रसायनों को कभी भी अव्यवस्थित तरीके से नहीं फेकना चाहिए।
- इन रसायनों का निस्तारण कभी भी ऐसे नहीं करना चाहिए जिससे कि पर्यावरण, जल स्रोतों, फसलो, पशुओं या मानव के लिए खतरे पैदा हो।
- सबसे पहले वितरकों से पूछना चाहिए कि क्या वे इन अपशिष्टों को इनके निस्तारण के लिए ले सकते है या नहीं।
- जब भी संभव हो सके इन अपशिष्टों का निपटारा ऐसी कंपनी या व्यक्तियों के माध्यम से कराया जाये जिनके पास अपशिष्टों के निस्तारण कराने का अनुज्ञापत्र है।
- इन अपशिष्टों को इकट्ठा करके ना रखे जितनी जल्दी हो सके इनका निपटारा करे।
- उपयोगकर्ताओं को पात्रों के उपर लगे लेबल अच्छे से पढने चाहिए यदि उन पर इन रसायनों के अपशिष्टों के निपटारे से संबंधित कोई विशेष जानाकारी दी गई हो तो उसी के अनुरूप इन रसायनों का निस्तारण करना चाहिए।
- जहां तक संभ्वहो इन रसायनों के खाली पात्रों का दुबारा उपयोग नहीं करना चाहिए।
- यदि इनके समान उत्पादों वाले पात्र क्षतिग्रस्त हो गये होतो ही इन्हें समान उत्पाद वाले खाली पात्रों में स्थानान्तरित करें और सभी पात्रों को निपटारे से पूर्व पूरी तरह से साफ करना चाहिए, इन्हें पात्रों पर लगे लेबल में दिये गये निर्देशानुसार साफ करना चाहिए यदि कोई निर्देश ना दिये गये हो तो भी पात्रों को कई बार जल से धोकर साफ करना चाहिए (कम से कम तीन बार) साथ ही इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि इन्हें साफ करने में जो पानी उपयोग में लाया जा रहा है वह पर्यावरण या पीने के पानी को संदूषित ना करें।

- तरल रसायनों के पात्रों को साफ करने से पहले अच्छी प्रकार से खाली कर लेना चाहिए। प्रक्षालकों को सही स्थान पर निस्तारण के लिए इकट्ठा कर लेना चाहिए। पात्रों को सफाई के बाद कई स्थानों से गोद देना चाहिए या इन्हें मडोड देना चाहिए ताकि ये अनुपयोगी हो जाए तथा इन्हें सरक्षित स्थानों पर रख देना चाहिए जब तक कि इनके निपटारे की व्यवस्था न हो जाए।
- पात्रों को उपयोगकर्ताओं के निजी स्थलों पर दफनाया भी जा सकता है दफनाने के स्थानों को चुनने के लिए बहुत सावधानी बरतनी चाहिए ताकि भूमिगत या सतही जल के प्रदूषण का कोई खतरा न हो। इस कार्य के लिए स्थानीय अधिकारियों से पूर्व अनुमति या सलाह लेनी चाहिए।
- पात्रों को कम से कम 1 मीटर गहराई तक दफनाना चाहिए (चित्र 27) साथ ही ऐसे स्थानों के चारो और बाड या घेरा लगा देना चाहिए एवं चेतावनी के सूचक लगा देने चाहिए तथा दफनाये जाने वाले पदार्थ एवं दिनांक का पूरा ब्यौरा रखना चाहिए।
- यह भी संभव है कि कई उपयोगकर्ता मिलकर स्थानीय अधिकारी से एक ही स्थान पर अपशिष्टों के निपटारे के लिए स्थान की अनुमति ले लें जैसे लेन्डफिल।

  इसके अलावा बचे हुए पेकेटस को जलाया भी जा सकता है इस कार्य के लिए निम्न बिन्दुओं को ध्यान मे रखना चाहिए –
- इन पेकेट्स को पब्लिक हाइवे से कम से कम 15 मीटर की दूरी पर किसी खुले स्थानों पर जलाना चाहिए और ऐसे स्थानों पर जलाना चाहिए जहां इन्हें जलाने पर उत्पन्न धुंआ मानव बस्तिओं, पशुधन एवं व्यवसाय के क्षेत्रों की ओर ना बहे।
- सभी पात्रों को खोलकर धधकती अग्नि में एक साथ डालना चाहिए।
- जलती हुई अग्नि का लगातार निरीक्षण करते रहना चाहिए तथा इसके धुंए को सांस में ना ले।
- जलने की क्रिया के उपरांत आग बुझा देनी चाहिए तथा यदि कोई अपशिष्ट बच जाये तो वापस से पुन: उपर बताई क्रिया द्वारा जलाना चाहिए।

18.9 कृषि रसायनों के पर्यावरणीय खतरे

कीटनाशकों का विवेकपूर्ण तरीके से इस्तेमाल नहीं किया जाए तो ये प्राकृतिक जैविक कीट नियंत्रण के तंत्र को बाधित कर सकते है। अधिक सशक्त कीट हमलों से भारी रसायनिक उपयोग के साथ स्वास्थ्य पर विपरित प्रभाव में वृद्धि हो सकती है।

कीटनाशक साथ ही साथ उर्वरक भूमि में रिसकर जल स्रोतों, पीने के पानी को एवं जीवजंतुओं को संदूषित कर सकते है। जैसे कि मछलियों जिन पर मानव पोषण के लिए निर्भर रहता है। इस तरह के प्रदूषण द्वितीयक सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रभावों की श्रृंखला को जन्म दे सकते है।

18.10 सारांश

कृषि के उद्देश्य से उपयोग में लाए गये रसायनों को कृषि रसायन के रूप में जाना जाता है जो कई प्रकार के होते है जैसे कीटनाशक, खरपतनाशक, उर्वरक, क्षारीय एवं अम्लीय घटक, मृदा अनुकूलन, प्रतिजैविक एवं हार्मोस आदि। इनकी पैंकिग व परिवहन अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय मानको एवं नियमों के अनुसार की जाती है ताकि समस्त पर्यावरण में इनके द्वारा उत्पन्न प्रदूषण पर नियंत्रण रखा जा सकें। इनके भण्डारण में भी आवश्यक सावधानी बरतना आवश्यक होता है । इनके भण्डारण कक्षों का निर्माण एवं देखरेख के सभी नियमों का ध्यान रखकर इनका निर्माण किया जाता है। इन कक्षों में आवश्यक पानी की सप्लाई, रसायनों से संबंधित अभिलेखों का ब्यौरा, प्राथमिक चिकित्सा के सामानों, आग बुझाने के उपकरणों आदि की व्यवस्था की जाती है। साथ ही समयावधि समाप्त होने के बाद या उपयोग नहीं आने की स्थिति में कृषि रसायनों का सुरक्षित निस्तारण किया जाता है इनके पात्रों का निस्तारण भी दफनाकर या जलाकर नियमानुसार किया जाता है । तथा इस बात का पूरा ध्यान रखा जाता है कि इनके उपयोग एवं निस्तारण के समय मानव जाति, जीवजन्तुओं व पर्यावरण को हानि ना पहुंचे।

18.11 अभ्यास प्रश्न

1. निम्न में से कृषि रसायन है -
   (अ) उर्वरक (ब) पानी
   (स) मृदा (द) कार्बन डाई ऑक्साइड
2. आदिकाल में कीटनाशकों के रूप में किस तत्व के यौगिकों का उपयोग चीन में किया जाता था
   (अ) जस्ता (ब) आर्सेनिक
   (स) तांबा (द) लोहा
3. सुपर फॉस्फेट एक .....है।
   (अ) कीटनाशक (ब) उर्वरक
   (स) अम्ल (द) अनुकूलक
4. कृषि रसायनों के पात्रों के निस्तारण के लिए इन्हें भूमि सतह के अन्दर कम से कम कितनी गहराई में दफनाना चाहिए।
   (अ) 6 मीटर (ब) 200 मीटर (स) 1 मीटर (द) 1 किलोमीटर
5. कृषि रसायनों के अपशिष्टों का निस्तारण क्यों आवश्यक है
   (अ) समग्र पर्यावरणीय सुरक्षा
   (ब) मानव सुरक्षा के लिए
   (स) जल स्रोतों की सुरक्षा
   (द) उपरोक्त सभी

18.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

- यादव, एस.पी.एस. 2007. ऊसर भूमियों को उपजाऊ बनाएं. विश्व कृषि संचार, जून-2007.
- शर्मा, ओ.पी., इन्टोदिया, एस.के., शर्मा, एस.एल. एवं नकेला, एन.एस. 2009. शस्य विज्ञान (कृषि वर्ग), माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान अजमेर.
- चौधरी, जे. पी., 2000. मृदा विज्ञान : खाद एवं उर्वरक. भारती पब्लिकेशन, बडोत (बागपत).
- जाट, बी.एल. 2012. क्षारीय व लवणीय भूमि सुधार. विश्व कृषि संचार, मई- 2012.